हिन्दी पुस्तक एजेन्सी माला—संख्या ४४

उषाकाल

(प्रथम भाग)

(ऐतिहासिक उपन्यास)

मूल लेखक—

स्वर्गीय पं० हरिनारायण आपटे

अनुवादक—

पं० लक्ष्मीधर वाजपेयी

प्रकाशक—

हिन्दी पुस्तक एजेन्सी

१२६, हरिसन रोड, कलकत्ता।

ब्रांच:—देहली और काशी

१९८१

प्रथमबार

मूल्य २॥)
खद्दर जिल्द ३)
रेशमी जिल्द ३।)

अतएव परमपिता परमात्माकी कृपासे वीरकेसरी शिवाजीका जन्म हुआ, जिसने अपने पराक्रम, साहस तथा बाहुबलसे उस समयकी राजनीतिक, आर्थिक और सामाजिक स्थितिको उलटने एवं देश और हिन्दू-धर्मको बचानेके लिये जो जो उद्योग किये हैं, उन्हीं घटनाओंको लेखकने अपने प्रतिभामयी भाव और भाषासे इस उपन्यासको बड़े मनोरञ्जक ढंगसे लिखा है।

इस उपन्यासमें जहां आपको हिन्दू-जातिके उत्थानका मनोरञ्जक वर्णन, पढ़नेको मिलेगा, वहां मुसलमान जातिकी कुटिलता, अन्यायप्रियता, क्रूरता, विश्वासघातकता और दुश्चरित्रताका सच्चा उदाहरण भी मिलेगा। राजा और उसकी शासनपद्धतिसे (अन्याय और अत्याचारके कारण) जब प्रजाका विश्वास उठ जाता है, तब शासकगण अपने अत्याचारको छिपानेके लिये क्रूरता और निरंकुशताका अवलम्बन करते हैं। लेकिन इससे प्रजाका अविश्वास नहीं घटता और उस अन्याय और अत्याचारका जहरीला असर देश और शासकको अवश्य चखना पड़ता है। इस सत्य घटनाका बहुत ही बढ़िया उदाहरण इस उपन्यास **'उषाकाल'** में आपको मिलेगा। इस उपन्यासमें जो ऐतिहासिक घटनायें आई हैं, उनके लिये सत्यताका कहांतक ध्यान रखा गया है, इसे जाननेके लिये हमारे यहांसे प्रकाशित **'वीर केसरी शिवाजी'** को पढ़कर देखें।

पुस्तक इतनी रोचक ढंगसे लिखी गई है, वर्णनशैली इतनी मनोहर और भाषा इतनी परमार्जित है कि पढ़ते ही बनती है।

यह उपन्यासका प्रथम भाग है। पुस्तक बहुत बड़ी होनेसे दो भागोंमें छापी गई है। आशा है कि, जिस तरहसे पाठकोंने आजतक हमपर कृपा-कर, एजेन्सीसे प्रकाशित अन्य पुस्तकोंका आदर करके हमारे उत्साहको बढ़ाया है, उसी तरह इसे भी अपनायेंगे।

भवदीय—

प्रकाशक

उषाकाल

प्रथम खण्ड

उषाकाल ।

पहला परिच्छेद ।

हनुमानजीका मन्दिर ।

पूनासे सासवड़को जानेवाले मार्गपर, एक बार, सम्वत् १७०३ विक्रमीकी श्रावण कृष्णा दशमीके दिन, रातके समय, बड़े ज़ोरकी वर्षा हो चुकी थी; और फिर भी भारी वृष्टिकी सम्भावना हो रही थी। सम्पूर्ण आकाश ऐसा घोर काला हो रहा था कि जैसे तेलमें घोंटे हुए काजलसे रंग दिया गया हो। क्षण क्षणमें बिजली कड़कड़ा रही थी; और अपनी चमचमाहटसे चकाचौंध उत्पन्न कर रही थी। किसी विकराल राक्षसके विकट हास्यकी भांति आकाशमें एक प्रकारकी गड़गड़ाहटका शब्द हो रहा था। जिस विशेष घड़ीका वर्णन हम कर रहे हैं, उस घड़ीमें तो वर्षा बन्द थी; परन्तु लगभग घड़ी-डेढ़-घड़ी पहले-तक काफ़ी वर्षा हो चुकी थी; और उपर्युक्त मार्गकी, तथा उसके आसपासकी झाड़ियोंकी सम्पूर्ण वृक्षलताएं भींगकर तर-बतर हो गयी थीं। उनकी चोटियोंपर पड़ा हुआ जल नीचेकी डालियोंपर, डालियोंपर गिरा हुआ जल और नीचेकी टहनियोंपर गिर रहा था। इसी भाँति ऊपरके पत्तोंपरसे नीचेके पत्तोंपर, और फिर

उन नीचेके पत्तोंपरसे और नीचेके पत्तोंपर, पानीके बूँदे टपक रहे थे। इस प्रकार सम्पूर्ण वृक्षलता-समूह और झाड़ियोंसे पानीके गिरने और टपकनेसे जंगलमें एक प्रकारका विचित्र शब्द हो रहा था। फिर वे सब बूँदे एकत्रित होकर जब नीचे पड़े हुए सूखे पत्तोंपर गिरते; और उसी बीचमें यदि हवाके किसी भारी झोंकेके आजानेसे वह पानी और भी वेगके साथ नीचे गिरता, तब तो उसका शब्द किसी भी मुसाफिरको चकितसा कर देता था। रात भी बहुत ही भयानक दिखायी देने लगी थी। इसके सिवाय भयंकर जंगली जानवरों और सर्प इत्यादि जीव-जन्तुओंके डरसे भी वह स्थान खाली न था। ऐसे भयं-कर समयमें कोई भी मुसाफिर भला क्योंकर उस मार्गसे जानेका साहस कर सकता था? और यदि कोई मुसाफिर वैसा साहस करता भी, तो अपने प्राणोंसे भी प्रिय किसी कार्यके लिये ही कर सकता था। सो, उस भयंकर समयमें भी, उस मार्गसे एक घुड़सवार खूब तेज़ीके साथ जा रहा था। उसको इस बातकी परवा नहीं थी कि, मेरा घोड़ा इस अवघट मार्गसे ऐसे समयमें जा सकेगा, अथवा नहीं,—कहीं वह रपट-कर गिर तो नहीं पड़ेगा? कालकूट विषके समान दिखाई पड़नेवाले उस अंधकारमें, मार्गके नदी-नालोंकी कठिनाइयोंका कुछ भी विचार न करते हुए, यह सवार कहां जा रहा है? और क्यों जा रहा है? यदि कहें, घुड़सवार किसी पलटनका है, सो भी नहीं। बिजलीकी बारीक चमकसे उसकी पोशाक सहज

ही दिखायी पड़ सकती थी। उसकी पोशाक—पोशाक काहेकी—बारीक मलमलका एक मुसलमानी ढंगका लम्बा कुरता, बदन-में था, जिसको लौटाकर उसने अपने कंधोंपर डाल लिया था। कुर्त्ता भींगकर बिलकुल तर हो गया था, इससे वह उसके बदनमें बिलकुल चिपक गया था; और उसके बदनकी गठन स्पष्ट रूपसे दिखाई पड़ रही थी। सिरमें एक साफा साधारण तौरसे लपेटा हुआ था, जिसका एक सिरा पीठकी ओर लटकता हुआ पानीसे भींगकर चिपक गया था; और दूसरा सिरा, जो पहले सिरपर कलँगीकी तरह रखा हुआ होगा, अब वर्षाके मारे नीचे लचकर बालोंमें चिपक गया था। उसके हाथमें लम्बी तलवार, सो भी नंगी थी। तलवारका म्यान न तो उसकी कमरमें और न उसके पास ही कहीं दिखाई देता था। शायद उसके न होनेके कारण ही उसने वैसी ही नंगी तलवार पकड़ ली थी। नहीं तो वैसी वर्षामें म्यानसे तलवार निकालकर हाथमें पकड़नेकी कोई आवश्यकता दिखाई नहीं पड़ती थी। तलवारका पानी बिजलीकी चमचमाहटसे तड़प अवश्य रहा था; किन्तु बीच बीचमें ऐसा भी जान पड़ता था कि उसपर किसी न किसी चीज़की आभासी पड़ी हुई है। बस, इससे अधिक इस समय उस सवारका कोई वर्णन किया नहीं जा सकता। हां, वह अपने घोड़ेको इस प्रकार उत्तेजित कर रहा था कि, जिससे वह तेज़ दौड़नेमें कोई कसर उठा न रखे। उस सवारका यह सारा प्रयत्न इसीलिए तो नहीं था कि, कहीं पानी

फिरसे न बरसने लगे; और उसे कष्ट हो? शायद ऐसा ही हो; क्योंकि हवा अब फिर बड़े वेगसे बहने लगी थी; और चारों ओरसे उसकी सन-सनाहट चित्तको व्याकुल कर रही थी। इधर आकाशमें बादलोंका अन्धकार भी बढ़ता ही जाता था, चारों ओरसे बादल घिरते आ रहे थे। थोड़ी ही देरमें बूंदें पड़नी शुरू हुईं, परन्तु उस साहसी अश्वारोहीने अपने घोड़ेको नहीं रोका। लीजिए, अब और भी तेज वर्षा होने लगी; लेकिन फिर भी उसके रुकनेके कोई चिन्ह दिखाई न पड़े। अन्तमें मूसलधार वृष्टि होने लगी; और ऐसा जान पड़ा मानो उसका घोड़ा ही आगे जानेको मन नहीं करता। यह देखकर उस सवारने एक बड़े वृक्षके नीचे जाकर ठहरनेका विचार किया। सवार और घोड़ा, दोनों ही, भींगकर तर हो गये थे; परन्तु जान पड़ता था कि, वह सवार क्षणभरके लिये भी घोड़ेसे उतरकर अपने वस्त्र इत्यादि भी निचोड़ना नहीं चाहता। ऊपरसे पेड़का पानी जब घोड़ेके बदन अथवा मुंहपर गिरता, तब वह एकदम फुड़क उठता, अथवा अपना बदन झाड़ने लगता। परन्तु सवार अपने विचारमें ही निमग्नसा दिखाई देता था। क्या विचार करता होगा? कौन जाने!

बहुत देर हो गई, वृष्टि बन्द नहीं हुई; और न उसका ज़ोर ही कम हुआ। सवार स्पष्ट ही इस चिन्तामें था कि, वृष्टि कब बन्द हो; और कब मैं आगे बढ़ूं। वह बार बार ऊपर आकाश-की ओर देखता, फिर घोड़ेकी ओर देखता; और कुछ क्षुब्ध-सा होता हुआ दिखाई देता।

"क्या करूं इस वर्षाके लिए! काम तो फतह हो गया, किन्तु अब कहीं फँस न जाऊं; कुछ समझ नहीं पड़ता। जो प्रतिज्ञा करके चला था, सो तो पूरी हो गई; पर अबतक मुझे अपने लोगोंमें पहुंच जाना चाहिए था। यह कैसे हो? हां, यह तो निश्चय है कि, वर्षाके मारे शत्रु हमारे पीछे पीछे नहीं आते—वे आ ही कैसे सकते हैं?......मुर्दे......कभी नहीं!"

पहलेके वाक्य जिस स्पष्टताके साथ उस सवारके मुखसे निकले, उतनी स्पष्टताके साथ पिछले वाक्य नहीं निकले; क्योंकि इसी बीचमें उसका घोड़ा एकदम चमक उठा। मालूम नहीं, किस कारणसे। न जाने उसके पैरके नीचे कोई जीवजन्तु पड़ गया, अथवा किसीने उसे काट खाया। अन्तमें सवार नीचे उतर पड़ा; और अपने घोड़ेसे बोला, "चित्तल! चित्तल! बेटा, इतना व्याकुल क्यों हुआ? जो कुछ कर आया, उतना क्या काफी नहीं है? बेटा, यदि तू, और मैं, जीवित हूं, तो और न जाने कितने ऐसे ही पराक्रम कर दिखलाऊंगा! तू इतना घबड़ाता क्यों है? माता जगदम्बाके चरणोंपर शत्रुओंके एक सौ आठ शिर—कमसे कम एक सौ आठ शिर—समर्पित करूंगा!" यह कहते हुए उसने अपने प्यारे घोड़ेके बदनपर हाथ फेरा और उसको शाबाशी देते हुए पुचकारा। चित्तल भी मानो अपने स्वामीके वचनोंको समझकर, अपनी गर्दन और दृष्टि तिरछी करके, एकबार ज़ोरसे फुड़का और खूब हिनहिनाया। उसकी आवाज़को सुनकर सवार बहुत आनन्दित हुआ। इसके

बाद उसने फिर घोड़ेकी पीठपर हाथ फेरा और उसको दिलासा दिया, तथा एक कुहनी उसकी पीठपर रखकर, उसी हाथकी हथेलीपर अपना कपोल रखे हुए, वह अपने घोड़ेके सहारेसे खड़ा हो गया। उस समय ऐसा जान पड़ता था कि, वह खूब चिन्तातुर होकर मन ही मन कुछ सोच रहा है।

इतनेमें वृष्टि भी कुछ कम हुई; और जान पड़ने लगा कि घड़ी दो घड़ीमें पानी बहुत कुछ सध जायगा। हमारा घुड़सवार अब चलनेके लिए तैयार हो गया। वह घोड़ेपर सवार हुआ; और उससे बोला, "चित्तल बेटा! अब बहुत जल्द अपने स्थान-पर पहुंचना है। रास्तेमें चाहे पानी आवे; और चाहे ओले बरसें, परकहीं ठहरना नहीं होगा!" इतना कहकर उसने घोड़ेको वेगसे चलनेका इशारा किया।

वर्षा अभीतक बिलकुल तो बन्द नहीं हुई थी। हां, आकाश-का कुछ भाग बादलोंको हटानेके प्रयत्नमें अवश्य था। हमारा अश्वारोही भी पहले हीकी भांति वेगसे चला। रास्ता तो उसके परिचयका ही दिखाई देता था; क्योंकि मार्गसे अपरिचित व्यक्ति वैसी अँधेरी रातमें, मूसलधार पानी गिरते समय, उधरसे जानेका साहस ही कैसे कर सकता था? ऐसा व्यक्ति तो कहीं न कहीं कुछ ठिठकता, जहांसे दो रास्ते फूटते, वहां खड़ा होकर कुछ विचार करता कि, किधरसे जाऊं; और किधरसे न जाऊं। किन्तु हमारे अश्वारोहीका यह हाल न था। उसके मनमें तो सिवाय इसके कि, अगला मार्ग किस प्रकार तै किया जाय,

और कोई विचार ही नहीं जान पड़ता था। चलते चलते, लगभग तीन-साढ़े तीन घड़ीके बाद वह एकदम ठहर गया। इस समय पानी बिलकुल बन्द हो चुका था। हां, नदी-नालोंके प्रवाहकी आवाज दूर दूरसे आ रही थी; और आसपासकी झाड़ियों तथा वृक्षलताओंसे जलविन्दुओंके झरनेकी आवाज भी सुनाई दे रही थी। बस, इसके सिवाय और कोई शब्द कानोंमें नहीं आता था। परन्तु ऐसा जान पड़ा कि उस सवारको उस समय कोई न कोई ऐसी आवाज अवश्य सुनाई दी कि, जिसके कारण वह एकदम रुक गया; और कुछ आहटसी लेते हुए एक तरफ ध्यानपूर्वक देखने लगा। उसके चेहरेसे स्पष्ट दिखाई दे रहा था कि, उसके मनमें कोई न कोई शंका उत्पन्न हुई है; और बहुत जल्द मालूम हो गया कि, उस चतुर अश्वारोहीकी शंकाके लिए प्रबल कारण मौजूद था। अर्थात् पीछेकी ओरसे पांच घोड़ोंकी टापें बजनेका स्पष्ट भास हुआ। आकाश स्वच्छ होने लगा था, किन्तु उससे दूरकी वस्तु दिखाई देनेमें सहायता नहीं मिल रही थी। दूरकी वस्तु दीखनेमें तो तभी कुछ सहायता हो सकती थी, जबकि विद्युल्लतादेवी कुछ अपनी चमक दिखलातीं। सौभाग्यवश हमारे अश्वारोहीको, उसकी इच्छाके अनुसार, उस समय विद्युल्लता-देवीने सहायता भी दी। क्रमशः दो तीन बार बिजली चमकी; और उसके उजेलेसे सवारको यह मालूम हो गया कि, पीछेसे जो घोड़े आ रहे हैं, वे किसके हैं; और किस ओरसे, कैसे, आ रहे हैं। पीछेसे जो लोग आ रहे थे, वे चार थे; और चारों घुड़स-

वार थे। परन्तु वे हमारे घुड़सवारकी भांति सिर्फ कुरता पहने और साफा लपेटे हुए नहीं थे। वे पूरी पूरी पोशाक पहने थे। उनकी पोशाकमें किसी बातकी कमी नहीं थी। परन्तु वर्षाने उनकी पोशाकपर भी काफी कृपा की थी; और इसकारण उनके कपड़े भी ख़राब ही हो गये थे। प्रत्येकको क्षण क्षणपर अपने हाथ फटकारने पड़ते और मुंहपर हाथ फेरकर अपनी अपनी दाढ़ियां निचोड़नी पड़ती थीं।

हमारे सवारने ज्यों ही उनको देखा, त्यों हीं उसने अपने मस्तकपर बड़ी बड़ी शिकनें डालीं; और भौंहें सिकोड़ीं। ऊपरके दांतोंसे नीचेका होंठ बार बार चबाया; और होंठोंके अन्दर धीरेसे कहा, "अरे शत्रुओ! हमारे देश, हमारे धर्म, हमारे सर्वस्वके दुश्मनो! क्या करूं!"

इन शब्दोंका उच्चारण करते समय उसने अपनी तलवारकी मूठ मज़बूतीसे पकड़ी; और तलवारको ऊपर उठाया। आगे बढ़नेके लिए घोड़ेको ऐंड़ लगाई। परन्तु फिर न जाने क्या विचार उसके मनमें आया कि, तुरन्त ही उसने अपने घोड़ेको पीछे घुमानेके लिए झटका दिया। घोड़ा अपने स्वामीका इरादा कुछ भी समझ न सका। आगे जावे या पीछे? अथवा जहांका तहां खड़ा रहे? वह बहुत ही क्षुब्ध हुआ। निस्सन्देह उसके मनकी भी वही दशा थी, जो उसके स्वामीके मनकी थी। पीछेसे आनेवाले घुड़सवार क्षण क्षणपर पास आने लगे; और ज्यों ज्यों वे पास आने लगे, त्यों त्यों हमारा सवार और उसका घोड़ा और भी

अधिकाधिक क्षुब्ध होने लगा। इतनेमें वे घुड़सवार बिलकुल पास आ गये—और हमारे घुड़सवारने भी अपने मनमें कोई एक विचार निश्चित कर लिया; और तदनुसार अपने घोड़ेको पीछे लौटानेके लिए जल्दीसे लगाममें झटका दिया। उसके इस कार्यसे, अभीष्ट-सिद्धि तो दूर रही, घोड़ा एकदम बड़े ज़ोरसे बिगड़ उठा; और जिधर मार्ग सूझा, उधर ही भग चला। वह घोड़ा, जब एकाएक भड़ककर भग खड़ा हुआ, तब पीछे आनेवाले चारों सवारोंके घोड़े भी चमककर भड़क उठे। उनमें-से एक घुड़सवार संयोगवश आगे हुआ; और हमारा घुड़सवार उसके पीछे हो गया। बाकी सवार जाने कहांके कहां गये।

हमारे घुड़सवारके साथ, अब, उस रातको, उन चारों घुड़-सवारोंमेंसे एककी, ऐसी बाजी लगी कि कुछ पूछिये नहीं। उन दोनोंमें एकका भी घोड़ा रोके नहीं रुका। हमारे घुड़सवारने जब यह देखा कि, शत्रुओंका एक घोड़ा हमारे आगे है, तब तो उसको उस बाजीमें खूब ही जोश आया। इतनेमें अगला घोड़ा धड़ाकसे एक भारी वृक्षके तनेमें जा टकराया; और नीचे गिर पड़ा! इससे उसका सवार "अल्लाह! अल्लाह! या खुदा!" कहता हुआ धड़ामसे जमीनपर गिर पड़ा! हमारे घुड़सवारकी भी वही दशा होनेवाली थी; परन्तु अगले घोड़ेकी वह दशा होनेके कारण हमारा सवार कुछ सम्हलने लगा, जिससे उसका घोड़ा इतना चमका कि, वह एक तीसरी ही ओरको भग खड़ा हुआ। इस बार चित्तल इतने ज़ोरसे भड़का कि, उसको काबूमें

लाना एक बड़ा भारी काम था। अब हमारे सवारके हाथमें, सिवाय इसके कि, वह अपना आसन जमाये रहे; और घोड़ा जहां ले जाय, जावे, कुछ भी नहीं रहा। वह बड़े चक्करमें पड़ा कि, कहां किस उद्देश्यसे जा रहा था; और यह क्या हुआ !

कुछ देर बाद चित्तल कुछ सम्हला—कमसे कम हमारे घुड़-सवारको यह भरोसा हुआ कि, अब यदि उसको काबूमें लानेका प्रयत्न किया जायगा, तो निष्फल नहीं होगा। उसने प्रयत्न भी किया। चित्तलने भी अबतक प्रायः अपनी अधिकांश शक्ति भड़कनेमें ही खर्च कर डाली थी, अतएव अब वह भी अपने इच्छानुसार इधर-उधर भाग नहीं सकता था। लाचार हो उसने भी अब अपना मन और शरीर फिरसे पूर्ववत् अपने स्वामीके हाथमें दे दिया। परन्तु अब उससे कोई विशेष लाभ नहीं था। क्योंकि उस समय उसके स्वामीको यही पता नहीं था कि, हम कहां हैं; और किस तरफ जा रहे हैं। उसने अपने आस-पास चारों दिशाओंकी ओर दृष्टि डाली। आकाश अभीतक बिलकुल स्वच्छ नहीं हुआ था; परन्तु हां, उसके कुछ भागमें तारे चमकते हुए दिखाई दे रहे थे; और हवा इतने वेगसे चल रही थी कि, बहुत जल्द बाकी बादलोंके दूर हो जानेकी भी आशा होती थी। इससे जान पड़ता था कि, अब बहुत शीघ्र मार्गका कुछ अनुमान होगा। हमारा सवार भी इस बातके लिए बहुत ही आतुर हो रहा था कि, उसे मार्गका कुछ न कुछ पता चले। वह बार बार बड़े ग़ौरसे चारों ओर निहारता था, परन्तु बहुत

देरतक उसके मुखमंडलपर कुछ भी आशाके चिन्ह दृष्टिगोचर नहीं हुए। अन्तमें निराश होकर उसने यही सोचा कि, अब जिस ओर हो, उसी ओर घोड़ेको बढ़ाया जाय; और तदनुसार उसने घोड़ेको इशारा किया। मालिकका संकेत पाते ही चित्तल आगे बढ़ा। उस निराशाके दशामें ही, जबकि सवार आगे जा रहा था, एकाएक उसके चेहरेपर आशाकी एक झलक दिखाई दी। अब वह एक ही दिशाकी ओर बड़े गौरसे देखने लगा, जिससे उसे कोई विशेष बात उस ओर दिखाई दी। उसने लगाममें झटका देकर घोड़ेको कुछ अधिक वेगसे उसी ओरको चलनेका संकेत किया। कुछ दूर और चलनेपर उसने घोड़ेको रोककर फिर ध्यानसे देखा, तो उसके चेहरेके भावोंसे ऐसा मालूम हुआ कि, आगे वही बात है,जिसका उसने कुछ देर पहले अनुमान किया था। अवश्य ही अब उसी ओर चलनेको उसका उत्साह बढ़ा; और उसने अपने घोड़ेकी गर्दनपर थाप देकर प्यारसे कहा:—

"चित्तल! देखो, भड़क करके तुमने अपना शिकार खो ही तो दिया! कुछ परवा नहीं। तुमको आज बड़ी हैरानी हुई है, लेकिन अब धीरज धरो; और आगे कुछ सम्हलकर चलो। वह सामने दीपक दिखाई दे रहा है, वहांतक बढ़े चलो। वहां पहुंचनेपर उतरकर हम दोनों विश्राम लेंगे। वहां कोई न कोई झोपड़ी अथवा मन्दिर, या कोई घर, अवश्य होगा। देखो, कहांके कहां भटक गये। चलो, चलो, अब इतने घबराओ नहीं!"

यह कहकर उसने घोड़ेको पुचकारा, गर्दनपर थाप दी, उसके मुंहको ऊपर करके कुछ चुम्बनसा लिया। उस समय उस सवारने अपने घोड़ेपर जो प्यार प्रकट किया, उससे इस कथनकी सत्यता पूरी पूरी प्रतीत हो रही थी, "मराठे सरदारको अपना घोड़ा प्राणोंसे भी अधिक प्यारा होता है।"

चित्तलने जब यह देखा कि उसके स्वामीने उसको प्यार किया, तब वह फिर उत्साहित हुआ। और ज़ोर ज़ोरसे फुड़कते हुए, लगाम चबाते हुए, तथा गर्दन तिरछी करते हुए, चलने लगा। कुछ ही देर बाद, सवार उस प्रकाशके बिलकुल निकट आ गया, जिसे कि उसने दूरसे देखा था। देखता है, तो वहां एक छोटासा मन्दिर है, जिसके आगे प्रांगणमें दोनों ओर जलते हुए दो बड़े बड़े पलीते अब बुझनेपर आ गये हैं। हमारा सवार उस मन्दिरके प्रांगणमें गया; और घोड़ेसे नीचे उतरकर इधर-उधर देखने लगा। पर वहां उसे एक चिड़ियातक नज़र नहीं आई। घोड़ेको हाथमें पकड़े हुए वह प्रांगणके अन्ततक चला गया, जहां उसे मन्दिरका दरवाज़ा दिखाई दिया। भीतर झांककर उसने देखा, तो हनुमानजीकी एक बड़ी मूर्त्तिके अतिरिक्त उसे और कुछ भी दिखाई न दिया। घोड़ेको वहीं छोड़कर उसने भीतर जानेका साहस किया; और वहां जाकर देखता है कि, हनुमानजीके आगे किसीने एक हरा नारियल फोड़ा है, जिसके खोखले वहां पड़े हैं; और पड़ा है गिरीका एक टुकड़ा! इस उद्देश्यसे, कि कोई न कोई मनुष्य वहां दिखाई देगा, हमारे

सिपाही जवानने उस मन्दिरमें बहुत ढूँढ़-खोज की; पर कुछ लाभ न हुआ। अन्तमें निराश होकर वह वैसा ही धरतीपर लेट गया। इतनेमें पृथ्वी-गर्भसे किसीके बोलने-चालने और हँसनेकीसी आवाज उसके कानमें पड़ी, जिससे वह बहुत विस्मित हुआ; और उझककर इधर-उधर देखने लगा।

दूसरा परिच्छेद।

बजरंगबलीके आसनके नीचे।

हमने ऊपर कहा है कि, हमारे सिपाहीको ज्यों ही यह भास हुआ कि, पृथ्वीके गर्भसे कोई ध्वनि निकल रही है, कोई न कोई बोल रहा है, अथवा हँस रहा है, त्यों ही वह अत्यन्त विस्मित होकर उठा; और आश्चर्य्य-चकित होकर इधर-उधर देखने लगा। यह ठीक है। परन्तु पहलेपहल जबकि, उसके कानमें वे शब्द पड़े, उसको यह निश्चय नहीं हुआ कि, वे ज़मीनके अन्दरसे ही निकल रहे हैं। पहले तो उसे यही शंका हुई कि, हमने यह जो ध्वनि सुनी, सो सच्ची है, अथवा केवल उसका मिथ्या भास ही हुआ है। इसके बाद उसने यह भी समझा कि, यहीं निकट, कहीं आसपास, कोई धीरे धीरे बोलता होगा। इसलिये बिलकुल स्तब्ध होकर उसने आहट ली। पर

कुछ भी सुनाई नहीं दिया। इसके बाद उसने सोचा कि शायद मन्दिरके बाहर, आसपास, कोई बोलता हो, इसलिये उसने बाहर जानेका विचार किया। बाहर गया भी। मन्दिरके आस-पास, दस-दस, पांच-पांच कदमोंपर, चुप खड़े रहकर उसने आहट ली। परन्तु वहां सिर्फ उसके घोड़ेके फुड़कनेकी आवाज़ ही सुनाई दी, अथवा हवाके झोंकोंके साथ यदि कोई जलविन्दु उन बुझते हुए पलीतोंकी ज्योतियोंपर आकर गिरते थे, तो उनसे भी 'चिड़चिड़' आवाज़ निकलती थी। बस, इसके सिवाय और कोई भी शब्द उसके कानोंमें नहीं पड़ा। उसने बड़ी सावधानीसे एक-दो बार, ठिठकते ठिठकते, और आहट लेते हुए, उस मन्दिरके आसपास परिक्रमा की। पर कोई उसे दिखाई नहीं दिया। अतएव अब उसको पूर्ण विश्वास हो गया कि, मन्दिरके आसपास तो कोई है नहीं, इसलिये हमारे कानोंमें जो आवाज़ पड़ी है, वह अवश्य ही हमारी कल्पनाका खेल है। क्योंकि उसने जिस प्रकार मन्दिरके बाहर प्रदक्षिणा की थी, उसी प्रकार उसके भीतर भी चारों ओर दीवालोंको पकड़कर परिक्रमा कर डाली; परन्तु कोई चीज़ उसे दिखाई नहीं दी—हां, एक कोनेमें धूनी बुझी हुई पड़ी थी। शायद उसके अन्दर आग भी गड़ी थी। इसके सिवाय दो-एक चिलमें, एक लोटा, एक चिमटा, इत्यादि भी वहां पड़ा था; पर हमारे सिपाहीका उस ओर ध्यान नहीं गया। क्योंकि उसका सारा ध्यान तो इसी एक बातकी ओर था कि, यह

शब्द कहांसे आता है ? सम्पूर्ण मन्दिरमें, उसके भीतर, बाहर, सब जगह, उसने दो दो, चार चार कदमपर ठहरकर आहट ली; पर कोई परिणाम न निकला। इतना सब हो जानेके बाद अवश्य ही उसकी कुछ विचित्रसी दशा हो गई। उसको कुछ समझ ही न पड़ने लगा कि, अब वह क्या करे, जिस समय वे शब्द उसके कानोंमें पड़े थे—अथवा उनका भास हुआ था—उस समय उसने यही समझा था कि, कोई मनुष्य बोल रहा है; और यही समझकर वह उझककर उठा भी था। परन्तु अब, जबकि उसने देखा कि, इतनी ढूंढ़-खोज करनेपर भी उसका कुछ पता नहीं चलता, तब उसका मन बड़ी दुविधामें पड़ गया। एक बार तो उसके मनमें आता कि, मैंने शब्द तो अवश्य ही सुने हैं; और दूसरी बार फिर सोचता कि, शायद शब्द सुननेका मिथ्या ही भास हुआ हो। उसने सोचा कि, हमारा मन चूंकि अत्यन्त क्षुब्ध हो रहा था, इसकारण यह भी हमारी ही कल्पनाका एक कौतुकमात्र था। इस प्रकार मनकी द्विविधा-त्रिविधा स्थितिमें वह यह सोच नहीं सका कि, अब आगे वह क्या करे। इसके सिवाय अत्यन्त क्षुब्ध हो जानेके कारण उससे चुप बैठे भी रहा नहीं जाता था। अब उसका मन इसीमें लगा कि, कब सुबह हो; और कब मुझे यह मालूम हो कि मैं कहां आ गया हूं। परन्तु इधर मनकी यह उद्विग्नता भी उसे कष्ट देने लगी। अन्तमें जब कोई विचार न सूझा, तब फिर वह मन्दिरमें आकर पड़ रहा। सो इस हेतुसे

कि, फिर शायद वही ध्वनि कानोंमें सुनाई दे। बड़ी उत्सुकताके साथ उसने कान लगाये, पर कुछ भी सुनाई न दिया। हां, छन छन करके कुछ बजनेकी आवाज अवश्य कानोंमें पड़ी, पर वह कुछ चकित करनेयोग्य आवाज न थी। हां, इससे हमारे सिपाहीके मनमें एक प्रकारकी शंका फिर आ गई; और उसने फिर वही पूर्वकी आवाज सुननेके लिए अपने कान बिलकुल जमीनतकमें भिड़ा दिये; पर फिर उस मनुष्यकी आवाज उसे बिलकुल ही सुनाई नहीं दी। हां, जैसा कि ऊपर बतलाया है, दो चार बार "छन छन" की आवाज जरूर आई। बार बार करवट बदलकर, और स्थान-परिवर्तन करके भी उसने शब्द सुननेका प्रयत्न किया। जबकि बाहर, आसपास, कहीं भी उन सुने हुए शब्दोंका पता नहीं चला, तब उसको विश्वास हो गया कि, हो न हो, वे शब्द पृथ्वीके अन्दरसे ही निकले होंगे, क्योंकि उसने सोचा कि, जिन शब्दोंके सुननेका उसे भास हुआ था, वे शब्द लेटे हुए ही उसके कानोंमें पड़े थे। परन्तु जब मन्दिरकी सम्पूर्ण जगह उसने खोज डाली, और वे शब्द फिरसे उसके कानोंमें नहीं पड़े, तब उसने यही सोचा कि, उसकी कल्पनाने ही उसे इतने चक्करमें डाला। इसलिए जब यह निश्चय हो गया कि, अब पता लगानेका और कोई मार्ग ही नहीं रहा, तब बेचारा बिलकुल निराश होकर यह सोचने लगा कि, अब यहांसे कूच कर दिया जावे। पर साथ ही यह भी मनमें आया कि, रातमें कहीं भटक न जावें। जिस कामके लिए गये थे,

सो तो पूर्ण हो गया, अब हमें समयपर अपने स्थानपर पहुं-
चना ही चाहिये, नहीं तो उलटे हमारी ही खोज शुरू होगी।
और यदि भटकते भटकते अचानक किसीके हाथमें पड़ गये, तो
और आफत आवेगी। सब किया-कराया व्यर्थ जायगा; और
अगला विचार भी पूरा न हो सकेगा। यह मन्दिर बिलकुल निर्जन
जान पड़ता है, पर रातमें यहां कोई न कोई लोग आते अवश्य
हैं, नहीं तो यह ताजा फूटा हुआ नारियल और ये जलते हुए
पलीते कहांसे आते। इत्यादि अनेक विचार हमारे सिपाही
जवानके मनमें आने लगे। उसने यह भी सोचा कि, यहांपर
जो लोग एकत्रित होते होंगे, वे क्या हमारे ही समान होंगे?
हमारे ही ऐसे विचार उनके भी होंगे? यही दृढ़ता क्या उनमें
भी होगी? अहा! यदि ऐसा ही हो, तब क्या कहना है! अपने
धर्म, अपनी जातिके दुश्मनों, अपने देशके शत्रुओं और गौ-
...णोंपर अत्याचार करनेवालोंपर कठोर शासन करनेकी
हा... उनमें भी ऐसी ही दृढ़ता हो, तो फिर और क्या चाहिए?
उस... क्या आज हमारा सारा शौर्य, वीर्य और धैर्य नष्ट हो
है। ... भीष्म, द्रोण, कर्ण, अर्जुन, भीम आदि वीरोंने जिस
...न्म लिया, वह भूमि क्या आज वन्ध्या हो गई? उसमें
समर... पी कुलदीपक वीर पुरुष उत्पन्न नहीं होता? हां, हां, मुझे
चित... अपना घर-द्वार छोड़नेकी भी नौबत आ जावे, तो मैं
छुम... गा—और एक प्रकारसे छोड़ ही दिया है—पूर्णतया
देता। ... पिताजीको मेरा कार्य, मेरे विचार, मेरा कुछ भी

पसन्द नहीं है। और मुझे भी उनकी कोई बात पसन्द नहीं। वे कहते हैं कि, हम उन दुश्मनोंके ही अन्नसे पलते हैं, उनके ताबेदार हैं, जिस तरह वे चलावें, उसी तरह चलना चाहिए। उनके विरुद्ध कोई भी काम न करना चाहिए। खूब! उनके अन्नसे पलते हैं! कहांसे लाये वे अन्न? अन्न उनके बापका है? देश हमारा है, द्रव्य हमारा है, जमीन हमारी है, सब कुछ हमारा है! हम अपना खाते हैं—फिर भी ये बुड्ढे लोग कहते हैं कि हम उनका अन्न खाते हैं! वाह! वाह! ये दुष्ट लोग हमारा जगह जगह अपमान करें, हमारे धर्ममें हस्तक्षेप करें, हमको विधर्मी बनानेके लिए हमपर खुल्लम-खुल्ला जुल्म करें, हमारी स्त्रियोंका अपमान करें, हमको स्थान स्थानपर नीचा दिखावें, सबके देखते हुए गोबध करें; और ये सब अत्याचार और अन्याय हम हिन्दू—आर्य—ऋषियोंकी सन्तान, चुपकेसे देखते रहें? इससे तो यही अच्छा है कि, संसारसे हमारा अस्तित्व ही उठ जावे! फिर भी देखो—हमारे ही बाप, दादा, चाचा, [illegible] हमको ही उद्दण्ड, अविचारी, मूर्ख, उपद्रवी कहकर बुरा-कहते हैं—कहते हैं कि क्यों हमारे घरमें जन्म लिया? यदि पूछो कि, हमारा अपराध इसमें क्या है? तो [illegible] इन दुष्टोंका अत्याचार हमसे सहन नहीं होता! इनके [illegible] चारसे अपने देश, अपनी जाति, अपने धर्म और सारी [illegible] रक्षा करनेके विचार मनमें आते हैं; और उनको हम [illegible] चोट प्रकट करते हैं, तथा इसी प्रकारके और भी प्र[illegible]

के
ाने
हो
हां-
या.
ये थे,

है—बस, यही हमारे अपराध हैं; और इन्हीं अपराधोंके लिए हमारे बाप, दादा हमको गालियां देते हैं। धमकाते हैं कि, घरसे निकाल देंगे! निकाल दो न घर से! मेरे समान सभी नवयुवक यदि अपने अपने घरसे निकाल दिये जायँ; और फिर वे सब एक जगह आकर एकत्रित हो जायँ, तब तो क्या ही उत्तम बात हो........

बस, इसी प्रकारके विचारोंने हमारे सिपाही जवानके मस्तिष्कको चक्करमें डाल रखा था। मनमें—उसमें भी अत्यन्त क्षुब्ध होनेवाले मनमें—जब मनुष्यके प्रिय विचार आने लगते हैं, तब फिर उनका कोई ठिकाना नहीं रहता। एकके बाद एक आते ही चले जाते हैं! बस, यही दशा हमारे सिपाही जवानकी इस समय हो रही थी। अनेक विचारोंने, एकके बाद एक आकर, उसे पूर्णतया अपने कब्जेमें कर लिया था। उसका सम्पूर्ण ध्यान एक ही ओर लग रहा था। उस समयके उसके हाव-भाव देखनेयोग्य थे। प्रत्येक क्षुब्ध मनुष्यके मनोविकार, उस समयके उसके हाव-भावोंमें, स्पष्ट दिखाई देते ही हैं। मनोविकारोंके अनुसार ही उसके हाथ-पैर आदिकी चेष्टाएं भी होने लगती हैं। हमारे सिपाही जवानकी भी उस समय वही दशा हुई। उसकी भौंहें ऊपर चढ़तीं, फिर आकुंचित होतीं, वह बार बार अपनी तलवार उठाता, इधर-उधर घुमाता, वार करनेके लिए तैयारसा होता, फिर नीचे रख देता। उपर्युक्त विचारोंके आनेपर अन्तमें, जब उसके मनमें

यह विचार आया कि, "दुष्टोंके ज़ुलमसे अकुलाये हुए हमारे समान सन्तप्त नवयुवक, यदि अपने अपने घरोंसे निकाले जाकर एक जगह एकत्र हो जावें, तो कितना भारी काम हो जावे," तब उसके मनको एक प्रकारका असीम आनन्द हुआ। वास्तवमें इस प्रकारके युवक-समुदायके एकत्र हो जानेपर, जिस महान् कार्यके होनेकी भावना उसके मनमें थी, उसका सजीव चित्र उसकी आँखोंके सामने आ गया। वह चित्र जिस समय उसकी आंखोंके सम्मुख आया, उस समय वह सामनेकी—बजरंगबलीकी—मूर्त्तिकी ओर देख रहा था। मानो उसने यह पूछनेके उद्देश्यसे ही कि, हमारे इस चित्रमें क्या कुछ कमी है, उस ओर अपनी दृष्टि लगाई थी। अथवा जैसे उसका वह चित्र उस समय बजरंगबलीके शरीरपर ही अंकित हुआ हो; और उसीको वह ध्यानपूर्वक देख रहा हो। इसप्रकार वह देख रहा था कि, इतने हीमें एकाएक वह उभक उठा; और उसके मुंहसे ये शब्द निकल पड़े कि, "अरे! यह क्या?" उस वक्त वह इतना घबड़ासा गया कि, एकदम उठकर खड़ा हो गया; और भय तथा आश्चर्यसे उसका मुख-मंडल व्याप्त हो गया। उसने अपनी आंखें फाड़कर इस प्रकार फिराईं; और अपनी तलवार ऐसे संभाली कि, जैसे किसी बड़े संकटसे अपनी रक्षा करनेके लिये कोई आतुर हो उठे।

एकदम यह क्या हुआ? वह एकटक बड़ी विचित्रताके साथ बजरंगबलीकी मूर्त्तिकी ओर देखने लगा। बात यह हुई

कि वह मूर्त्ति धीरे धीरे आगेकी ओर खिसक रही थी! यह बात जब पहलेपहल हमारे सिपाही जवानकी नजरमें पड़ी; तब, जैसा कि हमने ऊपर बतलाया, उसका अत्यन्त चकित होना बिलकुल स्वाभाविक था। जिस पाषाणमय मूर्तिपर आज कई सौ वर्षसे बराबर सिन्दूरका लेप हो रहा था, वह आज एकाएक हिलने लगी—आगे खिसकने लगी! ऐसे चमत्कारको देखकर कौन धैर्यशाली आश्चर्य-चकित न होगा? यह क्या संकट है! यह प्रश्न किसके मनमें उत्पन्न न होगा? कौन ऐसा व्यक्ति होगा कि, जो हमारे सिपाही जवानके समान ही अपनी तलवार इत्यादि संभालकर एकदम खड़ा न हो जायगा?

वह हनुमानकी मूर्त्ति सिर्फ चावल चावलभर आगे खिसक रही थी। इसकारण पहलेपहल तो उस शूर सिपाहीको—उसका मन कुछ स्थिर होते ही—ऐसा मालूम हुआ कि, यह भी मनका मिथ्या भास होगा, अथवा हमारी कल्पनाका ही खेल होगा। परन्तु वह मूर्त्ति बराबर चावल चावलभर आगे ही आ रही थी, जरासी भी हिलती-डुलती न थी, और न आगेको झुकती थी! बिलकुल सीधी, जैसीकी तैसी खड़ी हुई, अत्यन्त मन्द गतिसे आगेको खिसक रही थी। यह है क्या बात? क्या इस मूर्तिमें चैतन्यका संचार हो गया? अन्यथा एकाएक यह आगे कैसे खिसकती? अथवा इसकी ओटमें खड़ा हुआ कोई इसे आगे खिसका रहा है? सो भी नहीं हो सकता। हमने कितनी बार इसके आसपास परिक्रमा करके

आगे पीछे, सब ओर देख लिया है, कोई भी दिखाई नहीं दिया। न किसीके होनेकी संभावना ही दिखाई दी। एक तो वे बाहरके पलीते, और दूसरी यह कोनेकी धूनी—बस, इन दोके अतिरिक्त मनुष्यका तो यहां कोई चिन्ह भी दिखाई नहीं दिया। ऐसी दशामें, अब एकाएक हनुमानजीकी यह मूर्त्ति कौन खिसकावेगा? और क्यों? इस प्रकारके अनेक प्रश्न उसके मनमें आये। किन्तु सन्तोषजनक कोई भी उत्तर सूझ नहीं पड़ा। अपनी जगहसे उठकर यदि आगे बढ़कर देखे, तो उसके लिए साहस ही नहीं होता था। अब बाहरके दो पलीतोंमेंसे सिर्फ एक ही कुछ कुछ प्रकाश दे रहा था (दूसरा कभीका बुझ गया था), सो अब वह भी बुझने लगा; और प्रकाशकी जगह गन्दा धुआं छोड़ने लगा। प्रकाश बिलकुल ही नहीं रहा। अतएव हनुमानजीका खिसकना भी अब दिखाई न पड़ने लगा। सिपाही बेचारा चुपचाप वैसा ही खड़ा रहा। करता ही क्या? इतनेमें हनुमानजीके पीछे कुछ उजेलासा दिखाई दिया; और ऐसा जान पड़ा कि, मूर्त्ति अपने स्थानसे हाथ-सवा हाथ आगे हट आई। यह उजेला कहांसे आया? जब हनुमानजी हाथ-सवा हाथ अपनी जगह छोड़कर आगे आ गये थे, तब जो जगह पीछे खाली हो गई, उसीसे तो यह उजेला नहीं आया? उजेला बहुत हो, सो भी नहीं, सिर्फ एक झलकमात्र थी, जो कि नीचेसे ऊपरकी ओर आती हुई दिखाई दी थी। यह सब क्या चमत्कार है? मूर्त्ति आगे क्यों खिसक रही है? उसकी

जो जगह खाली हुई है, उससे हलकासा उजेला ऊपर क्यों आ रहा है? यह सब क्या तमाशा है? हमारे सिपाही मित्रकी बुद्धि बड़े चक्करमें पड़ी। कोई न कोई बड़ा विचित्र भेद इस जगह है, या भूतोंकी लीला है। भूतोंकी लीला कहें, तो हनुमानजीके सामने वह कैसे हो सकती है?

भूत-पिशाच निकट नहिं आवें।
महावीर जब नाम सुनावें॥

तब तो अवश्य ही यह कोई बड़ा भारी रहस्य है। इस रहस्यका भेद हमको अवश्य ही पाना चाहिए। यह सब सोच करके सिपाहीने अपनी तलवार सम्हाली; और आगे कदम रखा। अब उसका यही निश्चय दिखाई दिया कि, सच्ची बातको जाने बिना अब वह नहीं ठहर सकता। सिपाही, एक एक कदम आगे बढ़ाते हुए, हनुमानजीके बिलकुल पास पहुंच गया; और धीरेसे मूर्त्तिके स्कन्धपरसे देखा, तो एक चौकोना छेद दिखाई दिया, जिससे एक दीपककी धीमीसी रोशनी आ रही थी। इसके सिवाय सिपाहीने यह भी सुना कि, कोई कुछ दोहा, चौपाई अथवा श्लोककी तरह कुछ पद्य, बड़ी धीरता-गंभीरताके साथ, आप ही आप, गुन-गुना रहा है। इससे मालूम हुआ कि भीतर कोई मनुष्य अवश्य है; और सिपाही जबकि पहले जमीनपर पड़ा था, उस समय जो शब्द उसके कानमें आये थे, वे भी शायद उसी मनु-

ष्यके थे। इतना मालूम होनेपर सिपाहीकी जिज्ञासा और भी बढ़ी; और उस रहस्यका भेद पानेकी उसकी उत्कट इच्छा हुई। फलतः उसने उस चौकोने छिद्रसे नीचे, उस दीपकके पास, जानेका निश्चय किया—पर, उसके मनमें यह शंका आई कि, शायद हम उधर नीचे गये; और इधर हनुमानजीकी मूर्त्ति फिर अपने स्थानपर आ गई, तो हम भीतर ही रह जायंगे, अथवा जो कोई भीतर हैं, उन्होंने हमारे प्राण ले लिये, तो कैसा होगा? परन्तु सच्चे शूर पुरुषके लिए ऐसी शंकाएं कब-तक बाधक हो सकती हैं? उसने इस शंकाको क्षणभर भी अपने मनमें ठहरने नहीं दिया।

"मैं सच्चे मराठेका पुत्र हूं; ऐसी शंकाओंमें उलझा रहूं?" यह कहते हुए पिछली ओर जाकर उसने उतरनेकी तैयारी की। और "जय बजरंगबलीकी!" ये शब्द उच्चारण करके उसने भीतर पैर डाले।

तीसरा परिच्छेद।

किला सुलतानगढ़।

परन्तु आओ, अब अपने सिपाही मित्रको बजरंगबलीकी मूर्त्तिके नीचे, भुँहारेमें, घुसनेके उद्योगमें छोड़कर, हम दूसरी ओर चलें। वह उस भुँहारेमें घुसा, अथवा घुसनेके पहले ही

उसके सामने कोई विघ्न आया, अथवा बिना किसी बाधाके भीतर प्रविष्ट होकर उसने कोई निराला ही दृश्य देखा, इत्यादि बातें आगे-पीछे, फिर कभी देखी जायंगी। इस समय तो उसे यथेच्छ अपने उद्योगमें लगा रहने दें; और अपनी दृष्टि उसकी ओरसे हटाकर दूसरी ओर ले जावें।

यह दृष्टि बहुत दूरपर ले जाना है। पाठकोंको स्मरण होगा कि, हमने पहलेपहल अपने सिपाही युवकको पूना और सासवड़के बीचके मार्गपर देखा था। और अब जिस जगह हम उसे छोड़ रहे हैं—अर्थात् उपर्युक्त हनुमानजीका मन्दिर अवश्य ही उसी मार्गके आसपास कहीं दस-पांच मीलके अन्दर होगा। परन्तु अब, जिस स्थानपर चलनेके लिए हम अपने पाठकोंको कष्ट देना चाहते हैं, वह बहुत दूर है। अर्थात् अब हम बीजापुर रियासतकी सीमामें एक भारी किलेकी ओर चलनेकी प्रार्थना अपने पाठकोंसे करेंगे।

जिस समयका कथानक लिखना हमने प्रारम्भ किया है, उस समय बीजापुरके अधिकारमें बहुत बड़ा प्रदेश था; और सो भी इस तरह नहीं था कि, बीजापुरके आस ही पास खूब विस्तृत हो। नहीं, उस समयकी दशा ही कुछ ऐसी थी कि, जहां जिसका जोर चले, वहीं वह अपना जोर चला ले; और जबतक उसकी शक्ति रहे, तबतक उसको अपने कब्जेमें रखे। इस प्रकार जो प्रदेश हाथ लगता था, उसके लिए यह कोई नियम नहीं था कि, कबतक यह उसके हाथमें रहेगा; और कब

उसे उसके हाथसे दूसरा कोई छीन लेगा। इसलिए जबतक उसके हाथमें वह प्रदेश रहता, तबतक मनमाने तौरसे वह उसपर शासन करता—इस प्रणालीमें इस बातका ध्यान प्रायः बहुत कम रहता था कि, इससे प्रजा पीड़ित होती है या क्या? उसमें कुछ भी जान रही है, अथवा नहीं। जेता और शासक लोगोंका उस समय यही हाल था। तदनुसार बीजापुरके कई बादशाहोंने भी महाराष्ट्र प्रदेशके कई भागोंमें अनेक किले जीते थे; और उनको अपने अधिकारमें रखा था। दिल्लीके मुगलोंके साथ उनकी जो लड़ाइयां होती थीं, उनमें कभी कुछ किले उनके हाथसे निकल जाते; और कभी कुछ फिर आ जाते। जो हो। यहांपर हमको उस इतिहाससे कोई विशेष तात्पर्य नहीं है—हमको तो इस समय अपने पाठकोंको सिर्फ सुलतानगढ़के किलेपर ही ले जाना है।

महाराष्ट्रमें उस समय जो बड़े बड़े किले थे, और नाममात्रके लिए अब भी जो मौजूद हैं, उनमें सुलतानगढ़का किला बहुत प्रसिद्ध था। यह किला किस समय किसने बनाया, इसके विषयमें कहीं कोई वृत्तान्त नहीं मिलता। अतएव उसके बनवानेके विषयमें, और उसकी रचनाके विषयमें अनेक लोगोंने अनेक अनुमान किये हैं। जो हो, इतना निश्चय है कि, वह किला बीजापुरके बादशाहोंके समयका नहीं है; अथवा पहले जो ब्राह्मण राजा हो गये, उनका बनवाया हुआ भी नहीं है; और उनके पहले जो मुगल शासक दक्षिणकी ओर चढ़ाइयां करके

गये थे, उनके समयका भी नहीं है। सच तो यह है कि, देवगढ़के समान, जो अत्यन्त पुराने मराठोंके किले हैं, उन्हींमेंसे एक यह भी है। किलेके नीचे सुलतानपुर नामक एक छोटा-सा गांव था, उसके लोग किलेके विषयमें भिन्न भिन्न दन्तकथाएं बतलाया करते थे, जिनसे यह मालूम होता था कि, यह किला भीम, अर्जुन इत्यादि पाण्डवोंके समयका बना हुआ है। वहांके लोगोंका कथन है कि पांडवोंने अपने अज्ञातवासके समयमें अपने छिपनेके लिए जो अनेक सुरक्षित स्थान पहाड़ोंमें बनाये थे, उन्हींमेंसे यह किला भी है; और इसका बहुत प्राचीन नाम भीमगढ़ है। इसके सिवाय इस किलेका आकार भी अन्य पहाड़ी, कृत्रिम गुफाओंकी ही तरह बना हुआ है। इस-कारण सर्वसाधारण लोगोंका विश्वास स्वाभाविक ही जम गया कि, यह पांडवोंका ही किला है। किलेका सम्पूर्ण स्वरूप पहाड़के अन्दर इस प्रकार छिप जाता है कि, दूरसे देखनेवालेको वह किला मालूम ही नहीं होता। अलाउद्दीनसे लेकर आगे जितने शासकोंने उस किलेको अपने अधिकारमें रखा, सभीने अपनी अपनी इच्छाके अनुसार किलेकी मरम्मत करवाई, कोट बनवाये, इसलिए उसका रूप भी पहलेसे बहुत कुछ परिवर्तित हो गया। इसमें सन्देह नहीं कि, किलेकी अत्यन्त प्राचीनताके विषयमें ऊपर जिस दन्तकथाका उल्लेख किया गया है, वह परम्परासे ही चली आती होगी। कुछ भी हो, इतना कहनेमें कोई प्रत्यवाय नहीं कि, यह किला मुगलोंके शासनमें नहीं बनवाया

गया है; किन्तु महाराष्ट्रके अत्यन्त प्राचीन कालके राजवंशोंमेंसे किसी महापुरुषने बनवाया होगा। किलेके दो-तीन दरवाजोंपर कुछ शिलालेख टूटी-फूटी दशामें मौजूद हैं, जिनपर एक विचित्र प्रकारकी लिपि लिखी हुई है। उससे भी हमारा ऊपरका ही अनुमान दृढ़ होता है। इस किलेका प्राचीन नाम यद्यपि भीम-गढ़ है, पर जिस समयमें हम अपने पाठकोंके साथ, इसे देखने जा रहे हैं, उस समय इसे सुलतानगढ़ ही कहते थे; और कागजपत्रोंमें भी इसे "सुलतानगढ़का किला" ही लिखते थे। सुलतानगढ़ नाम भी बहुत पुराना है। पर यह नहीं कहा जा सकता कि,किस सुलतानने इसे जीतकर इसका यह नाम रखा। किसी किसीका कथन है कि, बीजापुरकी गद्दीके मूल संस्थापक यूसुफ आदिलशाहने ही इस किलेको जीतकर, इसके नीचेके गाँवका नाम सुलतानगढ़ और सुलतानपुर रखा। किसी किसीका कथन है कि, मुगलोंने ही अति प्राचीन कालमें ये नाम रखे।

इस संपूर्ण इतिहासके यहां बतलानेका वास्तवमें यही कारण है कि, इस किलेका सुलतानगढ़ नाम यद्यपि मुसलमानी ज्ञान पड़ता है; पर वास्तवमें वह किला बहुत पुराना था; और इस कारण बहुत मजबूत भी था। स्वयं मुगलोंने जैसे किले बनवाये, अथवा उनके अनन्तर जो बनवाये गये, उस प्रकारका यह किला केवल दिखाऊ नहीं था। यह किला अपनी भव्यता और मजबूतीके कारण अपने आसपास ४०-५० कोसकी दूरीतक बहुत बड़ा प्रभाव

रखता था। किलेके आसपास पहले दो तरफ पहाड़का ही हिस्सा था। पर्वतकी श्रेणीका एक बहुत बड़ा भाग देखकर ही पहलेपहल यह किला तैयार करवाया गया। बाकी दोनों तरफ यद्यपि थोड़ा-बहुत उतार और फिर सपाट जगह थी; परन्तु जंगल और झाड़ियां उस ओर भी इतनी घनी और विस्तृत थीं कि पाससे देखनेवालेको सारा जंगल ही जंगल दिखाई देता था। किला सिर्फ थोड़ासा ऊपर दिखाई देता था; परन्तु यदि बहुत दूरसे देखा जाय, तो सुलतानपुर भी झाड़ियोंमें ही छिपा हुआ दिखाई देता था।

सुलतानपुर एक बहुत छोटा गांव था—बस, लगभग सौ-सवासौ घर होंगे। जन-संख्या लगभग चार-पांच सौके होगी। किलेके सहारे यह गांव बसा था। गांवकी नम्बरदारी किले-दारके ही हाथमें थी। परन्तु गांवके सच्चे नम्बरदार उस समय पटेल लोग होते थे। गांवका कोई भी मामला होता, आवजी नामक पटेलके यहां अवश्य जाता था। किलेपर चाहे कोई आदमी आवे; और चाहे वहांसे कोई जावे, उसको आवजी पटेलके मकानपर जाकर सब समाचार अवश्य ही बतलाना चाहिए। इसके बाद फिर वह चाहे जहां जावे। यह एक प्रकारका नियमसा बन गया था। आवजीके घरका हुक्कापानी जिसे पसन्द न हो, अथवा जो उसकी अप्रसन्नता सम्पादन करना चाहता हो, वह भले ही आवजीका घर बचाकर किलेपर चला जावे; और उससे छिपकर किलेसे वापस भी चला जाय। परन्तु

सच तो यह है कि, आवजीके घरकी गप्पों और उसके घरके हुक्के पानीका ऐसा कुछ आकर्षण था कि सुलतानपुर गांवके आसपास जो भी कोई आ जाता, वह फिर आवजी पटेलके घर गये बिना नहीं रहता था।

पिछले परिच्छेदमें जिस रात्रिका वृत्तान्त बतलाया गया है, वह रात अब बीत चुकी थी; और सूर्यनारायणने अपनी प्रकाशमय किरणोंको सुलतानगढ़पर और सुलतानपुरके आसपासके जंगलके ऊंचे ऊंचे वृक्षोंके शिखरोंपर फैलाना प्रारम्भ कर दिया था। सासवड़ गांवकी ओर यद्यपि उस रातको इतनी भारी वृष्टि हुई थी, पर सुलतानगढ़ और सुलतानपुरकी ओर सिर्फ बादलोंके घिर आनेके अतिरिक्त और कुछ भी नहीं हुआ था। यहांतक कि पानीकी एक बूंद भी नीचे नहीं आयी थी। हां, आकाशमें बादलोंकी कमी नहीं थी। परन्तु सुबहके करीब ऐसी तेज हवा शुरू हुई कि, जिसने बादलोंको बिल्कुल हटा दिया; और आकाश करीब करीब बिल्कुल स्वच्छ कर दिया। अतएव उस दिन प्रभातकालकी शोभा बहुत ही सुन्दर दिखाई देती थी। पिछली रात बादलोंसे घिरे हुए आकाशकी ओर देखनेसे वर्षाकालके प्रारम्भका रौद्र स्वरूप दिखाई देने लगता था; परन्तु आज वह स्वरूप नहीं था; किन्तु उसकी जगह बहुत ही सुन्दर और सौम्य स्वरूप दृष्टिगोचर हो रहा था। प्रातःकालका दृश्य बहुत ही रमणीय दिखाई दे रहा था; और उस समय बिछौनेपर पड़े रहनेका कोई मौका नहीं था। परन्तु
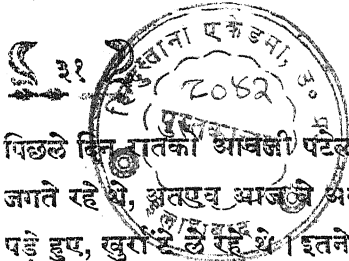
पिछले दिन रातको आवजी पटेल किसी कारणसे बहुत देरतक जगते रहे थे, अतएव आज वे अब भी, घुटनोंतक ऊंचे गद्देपर पड़े हुए, खुर्राटे ले रहे थे। इतनेमें उनके दरवाजेके पास आकर एक नौकर चिल्लाकर कहने लगा—"पटेल साहब, किलेसे सुभान आया है, सुभान!" इधर सुभान भी बाहरकी ओर चिन्तातुर खड़ा था।

आवजी पटेलका नौकर जोर जोरसे और घबराया हुआसा पुकार रहा था; और सुभानका चेहरा भी चिन्तासे व्याप्त जान पड़ता था, इससे स्पष्ट है कि, सुभान आज किसी न किसी महत्वपूर्ण कार्यके लिए आया था। सुभान यद्यपि आज बिल-कुल गुप्तरूपसे ही आवजीके घर आया था, परन्तु फिर भी लोगोंको उसके आनेका समाचार मिल ही गया था। एक आदमीने सुभानको ऊपरसे जल्दी जल्दी उतरते और आवजीके मकानके सामने ठहरते हुए देखा; उसने दूसरेसे कहा, दूसरेने तीसरेसे कहा,—इस प्रकार उसके आनेका समाचार फैलता ही गया। इधर आवजीको जगानेके लिए भी शोर मच रहा था। फिर क्या पूछना है? बीसियों आदमी किलेपरका समाचार सुननेके लिए आवजीके अहातेमें जमा हो गये, इतनेमें आवजीकी निद्रा भी कुछ दूर हुई; और उन्होंने खिल्लाकर पूछा कि, "क्या गड़बड़ मचा रखा है?" यह सुनते ही सुभान आगे बढ़कर बोला:—

"पटेलजी, आपको सरकारने ऊपर बुलाया है। जल्दी चलिये।"

पटेलजी सुभानके उपर्युक्त शब्द सुनते ही "क्या है? क्या है रे सुभान!" कहते हुए तुरन्त उठे और बोले—"नाना साहब-का कुछ समाचार मिला? कोई कुछ खबर लेकर आया? अरे, बोल जल्दी। गूंगेकी तरह क्या देखता है? कोई आया? कोई आया? बोलता क्यों नहीं?"

"पटेल साहब, आप यह क्या कहते हैं? कोई आवेगा, तो क्या आपसे मिले बिना ऊपर चला जायगा? न कोई आया और न कोई गया। ऊपर पहुंचनेके पहले ही आपको सब खबर मिल जायगी। आप ऊपर चलते हैं? शीघ्र चलिये। बड़े सर-कारने मुझसे कहा है कि, "आवजी पटेलको जल्दी साथ ही ले आओ।"

बाहर जो लोग जमा हो गये थे, उन्होंने यह बातचीत सुनी; और उनमेंसे एक-दोकी यह इच्छा भी हुई कि बीचमें ही बोल-कर कुछ पूछ-तांछ करें। तदनुसार उन्होंने कुछ पूछा भी; पर-न्तु आवजी पटेलने उनको एक ऐसी डांट बतलाई कि, जिससे उन बेचारोंको अपनी जिज्ञासा दाबनी पड़ी? सुभानकी अंतिम बात सुनकर आवजी पटेल कुछ चिन्ताग्रस्तसे दिखाई दिये। इसके बाद कुछ अश्लील शब्द मन ही मन कहकर बोले—"चल, चल, आता हूं। परन्तु जंगल तो हो आऊँ, तबतक तू जरा हुक्का भरनेको तो कह दे। नहीं तो तू ही भर ला—अरे, ये कौन निठल्ले लोग जमा हुए हैं? यदि कुछ काम बतलाया जाय, तो कोई भी करनेको तैयार न होगा, परन्तु देखो यों ही

कैसे दौड़ते चले आ रहे हैं।" इस प्रकार कुछ बक-झककर सवारी लोटा लेकर जङ्गल चली गई। आवजीके जाते ही लोगोंमें जरा अधिक दम आ गया। बहुतसे लोग सुभानके आसपास जमा हो गये; और एक साथ ही सब मिलकर प्रश्न करने लगे। सबके पूछनेका मतलब एक ही था। दो बातोंपर विशेष जोर था—एक "नाना साहबकी कुछ खबर मिली?" दूसरी "बड़े सरकारकी तबियत कैसी है?"

दोनों बातोंके उत्तर सुभानने इस प्रकार दिये—"हमें कुछ नहीं मालूम। लोग गये हैं; वे जब लौटेंगे, तब पहले गांवमें ही आवेंगे, पीछे किलेपर जायंगे। इसलिए जो खबर आवेगी, पहले गांवमें ही आवेगी, पीछे किलेपर पहुंचेगी। बड़े सरकारकी तबियत जैसी थी, वैसी ही है। उसमें कोई विशेष अन्तर नहीं।" परन्तु इस प्रकारके उत्तरोंसे उन चतुर लोगोंको सन्तोष थोड़े ही हो सकता था, उनको मुख्य बात तो और ही पूछनी थी। ये तो ऊपरी बातें थीं। मुख्य प्रश्न उनको यही करना था कि, आवजी पटेलको इतनी जल्दी क्यों बुलाया है? इतनी जल्दीसे बुलानेका कारण क्या है? यह बात मालूम हुए बिना उन लोगोंको सन्तोष नहीं हो सकता था। परन्तु सुभान भी उनको ठीक ठीक उत्तर देकर सन्तुष्ट करनेमें समर्थ नहीं था; क्योंकि स्वयं उसको भी यह बात मालूम न थी कि, आवजी पटेलको किलेपर क्यों बुलवा भेजा है। हां, उसने अपने मनमें कुछ न कुछ अनुमान अवश्य कर लिया था; परन्तु वह

उसे लोगोंपर प्रकट नहीं करना चाहता था। इसके सिवाय, लोगोंको वह यह भी मालूम होने देना नहीं चाहता था कि, उसको इस विषयमें कुछ भी मालूम नहीं है। लोगोंकी दृष्टिमें अपना कुछ न कुछ महत्व वह अवश्य रखना चाहता था; और इसीकारण उनके सामने उसने यह प्रकट किया कि, उसे कुछ न कुछ मालूम अवश्य है, पर वह लोगोंको बतलाना नहीं चाहता। अस्तु।

एकत्रित लोगोंने अनेक प्रकारसे उससे प्रश्न किये। परन्तु उसने टाल-मटूलके ही उत्तर प्रदान किये। इतनेमें आवजी पटेल भी दिशा-फरागतसे वापस आ गये। इधर सुभानने हुक्का तैयार कर रखा था। उसे जल्दी जल्दीसे, परन्तु बड़ी शानके साथ, पीकर एकत्रित लोगोंको फिर दो-चार गालियां सुना दीं; और मुंशीजीको भी कुछ काम-वाम बतलाया। इतनेमें वहां गाँवके जोशीजी आ गये, उनसे भी कुछ उलहना सा देते हुए कहा—"जोशीजी, आपका तो वह सब गणित-वणित व्यर्थ गया। बहुत कुण्डलियां-उण्डलियां खचाईं, पर कोई लाभ न हुआ! नाना साहबका कुछ भी पता न चला।" यह कहकर पटेलने अपने मुखकी ऐसी चेष्टा बनाई कि, जैसे जोशीजीको उन्होंने खूब शर्मिन्दासा किया हो! इसके बाद फिर एक बार हुक्का गुड़गुड़ाया; और अपने भुजदण्डोंपर हाथ फेरा। इसके बाद अपनी पुरानी चालकी पगड़ी और अंगरखा पहनकर और चौड़ी किनारीका दुपट्टा गलेमें डालकर तथा हाथमें अपनी

लम्बी, टेढ़ी तलवार लेकर पटेलजी सुभानके साथ किलेपर चले।

इतनेमें सूर्यभगवान दो-तीन हाथ ऊपर चढ़ आये थे। पटेलजीको यह आशा थी कि, एकत्रित लोगोंमेंसे कोई न कोई यह कहेगा कि, हम भी साथ चलते हैं; और इसी आशासे उन्होंने चारों ओर दृष्टि भी फेंकी। आस्तीनें जरा ऊपर चढ़ाईं, तलवार इस हाथसे उस हाथमें ली, उस हाथसे फिर इस हाथमें ली; और यह कहकर कि, "श्यामा, अरे यहां बैठा क्या करेगा? चल न हमारे साथ। वहां कुछ काम लगेगा, तो अच्छा होगा नीचे भेजनेको—कुछ नहीं—चल, चल" श्यामाके गलेमें अपना हाथ डाला। श्यामा सिर्फ चौदह-पन्द्रह वर्षका एक लड़का था। वह भी पटेलजीके साथ जानेकी ही इच्छा रखता था। अतएव तुरन्त ही चल दिया। पटेलजी, सुभान और आगे आगे श्यामा—तीनों जने आगे चले; और पीछे पीछे गांवके लोग। परन्तु गांव-बाहरतक गांवके लोग एक एक, दो दो करके सब लौट पड़े। किलेकी चढ़ाईतक कोई भी न रहा। उपर्युक्त तीनों ही रह गये। जहांसे किलेकी चढ़ाई शुरू होती थी, वहांतक पटेलजीकी जीभ खूब चलती रही; पर आगे कुछ कम हो गई। हां, मार्ग उनके रोजके आने-जानेका ही था; अतएव कुछ कठिनाई नहीं जान पड़ी। अस्तु। मार्गमें उनकी जो बातचीत हुई, वह पाठकोंके जाननेयोग्य है, अतएव यहांपर दी जाती है।

"क्यों रे सुभान, बड़े सरकार तो नाना साहबपर अवश्य ही प्रसन्न होंगे, अन्यथा उनकी अनुपस्थितिमें वे इतने बीमार क्यों हो जाते ?"

"वाह पटेलजी ! आप यह क्या पूछते हैं ? नाना साहबका कोई भी कार्य बड़े सरकारको पसन्द नहीं आता। वे सदैव उनसे यही कहा करते—'तू यदि हमारे घरमें पैदा ही न हुआ होता, तो बहुत अच्छा होता। तूने हमारे कुलका सत्यानाश करनेके लिए जन्म लिया है। तू कभी न कभी अपने सारे घर-बारको बरबाद किये विना न छोड़ेगा। मैं तुझसे कोई सम्बन्ध नहीं रखना चाहता। तुझे देखते ही मेरी देह जल उठती है।' हां, जिस दिनसे वे चले गये हैं, उस दिनसे अवश्य ही उनको हायसी पैठ गई है। घड़ी घड़ीपर पूछते रहते हैं,—'अरे कोई आया उसका पता लगाकर ? कहां है वह ? कुशलसे तो है ?' एक घड़ी भी नहीं मानते, इसी प्रकार पूछते रहते हैं।"

"क्यों रे सुभान, नाना साहब जिस दिन गायब हुए, उसके पहले दिन रातको क्या कोई विशेष बात हुई थी ?"

"हां हां, पटेलजी, उस दिन बड़े सरकारने न जाने क्या क्या कहा; और इसीलिए तो नाना साहब नाराज होकर चले गये।"

"क्या ? क्या ? बड़े सरकारने ऐसी कौनसी बात कही कि, जिससे वे घर छोड़कर न जाने कहां चले गये ?"

"वाह ! पटेलजी, मालूम होता है, इस विषयमें आपने कुछ

सुना ही नहीं है! पटेलजी, यह तो आप जानते ही हैं कि, नाना साहब मुसलमानोंका नाम सुनते ही चिढ़ जाते हैं। क्या वहांसे सारा ही किस्सा बतलाना पड़ेगा? आप तो ऐसे पूछते हैं, जैसे कुछ जानते ही न हों!"

"अरे, ऐसी बात नहीं है। मुझे आजतकका सारा हाल मालूम है। तू सिर्फ इतना ही बतला कि, नाना साहब जिस दिन गये, उस दिन क्या बात हुई?"

"अजी, वही तो मुख्य बात है। बादशाहके यहांसे एक पोशाक और खरीता आया था कि, नाना साहब अब बड़े हुए हैं; और उनकी वीरताकी अनेक बातें हमारे कानोंमें आई हैं, सो उनको वर्ष-दो वर्षके लिए दरबारमें, हुजूरकी सेवामें, भेज दो। यदि भेजना हो, तो इस खरीतेको देखते ही भेजो।"

"इस प्रकारका खरीता और वह बढ़िया पोशाक देखकर बड़े सरकारको अत्यन्त हर्ष हुआ; और उनके मुखसे अचानक ये आनन्द-प्रदर्शक वचन निकल पड़े, 'इतने दिन जो नौकरी की, उसका आज फल मिला!' इसके बाद तुरन्त ही उन्होंने नाना साहबको बुलवाया। पहले बहुत देरतक तो नाना साहब आये ही नहीं। जब दो-चार बार बुलावा गया, तब कहीं एक बार नाना साहबकी सवारी आई। बड़े सरकारने वह पोशाक उनको दिखलाई, वह खरीता पढ़नेके लिए दिया। परन्तु उस पोशाककी ओर नजर जाते ही नानासाहबके मस्तकमें बल पड़ गये!"

"और खरीता देखकर ?" पटेलजीने बीचमें ही पूछा ।

"हां, खरीता देखकर तो उनका सारा शरीर सन्तप्त हो उठा। होंठ थर थर कांपने लगे, और स्पष्ट दिखाई दिया कि, उनको अत्यन्त क्रोध आ गया।

इतनेमें बड़े सरकार उनसे बोले, 'यह पोशाक देखी ? यह खरीता पढ़ लिया ? अब कल तुमको बीजापुर जाना चाहिए। बादशाहकी आज्ञा शिरोधार्य करनी चाहिए। आज कितनी ही पीढ़ियोंसे उनका अन्न खा रहे हैं।' बस, इतने ही शब्द बड़े सरकारके मुखसे निकले थे कि, नाना साहबकी ऐसी कुछ दशा हो गई, जो बतलाई नहीं जा सकती। क्या कहूं—इतना भारी क्रोध तो मैंने जन्मभर किसीको देखा ही नहीं।"

चौथा परिच्छेद।

बड़े सरकार।

सुभानकी बातें सुनकर पटेल साहबने अपने होंठोंके अन्दर ही अन्दर इस प्रकारके कुछ शब्द कहकर थोड़ीसी टीका-टिप्पणी की, "सच ही है, इन नवीन लड़कोंको मुगलोंका और बादशाहीका नाम सुनते ही एक प्रकारका क्रोध आ जाता है; और उनकी आखें लाल हो जाती हैं।" परन्तु पटेलजीकी यह टीका-टिप्पणी सुभानके ध्यानमें कुछ भी नहीं आई। मानो, जिस पुरुषके क्रोधका वह वर्णन कर रहा था, उस पुरुषकी

क्रुद्ध मूर्त्ति उसकी आंखोंके सामने दिखाई दे रही थी; और उसकी ओर वह एकटक देखसा रहा था। उस मूर्त्तिको देख-कर उसको मानो एक प्रकारका जोशसा आगया और वह आगे बोला:—

“पटेलजी, मैं आपसे यह निश्चित बात कहता हूं। देखिये, हमारे नाना साहबके समान और कोई पुरुष हो ही नहीं सकता। परन्तु बस, इसी एक बातकी उनको ऐसी कुछ चिढ़ है कि, कुछ पूछो मत। और सो भी छुटपनसे ही। मेरा बाप छुट-पनमें उनको खिलाते समय, अथवा घूमनेको ले जाते समय, सदैव चिढ़ाया करता, “नाना साहब, जब तुम बड़े होगे, दर-बारमें जाकर बड़ीसी नौकरी करोगे, बड़े बड़े ओहदे पाओगे; और सरदारोंकी बराबरीपर तुम्हें गद्दी मिलेगी!” जहां वे ऐसा कहने लगते, तहां नाना साहबका चिढ़ना शुरू हो जाता। वे इतने क्रुद्ध होते कि, कभी कभी हमारे बापको काट भी लेते थे। बस, तभीसे उनका यह हाल है—जहां मुगलोंका अथवा बादशाही दरबारका नाम लिया गया कि, वे एकदम भड़के! और जैसे जैसे वे चिढ़ते, वैसे ही वैसे हम सब उनको और भी अधिक चिढ़ाते थे। कोई कहता, बादशाह नाना साहबको अपना दामाद बनावेगा। कोई कहता कि, ये अफजलखांके दामाद होंगे। इस प्रकार कोई कुछ और कोई कुछ कहकर उनको चिढ़ाता, फिर वे क्रुद्ध होकर बड़े सरकार और माई-जीके यहां जाकर हम लोगोंकी शिकायत करते। बालकपनकी

उनकी यह लीला देखकर सबको बड़ा कौतुक होता था। वे सब बातें अब भी मेरी आंखोंके सामने हैं। परन्तु उस समय यह किसीको मालूम नहीं था कि, आगे भी इनका ऐसा ही हाल बना रहेगा। उस समय तो बालककी लीला देखकर सबको कौतूहल होता था। उसमें कोई विशेषता नहीं जान पड़ती थी, पर अब तो कुछ पूछिये ही नहीं...”

“सुभान, यह तू क्या कह रहा है? यह तो सब मुझे मालूम है! मैं क्या कोई कलका आदमी हूं? तू तो ऐसे बतला रहा है कि, जैसे मैं कोई नवीन ही यहां आया हूं! अरे, ये सब बातें तो नाना साहबकी मुझे मालूम ही हैं—तू तो यही बतला कि, उस दिन रातको फिर क्या हुआ?।”

“हां, हां, पटेल साहब! सब बतलाता हूं। परन्तु बीचमें यह याद आ गया, सो बतला दिया। मैं कब कहता हूं कि आपको मालूम नहीं? अच्छा, मैं भूल गया, कहांतक बतलाया था?”

“बड़े सरकारको बातें सुनकर नाना साहब बहुत क्रुद्ध हुए......” श्यामा, जो आगे आगे चल रहा था, बीच हीमें पीछे घूमकर एकदम बोल उठा।

उस लड़केके ये शब्द सुनकर दोनों ही कुछ चकित हुए। इससे जान पड़ा कि, वह भी बड़े ध्यानसे उन दोनोंकी बातें सुन रहा था। आवजी पटेलने बड़ी बड़ी आंखें निकालकर उसकी ओर देखते हुए कहा, “क्योंरे छोकरे, हमारी बातोंमें तू

क्यों बीचमें पड़ता है? शैतान कहींका! ठहर, बदमाश! अभी तेरे कान खींचता हूं। चल आगे, ख़बरदार, जो हमारी बातें सुनीं!"

श्यामा ऐसी धमकीसे डरनेवाला नहीं था! वह बिलकुल न घबड़ाकर कुछ दूर तो आगे दौड़ता हुआसा गया; परन्तु फिरसे धीमे धीमे चलकर पीछे रहनेका ही प्रयत्न करने लगा।

इधर पटेलजी "फिर क्या हुआ?" कहकर सुभानसे आगेका हाल पूछने लगे। अब सुभानको यह घमण्ड हुआ कि, वाह! देखो, पटेलजीसे भी अधिक किलेके ऊपरका हाल मुझको मालूम है। इसके सिवाय, जो वृत्तान्त वह बतला रहा था, वह उसके मनका था, अतएव वह फिर बड़े प्रेमसे बतलाने लगा—"पटेलजी, नाना साहब अत्यन्त क्रुद्ध हुए, उनके होंठ थर थर कांपने लगे; और मुंहसे एक शब्द भी न निकला—वे इतने सन्तप्त हुए कि, बोल तो निकला नहीं; परन्तु क्रोधसे भरी हुई आंखें नीची करके सिर्फ जमीनकी ओर देखते हुए खड़े रहे। 'हां,' अथवा 'नहीं,' कुछ भी नहीं कह सके।"

"फिर?" पटेलजीने बड़ी आतुरतासे पूछा।

"फिर क्या? बड़े सरकारने उनकी ओर देखकर बड़ी उद्विग्नतासे कहा, कहो, फिर दो-चार दिनमें जाओगे या नहीं? मुहूर्त्त वगैरह देखें? वृहस्पतिवारको बहुत अच्छा मुहूर्त है। देखो, आजतक मैंने तुमको बहुत समझाया, परन्तु तुमने कुछ भी ध्यान नहीं दिया। लड़का समझकर मैंने भी तुमसे कुछ

बहुत कहा-सुना नहीं। पर अब ऐसा नहीं होना चाहिए। अब तुम बड़े हुए। अपनी भलाई-बुराई अब तुम अच्छी तरह समझने लगे हो। अब इस राज-काजकी तरफ ध्यान देना चाहिए। दरबारमें जाना-आना चाहिए। बादशाहका अन्न आज न जाने कितनी पीढ़ियोंसे हम खा रहे हैं, उनके साथ नमकहरामी न करना चाहिए।' इस प्रकार बड़े सरकारने नाना साहबको बहुत समझाया-बुझाया, पर नाना साहबने कुछ भी उत्तर नहीं दिया। वे जैसेके तैसे खड़े रहे। ऊपर आंख उठाकर उन्होंने देखा भी नहीं।"

"इसपर बड़े सरकारने फिर क्रोधित होकर कहा—'क्यों? बिलकुल चुप क्यों हो? बोलते क्यों नहीं?"

"क्या बोलूं? मैं अनेक बार आपसे बतला चुका हूं। कहिये, वही फिर कह दूं। मैं मुसलमानोंके दरबारमें जाकर कभी रह नहीं सकता। उनको सलाम नहीं कर सकता। उनको छूनेसे···"

"आगेके शब्द नाना साहबके मुखमें ही रहे। बड़े सरकार क्रोधसे कांपनेसे लगे; और एकदम बोले, "अभागा कहीं का? तू हमारा कुल डुबोने आया है—तू अपने वंशका नाश करेगा। उसका नाम डुबोयेगा। जिसका नमक आजतक खाया है, उसको अदा नहीं करेगा। नमकहराम बनेगा। यह समझकर, कि, तू अभी छोटा है, नासमझ है, मैंने अभीतक गम खाया। पर अब तू मेरी आंखोंके सामनेसे चला जा। अरे छोकरे, तेरा यह शरीर किस अन्नसे बना है? रोज तू किसका अन्न खाता

है ? जा, चला जा, मेरी आंखोंके सामनेसे टल जा—अब मुझे मुंह न दिखलाना, खबरदार ! अब तेरा मैं नामतक न लूंगा। तू अकेला मेरे एक था; और इसलिये समझता था कि, कुछ तो नाम रखेगा, कुछ न कुछ तो दरबारकी सेवा बजावेगा—पर कुछ नहीं—मेरे नसीबमें ही नहीं है। इसके लिए तू क्या करेगा; और मैं क्या करूंगा? जा—आजसे न मैं तेरा; और न तू मेरा—जन्मभरकी खटखट मिटो ! जा, आजसे तेरे लिए दूरसे ही जो कुछ कलंक मुझपर लगना होगा, सो लगेगा ! मेरे पास रहनेकी अब तुझे कोई आवश्यकता नहीं।"

आगे वे और भी कुछ कहनेवाले थे, पर इतने हीसे क्रोधके आवेगमें उन्हें मूर्च्छासी आ गई; और वे धड़ामसे पृथ्वी-पर गिर पड़े..."

"यह आगेका सारा हाल तो मुझे मालूम है।" आवजी पटेल बीच हीमें बोल उठे।

"उनको जब मूर्च्छा आ गई, तब उनको होशमें लानेके लिए नाना साहब दौड़े; और कुछ उपचार किये; पर ज्यों ही उनकी आंखें खुलीं, त्यों ही नाना साहब उनकी दृष्टिकी ओट हो गये; और रात ही रातमें न जाने कहां चले गये।"

"सो सब मुझे मालूम है—यह बीचका हाल नहीं मालूम था, सो मैंने तुझसे पूछा—अरे, किलेपर जो कुछ होता है, उसका तिल तिल सब वृत्तान्त मुझे मालूम होता रहता है। पर उस दिन—हां, उस दिनका समाचार कोई बतलाने ही नहीं... देख !"

"अजी, उस दिनका समाचार किसीको मालूम ही नहीं हुआ—सिर्फ मैं ही उस समय अकेला था—और यदि कोई होता भी, तो बाहर कैसे बतलाता ? और मैंने भी अभीतक किसीसे नहीं कहा। देखो पटेलजी ! बात रह थोड़े ही सकती है। वह तो किसी न किसी रूपसे फैलेगी ही। नाना साहब जबसे चले गये, बड़े सरकार तबसे बिलकुल बेचैन हैं, उनको चैन नहीं आता। उनको वे बहुत चाहते थे, पर वे क्रोधमें आकर चले गये। अजी, उनके रक्त हीमें यह गुण है, वे मान कैसे सकते थे ? किन्तु पटेलजी, अब नाना साहब गये कहां ? बड़े जोशमें गये हैं। अच्छा, यदि कहें कुछ साथ ले गये, सो भी नहीं। सारे कपड़े-लत्ते और सब सामान, जहांका तहां, रखा है। हां, उनकी प्यारी तलवार कहीं दिखाई नहीं देती। और बाकी सब हथियार-वथियार जहांके तहां रखे हैं। अजी, और कहांतक कहें ? वह सिंहमुखी कड़ा भी उन्होंने अपने कमरेमें पलंगके पास तिपाईपर निकालकर रख दिया ! क्या कहूं ? विचित्र साहसी पुरुष ! और किस ओरसे गये, कुछ पता नहीं !"

"विचित्रता तो यही ! गये कहां और किस ओरसे ! कुछ भी पता नहीं।" आवजी पटेल चिन्तातुर चेष्टा करके कहते हैं—"अरे, चाहे जितनी रातको गये हों, गये तो गांवकी ही ओरसे होंगे—यह निश्चित है—पर ऐसे गये कि, किसीको कुछ नहीं मालूम हुआ—अरे, इतने नौकर ! पर किसी नौकरको भी

खबर नहीं हुई ! बड़े आश्चर्यकी बात है ! पर हां, मुझे अवश्य शङ्का होती है कि, कहां गये। किन्तु निश्चित कुछ भी नहीं कहा जा सकता !"

"हां, हां, वह अपनी शंका तो जरूर बतला दीजिए—मैंने इतना आपको बतलाया पटेलजी ! आप भी तो कुछ मुझे बतला दें।"

सुभान और भी कुछ कहना चाहता था, पर वह आगे कह नहीं सका; क्योंकि इतने हीमें उन दोनोंने सुना कि, दस-बीस मनुष्य यह कहकर, "आइये, आइये, पटेल साहब आइये," उनका स्वागत करने लगे।

"वाह ! पटेल साहब, आपने तो आज खूब ही जल्दी की। प्रतीक्षा भी कहांतक की जावे ?"

यह कहकर सर्फोजी हवलदारने आवजीको उलहनासा दिया, एक दूसरे मनुष्यने और ही कुछ कहा, तीसरेने तीसरे ही प्रकारसे छेड़छाड़ की। आवजीको उत्तर देनेका ही अवकाश न मिला। इतनेमें सुभान कहता है, "अजी साहब, मैं जिस समय पहुंचा, पटेल साहब आनन्दसे सो रहे थे।"

"क्या करूं ? कल रातको बहुत जागना पड़ा, इसलिए जरा..?"

"क्यों, क्यों, जागना क्यों पड़ा, जान पड़ता है, कहीं तमाशा-वमाशा था। हँ-हँ-हँ, पटेलजी उस सजनके छोकरेपर ऐसे कुछ लट्टू हो रहे हैं ! हँ-हँ-हँ ! पटेल साहब, आपने हमें तो खबरतक नहीं दी ! सब आनन्द आप हीने..."

यह सुनकर सब लोग खिलखिलाकर हँसने लगे; और आवजी पटेल बड़े शरमिन्दा हुए; परन्तु इतनेमें कुछ खोझकर बोल उठे:—

"अरे सर्फोजी, तुम यह कहते क्या हो? कल ही तो मैं नाना साहबका पता लगाकर वापस आया हूं—तमाशे-वमाशे कहांके? देखो, किलेपरके सब आदमी उदास हो रहे हैं; और तुमको तमाशेकी पड़ी है! ऐसी बातें मत करो।"

पहले सर्फोजीकी हँसीकी बात सुनकर सब लोग हसने लगे थे, पर आवजी पटेलके ये क्रोधयुक्त वचन सुनकर सबकी हँसी जाती रही; और सर्फोजी हवलदार उदासोनसा दिखाई देने लगा। यह अवसर देखकर आवजी पटेल आगे बढ़े। श्यामा भी साथ ही साथ चल रहा था; परन्तु कान उसके पीछे ही थे; और आंखे चारों ओर लगी हुई थीं। सर्फोजीको दाव-कर आवजी पटेल आगे चलने लगे। इसपर सर्फोजीने पटेलके पीछेकी ओर न जाने किस दृष्टिसे देखा; और मूछें मरोड़कर होंठोंके अन्दर ही अन्दर न जाने क्या कहा। ये सब बातें वह चतुर लड़का श्यामा देखता रहा। उसने एक क्षणमात्रके लिए पीछे देखा; और इतने होमें सर्फोजीकी सारी चेष्टाको अपने मनमें रख लिया।

यह सब होनेके बाद आवजी पटेल किलेपर किलेदारके मकानके पास पहुंचे। वर्तमान समयमें महाराष्ट्रके पहाड़ी किलोंपर जिस भांति जा सकते हैं, उस भांति उस समय नहीं

जा सकते थे। जगह जगह चौकी-पहरा इत्यादिका बन्दोबस्त रहता था। न सिर्फ इतना ही; किन्तु और भी अनेक बातें रहती थीं। उन सबका वर्णन आज इसी परिच्छेदमें करनेकी आवश्यकता नहीं है। सुलतानगढ़के ऊपर हमारे पाठकोंको अभी और भी अनेक बार अनेक भिन्न भिन्न व्यक्तियोंके साथ आना पड़ेगा। आवजी पटेल जिस मार्गसे आये, उस मार्गसे उनके समान सरकारी कामके लिए आनेवाले व्यक्तिको कोई कठिनाई नहीं थी। किलेके अन्दर प्रवेश करना अथवा भीतरसे बाहर जाना, जिन लोगोंके लिए प्रकट रूपसे नहीं हो सकता था, उनकी कठिनाइयों, उनके मार्गोंसे आवजी पटेलको इस समय कोई तात्पर्य न था। वे पांचों दरवाजोंसे चौकीदारोंके द्वारा सलाम लेते हुए ऊपर आ गये।

किलेदारके मकानके पास पहुंचते ही पहरेदारोंके द्वारा आवजीके आनेका समाचार भेजा गया। आवजी उस दिन खास तौरपर बुलवाये गये थे, अतएव तुरन्त ही उन्हें भीतर जाना पड़ा। पहरेपर जो जमादार था, उसने हुक्केको आवजीके सामने किया, पर बेचारे सिर्फ एक ही दो बार उसको गुड़गुड़ा सके; और बहुत जल्दी मुख इत्यादि पोंछकर आगे बढ़े। पहरेके चौकसे आवजी जब अन्दर पहुंचे, तब बाईं ओरके दालानसे आगेकी बैठकमें वह जाने लगे। मार्गमें उन्हें बन्दूक, तलवार, भाला, ढाल, जिरहबख्तर, झिलम-टोप, इत्यादिके अतिरिक्त और कुछ भी दिखलाई नहीं दिया। आवजी बैठकके पास

पहुंचे; और दरवाजेसे ही खूब लचकर तीन बार मुजरा किया। इसके बाद हाथ जोड़े हुए भीतर प्रवेश किया।

इस स्थानमें सर्वत्र खूब मुलायम बिछौना बिछा हुआ था, और एक ओर दीवालसे मिली हुई, सफेद गिलाफकी सुन्दर मसनद लगी हुई थी, उसके दोनों ओर दो बढ़िया तकिये; और आगे खूब ऊँची सुन्दर गद्दी लगी हुई थी, जिसपर सफेद मुलायम चादर बिछी थी। उसपर दो-तीन छोटी छोटी गद्दियां पड़ी हुई थीं; और गद्दीके बीचोंबीच एक वृद्ध—जिसके सब बाल पककर बिलकुल सफेद हो गये थे, जिसका चेहरा खूब भव्य था; और जिसपर वृद्धावस्थाकी अपेक्षा चिन्ताकी ही झलक विशेष दिखाई दे रही थी—इस समय झुका हुआ, गर्दन नीचेको किये हुए, चिन्तायुक्त बैठा था। फिर भी इतना स्पष्ट दिखाई दे रहा था कि, यह पुरुष वास्तवमें पहलेका कोई बड़ा तेजस्वी और भव्य महाशय है। उसके शरीरकी गठनसे ही यह बात प्रकट हो रही थी। आवजी पटेलने भीतर आकर तीन बार झुककर प्रणाम किया, तथापि उस पुरुषका मानो उसकी ओर कुछ भी ध्यान नहीं गया। वह जैसाका तैसा बैठा रहा। आवजी पटेल भी वैसे ही खड़े रहे; और दीवालके चित्रोंकी ओर देखने लगे। इतनेमें उस प्रभावशाली वृद्ध महाशयने ऊपरकी ओर नजर उठाकर कहा—"क्यों, आवजी पटेल, अभीतक तुमको कुछ पता नहीं लगा? तुम सब गांवके लोग ऐसे ही गाफिल पड़े रहते हो? इसी प्रकार यदि बस्तीका

चाहे जो आदमी, चाहे जिस समय आवे-जावेगा और तुमको कुछ पता भी न लगेगा, तो आगे कैसे काम चलेगा ? बतलाओ, आवजी पटेल ?"

आवजी एक शब्द भी नहीं बोल सके। क्या बोलते ?

पांचवां परिच्छेद।

बीजापुरका लिफाफा।

आवजी पटेल बेचारे नीची गर्दन किये हुए खड़े थे। इतनेमें वह वृद्ध महाशय फिर बोल उठे :—

"आवजी, किलेके ऊपरकी गुप्तसे गुप्त खबरें भी चाहे जो आकर ले जावे, तो भी तुमको शायद न मालूम हो ? यदि तुमको अपना नमक इसी प्रकार अदा करना है, तो यहांसे मुंह काला कर जाओ। मैं आज इतने दिनसे प्रतीक्षा कर रहा हूं कि, ये आज नहीं तो कल इस विषयका कोई न कोई समाचार जरूर लावेंगे, पर कुछ भी पता नहीं ! मुझको तो इसकी भी शंका है कि तुमने आदमी भी भेजे हैं या नहीं। बताओ तो कहां कहां आदमी भेजे ?"

यह कहते हुए उन वृद्ध महाशयकी चेष्टा इतनी कठोर जान पड़ी कि, आवजी पटेल बिलकुल घबड़ा गये। उस समयके वृद्ध मनुष्य प्रायः जमदग्निके ही अवतार होते थे। अवश्य

ही वे एक प्रकारसे अत्यन्त दृढ़ और बड़े उग्र होते थे, इस-कारण अधीनस्थ लोगोंपर उनका बड़ा आतंक रहता था। और इसमें सन्देह नहीं कि, राष्ट्रमें जब ऐसे मनुष्य होते हैं, तभी कुछ राजकाज और राष्ट्र-कार्य होते हैं। किलेदार रंगराव अप्पा भी ऐसे ही दृढ़ पुरुषोंमेंसे थे; और इस कारण आसपासके सब गांववालों और अधिकारियोंपर उनका बड़ा प्रभाव रहता था। प्रत्येक मनुष्य जब कोई कार्य करने लगता, तब उसके मनमें यही भाव आ जाता कि, "हम यह करते तो हैं, पर बड़े सर-कार क्या कहेंगे? हम यदि ऐसा करेंगे, तो वे हमको खा हीं जायंगे, खड़े खड़े चिरवा डालेंगे।" बेचारे आवजी पटेल भी उनके अधीन ही थे। ऐसी दशामें यदि वह उनके उपर्युक्त कथनसे थर थर कांपने लगे; और एक शब्द भी पूरा पूरा बोल न सके, तो इसमें आश्चर्य ही क्या है? नाना साहबकी तलाशमें उन्होंने अभीतक बहुतेरे मनुष्य भेजे थे। सुलतानगढ़के चारों तरफ, बड़ी दूर दूरतक अपने आदमी भेजे थे। प्रत्येक गांवमें भलीभांति खोज लगानेके लिए उनको सख्त ताकीद भी कर दी थी। सुलतानगढ़के किसी तरफ भी आदमी भेजनेमें उन्होंने कसर नहीं की थी। इसके सिवाय वे खुद भी बड़ी बारीकीके साथ खोज लगानेको घूमे थे। इतना सब करनेपर भी स्पष्ट रूपसे कहनेको उनकी हिम्मत उस समय नहीं होती थी। एक तो जिह्वा भीतर ही भीतर लड़खड़ाती थी; और यदि कोई शब्द निकलता भी, तो बिलकुल अधूरा रह जाता था!

आवजी पटेलका गांवके लोगोंपर अच्छा प्रभाव था; और जब कभी वह अपने उग्र चेहरे और भव्य शरीरसे गांवके गरीब लोगोंपर अपनी धाक जमाते; और डांट-डपटकी बातें करते, तब उनका दूसरा ही रंग होता था। परन्तु इस समय यदि कोई उन्हें देखता, तो अवश्य ही उसको शंका होती कि, "गांववालों-पर धाक जमाकर उनसे डांट-डपटकी बातें करनेवाले क्या आवजी पटेल यही हैं?" उनके चेहरेका प्रभाव इस समय ऐसा ही उतर गया था! अस्तु। पटेल साहब बड़े अभिमानसे श्यामा नामक लड़केको भी अपने साथ ले आये थे सो पाठकों-को मालूम ही है। अब इस समय उनको यह शंका आई कि, कहीं श्यामा पीछेसे हमारी यह फजीहत तो नहीं देख रहा है; और इसीलिए धीरेसे पीछे घूमकर उन्होंने देखा, तो श्यामा चुपकेसे झांककर देख रहा था। उसकी चेष्टा भी इस समय बड़ी विचित्र हो रही थी, क्योंकि वह अपनी हँसी अन्दर ही अन्दर दबानेका प्रयत्न करता था; परन्तु उसमें उसको सफलता मिलती हुई नहीं दिखाई दे रही थी! श्यामाने ज्यों ही देखा कि, आवजीने उसकी तरफ नजर डाली, त्यों ही उसने अपना सिर पीछे खिसका लिया। यह सब देखकर तो आवजीकी और भी विचित्र दशा हुई। आवजी कुछ कहने न पाये थे कि, इतनेमें बड़े सरकारने फिर अत्यन्त क्रोधित होकर और तिरस्कारकी चेष्टासे कहा, "आवजी, अब मैं तुम्हारी एक भी न सुनूंगा। आजसे चार दिनके अन्दर—देखो, तुमको चार दिनकी मुद्दत

देता हूं—चार दिनके अन्दर ही नाना साहबका पता लगाकर बतलाओ कि, वह किस ओर गया है। यदि इतना काम भी तुमसे न हुआ, तो फिर समझ लेना—मेरा स्वभाव तुम जानते हो। ऐसे नमकहराम हैं ये लोग!"

इतने शब्द उन वृद्ध महाशयने आवजीको सम्बोधन करके कहे; और फिर आवजीकी तरफ बिलकुल ही न देखते हुए पीछे रखी हुई मसनदसे टिक गये।

रंगराव अप्पा साहब किस तरहके पुरुष थे; और उनकी इस समय क्या दशा थी, सो पाठकोंको ऊपरके वर्णनसे मालूम ही हो गया होगा। प्रत्येक संयमी मनुष्यके हृदयका कोई न कोई अत्यन्त निर्बल अंश होता ही है। हमारे पाठकोंमेंसे बहुतोंका अनुभव होगा कि, अन्य सब बातोंमें दृढ़, किंबहुना दुराग्रही और हठी पुरुषोंमें भी कोई न कोई मानसिक मर्मस्थान होता ही है। रंगराव अप्पा साहब भी अत्यन्त कठोर, दृढ़, शूरवीर और संकीर्ण स्वभावके व्यक्ति थे। वे जिस कार्यके करनेका एक बार निश्चय कर लेते, उसको किये बिना नहीं मानते थे—फिर चाहे प्रत्यक्ष ब्रह्मा ही क्यों न आ जावें। परन्तु उनके हृदयमें भी एक बड़ी भारी निर्बलता थी—अर्थात् उनको अपने पुत्रपर प्रेम बहुत अधिक था; और उसकी शूरता-का अभिमान भी। छुटपनसे ही वे उस लड़केको प्राणोंसे भी अधिक चाहते थे। युद्धशास्त्र और अन्य विद्याओंमें उन्होंने उसे सुशिक्षित बनानेमें भी कोई बात उठा नहीं रखी थी। उस

लड़केका दुलार भी उन्होंने इतना किया था कि, जितना और किसी बापने न किया होगा। पीछे एक-दो बार इस बातका उल्लेख हो ही चुका है कि, रंगराव अप्पा साहबकी यह बड़ी इच्छा थी कि, उस लड़केके हाथसे उनके कुलकी खूब नामवरी हो, उसको मनसबदारीका ओहदा अथवा हुजूर-दरबारकी दीवानगीरीतक मिल जावे; और यह सब उनकी जिन्दगीमें ही उनकी इच्छाके अनुसार हो। अपनी इस इच्छाको पूर्ण करनेके लिये उन्होंने सब प्रकारके प्रयत्न किये, आपने लड़केको भी सब तरहसे समझाया-बुझाया; और जो कुछ उपदेश वे कर सकते थे, सब किया; पर कोई लाभ न हुआ! मुसल्मानोंका नाम लेते ही उस लड़केका चेहरा तिरस्कार, द्वेष और क्रोधसे सुर्ख हो जाता था। मुसल्मानोंके विषय में बातचीत करते समय वह 'म्लेच्छ' शब्दका ही सदैव व्यवहार करता। फिर भी अप्पा साहबका यह खयाल था कि, हम किसी न किसी प्रकार उसको समझा लेंगे; और इसीलिये उन्होंने साम-दाम, दण्ड-भेद इत्यादि सब उपाय किये। इतनेमें उन्होंने यह भी सोचा कि, बादशाहके यहांसे बुलावा आनेपर ही शायद यह जानेको तैयार हो जाय। इसलिये वे वैसा ही प्रयत्न करना चाहते थे, पर पीछेसे वैसे प्रयत्न करनेकी भी आवश्यकता नहीं रही; क्योंकि उनकी इच्छाके अनुसार, जैसाकि पिछले परिच्छेदमें बतलाया है, स्वयं बादशाहकी ओरसे ही एक खरीता और पोशाक आ गई। उसके आते ही अप्पा साहबको बड़ा

आनन्द हुआ; पर उस आनन्दका अन्त किस प्रकार हुआ, सो पिछले परिच्छेदमें सुभान और आवजीके सम्भाषणसे मालूम ही हो चुका है। अप्पा साहबने जब यह देखा कि, लड़का हमारी एक भी नहीं सुनता; और बड़ी उद्दण्डतासे उत्तर देता है—यही नहीं, किन्तु उसने हमारी आजतककी सारी आशाओं, सम्पूर्ण इच्छाओं और महत्वाकांक्षापर पानी फेर दिया; और कुलको कलंक लगाने तथा स्वयं अपनेको भी बरबाद कर लेनेका मौका उपस्थित कर दिया, तब उनको अत्यन्त खेद हुआ; और उस खेदका क्या परिणाम हुआ, सो पाठकोंको पिछले परिच्छेदसे मालूम ही हो चुका है। अप्पा साहबने अत्यन्त खिन्न होकर अपने लड़केके सामने ऐसे कटु वचन कहे कि, जो उसके हृदयमें वाणकी तरह चुभ गये; और वह किलेको छोड़कर बाहर चला गया। बड़े सरकारको ज्यों ही यह मालूम हुआ कि, हमारा लड़का बाहर भाग गया, त्यों ही उनकी कुछ विचित्रसी दशा हो गई। उन्होंने जब देखा कि, जो लड़का हमारा प्राणोंसे भी प्यारा था, वह हमारी इच्छाओं, आशाओं, किंबहुना हमारे शरीर-की भी परवा न करते हुए यहांसे चला गया, हमसे एक शब्द भी न बोला; और न दो-चार शब्द लिखकर ही छोड़ गया, तब उन्हें अत्यन्त शोक हुआ। बस, उनके अत्यन्त कठोर हृदयका मृदुस्थान यही था कि, उनको अपने लड़केपर अत्यन्त प्रेम—प्रेम क्या मोह था। लड़का जबतक उनके सामने था, तबतक तो उन्होंने उससे अनेक प्रकारकी बातें कीं; परन्तु उनकी बातोंसे

नाराज होकर जब वह चला गया, तब उनका धैर्य छूट गया। वे बिलकुल अधीर हो उठे। परन्तु अपने मनकी यह दशा उन्होंने किसीपर प्रकट नहीं होने दी; बल्कि यह कहनेमें भी कोई प्रत्यवाय नहीं कि, उनके मनकी यह सच्ची दशा सुभानके अतिरिक्त और किसीको भी मालूम नहीं थी। सुभानके अतिरिक्त और किसीके सामने भी उन्होंने ऐसे वचन अपने मुखसे कभी नहीं निकाले कि, जिससे उनके हृदयका दुःख प्रकट होकर उनके धैर्यगलित होनेका परिचय मिलता। हां, इसके विरुद्ध, सबके सामने उनके मुखसे इस प्रकारके कठोर शब्द ही निकला करते थे कि, इस दुष्टको पकड़कर गिरफ्तार कर लेना चाहिए, उसको एक कोठरीमें बन्द कर देना चाहिए, अथवा जबरदस्ती दरबारमें भेज देना चाहिए। उनके मुखसे ऐसे कठोर वचन सुनकर सबको विश्वास भी यही होता था कि, यह बुड्ढा ऐसा ही कुछ न कुछ किये बिना नहीं रहेगा।

जो कुछ भी हो, बड़े सरकारकी इस दशासे कोई लाभ नहीं हुआ। नाना साहबका कुछ भी पता नहीं लगा। यही नहीं, बल्कि विश्वासपूर्वक कोई यह भी नहीं बतलाता था कि, वे अमुक ओर, अमुक समय, इस इस प्रकारसे गये। वह बुड्ढा अन्दर ही अन्दर तड़फड़ाता रहा। इसी बीचमें दो-तीन भयंकर और विचित्र शंकाएं भी उसके मनमें आईं, जिनके कारण उसके जीकी व्याकुलता और भी बढ़ी।

एक शंका तो यही आती थी कि, यह तूफानी लड़का जिस

ओर गया होगा, उसी ओर किसी मुसलमानसे झगड़ा न हो गया हो कि, जिसमें यह काट डाला गया हो। जिस समयकी आख्यायिका हम लिख रहे हैं, उस समय ऐसा होना कुछ असम्भव भी न था—यही नहीं; बल्कि वारंवार वैसा हुआ ही करता था। हिन्दुओंको चिढ़ानेके लिए मुसलमान उस समय बीच रास्तेपर कभी कभी गोबध करने लगते; और हिन्दू लोग इस-पर यदि कुछ कहते, अथवा कोई ब्राह्मण ही किसी मुसलमानसे झगड़ा करने लगता, तो मुसलमान लोग तत्काल उस हिन्दूको घायल करते अथवा तलवारसे काट डालते थे। मुग़लराज्यमें प्रायः यह भी देखा जाता कि, मुसलमान लोग रास्ते चलते हिन्दू-स्त्रियोंसे छेड़-छाड़ करते; और खिल-खिलाकर हँसा करते थे। मतलब यह कि, उस समय मुसलमानोंका व्यवहार इतना असह्य हो गया था कि, प्रत्येकके मनमें उनके विषयमें द्वेष उत्पन्न हो गया था। इसका कारण सिर्फ मुसलमानोंका दुरभिमान ही था। राज्यमदमें वे इतने मतवाले हो गये थे कि, किस समय किसका अपमान कर डालेंगे, इसका कुछ ठिकाना ही न था। उसमें भी फिर उस समय औरङ्गजेबका शासन जारी था! फिर क्या पूछना है? मुसलमानोंके दिमागका पता ही न था! औरंगजेबके धार्मिक अत्याचार, मन्दिरोंके ढहाने, मूर्त्तियोंके तोड़ने और ब्राह्मणोंके धर्म-भ्रष्ट करनेके नित्य नये नये समाचार दक्षिणमें आया करते थे। स्वयं वहां भी इसी प्रकारकी अनेक घटनाएं समय समयपर हो जाया

करती थीं। अतएव नवीन पीढ़ीके नवयुवक मुसलमानी राज्यसे बहुत ही उद्विग्न हो उठे थे। अनेक सरदारोंके मनमें भी यही आने लगा था कि, इस भयंकर दशासे यदि हमारा किसी प्रकार छुटकारा हो जाय, तो अच्छी बात है। भोले भाविक लोगोंमें यह भाव भी फैल रहा था कि, इस भयंकर दशासे हिन्दुओं महाराष्ट्र-निवासियोंको—मुक्त करनेके लिए कोई न कोई अवतारी पुरुष अवश्य प्रकट होगा; और इस भावनापर अनेक लोगोंकी पूरी पूरी श्रद्धा भी जम गई थी। नवीन पीढ़ीके युवकोंको तो अब सिर्फ एक नेताकी ही आवश्यकता रह गई थी। रंगराव अप्पा, जिनका वृत्तान्त पीछे आ चुका है, उनके खानदानके भी अनेक मराठे सरदार, मनसबदार, किलेदार इत्यादि ओहदोंपर थे। वे सब भी यद्यपि वर्तमान भयंकर दशासे छूटने-की इच्छा रखते थे; परन्तु फिर भी उनमें अभी यह कृतज्ञता जागृत थी कि, हम मुसलमानी दरबारके आश्रित हैं। और इसीलिये जब कोई सरदार केवल अपने ही बलपर बग़ावत करनेको तैयार होता, तब वे समझते कि, इसके हाथसे महा-राष्ट्रका उद्धार होना बिलकुल असम्भव है। ये किलेदार और मनसबदार जब कभी यह सुनते कि, शहाजी भोसलेका लड़का शिवाजी पूना, सूपा इत्यादि प्रान्तोंमें और मावल-प्रदेशमें कुछ गड़बड़ मचा रहा है, तब वे प्रायः कहा करते कि, "अरे, इस पागलसे क्या होगा? यों ही मारा जायगा! ये जङ्गली छोकरे अविचारवश अपने ही सिरपर पत्थर पटक लेंगे।

मुग़लबादशाहीका इनसे बाल भी बांका न हो सकेगा। पत्थर-से सिर टकराकर अपना ही सिर फोड़ लेंगे।" इत्यादि। अप्पा साहबके समान जो लोग पूर्णतया राजभक्त थे, वे तो चाहते थे कि, ऐसे उपद्रवी लोगोंको एकदम गिरफ्तार कर लिया जाय; और किलेकी कालकोठरीमें उनको बन्द कर दिया जाय! वे सदैव इसी प्रकारके विचार प्रकट किया करते। वे मुसल्मानी बादशाहतके कट्टर भक्त थे। अप्पा साहब स्वयं अपने लड़केके मुखसे ही जब वैसी भयंकर बातें सुनते, तब उनके शरीरपरके रोंगटे खड़े हो आते; और वे बड़े क्रुद्ध होते थे। परन्तु आज प्रत्यक्ष उनपर वह नौबत ही आ गई, अर्थात् उनके लड़केने स्पष्ट जवाब दे दिया कि, हम मुसल्मानोंकी नौकरी नहीं करेंगे। यही नहीं, बल्कि वह इसीपर क्रुद्ध होकर घरसे भी निकल गया। ऐसी दशामें अप्पाजीके जीको चैन कैसे पड़ सकता था? उनका तो यह ख़याल था कि, बादशाह स्वयं विष्णुका अवतार है; और उसे "कर्तुमकर्तुमन्यथा कर्तु" की शक्ति प्राप्त है। आज इतनी पीढ़ियोंसे हम उसका नमक खा रहे हैं, इसलिये हमको उसीकी नौकरीमें अपने दिन बिताने चाहिये, उसीके लिए अपने प्राण देने चाहिये—इसीमें सच्चा पुरुषार्थ है। उसके विरुद्ध कुछ कहना मानो नमकहरामी करना है। इस प्रकारकी विचारशैलीके जो कुछ थोड़े-बहुत जागीरदार, किलेदार इत्यादि लोग उस समय थे, उनमें रंगराव अप्पा साहब एक प्रमुख व्यक्ति थे। परन्तु उन्हींका लड़का उनके

बिलकुल विरुद्ध पैदा हुआ—यह भी एक समयकी और दैवकी ही महिमा समझनी चाहिये। अप्पा साहबका बादशाहपर जितना दृढ़ प्रेम था, नाना साहबका उतना ही द्वेष। अतएव अप्पा साहबको अब अपनी विचित्र दशाके विषयमें सन्तोष क्योंकर हो सकता था? शहाजी भोसलेके उद्दण्ड पुत्र (शिवाजी) के कार्य जब कभी कानों-कान अप्पाजीको सुनाई देते, तब वे सदैव उसकी हँसी उड़ाते, उसको बुरा-भला कहते; और कभी कभी गालियांतक देते थे। नाना साहब अपने पिताके मुखसे ज्यों ज्यों शिवाजीके विषयमें उपर्युक्त बातें सुनते, त्यों त्यों उनका हृदय और भी अधिक दृढ़ होता; और शिवाजीके विषयमें उनका पूज्य भाव और भी बढ़ता जाता। इस प्रकार नाना-साहबके मनकी तैयारी भी एक प्रकारसे अप्पा साहबके कार्यों-के फलस्वरूप ही थी। अतएव अप्पा साहबके मनमें दूसरी शङ्का यह उपस्थित हुई कि, हमारा लड़का कहीं उसी उपद्रवी और मनहूस शिवाजीके पास न चला गया हो! इसी प्रकार एक तीसरी शंका उत्पन्न होनेका कारण यह था कि उनका लड़का किलेके नीचे सुलतानपुर और आसपासके अन्य गांवोंमें सदैव जाया करता था; और वहां गरीब लोगोंके नवयुवक लड़कोंमें हिलमिलकर कभी उनको घोड़ेपर बैठना सिखलाता, कभी उनके साथ कुश्ती लड़ता; और कभी उनको अपने पासके हथियार इत्यादि देकर उनको शिकार खेलने ले जाता, गदका-फरी खेलता। सारांश यह कि, दिनका बहुतसा समय उन्हींके

साथ व्यतीत करता। अतएव इस समय अप्पा साहबको तीसरी शंका यह भी उपस्थित हुई कि कहीं वह उन्हीं नव-युवकोंको एकत्रित करके लूटमार करने अथवा इसी प्रकारके अन्य उपद्रव करने तो नहीं चला गया? इन तीन शंकाओंमेंसे पहली और दूसरी शङ्का ही उनके मनमें बार बार आती और उनको कष्ट देती रहती थी। "लड़केको कहीं दंगे-फसादमें मुसल्मानोंने न काट डाला हो!" बस, इसी भयंकर विचारसे उनका हृदय कांप रहा था। अन्य सब बातोंकी अपेक्षा इसी एक बातको उनके मनने विशेष सम्भव मान लिया था; और वैसा होनेके कारण भी उस समय कम नहीं थे, सो पाठकोंको मालूम ही हो चुके हैं। मुसल्मानोंका नाम सुनते ही उसका शरीर जल उठता था, मुसल्मानोंसे लड़ने-भिड़नेमें वह सबसे आगे रहता था। इसलिये कहीं किसी गांवमें गौ, ब्राह्मण अथवा किसी स्त्रीको सताते हुए, यदि वह देख पाता, तो आगे-पीछेका कुछ भी विचार न करते हुए वह आक्रमण कर देता; और मरनेकी भी नौबत आ जाती, तो भी पैर पीछे न हटाता। अतएव वह बुड्ढा यही सोच सोचकर घबड़ा रहा था कि, कहीं ऐसा ही न हुआ हो, जिससे हमारे लड़केका अन्त हो गया हो। दूसरा यह विचार भी उसको उतना ही भयङ्कर मालूम होता था कि, यह शिवाजीके "उद्दण्डतापूर्ण" कार्योंमें सहायता देनेके लिए उससे न जा मिला हो। निदान अप्पाजी-के मनमें यही आया कि, या तो हमारे लड़केको मुसल्मानोंने

कहीं मार डाला, अथवा वह "उद्दण्ड लुटेरों" की टोलीमें जाकर सम्मिलित हो गया ! जो कुछ भी हो, पर लड़का हमारे हाथसे निकल गया। अब वह लौटकर नहीं आता, यह सोचकर वे बिलकुल निराशसे हो चुके थे। अस्तु।

उपर्युक्त वर्णनसे पाठकोंको हमारे कथानकके समयकी परिस्थितिका बहुत कुछ ज्ञान हो गया होगा; और यहांतक जिन पात्रोंका थोड़ा-बहुत वर्णन आया है, उनकी भी कुछ न कुछ दशा पाठकोंके अनुमानमें आ गई होगी।

जैसा कि ऊपर हमने बतलाया, अप्पाजी साहब आवजी पटेलको यह हुक्म देकर कि, चार दिनके अन्दर लड़केका पता लगाकर उसे हमारे सामने हाज़िर करो, मसनदपर पीठके सहारे लेट गये थे, सो अबतक वैसे ही लेटे हुए थे। इसके बाद फिर एक बार उन्होंने आवजीको पुकारकर तेजीसे कहा, "देखो आवजी, जिन जिन उपद्रवी लोगोंके साथ वह सारा दिन भटकता रहता हो, उन उन सबको पकड़कर कल ही हमारे सामने उपस्थित करना चाहिये। यह काम अबतक कभीका हो जाना चाहिये था, पर न जाने तुमने क्यों ध्यान नहीं दिया ! तुम लोग बिलकुल नमकहराम हो ! जिसका नमक खाते हो, उसकी नौकरी किस प्रकार बजानी चाहिए, इसका तुम्हें कुछ भी पता नहीं है। स्वयं तुम्हारा मालिक, तुम्हारा अन्नदाता चला गया; और तुम आनन्दपूर्वक हुक्का गुड़गुड़ाते; और मज़ेसे खाते-पीते हो ! जाओ—अभी जाओ—उठो, अब कोई न कोई

काम किये बिना इधर न आना—अथवा यह काला मुंह मुझे न दिखलाना—ख़बरदार—जाओ !"

आवजी पटेल बेचारे बहुत घबड़ा रहे थे। परन्तु अब अप्पा साहबका उपर्युक्त कथन सुनकर उनके जीमें जी आया। उन्होंने सोचा—चलो, किसी प्रकार प्राण तो छूटे; और उठकर सलाम करके वे चलना ही चाहते थे कि, इतनेमें दरवाजेसे एक नौकर आया; और बोला, "सरकार, बीजापुरसे सलामत-खां सवार आया है; और कहता है कि, "एक अति आवश्यक लिफाफा लाया हूं, सो हुज़ूरको बहुत जल्द देना चाहिये।"

अप्पा साहब एकदम आतुर होकर कहते हैं, "जल्दी बुलाओ उसको जल्दी!" फिर आवजीकी ओर देखकर बोले, "आवजी, अभी जाना नहीं। और कोई काम हुआ, तो बतलाता हूं।"

सलामतखां बहुत दूर नहीं था। नौकर शीघ्र ही उसे भीतर ले आया। उसने नियमानुसार झुककर सलाम किया; और रूमालसे हाथ बांधकर लिफाफा आगे रख दिया। अप्पा साहबने उसकी सलामकी ओर तो कुछ ध्यान दिया नहीं; और बहुत जल्द अपने हाथसे लिफाफा खोला। समाचार कुछ बहुत लम्बा-चौड़ा नहीं था, परन्तु उसके पढ़ते ही अप्पा साहब-का मुंह काला—स्याह पड़ गया!

छठां परिच्छेद ।

तहखानेके अन्दर ।

हमारे सिपाहीने "बजरंगबलीकी जय" कहकर ताल ठोंकी और हनुमानजीके आसनके नीचेके द्वारसे पैर लटकाकर तहखानेमें जानेका इरादा किया । यहांतकका वर्णन पिछले एक परिच्छेदमें आ चुका है । उसके आगेका वर्णन जाननेके लिए हमारे पाठक अवश्य ही उत्सुक होंगे । अतएव अब रंगराव अप्पा साहबको तो बीजापुरका पत्र पढ़कर खेद करते हुए यहीं छोड़ दें; और हम हनुमानजीके मन्दिरमें फिर वापस आ जावें ।

जैसा कि पिछले एक परिच्छेदमें हम कह चुके हैं, हमारे सिपाही जवानने बड़ा साहस करके—इस बातकी कुछ भी परवा न करते हुए कि, ऐसा करनेसे हमारे ऊपर कोई संकट तो न आ जायगा—अन्दर पैर डाल लिये । उसने सोचा कि, जो कुछ होना होगा, सो होगा; पर इसके अन्दर है क्या, इसका पता अवश्य लगाना चाहिए । बस, इसी विचारसे ज्यों ही उसने अन्दर पैर छोड़े, त्यों ही उसके कानोंमें ये शब्द आ टकराये—"कौन है—कौन हरामजादा भीतर आनेका साहस कर रहा है ?" इसके साथ ही साथ एक बड़े जोरकी ठोकर भी उसके पैरमें आलगी । पर हमारे सिपाहीराम बड़े भारी ज़बरदस्त थे ! उन्होंने उसकी कुछ भी परवा न की; और एक-

दम यह चिल्लाते हुए कि, "जिसमें वैसा साहस होगा, वही साहस करेगा; और कौन करेगा?" तुरन्त ही ऊपरसे हाथ छोड़-कर भीतर कूद पड़े। इसके बाद, जिसने उसवीरके पैरमें ठोकर मारी थी, उसकी ओर वह दौड़ा। दोनोंमें लपटंग होनेकी नौबत आई। परन्तु जिसकी ओर हमारा सिपाही इतना क्रोधित हो-कर दौड़ा था, उसका वेश और उसका तेज ज्यों ही उसने देखा, त्यों ही वह ठिठककर पीछे हट पड़ा; और फिर चकित दृष्टिसे उसकी ओर देखने लगा। भीतरके उस मनुष्यका वेश बिल-कुल फकीरकी तरह था। गलेसे लेकर पैरोंतक एक कफनी वह पहने था। एक हाथमें रुद्राक्षकी माला और दूसरेमें एक छोटीसी कुबड़ी, जटा बढ़े हुए और दाढ़ी भी बढ़ी हुई थी। तह-खानेके अन्दर कोनेमें एक दीपक जल रहा था। उसका धुंधला-सा प्रकाश फैल रहा था। उसी प्रकाशमें वे दोनों एक दूसरे-की ओर अपने अपने नेत्र—जो सन्ताप और आश्चर्यसे विस्तृत हो रहे थे—फाड़ फाड़कर देख रहे थे। यह नहीं कहा जा सकता कि, हमारा सिपाहो जिस उद्देश्यसे उस फकीरवेशी व्यक्तिकी ओर देख रहा था, उसी उद्देश्यसे वह भी उसकी ओर देखता होगा। दोनोंका पेशा अलग अलग था, सो उनके भिन्न भिन्न वेशों परसे ही मालूम हो रहा था। सिपाहीकी चेष्टा-से कुछ आश्चर्य, कुछ कौतूहल, कुछ पूज्य भाव,और कुछ—बहुत ही थोड़ा—क्रोध प्रकट हो रहा था;और उस फकीरवेशी रुद्राक्ष-मालाधारी व्यक्तिकी दृष्टिमें आश्चर्य और क्रोधके अतिरिक्त और

कुछ भी दिखाई नहीं देता था। दोनों एक दूसरेकी ओर देखते हुए बहुत देरतक खड़े रहे, किसीके मुखसे भी वचन न निकला। एक दूसरेपर आक्रमण करनेका जो आवेश उनमें पहले दिखाई दिया था, सो भी अब कम होने लगा। अन्तमें वह रुद्राक्ष-मालाधारी व्यक्ति मुसल्मानोंकी विशुद्ध भाषामें हमारे सिपाहीसे कहता है, "तू कौन है? यहां क्यों आया है? यहां तेरा क्या काम है? यदि तू व्यर्थ ही मौतके मुँहमें न जाना चाहता हो, तो चुपके इसी रास्तेसे लौट जा, नहीं तो..."

"नहीं तो क्या? मैं मौतके मुखमें जाऊंगा? अच्छा, मुझे मृत्युके मुखमें डालनेवाला कौन है? सामने दिखाई तो दे—मैं देख लूंगा। आपके हाथसे तो यह बात हो ही नहीं सकती!"

"क्यों? क्यों? मेरे हाथसे क्यों नहीं हो सकती? तू मुझे क्या समझता है? मेरे इस वेशकी तरफ मत देख। मेरे ये बाल सफेद होने लगे हैं, इनपर भी मत भूल। मैं तुझे अच्छी तरह छकाऊंगा—पर पहले तू यह तो बतला कि, तू है कौन? नहीं तो व्यर्थ ही मारा जायगा। तू इस तहखानेमें क्या आया, सिंहकी गुफामें—मृत्युके मुखमें—आ पड़ा है, इसमें सन्देह नहीं। बोल, तू कौन है? यदि तू मुसल्मान है, तो अपनेको मरा ही समझ!"

"क्या? क्या? मुसल्मानके लिये यह मरनेहीकी जगह है? वाह! वाह! तब तो मैं बिलकुल उचित ही स्थानपर आ गया हूं। बाबाजी, सचमुच ही क्या यह जगह वैसी ही है, जैसी कि आप बतलाते हैं? यदि वैसी ही है, तो यह बन्दा आपका

गुलाम है। इस जगहमें आनेवालेको क्या मुसलमान सचमुच ही अपने शत्रु जान पड़ते हैं? तब तो मैं इसी जगहमें रहूंगा। बाबाजी, बोलते क्यों नहीं अब? मैं कौन हूं, इसका क्या अब भी आपको सन्देह है? स्वामीजी, मैं असली मराठा हूं। इससे अधिक और क्या बतलाऊं? यह देखिये, मेरी बड़ी भारी पहचान—और इससे भी अधिक यदि निशानी चाहिये, तो किसी मुसल्मानको आने दीजिये—मैं प्रत्यक्ष ही आपको दिखला दूंगा! किन्तु मुझे मुसल्मान समझकर मेरा अपमान न कीजिये।"

ये शब्द हमारे सिपाही युवकने इतने जोशमें आकर कहे कि, वह रुद्राक्षमालाधारी पुरुष अत्यन्त कौतूहलके साथ उसकी ओर देखने लगा। उसके मुखमण्डलपर एक प्रकारका सन्तोष-सा दिखाई देने लगा। उसको स्पष्ट मालूम हो गया कि, हमारे सामने जो नवयुवक खड़ा है, वह असली मराठा है—यही नहीं, बल्कि मुसल्मानोंका कट्टर शत्रु भी है। पाठको, क्या इसी कारण तो उसके चेहरेपर सन्तोषकी झलक दिखाई नहीं दी? क्षणभर वह शान्तिपूर्वक और सन्तोषपूर्ण दृष्टिसे उस सिपाहीकी ओर देखता है और फिर तुरन्त ही उससे कहता है—"शाबाश! बेटा, शाबाश! यदि सचमुच ही तू जो कुछ कहता है, वह सब सत्य है, तो फिर तुझको इस स्थानपर कोई भय नहीं। किन्तु तू कौन है? कहांका है? और यहां आया कैसे? सो मुझे बतला। यह जबतक मुझे मालूम न हो जाय, मैं विश्वास कैसे करूं?"

बाबाजीके मुखसे यह प्रश्न सुनते ही हमारा सिपाही जवान कहता है—"बाबाजी, यह सब जानकर आप क्या करेंगे? मैं एक मामूली मराठा हूं। मेरे आगे-पीछे कोई नहीं। मैं कहीं न कहीं भटक रहा हूं। आप मुझे यदि अपने पास रहने दें, तो मैं आपकी सेवामें रहूंगा—जीवनभर आपको छोड़कर कहीं नहीं जाऊंगा। इससे अधिक और मैं अपने विषयमें कुछ नहीं कह सकता। इतना मैं अवश्य कहता हूं कि, संसारमें अब मेरा कोई नहीं, यह मैं अपने हृदयसे कहता हूं। आप विरक्त हैं, सो आपके रूपसे ही दिखाई दे रहा है; किन्तु मैंने अभीतक वेश नहीं बदला है—आप यदि आज्ञा दें, तो आपहीके समान मैं भी हो जाऊं। मेरे पीछे कोई बन्धन नहीं।"

"नहीं, नहीं, तू जो कुछ बतलाता है, इसपर मेरा बिलकुल विश्वास नहीं जमता। तू अपनेको, कोई नहीं, बतलाता है, सो बिलकुल झूठ है। मेरे समान विरक्त बननेका तेरा उद्देश्य नहीं है; और वैसी दशा भी नहीं। तेरा उद्देश्य मुझे मालूम हो गया है, पर मैं इस समय बताऊंगा नहीं। यह मैं जानता हूं कि, वह अच्छा है; और मैं तुझे यह आशीर्वाद देता हूं कि, उसके सफल होनेके मार्गपर तू शीघ्र ही जा लगेगा। यह न समझना कि, मैंने तुझे पहचाना नहीं—हां, तुझे यदि अपना नाम-ग्राम गुप्त रखना हो, तो मुझे कोई आपत्ति नहीं—रख सकता है—किन्तु......"

बाबाजी अभी अपनी पूरी बात न कहने पाये थे कि, इतनेमें एक सीटीसी बजी; और बाबाजी मानो उसकी आहटसी

लेने लगे। इसके बाद बहुत जल्द वे आगेकी ओर गये कि, जिधर कुछ अँधेरासा था। फिर देखते देखते वे वहीं गायब हो गये। यह देखकर हमारा सिपाही बहुत ही चकराया; और इधर-उधर देखने लगा। पाव घड़ी हुई, आधी घड़ी हुई, एक घड़ी हुई; पर बाबाजीके लौटनेका कोई चिन्ह दिखाई न दिया। यह है क्या—सोचकर सिपाही भी उसी ओर गया, जिधर बाबाजी गये थे! देखता क्या है कि उस ओर दूरतक टेढ़ासा रास्ता चला गया है, जो बिलकुल अन्धकारसे व्याप्त है। इतना अन्धकार कि, कोई आंखोंमें उंगली डाले,तो भो कुछ मालूम न पड़े। आगे जावे या यहीं खड़ा रहे, सिपाही कुछ निश्चय न कर सका। हम इस विचित्र स्थानमें क्यों आये? यह है क्या? यही वारंवार सोचकर वह बड़े गड़बड़में पड़ा। बाबाजी अब आवेंगे, तब आवेंगे, सोचते सोचते वह कुछ देरतक वहीं खड़ा रहा। जिस समय कोई अत्यन्त उत्कंठित होता है, उस समय थोड़ा समय भी कितना अधिक जान पड़ता है; इसका सबको अनुभव है। फिर उसमें भी जिस जगह हमारा सिपाही खड़ा था, उस जगह, जहाँ कि घोर अन्धकार था, एक एक पल एक एक पहरके समान भास होना कोई कठिन नहीं था। वह बेचारा खड़ा खड़ा बिलकुल उकता गया; और निश्चय किया कि, आगे बढ़े। अब उसने यह बिलकुल न सोचा कि, ऐसे अँधेरेमें क्या संकट आवेगा; और क्या नहीं—उसने आगे पग बढ़ाया। हाथ आगे करके टटोलते टटोलते वह बहुत दूरतक गया। कितना

दूर गया, इसका उसे कुछ भी पता न था। अन्तमें बिलकुल घबड़ाकर उसने लौटनेका विचार किया, क्योंकि बाबाजीका कहीं बिलकुल पता नहीं था। अतएव अब वह लौटने वाला ही था, इतनेमें जिस हाथसे वह टटोल रहा था, उसके सामने ही एक दीवार मिली। पहले तो वह सीधा ही सीधा आ रहा था, किन्तु अब उसे दिखाई दिया कि सीधा मार्ग ख़तम हो गया। परन्तु सिर्फ इसीसे कि, सीधा मार्ग खतम हो गया, उसके मनको सन्तोष न हुआ। जिस मार्गसे वह गया था, वह मार्ग बिलकुल सीधा ही न था; और अब आकर अन्तमें दीवार मिली, इससे इसके बनानेवालेका उद्देश्य क्या? अवश्य ही यह मार्ग अभी समाप्त नहीं हुआ है। यह कहीं न कहीं तिरछा गया है। यह सोचकर वह दीवारसे कुछ अलग होकर एक ओर चलनेको हुआ, इतनेमें तुरन्त ही उसका शरीर एक बाजूसे टकराया—जैसे कि, किसी गुफाके द्वारका बाजू हो। इसलिये उसने सोचा कि, यहीं बाईं ओरसे कहीं न कहीं भीतर पैठनेका द्वार अवश्य है यह सोचकर वह नीचे बैठ गया; और टटोलकर देखने लगा। इससे शीघ्र ही उसे मालूम हुआ कि, द्वार बहुत ही संकीर्ण है। परन्तु फिर भी उस साहसी पुरुषने भीतर घुसनेका निश्चय किया; और तुरन्त ही घुस भी पड़ा। इस जगह उसे दो-चार सीढ़ियां मिलीं। उनको उतरकर वह नीचे गया; और फिर सीधा चलने लगा।

उस समय ऐसे भुँहारोंके मार्ग किलेपर रहनेवाले लोगों

और साधारणतया सिपाहियोंका कार्य करनेवाले लोगोंके लिए अपरिचित न थे। आजकल जिस प्रकार भुँहारे और उनके मार्ग इत्यादि बातें लोगोंको बिलकुल असम्भवसी जान पड़ती हैं, अथवा ऐयारी और तिलिस्मके उपन्यासोंमें ही जैसे इनकी अधिकता मानी जाती है, वैसी उस समय दशा न थी। उस समय सभी भारी भारी किलोंके नीचे बड़े बड़े भुँहारे थे; और उन भुँहारोंसे चार चार, पांच पांच कोसतक मार्ग भी निकाले गये थे। अब चूंकि ये मार्ग प्रायः नष्ट हो चुके हैं, इसलिये ये बातें किसीको सत्य भी नहीं मालूम होतीं। हां, अब उनके विषयकी आख्यायिकाएं भर शेष रह गई हैं। परन्तु दौलताबाद (देवगढ़) के समान किलोंकी जिन लोगोंने एक बार भी यात्रा की होगी, उनको इस बातका अनुभव और परिज्ञान अवश्य ही हुआ होगा कि, उन किलोंके मार्ग भुँहारोंसे गये हैं; और उनमें जाते समय भरे दो पहरको भी मशाल लेकर जाना होता है। वह समय ही ऐसा था कि, उस समय भुँहारों इत्यादिके गुप्त मार्गोंकी बहुत आवश्यकता थी। किस समय मुगलोंका आक्रमण होगा; और हमको अपने कुटुम्बके साथ अपना महल अथवा किला छोड़कर भागना होगा, इसका कोई निश्चय न था। ऐसी दशामें सब बड़े बड़े धनाढ्य सरदारों और राजे-रजवाड़ोंको अपने अपने महलोंमें तहख़ाने रखने पड़ते थे। भुँहारे बनाकर उनसे गुप्त मार्ग दूर दूरतक ले जाने पड़ते थे। इससे घरके मुख्य मुख्य लोगों और विश्वासपात्र नौकरोंको वे मार्ग

उस समय पूर्णतया अवगत रहते थे। जब कभी कोई ऐसा मौका आ जाता, तो वे उसका उपयोग करते थे।

सो हमारा सिपाही जवान ऐसे मार्गों से अपरिचित न था। अतएव उसे वह गुफा देखकर कोई बड़ा आश्चर्य नहीं हुआ; बल्कि, इसके विरुद्ध वह उन सीढ़ियोंको उतरकर इस भांति सीधा चलने लगा, जैसे मार्ग उसके परिचयका ही हो। सीधा चला, फिर उसके हाथमें दीवार छू गई, दाहिनी ओर घूम पड़ा। फिर सीधा गया, फिर बाईं ओरको थोड़ासा सीधा गया; और ठिठक गया। इसके बाद कहीं न कहींसे कुछ उजेलेकासा उसे भास हुआ। जिस ओरसे कुछ उजेलासा भासता था, उस ओर उसने ध्यानपूर्वक देखा, तो सचमुच ही उधरसे उजेलेकी कुछ आभा आरही थी—तुरन्त ही उसने सोचा कि, कुछ भी हो, इस उजेलेतक तो जाऊंगा ही। वह उसीकी सीधमें चला। चलते चलते काठके एक दरवाजेके पास पहुंचा। दरवाजा बन्द था। उसकी दराजोंसे दीपकके समान उजेला आरहा था। सो उसने देखा। इसके बाद उन दराजोंसे उसने ज़रा ध्यानपूर्वक देखा, तो भीतर सभा-भवनके समान एक दरबार-हाल उसे दिखाई दिया। और सामने किसी देवताकी मूर्त्ति भी दृष्टिगोचर हुई। यह क्या है? इतनी दूर भुँहारेके अन्दर यह मन्दिर किसका? और इस मूर्त्तिके सामने इतने बड़े बड़े नन्दादीप—खूब मनुष्यकी ऊंचाईके बराबरतकके शमादान—जल रहे हैं! उन दराजोंसे उसे जो जो

कुछ दिखाई पड़ सकता था, सो सो सब उसने देखनेका प्रयत्न किया; पर, ऊपर जो कुछ बतलाया, बस उतना ही, उसे दिखाई दिया। अन्तमें उसने दरवाजा खोलनेका भी प्रयत्न किया, पर वह शीघ्र न खुला। इसमें बाहरसे ताला तो नहीं लगा ? यह देखनेके लिए उसने उसपर चारों ओरसे हाथ फिराया। ताला भी दिखाई न दिया। परन्तु हां, एक ऊपरकी ओर; और दूसरी नीचे देहरीमें—इस प्रकार दो सांकलें जरूर उसके हाथसे लगीं। ऊपरकी सांकल बहुत प्रयत्न करनेपर भी जब उसके हाथसे न खुली, तब उसने पुराने दरवाजोंकी भांति उसका एक कपाट ज़ोरसे ऊपरकी ओर उठाकर सांकल खोलनेका प्रयत्न किया। इस प्रकार ऊपरकी सांकल खुल गई; और फिर नीचेकी भी सांकल खुलनेमें देर न लगी। इस प्रकार दरवाजा तुरन्त खोलकर सिपाही भीतर गया। देखता क्या है, कि सचमुच ही एक बड़ा विस्तीर्ण सभा-भवन बना हुआ है; और मध्यभागमें एक बड़ी विकराल अष्टभुजा देवीकी मूर्त्ति है। वह अपने पैरोंके नीचे एक बहुत ही भयंकर राक्षसको कुचल रही है। चार हाथोंमें चार आयुध और शेष चार हाथोंमें चार शिर लिये हुए हैं। शिरोंकी जिह्वाएं बाहरको निकली हुई हैं। शिरको छोड़कर देवीके सम्पूर्ण अंगपर सिन्दूरके पुट चढ़े हुए हैं। उसके सामने उपर्युक्त बड़े बड़े नन्दादीप जगमगा रहे थे। उस देवीको देखते ही हमारे सिपाहीने एकदम साष्टांग नमस्कार किया; और फिर उठकर भाविक भक्तकी भांति हाथ जोड़कर देवी-

जीकी बन्दना की। इसके बाद जब वह सभा-भवनमें इधर-उधर देखने लगा, तब क्या देखता है कि, चारों ओर हथियार ही हथियार रखे हैं। दीवारोंमें तलवारें, ढालें, बन्दूकें इत्यादि टँगी हुई थीं। भाले और बर्छियां तो असंख्य थीं। एक कोनेमें चार तोपें रखी हुई थीं; और उन्हींके नज़दीक गोलोंकी दो राशियां लगी थीं। छोटे छोटे हथियार, जैसे ख़ंजर और कटारें इत्यादि अनेक थीं। दो शृंग टँगे थे। चार चवरें थीं। एक जगह पांच-सात बड़ी बड़ी लाठियां खड़ी थीं, जिनपर एक एक बख़्तर पड़ा हुआ था; और उनपर फौलादी टोप टँगे थे। यह सब देखकर हमारा सिपाही जवान एकदम चकितसा दिखाई दिया; और अचम्भेके साथ मुँहपर उँगली रखकर उन सब चीजोंकी ओर देखने लगा। इसके बाद नीचे दृष्टि करनेपर वह क्या देखता है कि, जिन दीवारोंपर वे अस्त्र-शस्त्र टँगे थे, उन्हीं दीवारोंसे सटे हुए कई एक बड़े बड़े सन्दूक रखे हैं, जिनमें बड़े बड़े भारी ताले पड़े हुए हैं। सन्दूक ऐसे मज़बूत थे कि कुछ पूछिये नहीं; और ताले भी उनमें ऐसे आहनी पड़े हुए थे कि, उन सन्दूकोंमें अत्यन्त मूल्यवान् वस्तुओं अथवा खजानेके अतिरिक्त और क्या हो सकता था, सो समझमें नहीं आता। यह सब देखकर हमारा सिपाही जवान अत्यन्त विस्मित हुआ। यह मामला क्या है,सो कुछ उसकी समझमें नहीं आया। वह इधर-उधर घूमने लगा। सब ओर उसने खूब ध्यानसे देखा, पर कुछ अनुमान न कर सका। अन्तमें बेचारा थक गया; और विस्मित

होकर देवीकी ओर देखने लगा। उस समय यह भी उसके मनमें आया कि, देवीजीके आसनके नीचे भी तो कोई इसी प्रकारका चमत्कार नहीं है ? अन्तमें जब कोई बात उसकी समझमें न आई, तब वह उसी जगह पड़ रहा; और थोड़ी ही देरमें उसे गम्भीर निद्रा आ गई।

इधर बाबाजी जहाँ गये थे, वहांसे वापस आकर देखते हैं, तो सिपाही वहां है ही नहीं, जहां वे उसे छोड़ गये थे। उन्होंने इधर-उधर बहुत ढूँढ़-खोज की, अन्तमें वे उस चौकोने द्वारसे ऊपर भी आये; और मन्दिरमें तलाश किया, परन्तु कहीं कोई दिखाई न दिया। हां, घोड़ा अकेला अवश्य ही इधर-उधर घूमता हुआ हरी दूब चर रहा था। प्रभातकाल हो गया था। प्राकृतिक शोभा अत्यन्त रमणीय दिखाई दे रही थी। बाबाजीने बाहर आकर इधर-उधर बहुत कुछ देखा, पर जब कोई भी दिखाई न दिया, तब वे फिर मन्दिरमें लौट आये; और भीतर ही भीतर कुछ गुनगुनाते हुए हनुमानजीको जहांका तहां बैठाकर स्वयं धूनीके पास आविराजे। फिर मुहँसे कुछ दोहा इत्यादि कहते हुए अपनी चिलमकी तैयारीमें लगे।

सातवां परिच्छेद।

गुप्त भेंट।

पीछे बतलाया गया है कि, सुलतानगढ़के चारोंओर जंगल और झाड़ियां बहुत थीं। अब यहांपर इतना ही कहना है कि, पीछेकी तरफ सबसे अधिक घना जंगल था। बड़,पीपल,पाकड़, इत्यादिके वृक्ष विशेष थे; और इनके आस-पास घनी घनी झाड़ियोंका घेरा था। इन झाड़ियोंमें मार्ग निकाले गये थे, पर वे मार्ग बिलकुल अस्पष्ट थे। किलेपर जानेके लिये मुख्य मार्ग आवजी पटेलके ग्रामसे ही था। शेष अन्य मार्ग भी किलेके दो पार्श्वोंकी ओरसे थे। पीछेके मार्ग बिलकुल गुप्त थे; और वे सिर्फ ख़ास ख़ास लोगोंको ही मालूम थे। सर्वसाधारण-को उनका ज्ञान न था। अवश्य ही उन मार्गोंसे प्रायः कोई आया-जाया नहीं करता था। पहले ये पीछेकी झाड़ियां एक प्रकारसे घाटीमें ही थीं। वहांसे सिर्फ किलेके पीछेकी बड़ी पहाड़ीको उतरकर आगे जानेका ही मार्ग था। परन्तु आगे जानेकी कभी किसीको आवश्यकता ही नहीं पड़ती थी, क्योंकि उस ओर बस्ती वगैरह कुछ थी ही नहीं। वह पहाड़ी, किलेकी मुख्य पहाड़ीकी अपेक्षा, कुछ नीची ही थी। ऐसी दशामें उस पहाड़ीका उपयोग एक प्राकृतिक कोटकी तरह था। पहाड़ीके

आगे बहुत ही भयंकर जंगल था; और उस ओर प्रायः लोग शिकार इत्यादि खेलने जाया करते थे।

ऊपर हमने यह बतलाया है कि, किलेके पीछेकी तरफ प्रायः कोई आता-जाता नहीं था। अवश्य ही जिस ओरको विशेष किसीके आने-जानेकी सम्भावना नहीं रहती, उस ओरका स्थान ऐसे लोगोंके लिये बहुत ही उपयोगी होता है कि, जो गुप्त रूपसे लोगोंसे मुलाकात करना चाहते हैं, अथवा गुप्त बातें करना चाहते हैं, या जिनको गुप्त षड्यन्त्र रचने होते हैं, अथवा ऐसे ही और कोई कार्य करने होते हैं कि, जो उजेलेमें नहीं किये जा सकते। दो-चार अथवा अधिक लोग सलाह कर लें, और किसी न किसी एकान्त स्थानमें एकत्र हो जावें; और फिर वहां आनन्दपूर्वक जो कुछ बातचीत करना हो, अथवा जो कार्य करना हो, करें, उसपर खूब आपसमें चर्चा करके मनमाना विचार करें। क्योंकि वहांपर ऐसा सन्देह करनेका कोई कारण ही नहीं रहता कि,यहांपर कोई आजायगा; और हमारा सलाह-मशविरा, जो हो रहा है, जान लेगा। इस प्रकारके अनेक स्थान किलेकी उस ओर थे। अव्वल तो उस पहाड़ीके गर्भमें ऐसे अनेक गुप्त स्थान थे कि, जहां तीन तीन चार चार आदमी मज़ेसे हुक्का पीते हुए बैठे रहें। और फिर वे स्थान थे कैसे? गोमुखीकी आकृतिके। अर्थात् उनके मुँहके पास ही जाकर चाहे मनुष्य झांककर देखे, फिर भी पता न चले कि, यहां आदमी बैठे होंगे। अस्तु।

पिछले एक परिच्छेदमें बतलाया गया है कि, सलामतख़ां नामक बीजापुरके एक घुड़सवारने सुलतानगढ़ आकर एक खरीता अप्पासाहबको दिया। उसको खोलकर देखते ही उनकी चित्तवृत्ति अत्यन्त खिन्न हो गयी। उनकी वैसी दशा क्यों हुई; और उस खरीतेमें क्या था, इत्यादि बातें पाठकोंको शीघ्र ही मालूम हो जायंगी। यहांपर तो सिर्फ़ इतना ही बतलाना है कि, उस खरीतेको पढ़ते ही अप्पासाहबको उस समय अत्यन्त खेद हुआ; और कुछ देर वे चुप बैठे रहे। फिर कुछ सचेत होकर उन्होंने शुद्ध उर्दू भाषामें कहा—"सलामतख़ाँ, तुम अपनी वर्दी वगैरह निकालकर आराम करो। आवजी, सलामतख़ाँके खाने-पीनेका इन्तजाम कर दो। हुज़ूर-दरबारको इस खरीतेका जवाब हम ज़रा फुरसत पानेपर लिखेंगे। एक-आध दिन लग जाय, तो कोई हर्ज नहीं। जाओ, अब तुम। मुझे ज़रा घड़ीभर चैन मिलने दो।" यह कहकर अप्पासाहब फिर मसनदके सहारे लेट रहे। आवजी और सलामतख़ाँ वहांसे चल दिये। वहांसे छूटते ही आवजीको बहुत सन्तोष हुआ ; और वह सलामतख़ाँसे बात-चीत करते हुए महलके बाहर आये। महलके बाहर आकर आवजीने देखा, तो श्यामा वहां मौजूद था। पर इतनी देर वह कहां रहा, बीचमें अप्पासाहबके दरबार-हालमें द्वारसे झांकता हुआ वह दिखाई दिया था; और फिर तुरन्त ही कहीं चला गया, फिर दरवाज़ेपर जानेकहांसे आ गया, बीचके समय-

में इसने न जाने क्या क्या किया, इत्यादि बातोंकी जांच करना आवजी भूल गये। उन्होंने इसकी कोई आवश्यकता भी नहीं समझी। वे बेचारे अबतक इसी भयमें थे कि, कहीं दुबारा फिर महलके अन्दर न बुला लिया जाय; और फिर और भी फजीहत होनेकी नौबत आवे। इसलिये महलके बाहर आते ही पहरेदारोंके जमादारको उन्होंने यह हुक्म दिया कि, "तुम सलामतख़ाँका प्रबन्ध करो, अप्पासाहबने कहा है।" और स्वयं, श्यामासे बड़ी तेज़ीके साथ यह कहकर कि, "चल रे छोकरे!" आवजीने कदम आगेको बढ़ाया। किन्तु सलामत-ख़ाँ ख़ास हुज़ूर-दरबारका सिपाही था, वह भला आवजी पटेल-को इस भांति कैसे जाने दे सकता था? उसने तुरन्त ही आव-जीको रोककर कहा, "क्यों बे आवजी पटेल, हमारा प्रबन्ध करनेके लिये सरकारने तुझको कहा है; और तू इस तरह भगा जाता है—ऐसे कैसे काम चलेगा? याद रख, सलामतख़ाँ ऐसा-वैसा आदमी नहीं है। उसके हुक्के-पानीका इन्त-ज़ाम करके तब तू कहीं जा।" यह कहकर उसने आवजीकी पीठपर एक थाप दी। वह ख़ास हुज़ूर-दरबारका सवार था, उसके सामने आवजीकी क्या चल सकती थी? इसमें सन्देह नहीं, पटेलजी अपने गांवके अधिकारी थे। पर सलामतख़ाँ उनकी क्या परवा कर सकता था? क्योंकि एक तो वह बीजापुर बादशाहीका सवार था, दूसरे आवश्यक खरीता लेकर आया था; और तीसरे अप्पासाहबने स्वयं उसके सामने ही

आवजीको उसका प्रबन्ध करनेकी आज्ञा दी थी! फिर क्या था? वह चाहे जो कह सकता था! उसमें भी विशेषता क्या थी कि, किलेके उस बीचवाले दरवाजेपर जो कुछ लोग बैठे थे, उनमेंसे सर्फोजी इत्यादि चार-पांच आदमी ऊपर आये। बात यह थी कि, जब लोगोंने सुना कि, सलामतख़ाँ दरबारसे कोई महत्वपूर्ण चिट्ठी ले आया है, तब सभीको यह इच्छा हुई कि, चलो, उससे मिलें; और क्या ख़बर लाया है, सो मालूम करें, साथ ही चिलम-चट्टी भी उड़ावें। परन्तु ऊपरवालोंको ही अपनी यह इच्छा तृप्त करनेको मौका मिल सकता है—उनके नीचेवाले बेचारे वैसे ही रह जाते हैं! सर्फोजीने ज्यों ही देखा कि, सलामतख़ाँ महलसे बाहर निकला, त्यों ही वह अपने अन्य दो-चार कृपापात्रोंको साथ लिये हुए ऊपर आया। उसी समय सलामतख़ाँ और आवजीका उपर्युक्त सम्भाषण हुआ; और आवजी अप्रसन्नतासे (परन्तु उस अप्रसन्नताको छिपानेके लिये बनावटी हँसी हँसकर) कुछ देर ठहर गये; और महलके बाहर कुछ अन्तरपर एक चबूतरा था, वहां गये, तथा हुक्का-पानी और बैठनेके लिए प्रबन्ध करनेको उन्होंने एक सिपाहीसे कहा। इधर सर्फोजी इत्यादिके आजानेपर तो पूरी मण्डली जम गई, किन्तु सर्फोजीको देखते ही आवजीके मस्तकपर बल पड़ गये; और वे तुरन्त ही सलामतख़ाँसे बोले, "वाह! वाह! ख़ाँ साहब, अब तो तुमको हमारी कोई भी जरूरत नहीं रही। जमादार सर्फोजी साहब आ गये हैं, अब तुमको किसी बातकी

कमी नहीं रहेगी। अब हमको जाने दो, तो बहुत अच्छा हो। सरकारने हमको एक काम बताया है, जो बड़ा ज़रूरी है।”

यह सुनते ही सर्फोजी कहता है, “हां-हां, खांसाहब, पटेलजीको जाने दीजिये। इनकी पटेलिन…अजी, आप भी क्या गप्पें मारते हैं! इस वक्त काम कौनसा? और जैसे हम-को कोई काम ही न हो! सच तो यह है कि, उस बेचारी पटे-लिनकी……”

“सर्फोजी, ज़रा ज़बान सम्हालकर बात किया करो। तुम इस तरह अंट-संट बकोगे, तो समझ लेना फिर! तुम अब बहुत ही……”

इन शब्दोंका उच्चारण करते हुए आवजी पटेलने बहुत ही तेज़ी दिखलाई, अथवा यों कहिये कि, उस समय उनकी वह तेज़ी सच ही थी। उस वाक्यको अधूरा ही छोड़कर फिर वे सलामतख़ाँकी ओर देखकर बोले, “ख़ाँसाहब, मुझे बहुत ही ज़रूरी काम है, मैं अब आपसे बिदा चाहता हूं। ये लोग आपका सब प्रबन्ध करेंगे। आप आरामसे रहिये। मैं जाता हूं। आप जब किलेसे उतरें, तब घर ज़रूर आवें।”

यह कहकर आवजी चल दिया—उन्होंने सलामतख़ाँके उत्तरकी भी प्रतीक्षा नहीं की।

इतने ही बीचमें सर्फोजीने सलामतख़ाँको कुछ नेत्र-संकेत किया। उस नेत्र-संकेतका क्या अर्थ था, कुछ कहा नहीं जा सकता। शायद यही उसका मतलब हो कि, सलामतख़ाँ अब

आवजीको जाने दे, रोके नहीं; क्योंकि इस बार उसने आवजी-को रोका नहीं; और न उनसे ठहरनेका आग्रह किया। शायद सर्फोजीके नेत्र-संकेतमें और भी कोई अर्थ हो।

आवजी पटेल चले गये; किन्तु श्यामा उनके पीछे पीछे नहीं गया। इसी बीचमें वह न जाने कहां चला गया। आवजीकी चित्तवृत्ति इस समय ऐसी नहीं थी कि, वह श्यामाकी खोज करते, अथवा उसकी प्रतीक्षा करते। उनका मन इस समय कुछ क्रोध, कुछ चिन्ता, कुछ खेद इत्यादि विकारोंके मिश्रणसे भरा हुआ था। अतएव वे अकेले ही चुपकेसे निकल गये।

इधर कुछ देर गप-शप होनेके बाद सर्फोजीको छोड़कर अन्य सब लोग चले गये। चले क्या गये—किसी न किसी बहानेसे सर्फोजीने ही उनको टरका दिया। सलामतख़ाँसे कुछ बातचीत करनेके लिये इस समय वह बहुत ही उतावला-सा दिखाई देता था। लोगोंके चले जानेपर उसने एक बार चारों ओर देखा;और फिर सलामतख़ाँसे बोला,"मेरे लिये तो—की ओरसे कोई विशेष संदेशा नहीं है?" जिस जगह रेखा कर दी है,वह नाम सर्फोजीने सलामतख़ाँके बिल्कुल कानमें ही कहा, अतएव सिर्फ उसीको सुनाई दिया। सलामतख़ाँ भी इधर-उधर देखकर कहता है—"है, है! सन्देशा है; और एक कागज भी है। परन्तु वह तुझे बिलकुल अलगमें देनेको कहा है। मैं समझता हूं, यहां देना ठीक न होगा। शायद कोई देख न ले—मुझसे बार बार डांटकर कह दिया है कि, बड़ी सावधानीके

साथ, बिलकुल गुप्त रूपसे, जहां किसीके होनेकी सम्भावना भी न हो, ऐसी जगह देखकर वह कागज तुझे दिया जाय। यहां देऊं ? पर यहां देना ठीक न होगा।"

"नहीं, यहां नहीं। यहां कुछ ठीक नहीं है, न जाने कौन दरवाजेसे आ जाय; और कौन नहीं! किन्तु सन्देशा क्या है, सो बतलानेमें कोई हानि नहीं।" यह सर्फोजी कह ही रहा था कि, इतनेमें एक ओरसे किसीके कुछ गुनगुनानेका भास हुआ। दोनोंने इधर-उधर कुछ देखा, पर यह समझकर कि, कोई बात नहीं है, फिर उन्होंने अपना गुप्त भाषण प्रारम्भ किया।

"सन्देशा क्या है, सो तो तुम अभी मुझे बतला दो; और यहांसे उठकर चलने लगो, तब चुपकेसे पत्र हमारे हाथमें दे देना। एक बार वह हमारे हाथमें आ जाय, फिर कोई चिन्ता नहीं। मैं उसे पढ़वाकर......"

फिर किसीके गुनगुनानेकीसी आवाज़ आई। इसलिये इधर-उधर देखकर सर्फोजी बोला, "सूखे हुए पत्ते हिलते हैं, उन्हींकी यह आवाज़ होगी, अथवा उस वृक्षके नीचेसे कोई गिरगिदान-विरगिदान निकला होगा, उसीसे सूखे पत्तोंकी आवाज़ आई होगी। कोई आया-वाया नहीं, अब तुम जल्दीसे वह सन्देशा बतला दो तो अच्छा होगा, नहीं तो शायद कोई आ ही जाय—यह चौराहेकी जगह है।"

सलामतख़ांने तुरन्त ही उत्तर दिया, "सन्देशा-वन्देशा तो कोई विशेष नहीं है। आज रातको बारह बजे तू अपने उस

हमेशावाले मकानमें आ; और पूरा पूरा सब वृत्तान्त मुझको बतला, मैं आज वहां आऊंगा—बस, इतने ही शब्द तुझको बतलानेके लिए कहे हैं। इसके सिवाय इतना और कहा है कि बाकी हाल उस कागजमें है; सो वह कागज हम लोग जब नीचे चलेंगे, तब रास्तेमें तुझे देंगे।"

सलामतख़ांका यह कथन अभी पूरा ही हुआ था कि, इतने-में सचमुच ही, सर्फोजीने जैसा अनुमान किया था, एक सिपाही महलके दरवाजेसे आया; और सलामतख़ांसे बोला, "चलो, तुम्हारे घोड़ेको कुछ दाना वगैरह देना है, उसकी सेवा-बर-दासका प्रबन्ध करना है। सरकारने फिर अभी मुझसे बुला-कर कहा।" यह सुनते ही सर्फोजी बड़ी तेज़ीसे चिल्लाकर यह कहते हुए उठा कि, "चल, चल, आगे तू, हम आते हैं, घोड़ा अभी घुड़सालमें बांध दिया गया; और उसको दाना भी दे दिया गया, अब तू आया है—चल। जा, किसीको उसकी सेवा-बरदासमें लगा।" उसके साथ ही साथ सलामतख़ां भी उठा। सिपाही सर्फोजीकी फटकार सुनकर दौड़ते हुए ही गया। सर्फोजी और सलामतख़ां उसके पीछे हो गये। इतनेमें उस चबूतरेके पीछेसे कुछ खुसखुसानेकीसी आवाज़ आई। इसके बाद यह दिखाई दिया कि, एक छोटासा सिर अपनी चातुर्य-पूर्ण आंखें ऊपर करके उन दोनोंकी ओर देख रहा है। साथ ही यह भी जान पड़ा कि, वह सिर कुछ विचारमें है। इसके बाद कुछ समयमें, जबकि वे दोनों दूर निकल गये, वह सिर

कुछ ऊपर उठने लगा; और फिर उस सिरके शरीरके पैर तेज़ीके साथ उन दोनोंकी ओर जाने लगे। सिरकी दृष्टि पूरी पूरी उन दोनोंके हाथोंकी ही ओर थी। इतनेमें सलामतख़ांके हाथोंसे सर्फोजीके हाथमें घरी किया हुआ एक छोटासा कागज गया, सो भी उसने देखा।

जिन छोटेसे, किन्तु अत्यन्त तीक्ष्ण और चंचल युगल-नेत्रोंने सलामतख़ां और सर्फोजीके बीचका वह सारा मामला देखा; और जिन छोटे छोटे तीक्ष्ण युगल-कर्णोंने उन दोनोंका संवाद सुना, उन नेत्रों और कर्णोंका छोटासा स्वामी, क्षणभरके लिये कुछ चकितसा होकर खड़ा हो गया; और फिर कुछ विचित्र तरहसे, आगे जानेवाले उन दोनों व्यक्तियोंकी ओर, देखने लगा। उसके मनमें क्या विचार आ रहे थे; और क्या नहीं आ रहे थे, सो कुछ ठीक ठीक बतलाया नहीं जा सकता। क्योंकि उसकी अवस्थाको देखते हुए यह सम्भव नहीं था कि, उसके मनमें राजनीतिकी कोई बड़ी बड़ी बातें—कोई राजनैतिक युक्तियां—आती हों, कि, जिनपर वह मन ही मन सोचता-विचारता हो! उसकी उम्र छोटी अवश्य थी, पर लड़का अत्यन्त चतुर और चपल दिखाई देता था। यह तो उसकी सदैवकी आदत थी कि, उसके आसपास यदि कोई कुछ बातें करता हो, अथवा कोई कुछ कार्य करता हो, तो वह बड़े ध्यानसे देखता-सुनता रहता था। सब प्रकारकी जांच वह बड़ी होशियारीसे करता था। बस,

उसी आदतके अनुसार, जान पड़ता है, अबतकका उसका सारा व्यवहार था। जो हो, क्षणभरके लिये अब उसके मनमें मानो यही प्रश्न उठने लगे कि, इन दोनोंके पीछे क्या अब और कुछ दूरतक मैं जाऊं? अभीतक जो कुछ मैंने देखा है, उससे अधिक क्या और कुछ मुझे मालूम होगा? परन्तु इन प्रश्नोंपर शायद् उसके मनमें अब यही निश्चय हुआ कि, इनके पीछे जानेमें अब कोई लाभ नहीं। क्योंकि तुरन्त ही उसने अब किलेसे नीचे उतरनेवाला मार्ग पकड़ा। सलामतखां और सर्फोजी दोनों आगे जा रहे थे, परन्तु वह बड़ी सितावीके साथ उनके पास हीसे निकल गया। सर्फोजीने अपने कल्लोंपर हाथ फेरते हुए एक बार उसकी ओर क्षुद्र दृष्टिसे देखा, परन्तु वह चालाक लड़का, बातकी बातमें, उन दोनोंको धता बताकर, किसी हिरनके बच्चेकी भांति उछलता हुआ किलेसे नीचे उतर आया। किलेसे नीचे उतरनेके बाद् शायद् दम मारनेके लिये ही वह कुछ थोड़ासा ठहरा; और जैसे कोई मार्ग भूला हुआ हिरनका बच्चा, कहीं दो मार्गोंके आ पड़नेपर इधर-उधर चकराने लगे, वैसे ही हमारा यह लड़का भी क्षणभरके लिये इधर-उधर चकराता रहा। उस समय उसके मनमें क्या आया, सो समझना कठिन था। वास्तवमें वह स्वयं ही उस समय अपने मनकी उस दशाको जान सका, अथवा नहीं, इसमें शंका है। जो भी हो, अन्तमें ऐसा दिखाई दिया कि, उसके मनका कोई न कोई निश्चय हो गया—उसने आवजी

पटेलके घरकी ओर कदम बढ़ाया। आवजी भी अभी हाल ही में अपने घर आकर कुछ आराम करने लगे थे। न जाने वे किलेपरसे उतरकर आये थे, इसकारण, अथवा अन्य किसी कारणसे, उनका चेहरा बिलकुल उतरा हुआसा दिखाई दे रहा था।

वह लड़का, जो किलेपरसे दौड़ता हुआ आया, ठीक आवजी पटेलके सामने ही आ उपस्थित हुआ। गाँवभरमें मानो प्रत्येकके घरमें उसे जानेकी पूर्ण स्वतंत्रता प्राप्त थी। पटेलजीके सामने ज्यों ही वह पहुंचा, त्यों ही उन्होंने बड़ी बड़ी आंख निकालकर उससे कहा—"अरे श्यामा, बदमाश, अभीतक कहां था? मैं ऊपरसे चला, तब तू कहां गया था? आ!" परन्तु श्यामा उनके इस धमकीपूर्ण प्रश्नसे घबड़ानेवाला लड़का न था। वह उनके प्रश्नका कुछ भी उत्तर न देते हुए बोला, "मैं वहीं था; और कहां गया था? आप बड़ी जल्दी चले आये उस सर्फोजी और सलामतखाँको डरकर! किन्तु पटेल-जी, सर्फोजी और सलामतखाँका कोई गोलमाल अवश्य है। मैंने आपके सामने ही उनको छिपकर आंखोंसे इशारा करते हुए देखा। उनकी कुछ कुछ बातें भी मैंने सुनीं; और एक छोटासा कागज भी सर्फोजीको देते हुए देखा। और पटेलजी, आज रातके बारह बजे, किलेकी उस ओर जो बाघका झरना है, वहां सर्फोजीको किसी न किसीने बुलाया है; और वहां उसका जाना भी निश्चित हो चुका है—सच कहता

हूं, पटेलजी, सर्फोजी कोई न कोई गुप्त कारस्थानी अवश्य कर रहा है।

श्यामा पहलेपहल जब बोलने लगा, तब आवजी पटेलने समझा कि, यह छोकरा कुछ न कुछ शैतानी कर रहा है; और उसको धमकानेके लिए आवजीने कुछ शब्द भी कहने चाहे; परन्तु जब श्यामा एकके बाद एक, अनेक बात बतला गया, तब आवजीकी चित्तवृत्ति बिलकुल बदल गई। उन्होंने भली-भांति समझ लिया कि, श्यामा जो कुछ कहता है, उसमें कुछ न कुछ सत्यता अवश्य है; और उस ओर ध्यान देना आवश्यक है। श्यामा गांवभरमें सबसे अधिक बदमाश लड़का गिना जाता था। कोई उसे बड़ा बातूनी कहता, कोई उसे बड़ा गुरू-घण्टाल कहता। परन्तु प्यार उसको सब कोई करते थे; और प्रत्येक यही समझता था कि, इसके बराबर ईमानदार और कोई लड़का नहीं है। आवजी पटेलकी तो उसपर बड़ी ही कृपा थी। पटेलजी यद्यपि सदैव उसको गाली ही दिया करते, तथापि यदि किसी दिन श्यामा उनकी नजर न पड़ता, तो खास तौरपर उसे बुलवाना पड़ता था। उस लड़केकी सत्यप्रियता, चातुर्य, ईमानदारी इत्यादिके विषयमें सबको विश्वास था; और उसकी वाचालता उसके अन्य गुणोंके लिए शोभादायक ही थी। उपर्युक्त वृत्तान्त उसके मुखसे सुनकर आवजी पटेल कुछ देर-तक चुप बैठे रहे। उस समय ऐसा जान पड़ा कि, कुछ ऐसी पिछली बातें उनके ध्यानमें आईं कि, जो श्यामाके बतलाये

हुए वृत्तान्तसे मेल खाती थीं। इतनेमें घरसे स्नानके लिए उठनेको पटेलजीके यहां सन्देशा आया। परन्तु पटेलजीका चित्त उपर्युक्त बातोंका विचार करनेमें ही निमग्न हो रहा था। घरसे जो सन्देशा आया, वह मानो पटेलजीके कानोंतक पहुंचा ही नहीं। इतनेमें वे एकदम उठकर बैठ गये; और श्यामाके सिरपर एक चपत जमाकर बोले, "अरे यह सब तू कहांसे सुनता रहा? जान पड़ता है, यह सब झूठ ही कहता है—"

इसपर श्यामा एकदम बोला, "नहीं, नहीं, पटेलजी, मैं सौगन्द खाकर कहता हूं, कभी झूठ नहीं बोलूंगा। जो कुछ आपको अभी बतलाया है,सो सब मैंने स्वयं अपने कानोंसे सुना है; और दौड़ता दौड़ता आया हूं आपको बतलानेके लिए। पटेलजी, मैं सच कहता हूं, यह सर्फोजी बड़ा ही खोटा आदमी है। किसी न किसी बुरे काममें वह अवश्य लगा है। उसकी बोल-चाल, काम-काज, उठक-बैठक, सब बदमाशीसे भरी है।" वास्तवमें आवजी पटेलको यह शंका ही नहीं हो सकती थी कि श्यामा झूठ कहता है, अथवा कुछ बनाकर कहता है। इस समय उन्होंने श्यामाको झूठा बनानेके लिए भाषण किया, सो मानो इसीलिए कि जिससे उनके मनके उस समयके विचार खुलने न पावें, या उन विचारोंके कारण आई हुई विमनस्कता बाहर प्रकट न होने पावे। श्यामाने उनको क्या उत्तर दिया, सो उन्होंने सुना होगा, अथवा नहीं, इसमें सन्देह ही है। अस्तु। वे बहुत देरतक विचार करते रहे; और फिर उठे,

तथा श्यामासे कहा, "क्यों लड़के, तूने अभी रोटी खाई है या नहीं?" श्यामाने कहा, "नहीं।" यह सुनकर पटेलजी बोले, "अच्छा तो चल, मेरे साथ रोटी खा ले; और फिर जल्दी किले-पर जा; और सुभानको बुला ला।"

श्यामा तुरन्त ही बोल उठा, "अजी, फिर रोटी खानेकी ही ऐसी क्या जल्दी पड़ी है? मैं अभी उसे बुलाये लाता हूं। फिर घर जाऊंगा, तब रोटी खा लूंगा। श्यामा रोटीके लिए रुकने-वाला नहीं; और न रोटीके लिए वह अपने काम ही छोड़ेगा। हां, अम्मा जरा नाराज होंगी, सो नाराज होने दो—वह तो ऐसी रोज ही नाराज होती रहती है।"

इतना कहकर वह चलनेको तैयार हो गया, पर आवजी पटेलने उसे जाने नहीं दिया। पहले अपने साथ उन्होंने उसे रोटी खिलाई; और फिर सुभानको बुलानेके लिए भेजा। अव्वल तो लड़केकी जाति स्वाभाविक ही बड़ी चपल होती है, फिर उसमें भी श्यामाके लिए क्या कहना। वह जिस वेगके साथ किलेसे नीचे उतरा था, उससे दूने वेगके साथ इस बार सुभानको बुलानेके लिए जा रहा था। आज रातको कोई न कोई तमाशा देखनेको मिलेगा, सुभान और पटेलजी सर्फोजीकी ताकमें रहेंगे; और फिर मैं भी उनके पीछे पीछे जाऊंगा; और सब तमाशा देखूंगा—बस, इसी प्रकारके विचार बराबर उसके मनमें आ रहे थे। और इन्हीं कौतूहलप्रद विचारोंकी सनकमें वह छोकरा खूब तेजीसे चला जा रहा था। बातकी बातमें वह किलेपर

पहुंच गया; और फिर सर्फोजीकी आंख बचाकर सुभानसे मिला। सुभानको पटेलजीका सन्देशा बतलाया; और तुरन्त ही फिर लौट पड़ा। किन्तु लौटते हुए वह सर्फोजीकी नजरसे बच नहीं सका। सर्फोजी मार्गपर ही मौजूद था। श्यामाको वापस आते हुए उसने देखा; और कुछ चकितसा होकर उसको बराबर देखता रहा। श्यामा बड़े चक्करमें पड़ा। उसने सोचा कि, अब यदि मैं इस दुष्ट सिपाहीके सामनेसे निकलता हूं, तो वह यह कहकर कि, 'तू ऊपरसे नीचे; और नीचेसे ऊपर बार बार क्यों आता है?' मुझको डांटे बिना न रहेगा; और यदि उसकी आंख बचाकर दूसरी ओरसे जाता हूं, तो भी अच्छा नहीं है। इससे मेरे आने-जानेका कारण शायद वह समझ जायगा; और रातका सारा तमाशा बिना कारण ही हाथसे चला जायगा। इस प्रकारकी अनेक बातें उसके मनमें आईं, परन्तु श्यामा एक बड़ा ही ढीठ लड़का था—वह सामनेके मार्गसे सर्फोजीके पाससे ही आने लगा। सचमुच ही, जैसा कि उसने अनुमान किया था, सर्फोजीने उसे रोका; और धमकाया, पर लड़का बड़ा जबरदस्त था, वह भला इसकी क्यों परवा करने लगा! उसके सामने ढिठाई करके, उसकी थोड़ी-बहुत हँसी करके उसे हँसाकर; और इस प्रकार उसे धता बताकर निकल गया। उसके पीछे पीछे सुभान भी किलेके नीचे उतरा। यह देखकर अवश्य सर्फोजीको कुछ सन्देह हुआ। परन्तु जो मनुष्य अपना अभीष्ट उद्देश्य सिद्ध करनेको उत्सुक होता है,

उसके सामने ऐसे छोटे-बड़े सन्देह चाहे जितने आवें, वह तुरन्त ही उनको व्यर्थ समझकर अपने मनका समाधान कर लेता है। तदनुसार सर्फोजीने भी अपने मनका समाधान कर लिया। इधर सुभान आवजी पटेलके सन्देशेके अनुसार उनके पास गया। दोनोंका बहुत देरतक एकान्तमें सम्भाषण होता रहा। अन्तमें श्यामाके बतलाये हुए समय और स्थानपर रातमें जानेका निश्चय हुआ।

सर्फोजी और किलेपरके अन्य नौकरोंमें पटती नहीं थी। इधर आवजी पटेलके साथ भी उसका मेल नहीं था, सो पाठकोंको मालूम ही हो चुका है। सुभानका और सर्फोजीका तो बहुत ही वैमनस्य था, इसलिए जब आवजी तथा सुभान-को यह मालूम हुआ कि, आज सर्फोजीकी कोई न कोई बुराई हमको अवश्य मालूम होगी, तब उनको मानो एक प्रकारका आनन्दहीसा हुआ। श्यामाके कथनपर उन्हें पूरा पूरा विश्वास नहीं होता था, इसलिए उन्होंने बार बार उससे खोद खोदकर पूछा—"सलामतखांने क्या कहा था? सर्फोजीने फिर उससे क्या कहा? जिससे आज उसकी गुप्त भेंट होगी, उसका नाम क्या तुझको मालूम हुआ? सर्फोजी अथवा सलामतने क्या उसका नाम लिया था?" इत्यादि प्रश्न दोनोंने मिलकर बार बार उससे पूछे। परन्तु जितनी जानकारी उस लड़केको थी, उतनी उसने बार बार उन दोनोंको बतला दी थी। जो बात उसे मालूम ही न थी, सो वह कहांसे बतलाता? अस्तु।

सारा वृत्तान्त सुन लेनेपर उन दोनोंने उस रातको वहां जानेका निश्चय किया। सुभानने अपने अन्तःचक्षु एक बार उस स्थानकी ओर घुमाकर भलीभांति देखा कि, वहां सर्फोजी और उससे जो मिलनेवाला है, वे दोनों कहां बैठेंगे ; और कहां खड़े होंगे, तथा हम लोग पहले जाकर कहां खड़े हों, जिससे उनकी गुप्त मंत्रणा ठीक ठीक हमारे कानोंमें पड़े। परन्तु सुभानकी सूरतसे यह नहीं जान पड़ा कि, अपने अन्तःचक्षुओंके उस निरीक्षणसे उसको कोई विशेष सन्तोष हुआ। बहुत देरतक बराबर वह विचार करता रहा। अन्तमें आवजीकी पीठपर थाप मारकर वह बोला, "पटेलजी, मैं एक बार उधर हो आता हूं। उस स्थानकी ओर बहुत दिनसे मैं गया नहीं हूं, इसलिए पहले अच्छी तरह देख आऊं, तो ठीक होगा। इसके सिवाय अभीसे यहां बैठा रहना भी ठीक न होगा। एक बार किलेपर हो आना ही अच्छा है। वह बदमाश ज्यों ही वहांसे चलेगा, मैं तुरन्त तुम्हारे पास आ जाऊंगा। तुम तैयार रहो, बस।" इतना कहकर वह तुरन्त ही उठ पड़ा। श्यामाने कहा, "मैं भी रातको आपके पीछे पीछे चलूंगा।" सुभान वहांसे चलकर जहां जानेवाला था, वहां गया; और जो कुछ उसे देखना था, सो अच्छी तरह देखकर फिर किलेपर चला गया। वह अपने कार्यमें बिलकुल निमग्नसा दिखाई दिया। परन्तु उसका सम्पूर्ण ध्यान उस समय सर्फोजीके कार्योंकी ओर था। बीच बीचमें किसी कामके बहाने वह सदर दरवाजेपर जाता;

और किसी न किसीके द्वारा सर्फोजीका सारा हाल जान लेता था। साथ ही वह इस बातका भी पूरा पूरा ध्यान रखता था कि, किसीको उसपर सन्देह न होने पावे। समय ज्यों ज्यों नजदीक आने लगा, त्यों त्यों वह अधिक उतावला होता गया। अन्तमें अपने स्वामीके पास जाकर उसने यह कहकर इजाजत ले ली कि, "आजकी रातको मुझे नीचे गांवमें किसी कामसे जाना है, सो छुट्टी दी जाय।" इसके बाद वह एक ऐसे मार्गसे नीचेकी ओर चला कि, जिस मार्गसे सर्फोजीसे भेंट नहीं हो सकती थी। सर्फोजी यद्यपि अभी अपने स्थानसे नहीं चला था; परन्तु सुभानने इस बातका पता लगा लिया था कि, सर्फोजी उस समय आज अवश्य जायगा; और उसने अपने अधीनस्थ नायकसे इस बातका भी प्रबन्ध करा लिया है कि, जिससे अमुक समयपर उसके अनुपस्थित रहनेसे किसी प्रकारकी गड़बड़ी न मचे। यह समाचार पाते ही मूछोंपर ताव देते हुए सुभानरावकी सवारी, एक बिलकुल नवीन ही मार्गसे, किलेके नीचे उतरने लगी। उसके सिरमें कोई न कोई विचार चक्कर काट रहे थे। इससे, अवश्य ही, मार्गकी ओर जितना ध्यान देना चाहिए था, उतना वह नहीं दे सकता था। फिर भी वह इतनी शीघ्रताके साथ उस पहाड़ी किलेसे नीचे उतर रहा था, कि जैसे ऊपरसे छोड़ा हुआ कोई गेंद, अथवा तेजीसे दौड़ता हुआ कोई सांप! पैरोंके नीचेका मार्ग उसे इतना मालूम था कि, जहां कहीं पत्थर आ पड़े, अथवा कोई मोड़

बीचमें आ जाय, तो वह बिना नीचे देखे ही पार करता जाता था। पहाड़ी किलोंसे नीचे उतरना और ऊपर चढ़ना कितना कठिन होता है, इसका अनुभव हमारे उन्हीं पाठकोंको हो सकता है कि, जिनको कभी ऐसे किलोंपर चढ़नेका मौका आया है; परन्तु उस समयके उन किलोंके नौकरोंमें इतनी चपलता रहती थी कि, उतार और चढ़ाव, दोनोंमें वे हिरनकी तरह उछलते-कूदते चले जाते थे। अस्तु।

सुभान रास्ते रास्ते यह सोचता जाता था कि, इस नीचसे—सर्फोजीसे—आज जो मिलने आनेवाला है, वह है कौन? क्यों मिलने आता है? बीजापुरसे आता है, सो भी सिर्फ इससे मिलनेके लिए! यह बात क्या है? उसको चिट्ठी भी दी! पर यह मूर्ख पढ़ना भी तो नहीं जानता! चिलम सुलगाकर पी-गया होगा! और क्या करेगा? किन्तु यह मामला क्या है? जान पड़ता है, इसमें कोई न कोई बड़ा भेद है, नहीं तो इसकी इतनी पूछ कौन करता? इसने कुछ न कुछ किसीसे डींग मारी होगी, किसीको कुछ वचन दिया होगा, नहीं तो ऐसा क्यों होता? भला बच्चाजी! सर्फो, मैं नामका सुभान हूं—आओ तो एक बार बच्चा हमारे पंजेमें! मैं अबतक वे पीछेकी······भूला नहीं हूं। वह मेरे सिरका घाव अबतक ताजा है। बेटाजी! तुमने हमारे सिरपर घाव नहीं किया—सांपकी पूंछपर चोट की है! मैं वही सुभान हूं, जिसका···तू समझता क्या है? पूरा पूरा बदला निकालूंगा। और उसमें भी यदि कुछ नानासाहबके विरुद्ध हुआ, तो फिर समझ ले कि फिर·········

इसी प्रकारके विचार करता हुआ वह नीचे आ पहुंचा; और शीघ्र ही आवजी पटेलके घर पहुंचा। आवजी बिलकुल तैयार थे; परन्तु उनका मन अब तैयार नहीं था। इसलिए इस प्रकारके बहाने वह बतलाने लगे कि, तू अकेला ही जा--मेरी क्या आवश्यकता है? हम दोनों ही यदि जायँगे, तो शायद उनको यह सन्देह हो कि, छिपकर आये हैं; और उनकी गुप्त मंत्रणा सुनते हैं, इत्यादि। सच तो यह था कि आवजी अब उतरती अवस्थाके पुरुष थे, अतएव झगड़ोंसे वे बहुत बचना चाहते थे। परन्तु सुभान भला क्यों मानता है! उसने उनको घसीट ही लिया। अन्तमें बेचारे उठे और चल दिये। श्यामा उस समय कहीं न दिखाई दिया। दोनों ही चाहते थे कि, वह साथ रहे; परन्तु फिर यह भी सोचा कि, लड़का है, शायद कुछ कर बैठा; और हम कुछ सुनने भी न पाये; और भेद खुल गया, तो क्या लाभ होगा? बड़ी गड़बड़ी मचेगी। बस, यही सोचकर उन्होंने श्यामाकी तलाश नहीं की; और चल दिये। गांवकी सीमा पार करके अब वे जंगली रास्तेपर आये, आवजी बेचारे ठोकर खाने लगे। उनका शरीर अब उनसे न सम्हलने लगा। रात अँधेरी थी; और सुभानके समान चपल मनुष्यका साथ! फिर क्या कहना है! "अरे राम! अरे राम!! हे ईश्वर! हे ईश्वर!!" के शब्द प्रत्येक ठोकरपर बेचारेके मुखसे निकलने लगे। यह देखकर सुभान बोला, "चुप् चुप् पटेलजी, क्या है तुम्हारे मनमें? सब भेद खोल देना चाहते हो, मालूम होता है। बिल-

कुल चुप रहो—मैं जहांतक इस मामलेका विचार करता हूं, वहांतक यही मालूम होता है कि, सर्फोजी किसी बड़ी कारस्तानीमें लगा हुआ है। कोई न कोई भयंकर षड्यंत्र वह करना चाहता है। नानासाहबके साथ इसकी बड़ी दोस्ती थी। पीछे पीछे तो नानासाहब इससे खूब सलाह-मशविरा किया करते थे। इन सब बातोंको याद करके बड़े ही विचित्र विचार मेरे मनमें आते हैं। इस नीचके मनमें क्या है? कौन इससे मिलने आवेगा?" इसी प्रकारकी कुछ बातें बिलकुल धीरे धीरे कहकर वह आवजीको चुप करनेका प्रयत्न करता था। आवजी बेचारे कहते ही क्या? सब ठोकरें इत्यादि चुपकेसे सहन करते हुए चले जारहे थे। नियत स्थान ज्यों ज्यों निकट आने लगा, सुभान आवजीको और भी अधिकाधिक दाबने लगा; और आवजी ठोकरें भी अधिकाधिक खाने लगे। उनका कष्ट बढ़ने लगा; और चुप रहनेकी आवश्यकता भी बढ़ने लगी। दोनोंका समीकरण उनसे हो नहीं सकता था। इतनेमें सुभानको मालूम हुआ कि, सामनेसे कोई आरहा है; और ताली बजाकर इशारा करता है। सुभान तुरन्त ही ठहर गया; और आहट लेने लगा। इतनेमें बिलकुल पाससे ही, धीमे स्वरसे उच्चारण किये हुए, ये शब्द उन दोनोंके कानोंमें पड़े—"सुभान! पटेलजी, अब एक अक्षर भी मुँहसे न निकालो। वह आदमी आगया; और घोड़ेको पेड़में बांधकर उस जगह खड़ा है, सर्फोजी अभी नहीं

आया, जल्दी ही आवेगा। तुम बिलकुल धीरेसे, चप्पल निकाल-कर, उधरसे आकर देखो। उसके पास जानेकी आवश्यकता नहीं।" ये शब्द किस चतुर; और छोटेसे, मुखसे निकले थे, सो उन दोनोंने पहचान लिया; और उसको सुनकर दोनोंको आश्चर्य भी हुआ! वे समझते थे कि, दोपहरकी थकावटके कारण छोकरा घरमें जाकर सोता होगा, परन्तु उनका यह अनुमान गलत निकला; और छोकरा उनके पहले ही वहां जाकर हाज़िर हो गया। ऐसे विकट स्थानपर; और रातके समय, इतनी शीघ्रता-से उसको आया हुआ देखकर दोनोंको अत्यन्त ही आश्चर्य हुआ।

श्यामाका उक्त कथन सुनकर दोनोंहीने उसीके कहनेके अनुसार किया। उन्होंने अपने अपने चप्पल तुरन्त ही निकाल लिये। श्यामाने उनको अपनी फटी हुई धोतीमें लपेट लिया; और बगलमें दाबकर वह आगे आगे चलने लगा। अब चन्द्रदेवने क्षितिजसे अपना सिर थोड़ा थोड़ा ऊपर निकालना शुरू किया था, इसकारण मार्ग चलनेमें अब उनको थोड़ी-बहुत सहायता भी मिल रही थी। श्यामाने जिस टेकड़ीका पता बतलाया था, उसके पीछे जाकर तंग जगहोंसे चढ़ना और छिपकर बैठना बहुत कठिन काम था; पर इस समय कठिनाईसे घबड़ाकर पीछे हटनेका भी मौका नहीं था। उतना साहस भी यदि न किया जाता, तो अबतकका किया हुआ सारा प्रयत्न व्यर्थ था, यह वे अच्छी तरह जानते थे। पहले वे दोनों जिस जगह गुप्त भेंट करने-

वाले थे, वह जगह बिलकुल सुलभ थी; और उसके आस-पास छिपकर बैठनेके स्थान भी अच्छे थे; परन्तु अब जिस टीलेपर उस आदमीके खड़े होनेकी खबर श्यामाने बतलायी थी, उसके पीछेकी ओरसे तंग जगहोंसे ऊपर चढ़ना; और टीलेके पिछले भागमें नीची जगहोंमें, मेढ़ककी तरह, छिपकर बैठना; और इस प्रकार ऊपरके लोगोंकी गुप्त बातचीत सुनना बहुत कठिन काम था। परन्तु इसके सिवाय और कोई मार्ग नहीं था। पटेलजी-के लिए यह प्रयास अत्यन्त असम्भव था। उनका इस प्रकार चढ़ना मानो एक प्रकारसे स्वर्गारोहण ही था। इसलिए उनके विषयमें इतना ही निश्चय किया गया कि, वे टीलेके नीचे किसी गुप्त स्थानमें बैठें, जिससे वे किसीको दिखाई न पड़ें। किसी प्रकार भी अपना अस्तित्व उन दोनों व्यक्तियोंपर प्रकट न होने दें। इस प्रकार सलाह होकर तदनुसार कार्य करनेका निश्चय हुआ; और आवजी पटेलको टेकड़ीके पीछेकी ओर एक खड्डमें बैठाकर सुभान और श्यामा दोनों उस पहाड़ीके पीछेकी ओरसे ऊपर चढ़ने लगे। वह चढ़ाई इतनी कठिन थी कि, आवजीको क्षण क्षणपर यही विश्वास होने लगा कि, अब दोनोंमेंसे एक न एक अवश्य शिथिल होकर नीचे गिरेगा; और उसकी कपालक्रिया होगी! सुभान कुछ न कुछ सावधानीसे चढ़ रहा था, पर श्यामा तो बिलकुल मेढककी भांति ही फुद-कता हुआ ऊपर जारहा था। चढ़ते चढ़ते वह एक ऐसी जगहपर पहुंचा कि, जहांसे ऊपरकी मामूली आवाजकी बात-

चीत सहजमें सुनाई दे सकती थी। उसी जगह एक खोह थी, जिसमें घुसकर बैठनेके लिए श्यामाने सुभानको इशारा किया; और स्वयं और भी कुछ ऊपर गया—इतना ऊपर गया कि, जहांसे हाथ ही दो हाथ टेकड़ी और रह जाती थी—और फिर वहीं छिपकर बैठ गया। इस दशामें उसको यदि इस समय कोई देखता, तो यही जान पड़ता कि, कोई बन्दर खोहमें छिपा बैठा है! इस प्रकार सुभान और श्यामा ऊपरकी ओर कान लगाये हुए इस उत्सुकतासे बैठे कि, कब आवाज़ आवे; और कब हम सुनें। ऊपर टेकड़ीपर जो व्यक्ति था, वह कभी कभी उकता-कर इधर-उधर टहलने लगता, तब उसके पैरोंकी आहट उन-दोनोंको भलीभांति सुनाई देती। इसकारण उनको विश्वास हो गया कि, ऊपर जो बातचीत होगी, वह भी हमें अच्छी तरह सुनाई देगी। बहुत देर हो गई, पर सर्फोजीका कहीं पता नहीं। अतएव ऊपर जो व्यक्ति इधर-उधर घूम रहा था, वह बहुत त्रस्त हुआसा दिखाई दिया। उसने चार-पांच ऐसी गालियां सर्फोजीको दीं कि, जो लिखी नहीं जा सकतीं। इसके सिवाय वह और भी कुछ ऐसे वाक्य कह रहा था कि, जिनसे सर्फोजी-के सात पीढ़ियोंके पुरखे तर जासकते थे। इतनेमें उसने देखा कि, कोई उस टेकड़ीपर चढ़ रहा है। तब तो वह और भी अधिक बकने लगा। विशुद्ध उर्दू भाषामें गालियां देते हुए वह बोला, "हरामज़ादे, इतनी देर तूने क्यों लगादी? अपने बापको इतनी देरसे यहां बैठाल रखा? तुझको शरम नहीं

लगती? इस समय तुझपर मुझे इतना क्रोध आया है कि, इसी तलवारसे तेरे टुकड़े टुकड़े करके यहीं फेंक दूं। पाजी कहींका। क्या तू समझता था कि, जितनी बातें तूने मुझे बतलाईं, उतनी सभी मैं सच समझूंगा?" सर्फोजी घबड़ाई हुई आवाज़से बोला—"मैंने जितनी बातें बतलाईं, उनमेंसे एक भी झूठ नहीं। सरकार, मैंने जितनी बातें कहीं, सब सच हैं। क्या मैं जानता नहीं हूं कि, झूठी बातें आपसे कहला भेजनेमें मेरा गुज़ारा कैसे हो सकता है?"

"तब क्या तू जो कहता है कि, 'अब वह नमकहराम छोकरा इधर कभी नहीं आवेगा, इसका प्रबन्ध हो गया'—सो क्या सच है?"

"बिलकुल सच। आप उसके विषयमें बिलकुल सन्देह न करें। वह अवश्य चला गया। उसका अब पूरा पूरा बन्दोवस्त हो गया, आप निश्चित समझें। मैं जिसको एक बार कहूंगा कि, यह काम करता हूं, उसे फिर बिना किये न छोड़ूंगा। मैंने स्वयं ही उसको जानेमें सहायता दी है। मैंने खुद उसे बतलाया है कि, वह कहां जावे; और कैसे जावे। सब रास्ते मैंने स्वयं ही बतलाये हैं। और उसको अबतक पूर्ण विश्वास है कि, मेरे समान विश्वासपात्र नौकर तथा मित्र संसारमें कहीं नहीं मिलेगा। यह बिलकुल ठीक कहता हूं, आप विश्वास रखें। अब आप निश्चिन्त होकर अगली कार्यवाहीमें लगें। मैं कर ही रहा हूं। इस तरफसे आप बिलकुल निश्चिन्त

रहें। यहांका सारा प्रबन्ध मैंने अपने हाथमें लिया, सो कई बार आपसे निवेदन कर ही चुका हूं। बिलकुल निश्चिन्त रहिये—हां,...” सर्फोजीके मुंहसे “हां” का शब्द सुनते ही वह महाशय कुछ खुश; और कुछ नाखुश भी होकर कहता है—“हां? हां क्या? बोल, बोल, तेरे ‘हां’ का क्या मतलब है? ‘हां-हां’ कहकर जो कुछ तू कहना चाहता हो, जो कुछ तेरी शर्त हो, सो कह क्यों नहीं डालता? अरे बदमाश, तेरे समान लोग यदि संसारमें होते...” इतना कहकर न जाने क्या समझकर उसने अपनी जीभ दांतों तले दबाई; और फिर एकदम अपना स्वर बदलकर बोला, “हां, तेरा इनाम तुझे शीघ्र ही मिलना चाहिए, यही तो? तेरे द्वारा यदि हम काम करा लेते हैं; और तू हृदयसे यदि मेरा काम कर देता है, तो फिर तुझे तेरे योग्य इनाम क्यों न मिलेगा? ‘हां’ कहकर उसकी याद दिलानेकी कोई आवश्यकता नहीं। तेरी मददका खयाल—और तेरा भी खयाल—हम पूरे तौरसे रखेंगे। तू बिलकुल घबड़ाना नहीं। प्रत्येकके, हर प्रकारके, परिश्रमका सच्चा सच्चा और उचित इनाम यदि न दिलाया जाय, तो फिर उससे परिश्रम ही क्यों लिया जाय? बोल। और भी कोई समाचार हो, तो कह डाल। जितना समाचार दिया था, उसका काम हो गया। उसका जितना उचित इनाम मिलना चाहिए, उतना तुझे अवश्य मिलेगा। आगे बोल। बोल। जिस बातके विषयमें मैंने तुझसे विशेष रूपसे कहा था, सो हो रही है, अथवा नहीं? यदि वह न हुई, तो तेरे आजतकके

मशविरोंका और तेरी इस सहायताका कुछ भी उपयोग न होगा..."

"वह काम बहुत कठिन है। मुझसे जो कुछ हो सकता है, सो मैं करता हूं। अन्य किसी मार्गसे भी यत्न हो रहा है। किन्तु..."

"किन्तु? किन्तु-विन्तु मैं कुछ भी नहीं सुनूंगा, वह तो पहले होना चाहिए। यहांतक जो कुछ हुआ है, सो तो कुछ भी नहीं है। यह तो प्रत्येक कर सकता था। तू अत्यन्त विश्वास-पात्र है, अत्यन्त ईमानदार है, संकटके समय यदि कुछ काम देगा, तो तू—ऐसा ही तुझपर नानाका भरोसा था न? तूने ही तो कहा था कि, चलते समय वह ज़नानख़ानेमें भी कह गया है कि, तेरे ही भरोसेपर रहें, तू मौका पड़नेपर प्राण भी दे देगा।"

बहुत देरतक इस प्रश्नका सर्फोजीकी ओरसे कोई भी उत्तर न मिला। उस व्यक्तिने धमकाकर फिर भी वही प्रश्न किया, तब उसने उत्तर दिया कि, "हां, हां, किन्तु...किन्तु उसका कोई भी उपयोग होता हुआ दिखाई नहीं देता।" यह उत्तर इतना घबड़ाते हुए और डरते हुए दिया गया कि, जिसका कुछ ठिकाना नहीं। इसके बाद बहुत देरतक कोई कुछ भी नहीं बोला। धुंधली धुंधली चांदनी छा रही थी; और वे दोनों मनुष्य एक दूसरेकी ओर एकटक देखते हुए बैठे थे। उनके श्वासो-च्छ्वासके अतिरिक्त अन्य कोई भी ध्वनि उस समय कानमें नहीं आरही थी। वायु भी यहांतक स्तब्ध थी कि, आसपासके

वृक्षोंका पत्ता भी न हिलता था। वाह्य सृष्टिमें इतनी शान्ति दिखाई दे रही थी, पर उन दोनों मनुष्योंकी अन्तःसृष्टिमें कुछ भी शान्ति न थी, सो स्पष्ट दिखाई पड़ रहा था। उन दोनोंके वाह्य चक्षु इतनी स्थिरताके साथ, एकटक, एक दूसरेकी ओर देख रहे थे; पर अन्तःचक्षुओंके आगे न जाने कितने भिन्न भिन्न दृश्य दिखाई दे रहे थे, सो प्रत्यक्ष था। बहुत देर हो गई। इसके बाद वह मनुष्य सर्फोजीसे फिर बोला—"ठीक है। आजसे आठ दिनके अन्दर, जैसाकि मैंने तुझे पहले बतलाया है, सब प्रबन्ध हो जायगा। किलेदारके पास खरीता आवेगा। उसके साथ ही तेरे पास भी एक लिफाफा आवेगा। सुभान, आवजी इत्यादि लोगोंका क्या प्रबन्ध किया जाय, सो भी मालूम हो जायगा। सलामतखां कल सुबह लौट जायगा। बीचमें यदि कोई न्यूनाधिक समाचार हो, तो मुझे जतलाना। मैं अब इसी समय वापस नहीं जाऊंगा। कड़बोजीरावके...किन्तु नहीं। म भी कल सुबह ही लौट जाऊंगा। इसके बिना वह सन ठीक न होगा। तू बहुत ही सावधानीके साथ रह...पर अब यदि नहीं भी रहेगा तो भी कोई हानि नहीं। अब हमारे मनके अनुकूल होनेमें कोई कठिनाई न पड़ेगी। अच्छा, अब तू जा। मैं एक बार तुझे प्रत्यक्ष देखकर प्रतीति कर लेना चाहता था; और बस, आज तुझे यहां बुलानेका इतना ही उद्देश्य था! जा, जा अब यहांसे जल्दी। मैं भी जाता हूं। और हमारा काम—विश्वासका काम—ऐसा ही जारी रहना चाहिए।"

इतना कहकर वह कुछ विचित्र तरहसे, जोर जोरसे हँसा ; और स्वयं टेकड़ीसे उतरकर जाने लगा। इतनेमें सर्फोजी चिल्ला कर उससे बोला—"किन्तु सरकार, इस टेकड़ीके पीछेकी ओर कोई छिपा है; और हम लोगोंने जो बातचीत की, उसे किसी न किसीने अवश्य सुन लिया है।"

"सुनने दे, सुनने दे। स्वयं ब्रह्मा भी यदि सुन जावें, तो भी अब किला मेरे..."

आगेके शब्द किसीके कानमें नहीं पड़े; क्योंकि नीचे वह व्यक्ति बहुत दूरतक टेकड़ी उतर गया था। वहांसे सीधा वह उस वृक्षके ही पास गया, जहां उसका घोड़ा बँधा था; और तुरन्त उसपर सवार होकर वह चला गया। सर्फोजी पागलकी भाँति अपनी जगहपर खड़ा हुआ उसकी ओर देखता रहा। इधर सुभान और श्यामा भी अपनी अपनी जगहसे नीचेकी ओर उतरने लगे। उन्होंने जो कुछ सुना, वह कुछ भी उनकी समझमें नहीं आया। परन्तु अब वहां अधिक देरतक छिपे रहनेसे भी कुछ लाभ नहीं था। सर्फोजी भी कुछ समय बाद अपने मार्गपर चल दिया।

आठवां परिच्छेद।

ख़बरोंका दिन।

श्यामा और सुभान कुछ देरतक बिलकुल चुप रहे। इधर आवजी बेचारे सब बातें सुननेके लिए उत्सुक हो रहे थे। अतएव श्यामा और सुभान अपने अपने छिपनेके स्थानसे ज्यों ही नीचे आये, त्यों ही आवजी उनके सामने पहुँचे; और ज़ोर ज़ोरसे सब बातें पूछनेहीवाले थे कि, इतनेमें सुभानने उनको दाब दिया। उसने सोचा कि, शायद वह घोड़ेपर बैठकर आया हुआ मनुष्य यहीं कहीं आसपास हो! सर्फोजीने उससे यह कह ही दिया था कि, "हम लोगोंने जो कुछ बातचीत की, उसे किसी न किसीने सुन लिया है," सो उस समय यद्यपि उसने सर्फोजीको डांट दिया था, परन्तु शायद पीछेसे उसको भी सन्देह हो गया हो। ऐसी दशामें यदि वह आहट लेता हो; और हम लोग उसे मिल जावें, तो हमने जो कुछ सुना है—और जिसका आगे खुलासा करके हम कुछ काम निकाल सकते हैं—उससे कोई लाभ न उठा सकेंगे। सुभान यद्यपि यह पूरे तौरपर नहीं जान सका था कि, सर्फोजी और उससे उद्दण्डता-पूर्वक बातचीत करनेवाले उस सरदारसे क्या सम्बन्ध है, तथापि यह बात तो सुभानको भलीभांति मालूम ही हो गई कि, इन दोनोंका जो भी कुछ सम्बन्ध हो, पर है वह अवश्य अनिष्टकारक।

किलेदारको हानि पहुंचानेके उद्देश्यसे ही सर्फोजीके द्वारा कोई न कोई अनिष्ट कार्रवाइयां की जा रही हैं। इसके सिवाय, उस सरदार—अथवा सरदारी भेषके पुरुष—की अन्तिम बातचीतसे तो उपर्युक्त बातका पूरा पूरा विश्वास हो जाता था। जो हो, यह बात सुभानके ध्यानमें बिलकुल नहीं आई कि, जो कुछ बातचीत हुई, सो वास्तवमें क्या थी; और यह सरदारी भेषका पुरुष, जो सर्फोजीसे इतनी ढिठाईके साथ गाली-गलौज करके, परन्तु अपनी श्रेष्ठता प्रत्येक शब्द; और उसके उच्चारणमें भी दिखलाकर बातचीत करता था, सो कौन था। सुभान बीजा-पुरके दरबारमें बहुत बार नहीं गया था; क्योंकि उसका स्वामी ही जहांतक हो सकता था, टाल देता था। तथापि एक-दो बार, जब कभी वह गया भी था, उसका दरबारके सरदारों, मान-करी लोगों इत्यादिसे थोड़ा-बहुत परिचय हो ही गया था। इसलिए अब उसने अपने मनमें यह विचार करना शुरू किया कि, जिस मनुष्यकी बातचीत हमने अभी सुनी है, उसकी आवाज़के समान भी किसी सरदार या मानकरी इत्यादिकी आवाज़ उस समय मैंने वहां सुनी थी या नहीं। सर्फोजीसे टेकड़ीके ऊपर जब वह मनुष्य बातचीत कर रहा था, उस समय सुभानके मनमें हज़ार बार यह बात आई कि, किसी प्रकार इस मनुष्यकी सूरत यदि दिखलाई दे जाय, तो अच्छा हो; पर उसका कोई उपयोग न हुआ। जिस जगह वह बैठा हुआ था, उस जगह से, सिवाय सुननेके; और वह कुछ नहीं कर सकता था। देख

तो वह बिलकुल नहीं सकता था। इसकारण उसे सिर्फ़ सुनने-पर ही सन्तोष करना पड़ा। जिन मानकरी लोगों अथवा सर-दारोंकी आवाज़ उसने बीजापुर-दरबारमें अथवा अन्य कहीं सुनी थीं, उनकी आवाज़ोंके विषयमें जब उसने अपने मनमें जांच कर ली; और जब उसे यह निश्चय हो गया कि, आजकी आवाज़ उन लोगोमेंसे किसीकी नहीं है, तब उसने इस विषय-में मनको विशेष कष्ट देना उचित न समझा; और उसने अपना मौन भी छोड़ दिया, जो अबतक धारण किये हुए था; क्योंकि आवजीने उससे फिर पूछा कि, "क्या हुआ ?" सुभानने उन्हें स्फुट स्फुट उत्तर दिये, जो एक भ्रान्त मनुष्यके समान कहे गये थे। उसे इस बातकी भी शंका हुई कि, जिस सरदारके साथ आज सर्फोजीकी बातचीत हमने सुनी है, वह वास्तवमें सरदार ही है, अथवा और कोई ? परन्तु यह शंका बहुत देर नहीं टिकी। क्योंकि उस मनुष्यकी बातचीत बिलकुल सरदारी शानसे भरी हुई थी; और बनावटी सरदारसे यह बात कभी हो नहीं सकती थी। इस खयालसे कि, सर्फोजीके द्वारा उसका कार्य हो रहा है, वह लाचारीके साथ, दबी ज़बानसे, अथवा आशासे भरी हुई आवाज़से, नहीं बोलता था; किन्तु अधिकारयुक्त वाणीसे, हुकूमतके साथ, किसी मालिककी तरह बातचीत करता था। इसके सिवाय, सर्फोजी यद्यपि बीच बीचमें ढिठाईके साथ; और कुछ उद्दण्डतापूर्ण भी, भाषण करता था; पर वह उसके ऐसे भाषणको उत्तेजना न देनेकी सावधानी रखता था। यह

बात उसके प्रत्येक शब्द और शब्दोच्चारसे स्पष्ट दिखाई दे रही थी। सुभान एक खान्दानी सरदारका नौकर था, अतएव सरदारी ढङ्गकी बातचीतसे वह भलीभांति परिचित था। इससे उसको अब निश्चय हो गया कि, सर्फोजीसे सम्बन्ध रखनेवाला यह पुरुष अवश्यमेव कोई न कोई सरदार लोगोंमेंसे ही है। इसके बाद उसने फिर एक बार ऐसे ऐसे सरदारोंके नामों और रूपोंका अपने मनमें ध्यान किया जो कि, उसके मालिकसे शत्रुता रखते थे। इससे उसको दो-तीन पुरुषोंका संशय हुआ। परन्तु जब विश्वासपूर्वक वह कुछ भी निश्चय न कर सका, तब फिर उसने इस विषयको छोड़ दिया; और आवजी पटेलसे बातचीत करनेकी ओर विशेष ध्यान दिया। आवजीने धीरे धीरे बातचीत करके सब बातें जान लीं; और बड़ी फुर्तीके साथ, ऐसा मौका देखकर, कि श्यामा कुछ दूर है, उन्होंने एक नाम सुभानके कानमें कहा, जिसे सुनते ही सुभान आश्चर्य-चकित चेष्टासे बोलाः—

"हां, हां, अवश्य, वही होगा! ज़रूर, वही होगा! किन्तु मैं समझता हूं कि, अब हमको अपना काम करना चाहिए। जो कुछ हमने सुना है, अथवा जो कुछ हमने देखा है, सब, अभीका अभी, सरकारके कानमें डाल देना चाहिए। यदि ऐसा नहीं किया; और कुछ भला-बुरा हो गया, तो इस बातका पश्चात्ताप होगा कि, इतनी बातें मालूम होनेपर भी हम लोगोंने समयपर सरकारको सचेत नहीं कर दिया; और अपने काममें ढिलाई

की। और हमने इतना सारा खटाटोप किया, स्वयं प्राणोंकी भी परवा नहीं की—और इस श्यामाका तो मुझे क्षण क्षणपर भय मालूम होता था कि, यह छोकरा अवश्य नीचे गिरकर मर जायगा। अजी, बन्दर भी ऐसी जगहमें जाकर नहीं बैठ सकता, जहां यह जाकर घुसकर बैठा था। लड़का मर गया होता, तो इसकी माँने क्या कहा होता? यह सब व्यर्थ जायगा—यदि हम उनको समयपर सचेत न कर देंगे।"

परन्तु श्यामाका ध्यान उनकी बातोंकी ओर बिलकुल नहीं था। अत्यन्त चञ्चल और तीक्ष्ण आंखोंवाली चिड़िया जिस प्रकार दूरतक दृष्टि डालती रहती है, उसी प्रकार वह भी चारों ओर अपनी दृष्टि फेंक रहा था। कुछ देर इधर-उधर देखनेके बाद बीचमें एकदम ताली बजाकर श्यामा सुभानसे बोल उठा, "सुभान दादा, देखो तो भला, क़िलेकी उस ओरसे इतनी रातको वह नीचे कौन उतर रहा है? देखा न तुमने? वह जो भवानीके चबूतरेके पास बरगदका वृक्ष है, उसीकी सीधमें वह ऊपरकी ओर देखो, अवश्य कोई उतर रहा है! दो हैं, दो! कमली ओढ़े हुए दिखाई देते हैं। देख लिया न? वे दो मनुष्य आते हैं! अच्छा, अब तुम यहीं ठहर जाओ, मैं दौड़कर देख आता हूं कि, कौन हैं।"

इतना कहकर वह ऐसे वेगसे चला कि, जैसे कोई शिकारी कुत्ता दूर भगनेवाले अपने शिकारकी ओर लपके। श्यामा उस समयके तेज़ लड़कोंका एक उत्तम उदाहरण था। उस लड़केकी

तीव्रता बड़ी विचित्र थी; और नेत्र बड़े चञ्चल तथा तीक्ष्ण थे। उसकी दृष्टि एक जगह स्थिर कभी रहती ही नहीं थी। सर्वदा सम्पूर्ण दिशाएँ घूमकर उसकी आंखें मानों सदैव इस बातके लिए उत्सुकसी रहती थीं कि, सब जगहकी सभी बातें एकदम मेरी नज़रमें आकर स्थित होती हैं या नहीं? उनके सिवाय अन्य भी यदि कोई बातें हों, तो वे भी तुरन्त ही मेरी नज़रमें आनी चाहिए। उसकी दृष्टिके समान ही उसकी अन्य इन्द्रियां भी बहुत तेज थीं। कहीं किसीने कुछ कहा कि, बस तुरन्त ही वह इस लड़केके कानोंमें पड़कर पूर्णतया स्थित हुआ! कोई बात उससे छूटकर जा नहीं सकती थी। उसके हाथों-पैरोंमें ही—सम्पूर्ण शरीरमें ही—ऐसो कुछ उत्साहशक्ति भरी हुई थी कि, सर्पकी चंचलताके समान सदैव कोई न कोई चञ्चलतापूर्ण कार्य उसको अवश्य चाहिए था। उसका प्रेम नानासाहबपर बहुत था—नानासाहब उसको एक प्रकारसे देवता ही जान पड़ते थे; और जबसे वे गये—शायद उसे मालूम भी होगा कि वे कहां गये, क्यों गये—उसकी चञ्चलता और भी अधिक बढ़ गई थी। नानासाहब जब किलेपर थे, तब उसकी सारी चपलता, उनके साथ रहकर ऐसे ही कार्य करनेमें खर्च होती थी कि, जो उनको प्रिय थे। अस्तु। इन बातोंके वर्णनकी यहांपर विशेष जरूरत नहीं मालूम होती; क्योंकि श्यामाका वर्णन करनेके लिए अभी आगे अनेक प्रसंग आवेंगे। वहींपर उसका वर्णन करनेसे पाठकोंको विशेष कौतूहल होगा।

इस समय तो आइये, हम उसके साथ, जहां वह जाय, जावें। ऊपर जिस प्राणीसे उसके दौड़नेकी उपमा दी गई है, सचमुच ही वह इस समय उसी प्राणीके समान जा रहा था। इसमें कुछ भी अतिशयोक्ति नहीं। क्योंकि रातका समय था, धुँधली धुँधली चांदनी छाई हुई थी—ऐसे मौकेपर उसे मार्ग कहां दिखाई दे सकता था? परन्तु वह अपना धावा मारते चला ही जाता था। अस्तु। किलेकी जिस ओरसे उसने दो व्यक्तियोंको उतरते हुए देखा था, उसी ओर वह गया; और थोड़ी देरके बाद एक ओरको घूमकर वह एक ऐसी मोड़पर छिपकर खड़ा हो गया कि, जिधरसे वे दोनों मनुष्य निकलनेवाले थे। वह उन दोनोंकी सूरत देखना चाहता था; और यदि सूरत देखनेको न मिले, तो उनकी आवाज़ ही सुन लेना चाहता था। कुछ देरके बाद वे दोनों मनुष्य उसीके पाससे निकलकर आगे चले गये। परन्तु दुर्भाग्यवश श्यामा न उनकी सूरत देख सका; और न बोली ही सुन सका। दोमेंसे उसका कोई भी उद्देश्य सिद्ध न हुआ, क्योंकि दोनों आदमी बिलकुल चुपके चुपके चले जा रहे थे; और अपने सारे शरीरको उन्होंने इस विचित्र रीतिसे ढक लिया था कि, आंखेंतक भी खुली दिखाई नहीं देती थीं। श्यामाको इसी बातका आश्चर्य हुआ कि, इनको मार्ग कैसे सूझता होगा। यहांतक कि यदि कोई श्यामासे यही पूछता कि वे दोनों स्त्रियां थीं या पुरुष? तो इस प्रश्नका उत्तर देना भी उसके लिए कठिन था। अतएव उसने सोचा कि आजकी

रात क्या सारी चमत्कारोंकी ही है? आज क्या आश्चर्य ही आश्चर्य देख पड़ेगा? उधर सर्फोजीकी गुप्त कारस्तानी अभी देख ही चुके; अब यह एक और विचित्र प्रकरण उपस्थित हुआ! आज यह क्या बात है? इस प्रकार सोचकर अन्तमें उसने यही निश्चय किया कि, अब इनके पीछे पीछे जाकर इनका भेद अवश्य लेना चाहिए। परन्तु किसी चतुर राजनीतिज्ञके समान पहले वह कुछ ठहर गया। उसने सोचा कि, हम यदि इनके पीछे ही पीछे गये; और आहट पाकर इन्होंने हमको पहचान लिया, तो सारा मामला ख़राब हो जायगा। बस, यही सोचकर पहले उसने थोड़ी देरतक कहीं खड़े रहनेका निश्चय किया; और फिर कुछ देर बाद वह उन दोनों व्यक्तियोंके पीछे पीछे चला। उधर सुभान और आवजी बेचारे बहुत देर प्रतीक्षा करते करते थक गये; और अन्तमें यह कहकर, कि जाने यह बदमाश छोकरा कहां चला गया, वे भी अपने रास्तेसे चल दिये।

बात यह थी कि, उनको अपना अगला विचार करना था; और इसके सिवाय, इस बातका भय तो उनको था ही नहीं कि, श्यामा भूलकर कहीं दूसरी जगह चला जायगा। इसकारण श्यामाकी फ़िर उन्होंने कोई चिन्ता नहीं की। आवजी सुभानको अपने घर ले गये; और वहां जाकर जो कुछ उनको निश्चय करना था, किया; और तदनुसार कार्य करना सुभानके सिपुर्द कर दिया गया। आवजी प्रत्येक बातमें—और विशेषतः किले-

दारके विषयमें—अगुआ होकर काम करनेके लिए हिचकते थे; इसलिए इस बार यही निश्चित हुआ कि, सुभान पहले सारा वृत्तान्त सरकारके कानोंमें डाल दे; और फिर दोपहरके समान किसी उपयुक्त समयपर आवजी जब उनको सलाम करने जावें, उस समय जो जो कुछ वे उनसे पूछें, उसका उत्तर वे दे देवें। आवजीकी मंशा यह भी थी कि, यदि आवश्यकता न हो, तो यह भी सरकारसे प्रकट न किया जाय कि,सुभानके साथ आवजी भी थे। परन्तु सुभानने यह हठ पकड़ा कि,हम साफ कह देंगे कि, हम दोनों ही पता पाकर रातको गये; और वहां जो कुछ सुना, सो सरकारसे निवेदन किया। इस विषयमें आवजीकी एक भी न चली। सुभान प्रातःकाल होते ही किलेपर पहुंचा; और जाते ही पहले इस बातकी जांच की कि,सर्फोजी कहां है, क्या करता है; क्योंकि उसने समझा कि, शायद वह और किसी कार्रवाईमें फिर लगा हो। परन्तु ऐसा नहीं था। सर्फोजी सदर दरवाजे-पर आनन्दपूर्वक खुर्राटे ले रहा था—जैसे रातभर पहरेका काम करते हुए थक गया हो; और अब सोनेका मौका मिला हो! सुभान ऊपर पहुंचकर इसी चिन्तामें लगा कि, किलेदार साहब कब उठें; और कब मौका पाकर मैं उनको अलग ले जाकर रातका सब वृत्तान्त बतलाऊं। यों तो वह उनका एक ख़ास सिपाही था, लेकिन उसने सोचा कि, अच्छा मौका देखकर ही वृत्तान्त बतलाना चाहिए, तभी कुछ उसका उपयोग भी होगा, अन्यथा व्यर्थकी फजीहत ही होगी। बस, इसीलिए वह

मौकेकी टोहमें था। सौभाग्यवश उसको वैसा मौका शीघ्र ही मिल गया; और स्वामीकी चित्तवृत्ति भी उस समय अनुकूल थी, अतएव उसने रातसे लेकर उस समयतकका सारा वृत्तान्त विस्तृत रूपसे बतलाया। उसने अपनी ओरसे बहुत कुछ नमक-मिर्च मिलाकर इस प्रकार बतलाया कि, जिससे सरकारको घबराहट मालूम हो; परन्तु उन्होंने उसे इतने धीरज और शान्तिके साथ सुना कि, जिससे यह जानना बहुत ही कठिन था कि, उनके मनपर कोई विशेष प्रभाव पड़ा, अथवा नहीं। सुभान एक ओर बतला रहा था; और दूसरी ओर सरकार साहब अपने हुक्केकी निगाली मुखमें लगाकर तम्बाकूका सुवासमिश्रित धुआं वायुमण्डलमें धीरे धीरे छोड़ रहे थे; और साथ ही उस धुएंका सांपके समान बना हुआ वक्र आकार भी देखते जाते थे। जैसे सुभान कोई कथा बांच रहा हो; और आप सुन रहे हों! ऊपरसे यह दशा अवश्य दिखाई देती थी; पर वास्तविक दशा—भीतरी दशा भी वैसी ही थी, अथवा क्या थी, सो ठीक ठीक बतलाना बहुत ही कठिन था। क्योंकि उनकी सूरतपर उनकी भीतरी दशाका प्रतिविम्ब अणुमात्र भी दिखाई नहीं पड़ता था। सुभान कहते कहते ठहर गया। ऐसा जान पड़ा कि, उसे जो कुछ बतलाना था, सो सब वह बतला चुका। उसका ख़याल था कि, इस घटनाको सुनकर सरकार कुछ न कुछ क्रोधित होंगे; और घबड़ाकर सर्फोजीको दण्ड देंगे। परन्तु इसका कुछ भी लक्षण दिखाई नहीं दिया। सरकारकी वही चेष्टा अबतक क़ायम थी, जो सुभान-

के उपर्युक्त घटनाके बतलानेके पहले थी। उसमें कोई भी अन्तर नहीं पड़ा था। अतएव अब वह यह नहीं सोच सका कि, वह वहीं ठहरे अथवा चला जाय। वह अपनी गर्दन नीची किये हुए वैसा ही खड़ा रहा। सरकार अवश्य ही किसी न किसी विचारमें निमग्न हो गये थे। किन्तु वह विचार किस सम्बन्धमें था; और किसमें नहीं था, अथवा कुछ विचार ही नहीं था, सो ताड़ लेना बिलकुल असम्भव था। इतनेमें सुभान कुछ घबड़ाया हुआसा दिखाई दिया; और सोचने लगा कि, किसी न किसी युक्तिसे अब यहांसे चला जाना चाहिए। उसने सोचा कि, अपना कर्तव्य हमने कर दिया, अब ये अपना विचार करना हो तो करें, न करना हो तो न करें। इस प्रकार कुछ उद्विग्नसा होकर वह चलनेके विचारमें हुआ। इसके सिवाय, शायद उसके मनमें यह भी आया कि, स्वामीको बचानेके लिए मैंने इस प्रकार अपने प्राणोंको संकटमें डाला, पर स्वामीने मेरी कुछ भी क़द्र नहीं की—अब क्या किया जाय? इस प्रकार कुछ न कुछ मनमें सोच कर वह जानेहीवाला था कि, इतनेमें सरकार बोले:—

"सुभान, तू मेरा ईमानदार नौकर है, सो मैं जानता हूं। आज मेरा एक अत्यन्त आवश्यक और विश्वासका कार्य तुझे स्वयं ही जाकर करना चाहिए। करेगा न? गांव जाना है। अभी तूने जो बातें बतलाईं, उनको मैं पहले ही स्वप्नमें देख चुका था। और आज सुबह सलामतखांने..."

इतना कहकर वे बीचहीमें ठहर गये; और इधर-उधर देखने

लगे। इतनेमें दरवाजा खोलकर एक अर्दली आया; और बोला, "सरकार, ये नौकरानियां क्या ख़बर लाई हैं—देखिये तो! हम तो बिलकुल घबड़ा गये इस ख़बरको सुनकर। लेकिन वे कहती हैं कि, "यह बिलकुल सच है।"

सरकार मस्तकपर बल डालकर कहते हैं, "ठीक ठीक बतला। बतला जो ख़बर हो। आज ख़बरोंका ही दिन है। बोल, क्या है? बतला।"

"अजी सरकार! सरकार! वे कहती हैं, बिलकुल सच है, सरकार!"

"अरे है क्या? क्या है? बतला भी तो!" त्रस्त होकर पूछा।

"यही सरकार, कि चन्द्राबाई और चिंगी आज सुबहसे ही अपने महलोंमें नहीं हैं; और न कहीं पता ही लगता है!"

नवां परिच्छेद।

यह या गोलमाल?

पाठकोंको स्मरण होगा कि, प्रथम परिच्छेदमें हमने एक मराठे सिपाही जवानसे उनकी भेंट कराई थी। इसके बाद फिर हमने उसको एक विचित्र भुँहारेमें ले जाकर देवीके मन्दिरमें छोड़ दिया। उस मन्दिरमें श्रीजगदम्बाके सामने वह लेट रहा; और थोड़ी ही देरमें उसे प्रगाढ़निद्रा आगई।

यहांतकका वर्णन हमारे पाठक पढ़ चुके हैं। बजरंगबली-के आसनके नीचेके द्वारसे वह भीतर घुसा था। वहां उसे एक रुद्राक्ष-माला-धारी साधू मिला, फिर साधू उससे छूट गया; और अँधेरेमें वह भुँहारेकी एक तरफसे चला गया। बाबाजी ऊपर चले आये; और सिपाहीको इधर-उधर ढूंढ़ा, पर जब उसका कोई पता न चला, तब मन्दिरमें मूर्तिको, उसकी जगहपर, बैठा दिया; और स्वयं अपनी धूनीके पास आकर चिलम सुलगाई; और " जय बजरंगबलीकी जय ! जय राजा रामचन्द्रकी जय !" इत्यादि वचन कहते हुए और बीच बीचमें कोई दोहा, चौपाई, श्लोक इत्यादि पद्य, कभी व्रजभाषामें और कभी मराठीमें, गाते हुए दम लगाने लगे ! बहुत समय हो गया, परन्तु फिर भी वहांसे उठकर किसी कामके लिए जानेको उनकी प्रवृत्ति दिखाई नहीं दी। क़रीब क़रीब मध्यान्हकालका समय आगया, तब कहीं आप उठे; और वहीं कुछ दूरपर एक कुआं था, वहां गये। कुएंपर स्नान-संध्या इत्यादि नित्यकर्म करके सम्पूर्ण अंगमें नियमानुसार भस्म रमाई; और फिर अपनी झोली, तूंबा ; और कुबड़ी इत्यादि सब सामान यथोचित रूपसे लेकर कुएंपरसे चल दिये। मन्दिरकी ओरको नहीं, किन्तु बिलकुल उसकी प्रतिकूल दिशामें। चलते चलते आप चार-पांच मील निकल गये। मार्गमें एक गाँव मिला। वहीं प्रत्येक घरमें "अलक ! अलक !!" कहकर भिक्षा मांगी; और जो कुछ मिला, उसे ग्रहण करके लौट पड़े। बातकी बातमें मन्दिरमें आ-

बैठे। लौटते समय मार्गसे बहुतसी घास भी आप समेट लाये, सो बाहर सिपाहीके घोड़ेके आगे डाल दी; और इस आशयका कोई वाक्य गुन-गुनाते हुए कहा—"बच्चा ! खाले, तेरा मालिक अभी देरमें आकर मिलेगा, तबतक आरामसे रह।" इसके बाद आप फिर बजरंगबलीकी एक ओर अपनी धूनीपर आसन जमा-कर बैठ गये। धूनीका जीवन-सर्वस्व क्षण क्षणपर कम हो रहा था, उसे फिरसे उज्जीवित करनेके लिए उसपर एक लक्कड़ रख दिया। चिमटेसे धूनीको ठीक कर दिया। इसके बाद धूनीकी एक ओर जो सिल रखी थी, उसको खूब साफ धोकर उसपर आप कुछ पत्तियां पीसने लगे। इतनेमें सायंकालका सन्धि-प्रकाश बिलकुल नष्ट हो गया। मन्दिरमें तो खूब ही अँधेरा हो गया, फिर भी बाबाजीने दीपक जलानेका प्रयत्न नहीं किया। पत्तियां पीसनेका कार्य समाप्त करके आप फिर धूनीके पास आबैठे; और एक-आध चिलम भरकर फिर सुबहकी तरह परमार्थ-विषयक भजन और पद्य गाने लगे। इसके कुछ समय बाद फिर आपने बजरंगबलीके निकट आकर उनका दीपक जला दिया। फिर एक बार आप मन्दिरके बाहर भी हो आये। इसके बाद फिर अपनी धूनीके निकट आकर भजन करने लगे। परन्तु, जान पड़ता था कि, आप बीचमें उन पिसी हुई पत्तियोंका, अपने उदरमें, संचय भी करते जाते थे। इस प्रकार बहुत समय व्यतीत होनेपर जब लगभग चार-पांच घड़ी रात गई, तब उन्हें मालूम हुआ कि, कोई मनुष्य दूरसे आरहा है।

तुरन्त ही उनके मुखसे यह वचन निकला—"क्यों! आज अकेले ही!" फिर भी आप अपनी जगहपरसे नहीं हिले; और न भजनमें भंग होने दिया।

कुछ देर बाद एक मनुष्य भीतर आगया। यह मनुष्य न कोई बड़ासा जवान ही था; और न सूरतसे कोई भव्य पुरुष ही मालूम होता था। उसके वस्त्रोंमें भी कोई विशेषता न थी। उसके कपड़े साधारण गँवारोंकेसे जान पड़ते थे, जिनका कोई विशेष वर्णन करनेकी आवश्यकता नहीं जान पड़ती। रूप-रंग बिलकुल काला, मनुष्य बिलकुल बेढंगा; परन्तु था बिलकुल नवयुवक—अभी युवावस्थामें प्रवेश ही कर रहा था। उसने आते ही बाबाजीको साष्टांग नमस्कार किया; और धीमे स्वरसे बोला, "आज, मालूम होता है, वे इधर न आवेंगे।" यह सुनते ही बाबाजी आश्चर्य-चकित होकर कहते हैं, "क्या? आज इधर न आवेंगे? आज तो अवश्य ही आना चाहिए था।" कुछ देर विचार करनेके बाद फिर बोले, "कहींसे कोई विशेष समाचार आया है? किसी मनुष्यने कहींसे आकर कुछ ख़बर दी है?"

"नहीं, कमसे कम मुझे तो नहीं मालूम है। किन्तु कुछ न कुछ होना अवश्य चाहिए। क्योंकि वे किसी न किसी उद्योगमें अवश्य हैं। आज दोपहरको ही सबको ताकीद कर दी गई कि, आज रातको इधर कोई न आवे। आप शायद प्रतीक्षा करते, इसी-लिए मैं जतलाने आया हूं।" उस मनुष्यका यह कथन सुनकर बाबाजी क्षणभरके लिए चुप हो गये। उनके मनमें कोई न कोई

विचार आरहे थे, इसमें सन्देह नहीं। कुछ देर बाद, जैसे स्वयं अपनेहीसे कहते हों, इस तरह वे बोले, आज यहां आये होते, तो बहुत अच्छा हुआ होता। अस्तु। नहीं आये, तो भी कोई हानि नहीं। कल आजायँ, तो भी अच्छा होगा। सोमाजी, तू अब जा, मैं किसीकी प्रतीक्षामें हूं। वह शायद अभी आवेगा। उससे मुझे कोई न कोई बड़े महत्वकी बात मालूम होगी। दूसरे किसीको देखकर बातचीत करनेमें शायद उसको एतराज़ होगा, इसलिए तू जा; और उनसे मेरा यह सन्देशा कह देना कि,"आज यदि आप यहां आये होते,तो बहुत अच्छा हुआ होता। अभी कुछ बिगड़ा नहीं है। यदि आप कल आजायेंगे, तो भी कोई हानि नहीं।" बाबाजीका यह कथन सुनकर सोमाजी वहांसे चला गया; और बाबाजी फिर कुछ देरतक चुप बैठे रहे। इसके बाद मन्दिरके दरवाजे बन्द करके बाबाजीने, बलभीमके आसनके नीचेके दरवाजेसे,तहखानेके अन्दर जानेका विचार किया। नित्य-नियमानुसार बजरंगबलीके सामने साष्टांग नमस्कार करके बाबा उनका आसन हटानेहीवाले थे कि, इतनेमें किसीने बाहरसे दरवाजेमें थाप मारी। बाबाजीने तुरन्त ही हनुमानजीके आसनसे हाथ खींच लिया; और दरवाजा खोला। उन्हींके समान एक और बाबा भीतर आगया। उसको देखते ही हमारे पहले बाबाजी कुछ चकितसे हुए; और उस बाबाकी ओर कुछ विचित्र सूरतसे देखते हुए बोले, "क्यों ? तू इतनी जल्दी लौट आया !"

यह सुनकर वह दूसरा बाबाजी कहता है, "हां, बीचमें जो

खबर लगी, सो पक्की है; और इसीको बतलानेके लिए मैं चला आया। क्योंकि वह ख़बर इतनी जल्दी आपको मालूम नहीं हो सकती थी।" मन्दिरके पहले बाबाजी उससे एक अक्षर भी नहीं बोले, मानो उनका सारा चित्त केवल उसके कथनको सुननेमें ही लगा हुआ था। परन्तु जब वह आगे कुछ न बोला, तब अन्तमें हमारे बाबाजी कहते हैं,"क्या ? क्या ? ऐसी कौनसी ख़बर लाया है ?" यह सुनते ही दूसरा बाबाजी बोला, "सुलतानगढ़के किले-दारकी..."

उसकी बात अभी पूरी भी न होने पाई थी कि, हमारे बाबाजी उससे एकदम कहते हैं, "मूर्ख कहींका ! यही बहुत बड़ी ख़बर है ? जिस कार्यके लिए तुझे भेजा था, उसको बीचहीमें छोड़कर तू चला आया ! तुझे हम क्या कहें ? ऐसी ख़बरें तो हमें योंही मिल जाया करती हैं। व्यर्थके लिए लौटनेका तूने परिश्रम किया। इस प्रकार अपने काम छोड़कर बीचमें और और कामोंमें पड़ जाओगे, तो कैसे काम चलेगा ? जिस कार्यमें हमको सफलताकी आवश्यकता है, उसके लिए प्रत्येकको अपना अपना काम समुचित रूपसे करना चाहिए, तभी कुछ सफलता मिलेगी। तुम लोग यह बात भूल कैसे जाते हो ? जिस कामके लिए मैंने तुझे भेजा, उस कामके ठीक ठीक होनेके लिए तुझको आज वहां पहुंच जाना चाहिए था; परन्तु तू बीचहीमें उलझकर यहां लौट आया, इससे उस कार्यकी कितनी हानि हुई ! अब सुबह होते ही तू फिर उसी कामको जा, अन्यथा

व्यर्थ ही हानि होगी। तेरी इस देरीसे ही कुछ न कुछ हानि अवश्य हुई होगी। जो ख़बर तू लाया है, वह प्रायः एक प्रकारसे मुझे मालूम ही हो चुकी थी। हां, अभी कल क्या हुआ, सो यद्यपि अभीतक सुननेमें नहीं आया है; पर एक-दो दिनमें, किसी न किसी प्रकार, वह भी मालूम हो जायगा। अस्तु। अब मैं अधिक कुछ नहीं कहता। चार घड़ी आराम कर ले; और सुबह, पौ फटते ही, फिर उसी ओर जा।" इतना कहकर उन्होंने दरवाजा बन्द कर लिया! और दूसरे वैरागीको धूनीके पास लेजाकर बैठाया। बैठते ही उसने चिलम इत्यादि उठाई; और भरने लगा। बेचारेकी सूरत बिलकुल उदासीन हो गई थी। यह सोचकर बेचारा यहांतक आया होगा कि, हम जाकर ख़बर बतलावेंगे; और उसपर हमारी बड़ी प्रशंसा होगी, परन्तु उसकी यह आशा पूर्ण नहीं हुई; और उलटी फजीहत हुई। इससे वह बिलकुल निराश हो गया; और यह उसके चेहरेसे स्पष्ट दिखाई दे रहा था। हमारे बाबाजीने शायद यह बात ताड़ ली; क्योंकि उसकी सूरतकी ओर देखकर उन्होंने एकदम उसकी पीठपर हाथ फेरा; और बोले, "बेटा, जो मैंने कहा, उसका बुरा न मानना। जो उद्देश्य हमारे श्रीमानजी सिद्ध करनी चाहते हैं; और जिसका सिद्ध करना हम सभीका कर्त्तव्य है, उसको यदि शीघ्रतर, और ठीक, सिद्ध करना है, तो प्रत्येकको अपना अपना कार्य सुचारु रूपसे करना चाहिए। बीचमें, शायद, यदि हमारे ख़यालसे कोई अच्छा भी काम आजावे, तो उसके चक्कर-

में पड़कर अपने मुख्य कार्यमें हानि न पहुंचने देना चाहिए। इस समय मैं तुझसे इसीकारण नाराज हुआ कि, जिससे यह बात तेरे ध्यानमें रहे। तूने जो कुछ किया, सो अच्छे उद्देश्यसे ही किया, इसमें मुझे अणुमात्र भी सन्देह नहीं। किन्तु अपना असली कार्य छोड़कर इस कार्यमें लग गया, यही ज़रा ख़राब हुआ। देख, तू जो अभी मुझको बतलाता था, उसके विषयमें क्या क्या जानकारी मुझे प्राप्त हो चुकी है; और क्या क्या अभी मिलनेवाली थी, सो अभी तुझको दिखलाता हूं। चल मेरे साथ नीचे।"

इतना कहकर बाबाजीने मन्दिरका दरवाजा फिर बन्द कर दिया; और हनुमानजीको नमस्कार करके उनकी बैठकको आगे हटाया; और वे दोनों तहख़ानेके भीतर उतर गये। बहुत देरतक अँधेरेमें टटोलते टटोलते वे जगदम्बाके मन्दिरके पास जा-पहुंचे। इसके बाद मन्दिरके अधिष्ठाता, हमारे पहले बाबाजी, उस दूसरे साधूको एकदम ठहराकर कहते हैं, "किवाड़ोंकी दराजसे भीतर देखो। तुमको कुछ दिखलाई पड़ता है?" दूसरे बाबाजीने ज्यों ही धीरेसे देखा, त्यों ही उसे देवीजीके सामने एक जवान आदमी पड़ा हुआ दिखाई दिया, जो उसी समय जगकर आंखें मलता हुआ इधर-उधर देख रहा था। उसको देखते ही उस साधूने हमारे बाबाजीके कंधेपर हाथ रखकर पूछा, "यह कौन है?" यह सुनकर हमारे बाबाजी हँसे; और उसके कानमें कुछ शब्द धीरेसे कहकर फिर प्रकट रूपसे बोले,

"यह कल रातसे ही यहां आया आ है। आज सुबह भूलसे भीतर पहुंच गया; और भुँहारेके अन्दर जाकर मुझसे मिला। इसके आनेसे अवश्य ही मुझे कोई आश्चर्य नहीं मालूम हुआ। कल रातको जब मैं भुँहारेमें गया,तब ऊपरके मन्दिरका द्वार लगाना भूल गया, इससे मुझे कुछ आनन्द ही हुआ। यह स्वयं जब यहां आगया, तब और क्या ख़बर तू मुझे बतलावेगा? हां, इसके इधर चले आनेके बाद यदि कोई घटनाएं हुई होंगी, तो वे शायद तुझे मालूम हुई होंगी; और उन्हींको बतलानेके लिए तू आया होगा। परन्तु वे घटनाएं भी मुझे कल सुबहके अन्दर ही मालूम हो गई होतीं। अब तू कल प्रातःकाल जायगा; परन्तु देखना कि, इसी बीचमें कोई न कोई मुझे वे ख़बरें बतला जायगा।" बाबाजीका यह कथन अभी समाप्त ही हुआ था कि, इतनेमें उन्होंने कोई आहटसी सुनी; और तुरन्त ही उस दूसरे साधूसे बोले, "हां, ऊपर चल। कदाचित् इसी समय तुझको मेरे कथनकी प्रतीति हो जायगी। तू ऊपर चल; और मैं इसका कुछ समाचार लेकर आता हूं। यदि अपने लोगोंमेंसे ही कोई आया हो, तो उसको बिठाकर मुझे बुला ले जाना। मैं तुरन्त चला आऊंगा।" यह सुनते ही दूसरा बाबा तुरन्त ही पहलेके मार्गसे लौट आया; और हमारे बाबाजी जगदम्बाजीके मन्दिरमें गये। इधर जो साधू ऊपर गया, वह हनुमानजीकी बैठकके नीचेके द्वारसे ऊपर निकलकर; और मूर्तिको फिर जहांका तहां हटाकर, दरवाजेके पास गया। वहांसे उसे ऐसी

आहट मिली कि, जैसे दूरसे कोई आता हो। अब, वह यह विचार करते हुए, कि यह कौन आता है, वहीं बैठ गया। साथ ही वह अपने गुरुजीकी इस सम्पूर्ण व्यवस्थापर आश्चर्य भी करने लगा।

इतनेमें उसने देखा कि, जिन लोगोंके आनेकी आहट उसे दूरसे मिली थी, वे अब पास ही आगये, अतएव दरवाजेके पास जाकर ज्यों ही उसने झांककर देखा, त्यों ही उसे मालूम हुआ कि, दो आदमी आरहे हैं, जिनका पहनावा कनफटोंका-सा है। बातकी बातमें वे दोनों उसके पास आगये। आते ही उन्होंने "बजरंगबलीकी जय! बजरंगबलीकी जय!!" का शब्द उच्चारण किया; और फिर उस बाबाकी ओर देखकर पूछा, "क्योंजी, वे बाबाजी कहां हैं, जो यहां बैठे रहते हैं?" अब हमारा साधू बड़े चक्करमें पड़ा, कि इन्हें उत्तर क्या दिया जाय—यह क्या गोलमाल है? बेचारा पागलकी तरह खड़ा हुआ उनकी ओर देखता रहा।

अब हमारे इस वैरागीको पूरी पूरी शंका हुई कि, हो न हो, ये कनफटे जोगी भी, जो "दूसरे बाबाजी" को पूछते हैं, हमारी ही तरह हमारे गुरुजीके गुप्तचर होंगे। किन्तु इस शंकाके दूर करनेका उपाय क्या था? क्षणभर वह विचारमें पड़ा रहा। हां, अब हमको गुरुजीके कथनानुसार, उनको बुलाने जाना चाहिए या नहीं? और यदि बुलाने जाते हैं, तो इनके सामने ही हमें भुँहारे-का मार्ग खोलकर घुसना पड़ेगा; और यह बात बड़े ख़तरेकी

होगी। यह सोचकर पहले उसने यह जाननेका निश्चय किया कि, ये कोई अपने विश्वासके ही आदमी हैं, अथवा नहीं ? अतएव उसने स्वाभाविक ही तौरसे पूछा, "क्योंजी, तुमको जो काम बतलाया गया था, सो हो गया ? जो ख़बर लानी थी, सो ले आये ?"

यह सुनकर वे दोनों कनफटे कुछ चकराये; और कुछ घबड़ायेसे उसे दिखाई दिये; परन्तु इतनेमें, उन दोनोंमेंसे जो कनफटा कुछ आगे था, वह एकदम बोला, "हमें काम बतलाया था ? किसने ? बाबाजीने ? नहीं भाई ! हम तो गरीब आदमी कहीं न कहीं भीख मांगते फिरते हैं, किँगिरी बजाते हैं, गाना गाते हैं; और जो कुछ मिल जाता है, उसीपर गुजारा करते हैं। आज यहां हैं, तो कल वहां हैं। हम बाबाजीका कौनसा काम कर सकते हैं ? यों ही आ निकले थे, सो मनमें आया कि, देखते चलें, बाबाजी हैं या नहीं। उनसे हमारी बड़ी दोस्ती है।" यह कहते हुए उसने अपनी किँगिरी निकाली; और उससे दो सुर निकाले, तथा फिर बोला, "हम तो इसीलिए आये थे कि, दो-चार गप्पें उड़ेंगी; और तम्बाकू पियेंगे—और क्या ?"

यह सुनते ही हमारा बैरागी समझ गया कि, यह जो कुछ कह रहा है, सब बनावटी है। हमारे गुरुजी कहते थे कि, कोई ख़बर लावेगा, सो शायद यही लोग होंगे। फिर भी उसने सोचा कि, जबतक पूर्ण विश्वास न हो जाय, हमें इनको भीतर न बुलाना चाहिए; और न इनके सामने गुप्त द्वार खोलकर

भीतर जानेका साहस ही करना चाहिए। शायद यहांके इस सारे प्रबन्धका किसीको पता लग गया हो; और किसीने इन्हें ख़बर लेनेके लिये ही भेजा हो। जिस प्रकार हम अपने श्रीमान्‌जी-के लिए, अनेक उपाय करके, भिन्न भिन्न स्थानोंकी ख़बरें ले आते हैं, उसी प्रकार, सम्भव है, हमारा पता पानेके लिए भी लोग उपाय करते हों। विशेष सावधानी रखनी प्रत्येक दशा-में अच्छी ही बात है। यह विचार करके उसने फिर कनफटों-से कहा, "बाबाजी न जाने कहां चले गये हैं। मैं भी उन्हींकी प्रतीक्षामें हूं।"

परन्तु यह कहते हुए उसे खुद ही मालूम हुआ कि, मैंने अभी जो कुछ कहा था, उससे मेरा यह कथन मेल नहीं खाता। अस्तु। उसका उपर्युक्त कथन सुनकर वह कनफटा, जिसने अभी बातचीत की थी, मन ही मन कुछ हँसा; और हँसते ही हँसते उसने अपने पीछेके साथीकी ओर घूमकर देखा; और उस बैरागीको दरवाजेमें थोड़ासा एक ओर हटाकर, यह कहते हुए भीतर घुसा कि, "सीताराम, सीताराम, चलो, तो हम लोग जबतक बाबाजी न आजावें, उस धूनीके ही पास बैठें; और तम्बाकू इत्यादि पियें। स्वामीजी तबतक आ ही जायँगे।" जिस ढिठाईके साथ वह भीतर घुसा, उसको देखकर हमारा बैरागी चकित हुआ; अर फिर खुद भी उनके साथ ही मन्दिरमें चला गया।

सब लोग उस धूनीके पास आकर बैठ गये; और इधर-

उधरकी बातें करने लगे। कनफटोंका वह मुखिया अपनी भाषामें चार गाली देकर अपने साथीसे कहता है, "अरे, इन म्लेच्छोंने बड़ा उपद्रव मचा रखा है! रास्तेपर—रास्तेहीपर गौमाताका बध! शिव! शिव! न जाने परमात्मा इनको अब-तक दण्ड क्यों नहीं देता! श्रीराम! सीताराम! गौमाता हमारा जीवन है, इसीमें हमारे प्राण हैं! फिर भी बीच रास्ते-पर, हिन्दुओंके देखते—ब्राह्मणोंके देखते—चौराहेपर भी उनका गला काटकर, उनका रक्त जान-बूझकर रास्तेपर छिड़क देते हैं!—"

उसका यह कथन हमारा वैरागी बड़े ध्यानसे सुन रहा था; और कहनेवाला कनफटा भी इतने हृदयसे और दर्दसे कह रहा था कि, उसकी आंखोंमें आंसूतक भर आये थे। उसके उस कहनेके ढंगसे और उसके गद्‌गद कंठसे स्पष्ट मालूम हो रहा था कि, जिस वेशमें वह आया है, उस वेशका वह मनुष्य नहीं होना चाहिये। हमारा वैरागी उसकी उपर्युक्त दशा देखकर और भी ध्यानसे देखने लगा; और बोला, गुसाईंजी आप…"

वह आगे और भी कुछ कहनेहीवाला था कि, इतनेमें उसे भास हुआ कि, हनुमानजीकी बैठकके नीचेवाले द्वारसे उसको कोई बुला रहा है; और आसन भी आगेकी ओर खिसक रहा है। उसने देखा कि, इस बातकी ओर कनफटोंका भी ध्यान गया; परन्तु फिर भी उनके चेहरेपर आश्चर्यकी कुछ भी झलक दिखाई नहीं दी। हां, उन्होंने इतना अवश्य कहा कि, "हां, बाबाजी हैं।"

इससे हमारे वैरागीको यह विश्वास हो गया कि, ये दोनों हमारे ही गुटके आदमी हैं। इसके सिवाय उसने यह भी सोचा कि, अब छिपानेसे कोई प्रयोजन नहीं है। इसलिए एकदम वह बोल उठा कि, "हां, मैं उनको तुम्हारे आनेका समाचार देता हूं।" इतना कहकर वह तुरन्त ही बजरंगबलीके पीछेकी ओर गया।

वह अभी जाने न पाया था कि, बाबाजीका आधा शरीर ऊपरको निकल भी आया। उसने बाबाजीके कानमें चुपकेसे यह ख़बर दी कि, इस प्रकारके दो कनफटे आये हैं। बाबाजी हँसे; और कहा, "अच्छा।" फिर वे शीघ्र ही ऊपर आये। उनके पीछे पीछे उस वैरागीने उस पुरुषको भी ऊपर आते हुए देखा कि, जिसको उसने भवानीजीके मन्दिरमें किवाड़ोंकी दराजसे देखा था। बाबाजी आगे आये; और एकदम उन कनफटोंके मुखियाकी पीठपर थाप मारकर कहा, "कहो क्या हाल है? जिस कामके लिए गये थे, उसका क्या समाचार है?" इन शब्दों-को सुनते ही, जो कि बाबाजीने कनफटेको सम्बोधन करके कहे थे, हमारा वह सिपाही जवान उन कनफटोंकी ओर; और फिर उनकी ओरसे बाबाजीकी ओर, एक विचित्र प्रकारकी चेष्टासे देखने लगा। उसको पिछली रातसे लेकर अबतकका सारा दृश्य एक स्वप्नके समान ही दिखाई पड़ रहा था। उसने सोचा कि, अच्छा रास्ता भूले! यहां आये; यह मन्दिर देखा—बाबाजी भी क्या ही ठहरे! और बजरंगबलीकी बैठकके नीचे इतना

बड़ा भुँहारा! उस भुँहारेमें भवानीजीका इतना बड़ा मन्दिर! उस मन्दिरमें इतने हथियार; और बड़े बड़े ताले जिनमें लटक रहे हैं, ऐसे भारी भारी सन्दूक! सभी विचित्र मामला है! और फिर, यह सब किसके अधिकारमें? उसी हनुमानजीके मन्दिरमें रहनेवाले एक बाबाके अधिकारमें। और अब देखते हैं तो दो कनफटे; और एक वैरागी आगया है! यह पहला बाबाजी बड़े प्रेमसे उनकी पीठपर थाप मारकर, "तुम्हारा काम हो गया?" इत्यादि प्रश्न कर रहा है। इस बाबाका ऐसा कौनसा काम हो सकता है? और उसे करनेके लिए यह अपने ही समान वैरागी और गुसाईं सब तरफ भेजता है—इसका क्या अर्थ है? इसी प्रकारके अनेक विचार इस समय उसके मनमें चक्कर काट रहे थे।

वह कनफटा बाबाजीको कुछ उत्तर देनेहीवाला था कि, इतनेमें उन्होंने उसे चुप रहनेका इशारा किया; और हमारे सिपाहीकी ओर देखकर कहने लगे, "आपका घोड़ा आपके लिए बहुत उत्सुक हो रहा होगा। अभी थोड़ी देर हुई, मैंने उसे चारा-दाना दिया था; परन्तु आप एक बार बाहर जाकर उसके बदनपर हाथ फेर आवें, तो उसे बड़ा आराम मिलेगा। कल रातसे ही आपको उसने नहीं देखा है। परन्तु देखिये, कितना स्वामिभक्त जानवर है, यहांसे हिलातक नहीं।" इतना कहकर वे दूसरे साधूको सम्बोधन करके बोले, "बलरामजी, इनको बाहर पहुंचा आओ।" सिपाही द्वारके बाहर हुआ, इतनेमें

बाबाजीने बलरामको पीछे बुलाकर कानमें चुपकेसे कह दिया, "देखो, यह यदि कुछ पूछे, तो कुछ बतलाना नहीं; और तुम्हारे मनमें भी यदि कुछ पूछनेको हो, तो मत पूछना।"

बाबाजीकी ताकीद सुनकर बलराम उस सिपाहीके साथ बाहर चला गया। उन दोनोंके बाहर जाते ही बाबाजी कन-फटोंके मुखियासे कहते हैं, "बतला, जल्दी बतला। यह जवान आदमी कौन है? तूने इसे पहचाना नहीं। क्योंकि यदि पहचाना होता, तो इसके सामने अभी बोलने कैसे लगता? बतला। बतला जल्दी।"

यह सुनते ही वह कनफटा कहता है, "तीन या चार दिनके बाद सुलतानगढ़पर बड़ा भारी उपद्रव होगा, इसमें सन्देह नहीं। और उसमें उस चौकीदारका बहुत बड़ा हाथ है। आज बादशाहका खरीता प्रायः किलेदारके हाथमें पहुंच गया होगा। मैंने अभी मार्गमें जो बातें सुनी हैं, वे यदि सच हैं, तो कहना चाहिए, मामला बहुत बढ़ गया है। एक बार उस आवजी पटेलको हमें अपने हाथमें कर लेना चाहिए। सुभान भी यदि आ मिलता, तो बड़ा काम बनता। नानासाहब कहां चले गये हैं, सो किलेदारको अभीतक बिलकुल ही मालूम नहीं है। सब अलग अलग गप्पें मार रहे हैं। पर यह निश्चित कोई नहीं बत-लाता कि, वे कहां चले गये हैं। सबको यही सन्देह है कि, जबकि वे इतने जोशके साथ गये हैं, तब अवश्य ही आप……"

परन्तु बाबाजीने उसे आगे नहीं बोलने दिया। वहींसे रोक

लिया। क्योंकि इतनेमें उनको उन दोनोंके आनेकी आहट सुनाई दी। उन दोनोंके भीतर आते ही उन्होंने अपने विषयको बदलनेका यत्न किया; और बाबाजी उस सिपाहीकी ओर देखकर बोले, "आपका घोड़ा क्या कहता था?" सिपाहीने कहा, "कुछ नहीं, वह बड़े आनन्दमें है। हाँ, अब उसे यदि कोई छायाकी जगह मिल जाय, तो बहुत अच्छा हो। बेचारेको आज न जाने कितने दिनोंसे छायाकी जगह नहीं मिली; और न बेचारेकी किसीने सेवा-बरदास की। कितने ही दिनोंसे उसे ठीक ठीक चारा-दाना भी नहीं मिला है। यही हमारा असली साथी है! मुझपर इसका सच्चा प्रेम है। हम दोनों ही अब मानो एक दूसरेके प्राणोंके आधार हो रहे हैं। किला........."

इतना ही कहकर उसने अपनी जीभ दांतों तले दबाई; और बात बदलकर एकदम बाबाजीसे बोला, "बाबाजी, आप इस निर्जन बनमें आकर रहे, फिर भी आपके यहां बहुतसे लोग आते ही रहते हैं। मैं जिस समय आया, मन्दिरके बाहरी प्रांगणमें पलीते भी जल रहे थे। आज इन लोगोंको देख रहा हूं!"

यह सुनकर कनफटोंका मुखिया उसको तुरन्त ही उत्तर देता है, "बाबाजीके पास गुण ही ऐसा है। आप चाहे जहाँ जाकर रहें, वहीं आपकी सेवामें लोग हाजिर रहेंगे।"

इस प्रकार उनकी बातचीत बढ़नेका मौका आगया था; और सिपाहीके मनमें भी यही विचार था कि, इस प्रकार बातों बातोंमें ही, जो कुछ जानकारी हमें प्राप्त करनी है, धीरे धीरे प्राप्त

कर लेनी चाहिए। पर बाबाजीने बीचमें ही उस कनफटे और बलरामजीसे कहा, "अजी, रात तो व्यतीत होने आई, अब तुमको अपने कामसे जाना है, सो उठो और जाओ! हम लोग इसी प्रकार यदि बैठे बैठे बातचीत करते रहेंगे, तो एक रात क्या, कितनी ही रातें पर्याप्त नहीं होंगी, इसलिए अब तुमको जाना चाहिए।" कनफटोंने भी अब अधिक देरतक बैठनेकी आतुरता नहीं दिखलाई। एक बार चिलम इत्यादि पीकर वे सब, एकके बाद एक, चलते बने। बाबाजी भी उनके साथ बाहर गये; और कोई आधी घड़ीतक कनफटोंसे बाहर बातचीत करते रहे। हां, यह नहीं कहा जा सकता कि, वह बातचीत प्रकृत विषयपर ही थी, अथवा अन्य किसी विषयपर। सिपाही जवान बेचारा उतनी देरतक अकेला ही भीतरकी ओर बैठा रहा। ऐसा जान पड़ता था कि, अब उसके मनमें कोई नवीन ही विचार चक्कर काट रहा है। क्योंकि बाबाजीके भीतर आते ही वह उनसे कहने लगा, "बाबाजी, यह मन्दिर क्या है? अन्दर तहखानेका मन्दिर क्या है? भीतरके सन्दूक किसके हैं? हथियार किसके हैं? यह सब क्या मुझे बतलावेंगे? आप अपनेको केवल वैरागी कहते हैं, पर मेरे खयालमें यह नहीं आता कि, आप कैसे वैरागी हैं! यहां और भी कोई न कोई अवश्य आते होंगे। अनेक लोग आते होंगे। मैं आया, उस समय यहाँ पलीते दिखाई दिये; और बहुतसे लोगोंके पदचिन्ह भी दिखाई दिये। ऐसे कौन लोग यहां आते हैं? मुझे बतलावेंगे? स्वामीजी, आप यदि किसी राज-

नैतिक उद्देश्यमें लगे हुए हैं, तो आप मुझे अपना चेला अवश्य बनाइये। मेरे घर-द्वार कुछ भी नहीं। मैं सब भांति आपहीकी सेवामें रहूंगा।"

इसके आगे वह और कुछ न कह सका। बाबाजी उसका कथन सुनकर मन ही मन कुछ मुस्कुराये; और फिर उससे बोले, "सत्य कहता है कि,घर-द्वार तेरे कुछ भी नहीं है; और तू मेरे ही समान एक फक्कड़ वैरागी है! मैंने मान लिया। अच्छा, अब यदि मैं तुझे अपने सम्प्रदायमें दीक्षित कर लूं; और पीछेसे, कहीं न कहींसे, तेरा घर-द्वार; और तेरे घरके लोग सामने आ-जावें तो फिर कैसा होगा ?"

बाबाजीके इस प्रश्नसे सिपाही महाशय कुछ गड़बड़ातेसे दिखाई दिये; और चुप हो गये। बाबाजी और भी हंसे; और उसकी पीठपर हाथ मारकर बोले, "कोई हानि नहीं, तेरी इच्छाके अनुसार ही सब बातें होंगी! तू यह बची हुई रात; और कलका दिन किसी न किसी प्रकार यहीं व्यतीत कर। शामको यहां कोई न कोई चमत्कार तुझे दृष्टिगोचर होगा—जिसे देख-कर तू यही समझेगा कि, हमारे मनके अनुसार कार्य होनेके लिए यदि कोई जगह है, तो वह यही है; और हम यहां आगये, यह बहुत ही अच्छा हुआ!"

दसवां परिच्छेद ।

यह लोग कौन ?

इतना आश्वासन मिलनेपर भी हमारे सिपाही जवानको इस बातका कुछ भी खुलासा नहीं हुआ कि, यह मामला क्या है ? और हम कहां हैं ? वह बराबर बाबाजीकी ओर विचित्र चेष्टासे देखता रहा। उसके मनमें बराबर तर्कपर तर्क उठ रहे थे; और वह उसी विषयके विचारोंमें निमग्न था। बाबाजीकी यह बिलकुल ही इच्छा नहीं जान पड़ती कि, उसे और कुछ अधिक जानकारी दी जाय; और इस प्रकार उसके कौतूहलकी शान्ति की जाय। बल्कि इसके विरुद्ध, बाबाजीकी उस समयकी चेष्टासे तो यही प्रकट होता था कि, वे उसको और भी अधिक उसी गोलमालकी अवस्थामें रखना चाहते हैं; और इस प्रकार उसका कौतुक देखना चाहते हैं। वे कुछ मुस्कुराती हुई सूरतसे बीच बीचमें उसकी ओर देखते जाते थे; और मन ही मन कुछ गुन-गुनाते भी जाते थे। हां, हमारा सिपाही युवक अवश्य ही गम्भीर भावसे शान्तिपूर्वक बैठा हुआ विचार कर रहा था।

अन्तमें बाबाजी उससे कहते हैं, "तू ऐसा ही कबतक बैठा रहेगा ? मेरी तरह घड़ीभर लेटकर रात व्यतीत कर। एक बार सुबह होते ही दिन, बातकी बातमें, निकल जायगा। तेरे मनमें कौनसे विचार आरहे हैं, यह मैं जानता हूं। परन्तु उन

विचारोंमें अब तू चाहे जितना अपने मनको फँसावे, कोई विशेष लाभ नहीं होगा। मैंने अबतक तुझे इतना आश्वासन दिया, पर तेरे चित्तको शान्ति नहीं हुई; और उसका न होना एक प्रकारसे स्वाभाविक ही है। किन्तु तू अपने मनमें यह भली-भांति समझ ले कि, तू अब एक उचित स्थानमें ही आगया है; और इस बातको समझकर, किसी न किसी भांति, कल शामतक, शान्तिपूवक समय व्यतीत कर।"

इतना कहकर बाबाजी जानबूझकर उसके पाससे उठे; और अपनी धूनीके पास जाकर शान्तिपूर्वक—कमसे कम ऊपरसे तो शान्ति ही पूर्वक—"जय हनुमान, जय हनुमान, सीताराम-सीताराम" करते हुए लेट रहे। उनके साथीने काफी निद्रा ले ली थी, सो अब उसको नींद कहां आसकती थी? इसके सिवाय, पिछले दिन उसकी दशा भी दूसरी ही थी। वह परि-श्रमसे इतना थक गया था कि, उसे चाहे जैसी जगहमें, चाहे जहांपर, चाहे जिसपर लेटे रहनेसे भी प्रगाढ़ निद्रा आगई होती;और तदनुसार उसे निद्रा आई भी थी। किन्तु इस समयकी उसकी अवस्था बिलकुल भिन्न थी। निस्सन्देह, वह शूरवीर-जातिका मनुष्य था; किन्तु, कमसे कम, उसकी सूरत शकलसे तो ऐसा नहीं जान पड़ता था कि, चाहे जहां लेटकर सोनेकी उसकी आदत हो। अमीरीके चिन्ह कभी छिपाये नहीं जासकते। आज उसे, उस मन्दिरमें, बाबाजीकी धूनीके पास, लेटकर सोना एक प्रकारसे बिलकुल कठिन हीसा था। वह

बहुत देरतक जहांका तहां ही बैठा रहा; और कभी बाबाजीकी ओर, कभी बाहरकी ओर, देखता रहा। बीचमें वह एक बार उठा; और इधर-उधर देखकर एकदम बाबाजीसे बोला, "स्वामीजी, मैं समझता हूं कि, अब मैं यहांसे जाऊं। जिस जगह मैं जाना चाहता था, उस जगह मुझे कभीका पहुंच जाना चाहिए था। इसलिए मुझे आज्ञा दीजिए। आपके यहांका आनन्द लेनेके लिए मैं फिर कभी आजाऊंगा।"

बाबाजीको भी नींद नहीं आई थी। बल्कि यह कहनेमें भी कोई अतिशयोक्ति न होगी कि, आप नींदका बहाना करके चुप पड़े हुए थे! क्योंकि उनकी सम्पूर्ण दृष्टि उस सिपाहीकी ओर थी; और जान पड़ता था कि, उसकी सारी चेष्टाओंके देखनेमें वे निमग्नसे थे। इसलिए सिपाहीका उपर्युक्त कथन सुनकर वे हँसे और बोले, "तुझको यहांसे जाना ही था, तो पहली ही रातको चला जाना था। अब बहुत देर हो गई। तू यहांसे चाहे जिस तरफ जा, थोड़े ही अन्तरपर तुझे उजेला हो जायगा; और, क्या तू यह भूल गया है कि, दिनमें इधर-उधर घूमना तेरे लिए ख़तरनाक है? इसके सिवाय तुझे मैं यह भी बतला चुका हूं कि, जिस उद्देश्यसे तू निकला है, उस उद्देश्यके अनुसार यहीं सब हो जायगा। क्या तूने अभीतक यह न समझा कि, तेरे विषयमें मुझे पूरा पता है? गत चार-पांच दिनके बीचमें तूने जो दो-चार कार्य किये हैं, उनसे क्या तू समझता है कि, दिनदहाड़े तू इधर-उधर घूम सकेगा? तू यह न

समझ कि, तेरे उन कार्योंका अभी कोई शोरगुल नहीं मचा है। तू अगर यहीं रहेगा, तो तुझे इसी जगह वे सब लोग मिल जायँगे, जो तेरे उन कार्योंको तेरे लिए भूषण समझते हैं। किन्तु......"

बाबाजी आगे कुछ नहीं बोले। उस सिपाही जवानकी सूरत आश्चर्यसे अत्यन्त चकित दिखाई देने लगी। दांतों तले उंगली दबाकर वह बाबाजीकी ओर निर्निमेष दृष्टिसे देखने लगा। बाबाजीने जो कुछ कहा, जिन जिन बातोंका उन्होंने उल्लेख किया, उन उन सब बातोंको सुनकर वह पाषाणप्रतिमाके समान स्तब्ध हो गया। ये सब बातें, इस निर्जन बनके हनुमान-मन्दिरमें शान्तिपूर्वक दिन बितानेवाले वैरागीको मालूम हो गईं! यह कैसे? हम कौन हैं, कहांसे आये, किस उद्देश्यसे आये, क्या किया, इत्यादि बातोंका ज्ञान इसको कैसे हो गया? अबतक हमने क्या देखा? सिर्फ दो-तीन वैरागियोंका आना-जाना। फिर, हमारे विषयमें इसको सम्पूर्ण बातें कैसे मालूम हो गईं? बस, इसी प्रकारके विचार हमारे सिपाहीके मनमें आये; और वह बाबाजीसे बोला, "बाबाजी, जिस प्रकार आप कहते हैं कि, मैं जैसा हूं, वैसा दिखाई नहीं देता, उसी प्रकार मैं भी कहता हूं कि, आप जैसे दिखाई देते हैं, वैसे नहीं हैं।"

बाबाजी कुछ हँसे और हँसीकी ही आवाजसे बोले, "हाँ! हाँ! ऐसा भी हो सकता है! किन्तु तेरे कहने और मेरे कहनेमें इतना अन्तर भी है कि, तू कौन है, सो मुझे पूरे तौरपर मालूम

है; और तुझे इसका विश्वास भी है। परन्तु मैं कोई सचमुच ही वैरागी हूं, अथवा यों ही वैरागीका ढोंग किए हूं, सो तुझे कुछ भी मालूम नहीं है! अच्छा, मैं जो कोई भी हूं—अथवा दिखाई देता हूं, वैसा नहीं हूं—पर तुझको इससे क्या मतलब? मैं जो कुछ कहूं, उसीके मुताबिक तू कर, यही तेरा कर्तव्य है।"

सिपाही कुछ विचारमें पड़ गया। पर अन्तमें, जान पड़ता है, उसने बाबाजीके कहनेके अनुसार ही करनेका निश्चय किया। वह चुपके इधरसे उधर चक्कर काटता रहा। बार बार बाहर जाता; और भीतर आता—फिर बाहर जाकर अपने घोड़ेकी पीठपर हाथ फेरता, उसे उत्साह दिलानेको कुछ कहता; और फिर भीतर आकर चुप बैठ जाता।

इसी प्रकार धीरे धीरे सुबह हो गया। चारों ओर उजेला छागया। बाबाजीका बतलाया हुआ समय आनेमें अभी बहुत देर थी। यह समय कैसे काटे, सो उसे नहीं सूझ पड़ा। इधर पेटमें भूख भी गड़बड़ मचा रही थी। "बाहर जाकर कुछ खा ही आवें"—ऐसा बाबाजीसे कहें, यह मनको भला नहीं जान पड़ता था। परन्तु बाबाजी बड़े चतुर थे। वे तुरन्त ही ताड़ गये; और एकदम बोले, "तेरे घर-द्वार तो कुछ है ही नहीं, ऐसी दशामें रोटी बनाना आता ही होगा? अब थोड़ी ही देरमें मैं भिक्षाके लिए निकलूंगा। उस समय जो कुछ थोड़ा-बहुत चावल अथवा आटा, मिलेगा, सो ले आऊंगा; और तवा-पतीली भी दूंगा, सो आनन्दपूर्वक यहांपर एक तरफ रोटी अथवा भात, जो मन चाहे, पकाकर खाना।"

बाबाजीने ये शब्द बिलकुल हँसीमें आकर कहे थे, यह उनके चेहरेसे स्पष्ट दिखाई दे रहा था; और उसके उत्तरकी प्रतीक्षा करते हुए बड़ी उत्सुकतासे आप उसकी ओर छिपी नज़रसे देख भी रहे थे। उनके उपर्युक्त शब्दोंका जो उत्तर मिलनेवाला था, वह उन्हें एक प्रकारसे मालूम ही था; और तदनुसार उनको उत्तर मिला भी। उनका साथी गर्दन नीची करके कुछ हँसता हुआ कहता है, "बाबाजी, आपको सब मालूम है, फिर आप क्यों पूछते हैं? यहांसे कोई गाँव यदि निकट हो, तो मुझे वहां ले चलिये। वहां चाहे जिसको चार पैसे दे देनेसे भोजन मिल जायगा।" यह सुनते ही बाबाजी खूब हँसते हुए कहते हैं, "मतलब यह कि, तुझे अपने हाथसे बनाना नहीं आता। अस्तु। तू यहांसे कहीं मत जा। बस्तीमें अभी चार-पांच दिनतक जाना तेरे लिए ख़तरनाक है। इसके सिवाय कोई बस्ती पास भी नहीं है। घड़ी-आध घड़ीमें तेरे खानेका प्रबन्ध हो जायगा; और तेरे घोड़ेको चारा-दाना भी मिल जायगा।"

"बस्ती बहुत दूर है, फिर घड़ी-आध घड़ीमें प्रबन्ध कैसे हो जायगा?" यह उस बेचारेके ध्यानमें न आया। तथापि, अब उसको इस बातका विश्वास हो चला था कि, यह बाबा कोई न कोई विचित्र व्यक्ति है—जैसा दिखाई देता है, वैसा ही नहीं है। इसकारण अब उसकी समझमें आगया कि, यह जो कुछ कहेगा, वैसा ही अवश्य होगा। और सचमुच ही, उपर्युक्त

बातचीत हुए अभी आधी घड़ी भी नहीं हुई थी कि, इतनेहीमें एक ब्राह्मण एक परोसी हुई थाली, ढांककर, ले आया; और एकदम हनुमानजीके सामने जाकर उनको नैवेद्य दिखाया; और फिर बाबाजीकी ओर देखकर कहा, "आपकी आज्ञाके अनुसार सब प्रबन्ध हो गया है। थोड़ी ही देरमें भगुआ चारा-दाना लेकर आवेगा। शामके वक्त फिर कब लाऊं, सो बतला दें, तो अच्छा हो।" बाबाजीको जो कुछ उससे कहना था, कह दिया; और वह चला गया। सिपाही बेचारा चकित होकर इधर-उधर देख रहा था। बाबाजीने उससे कहा, "अब आरामसे खाना खा, थोड़ी ही देरमें घोड़ेका भी प्रबन्ध हो जायगा। कोई चिंता मत करना।" यह कहकर आप स्नानके लिए चल दिये।

सिपाही विचारा भूखसे बिलकुल व्याकुल हो रहा था। इसलिए अब आश्चर्य इत्यादि करनेमें समय न व्यतीत करके उसने अपना वह समय क्षुधाको शान्त करनेमें ही लगाया। कुछ भी संकोच न करते हुए उसने खूब आनन्दपूर्वक भोजन किया। पदार्थ भी बहुत उत्तम बने थे; और यह उसे मालूम ही हो गया। अभी सिपाहीका भोजन समाप्त नहीं होने पाया था कि, भगुआ लोधी हरी घासका गट्ठा लेकर वहां आया; और "बाबाजी कहाँ हैं"—पूछने लगा। "वे स्नानको गये हैं"—यह मालूम होते ही गट्ठा वहीं डाल दिया; और बहुतसे चने ले आया था, उनको भी वहीं रखकर आप चलता बना। सिपाहीने देखा कि, हमारा भोजन हो गया, घोड़ेकी खूराकका भी प्रबन्ध हो गया। अब

क्या बाकी रह गया! वह उठा; और घोड़ेके पास जाकर उसकी पीठ ठोंकी; और उसके आगे चारा डालकर यह सोचने लगा कि, दाना किसमें दूं। किन्तु तोबरेके बिना काम थोड़े ही अटक सकता था? उसने अपनी धोतीके सिरेका ही तोबरा बनाकर उसमें दाना दिया। इतने सब काम हो गये, पर बाबाजीका कहीं पता नहीं। वे स्नानके लिये कहकर गये थे; परन्तु घड़ी हुई, दो घड़ी हुईं, पहर हुआ, डेढ़ पहर हुआ, तीसरा पहर भी लौट गया, बाबाजीका कुछ पता नहीं! हमारे सिपाही नवयुवकके मनमें विचित्र ही शंका आई। उसने सोचा कि, इस बाबाने हमको विश्वास देकर रोक रखा है—अब कहीं हमारा विश्वासघात तो नहीं करना चाहता? "श।म-को बड़ा आनन्द आयेगा, शामको बड़ा आनन्द आयेगा" कहकर मुझे रोक रखा है—कहीं किसी मेरे शत्रुके हाथमें दे देनेकी ही तो यह युक्ति नहीं? मेरी निगहबानीपर किसीको रखे बिना इसको मेरा सब हाल कैसे मालूम हुआ? हाल तो इसको सारा मालूम है! फिर सोचता है कि, ऐसा नहीं हो सकता। ऐसा होनेकी कोई सम्भावना नहीं। एक तो यहां हनुमानजीका मन्दिर है; और नीचे तहखानेमें जगदम्बाजीका मन्दिर है; और इन दोनों मन्दिरोंका यह अधिष्ठाता है। मन्दिर दुश्मनोंके मालूम नहीं होते। इसकी बातचीतसे भी ऐसा मालूम नहीं होता कि, यह विश्वासघात करेगा। कुछ नहीं! कुछ नहीं! मेरे मनके ये विचार बिलकुल मूर्खतापूर्ण हैं। ऐसे विचार

मेरे मनमें आये कैसे? बाबाजीकी वह धीर-गम्भीर सूरत मुझको अणुमात्र भी अविश्वासकी कैसे जान पड़ी? किन्तु वह जैसा दिखाई देता है, वैसा तो अवश्य नहीं है। यह है कौन? क्या यह व्यक्ति मेरे ही समान इन म्लेच्छोंका तिरस्कार करनेवाला भी हो सकता है? अथवा यह ऐसा कोई पुरुष है कि, जिसको उनके द्वारा बहुत कष्ट पहुंचाया गया है? वह चाहे जैसा हो; किन्तु जैसी अभी मुझको शंका हुई थी, वैसा तो कदापि नहीं है। अच्छा, यह स्थान किसका है? नीचे, देवीजीके मन्दिरमें, हथियारों इत्यादिकी पूरी पूरी तैयारी है! बड़े बड़े सन्दूक रखे हैं, जिनमें मुहरबन्द आहनी ताले लगे हैं। क्या इनमें द्रव्य तो नहीं है? जो हो। यह स्थान किसका है? किसने बनाया है? यहां मुझको शामके वक्त ऐसा कौनसा चमत्कार दिखाई देगा? और, जैसा बाबाजी कहते हैं कि, मेरे उद्देश्य यहीं पूर्ण होंगे—सो कैसे? मेरी कुछ समझमें नहीं आता। इस प्रकार सोचते-विचारते हुए कुछ देरके लिए वह मन्दिरके बाहर आकर खड़ा हो गया; और यह सोचते हुए कि, बाबाजी अभीतक नहीं आये, वह चारों दिशाओंकी ओर दूरतक दृष्टि डालने लगा। इस प्रकार होते होते संध्याका समय आगया। बाबाजीका कहीं पता नहीं। इसके बाद उसके मनमें और ही विचार आने लगे। बाबाजीपर कोई संकट तो नहीं आगया? म्लेच्छोंको कहीं यह तो पता नहीं लग गया कि, वे ऐसे एक विचित्र स्थानके अधिष्ठाता हैं; और

इसीकारण शायद उनको पकड़कर कहीं मार डाला हो! अथवा—यह स्थान कहां है, क्या है, किसका है इत्यादि बातें उनसे जाननेके लिए कहीं वे उनको कष्ट तो नहीं दे रहे होंगे?

इस प्रकारके विचार उसके मनमें आये; और जम गये। वह बहुत कोशिश करता था, पर किसी प्रकार वे विचार उसके मनसे दूर नहीं होते थे। यही नहीं, बल्कि उसने यह भी सोचा कि, यदि ऐसा ही है, तो इस अवसरपर मुझको धैर्य धरकर आगे बढ़ना चाहिये; और यदि वे मिल जायँ, तो उनको दुष्टोंके हाथसे छुड़ाना चाहिए। इस बातपर उसका मन इतना जमा कि, वह तुरन्त ही तैयार हो गया; और अपने घोड़ेपर जीन कसनेका विचार करने लगा। उसको पूर्ण विश्वास हो गया कि, जो भय मेरे मनमें आया है, वह सत्य ही होगा। बस, इसी जोशमें उसने सचमुच ही घोड़ेपर जीन चढ़ा दी। अब वह घोड़ेपर बैठकर, उसको उत्साह दिलाते हुए, यह कहनेही-वाला था कि, "चित्तल! बेटा चलो," कि इतनेमें "सीताराम! सीताराम!" कहते हुए बाबाजी आपहुंचे। आते ही उन्होंने सिपाहीसे कहा, "क्यों मेरे कहनेका तुझे अबतक विश्वास नहीं आया? तू मुझसे छिपकर जानेकी तैयारी कर रहा था? मैं मौकेपर ही आगया, यह अच्छा हुआ। तेरे लिए न जाने कितने लोग जगह जगह घूम रहे हैं। इस बातकी यदि तुझे कुछ भी कल्पना होती, तो ऐ मूर्ख! तू इस मन्दिरके बाहर पैर रखनेका भी साहस न करता! चुपकेसे उतर! मेरी सुन; और भीतर चल।"

यह सुनकर सिपाही बेचारेको बहुत खेद हुआ, उसने सोचा कि, देखो, हमारा उद्देश्य क्या था; और इन्होंने समझा क्या! बेचारा तुरन्त ही घोड़ेपरसे उतर पड़ा; और बाबाजीके साथ चुपकेसे भीतर चला गया। वहां कुछ देर तो वह स्तब्ध रहा; परन्तु अन्तमें बाबाजीसे इस बातका खुलासा किये बिना उससे नहीं रहा गया कि, वह उस जगहसे क्यों चल दिया था। परन्तु उसकी उस खिन्नावस्थामें भी आनन्दकी बात इतनी ही हुई कि, बाबाजीने उसके उस कथनपर विश्वास कर लिया। यहांतक कि, उसका कथन उनको अक्षरशः सत्य मालूम हुआ। परन्तु उन्होंने यह नहीं प्रकट किया कि, सिपाहीके उक्त सदुद्देश्यसे उनको कितना आनन्द हुआ। अन्तमें वे सिपाहीसे इस प्रकार बोले, "अब जरा सावधान रह। थोड़ी ही देर बाद अब तुझे वह घटना दिखाई देगी, जिसकी हमने चर्चा की थी।"

इस बातचीतको हुए लगभग आधी घड़ी हुई होगी कि, इतनेमें सिपाहीको क्या भास हुआ कि, दूरसे बहुतेरे मनुष्य आ-रहे हैं, उनके हाथमें पलीते हैं, कुछ घोड़ोंपर हैं; और बहुतसे पैदल हैं। परन्तु मनको पूरा पूरा विश्वास दिलानेके लिए वह बाहर गया; और खूब ध्यान लगाकर देखने लगा, तो सचमुच ही दो-चार आदमी घोड़ोंपर आरहे हैं; और बहुतसे पैदल हैं। जो लोग आगे थे, उनमेंसे कुछ लोगोंके हाथमें पलीते भी दिखाई पड़े। वहांसे स्पष्ट दिखाई दे रहा था कि, वे सब लोग मन्दिर-की ही ओर आरहे हैं। पर वे थे कौन? शत्रु या मित्र?

सो कुछ उसकी समझमें नहीं आया! भीतर जाकर उसने बाबाजीको समाचार दिया; और पूछा कि, ये आनेवाले लोग कौन हैं? बाबाजी हँसे और गोलमाल करके इतना ही उत्तर दिया कि, लोग जब यहां आजायँगे; तब आप ही आप मालूम हो जायगा। अभी चौथाई घड़ी भी बड़ी मुशकिलसे हुई होगी कि, इतनेमें "जय! भवानी माताकी जय!" का घोष सुनाई दिया; और वे लोग मन्दिरके प्रांगणमें आगये। हमारे सिपाही जवानने उनकी ओर एक नज़रसे देखा। वे सब लोग, उसीके समान, मराठे जवान थे। उनमेंसे जो लोग घोड़ोंपर थे, उनका पेशा तो कमसे कम वही था, जो हमारे सिपाहीका था।

उस मंडलीमें बहुतसे लोग आये थे। सबसे आगे दो नवयुवक हाथमें पलीते लिये हुए मन्दिरहीकी ओर आरहे थे। उनके पीछे चार-पांच जवान पैदल आरहे थे। उनके पीछे सरदारी पेशेका एक युवक—बिलकुल नवयुवक—घोड़ेपर आ-रहा था। उसका रंग पक्का था। आंखें बहुत विशाल और तेजसे भरी थीं; परन्तु उनकी विशेषता उनकी विशालतामें नहीं थी, किन्तु उस अद्वितीय तेजमें थी, जो कि खूब चमक रहा था! उसकी नाक बड़ी, गरुड़की चोंचके समान थी। वह शरीर-से बहुत भव्य नहीं था। डीलडौल भी कुछ ठिगनासा ही था। उसके होंठों और ठुड्डीपर अभीतक रेख नहीं झलकी थी। पोशाक उसकी बिलकुल सादी! एक लम्बा अँगरखा; और मराठोंकासा पायजामा पहने था। सिरमें उस समयके मराठोंकीसी

एक छोटीसी पगड़ी थी। उसके चंचल नेत्र बराबर इधर-उधर घूम रहे थे, जिससे मालूम होता था कि, मानो सारी दिशाओं-की घटनाओंको वह एकदम ही ग्रहण करता जाता था। जिस घोड़ेपर वह बैठा था, वह जातका बहुत ही उत्तम था; और बार बार ऊपर-नीचे गर्दन करते हुए चल रहा था। इससे ऐसा जान पड़ता था कि, मानो अपने ऊपर आरूढ़ होनेवाले अपने स्वामीके विषयमें अभिमान दिखलाते हुए औरोंको वह तुच्छ जतला रहा था! बार बार लगाम चबाने और फुड़कनेमें वह अपनी ऐसी शान रखता था कि, जिसे देखकर लोग उसपर मोहित हो जाते थे। वह इस समय बिलकुल धीरे धीरे चल रहा था। जो नवयुवक उसपर आरूढ़ था, वह इस समय अपनी एक ओर घूमकर, एक दूसरे व्यक्तिसे बातचीत करता हुआ आरहा था। उसीके समान और भी एक-दो खासे नवयुवक थे। वे भी अवस्थामें उसी आगेवाले नवयुवकके समान ही—अथवा एक-दो वर्ष न्यूनाधिक थे; और घोड़ेपर ही सवार थे। उनके पीछे पांच-सात आदमी पैदल आरहे थे। ये लोग जो पैदल आरहे थे, उनके बदनपर प्रायः कपड़े कम ही थे। वे सब जवान ही थे, किन्तु बहुत मोटे अथवा ऊंचे-पूरे नहीं थे। यद्यपि यह नहीं कहा जासकता कि, वे बिलकुल दुबले-पतले थे; तथापि बहुत मोटे भी न थे। परन्तु जितना कुछ उनका डीलडौल था, उतना सब बहुत ही मज़बूत, गठा हुआ; और सुदृढ़ था। आंखें सबकी बहुत ही पानीदार

थीं। उनके मध्यभागमें कोई न कोई ऐसी वस्तु थी कि, जिसकी वे सब रक्षा करते चले आरहे थे। यह सब मराठा-मंडली ऐसी थी कि, जिनकी गणना नवयुवकोंमें ही की जा-सकती थी—उनकी बातचीत, उनका हँसना-खेलना इत्यादि सब बातें; और विशेषकर उनकी कुछ उद्दण्ड वृत्ति, उनकी युवावस्थाको प्रकट कर रही थी। वे लोग जैसे जैसे निकट आने लगे, वैसे ही वैसे हमारे मन्दिरके सिपाही जवानको अत्यन्त अचम्भा मालूम होने लगा। अबतककी सारी बातें देखकर उसे जो आश्चर्य मालूम हुआ था, वह आश्चर्य इस समय दस गुना बढ़ गया। इतने लोग, इतनी रातको, ऐसे निर्जन प्रदेशके मन्दिरमें क्यों आते हैं? और वे जो कुछ लाये हैं, सो क्या है? इत्यादि प्रश्न उसके मनमें उठे; और वह एकटक उनकी ओर देखने लगा। वह किसी पाषाणमय मूर्त्तिकी तरह स्तब्ध खड़ा था; और उन लोगोंकी ओर—विशेषतः सबके आगे चलने-वाले उस नवयुवककी ओर—उसकी बराबर नज़र लगी थी। ऐसा जान पड़ा कि, उनकी ओर देखते ही उसके मनमें कोई विचित्रसा विचार आया। वह विचार क्या था, इसकी चर्चा करनेसे यहां कोई विशेष तात्पर्य नहीं है। वे लोग मन्दिरके अगले प्रांगणमें आपहुंचे। अब वह नवयुवक, जो सुन्दर घोड़े-पर सवार था, झटसे अपने घोड़ेपरसे उतर पड़ा। यह देख-कर तुरन्त ही एक मनुष्य आगे आया; और उसके घोड़ेकी बाग पकड़ ली। एक मनुष्यने कम्बल बिछा दिया; और उस-

पर बैठनेकी उससे प्रार्थना की। अन्य लोग भी घोड़ोंसे नीचे उतरे; और उनके घोड़े भी पहले घोड़ेकी भांति ही एक ओर मनुष्य वहांसे हटा ले गया। जो नवयुवक पलीते लिये आ-रहे थे; उन्होंने अपने अपने पलीतोंको हनुमानजीके दरवाजसे कुछ अन्तरपर खड़ा कर दिया। आगेका वह नवयुवक महा-शय, घोड़ेपर बैठे हुए जिन लोगोंसे बातचीत करता आता था, उन्हींको साथ लिये हुए; और पहलेहीकी भांति उनसे बातचीत करते हुए, मन्दिरके बिलकुल द्वारपर आया; और दो बार दरवाज़ेसे ही पूछा कि, "श्रीधर स्वामी कहां हैं?" अवश्य ही वे प्रश्न हमारे सिपाहीको सम्बोधन करके किये गये थे; क्योंकि वही उस समय द्वारपर था। परन्तु पूछनेवालेके मनमें उस समय यह विचार बिलकुल ही न होगा कि, जिससे हम पूछ रहे हैं, वह कौन है, कहांसे आया है, इत्यादि। और ऐसा ही उसकी चेष्टासे भी प्रकट हो रहा था। वह नवयुवक पुरुष अपने साथी अन्य दो नवयुवकोंके साथ ज्यों ही आगे बढ़ा, त्यों ही हमारा सिपाही जवान, जो अभीतक उस नवयुवक पुरुषकी ओर बराबर चकित दृष्टिसे देख रहा था, एकदम पीछे हट गया; और इस प्रकार उसने उन तीनोंको भीतर जानेका मार्ग दे दिया। वह नवयुवक सीधा ही गया; और बजरंगबलीकी मूर्त्तिके पास जाकर नमस्कार किया। वहांसे फिर वह बाबा-जीकी धूनीकी तरफ चला। बाबाजी चुपके बैठे हुए यह सब तमाशा देख रहे थे। नवयुवकने उनके पास जाकर उनको भी नमस्कार किया; और हँसते हँसते कहा :—

"स्वामीजी महाराज, आज आप भीतर ही बैठे हैं! हम आज और भी कुछ ले आये हैं। उसको आपके चरणोंपर अर्पण करके हम कृतार्थ होंगे।" इतना कह ही रहा था कि, इतनेमें उसकी दृष्टि, दरवाजेके पास खड़े हुए, हमारे उस सिपाहीकी ओर फिर गई; और उसने तुरन्त ही स्वामीजीसे "यह कौन?" इस अर्थका प्रश्न-सूचक संकेत किया। स्वामीजीने तुरन्त ही हँसते हँसते यह उत्तर दिया कि, "तेरीही श्रेणीका यह भी एक है।" इसके बाद स्वामीजीने उस नवयुवकको; और उसके साथवाले दोनों अन्य नवयुवकोंको भी, जरा निकट आनेका, इशारा किया; और इस भांति कोई बात बतलाई कि, जो सिर्फ उन्हींको सुन पड़ी। उसे सुनते ही उन तीनोंने एक बार पीछे घूमकर हमारे उस सिपाही जवानकी ओर ध्यानसे देखा; और फिर तुरन्त ही आपसमें एक दूसरेकी ओर भी कुछ अर्थपूर्ण दृष्टिसे देखा। इसके बाद वह नवयुवक स्वामीजीकी ओर देखकर फिर बोला :—

"इस प्रकारके लोग मिल जायँ; और भवानी माता तथा आपकी कृपा हो जाय, तो उस महापुरुषने जो कार्य मेरे द्वारा करानेका विचार किया है, वह बहुत जल्दी हो जाय! रात-दिन मेरे मनमें यही आता रहता है कि, ये बातें कब एक बार हों; और इसी चिन्तामें मेरा हृदय व्याकुल रहता है। किन्तु क्या करूं? बड़े महाराजका; और अपने गुरूजीका बड़ा भय मालूम होता है। मेरे ये विचार; और मेरे ये कार्य उनको बिलकुल ही

पसन्द नहीं हैं, सो आपको मालूम ही है। उनके यहांसे प्रति दिन किस प्रकारके पत्र आते रहते हैं, सो भी आप जानते हैं। और घरमें प्रति दिन क्या क्या विचार होते रहते हैं, सो सब आप इन दोनोंसे पूछिये।"

इतना कहकर उस नवयुवकने दोनों साथियोंकी ओर घूमकर देखा। तब उनमेंसे एक बीचहोमें कहता है; "सो कुछ मत पूछिये। माताजी भी सदैव यही उपदेश किया करती हैं कि,'ऐसा करना ठीक नहीं, वैसा करना ठीक नहीं; ऐसा करनेसे ऐसा होता है, वैसा करनेसे अमुक नाराज होगा; तू बड़ा उपद्रवी है। बड़े जो कुछ कहते हैं, उसे सुनना चाहिए। गुरूजी जो कुछ कहेंगे, वह हमारे हितका ही कहेंगे। ऐसी कोई बात मत कर, जिससे वे नाराज हों, अथवा उनको बुरा लगे!' कभी कभी जब हम जाते हैं, हमसे भी नाराज होती हैं। हमपर यह अपराध लगाया गया है कि, हमारी ही संगतिसे श्रीमान्‌जी बिगड़ गये हैं। स्वामीजी महाराज! देखिये, कैसा तमाशा है!"

आगे वह और कुछ कहनेवाला था कि, इतनेमें वह नवयुवक बीचहीमें कहता है, "वास्तवमें हमारे अनुकूल कोई नहीं है; किन्तु हमने अपना निश्चय कर लिया है। आज अच्छा हाथ लगा है! यह अब आप अपने अधिकारमें लेवें। दिल्लीका ख़ज़ाना जारहा था! इन दुष्टोंके बापका धन है? गरीब लोगोंको लूटते हैं, सरदार लोगोंके घरोंपर भी हाथ साफ करते हैं;

और इस प्रकार अपना घर भरते हैं। बादशाहके पास नाम-मात्रके लिये नजरानाभर भेज देते हैं! मुझे आपकी कृपासे सात-आठ दिन पहले ख़बर मिली थी। और तभीसे हमने यह निश्चय किया था कि, यह ख़ज़ाना दिल्ली कभी न जाने देंगे—यह तो माता भवानीके चरणोंपर लाकर अर्पण करेंगे। हमने सोचा था कि, ख़ज़ानेके साथ पलटन भी अधिक होगी; परन्तु जितना हम ख़याल करते थे, उतना बन्दोबस्त नहीं था। कल रातको हमने अपनी सदैवकी हिकमतसे उनको घेर लिया; और उनको धता बताकर ख़ज़ाना लूट लिया। हमने ज्यों ही उन-पर अचानक छापा मारा, त्यों ही वे दुष्ट "तोबा तोबा" करते हुए जङ्गलमें इधर-उधर भग खड़े हुए। एक-दो रह गये थे, उन्होंने कुछ देर हाथ-पैर मारे, पर अन्तमें इन दोनोंने उनको भी मार भगाया।"

श्रीधर स्वामी चुपके सुन रहे थे। उसका कथन समाप्त होते ही स्वामीजी कुछ हसे और बोले, "इसी विनयशीलतामें तेरी शोभा है! कलके धावेका सारा हाल मुझे मिल चुका है। उस धावेमें इन दोनोंने तो वीरता दिखलाई ही थी, किन्तु और भी किसीने दिखलाई थी, सो भी मुझे मालूम है। किन्तु देख, (श्रीधर स्वामीका कंठ इस समय भर आया; और उन्होंने उस नवयुवककी पीठपर हाथ रखा) प्रत्येक अवसरपर तू ही इतना आगे न हुआ कर। तू इन सबका नायक है। जो कुछ होगा, सो सब तेरे ही हाथसे। सब छोटे-बड़े अवसरोंपर

यदि तू ही आगे बढ़ेगा, तो वक्त है, मौका है, यदि कोई अनिष्टकारक अवसर कभी आगया तो ?......"

इसके आगे श्रीधर स्वामीसे कुछ भी न कहते बना। उनका शरीर कुछ थर्रा गया। अगले कथनमें जो विचार प्रकट होनेवाला था, वह मानो उनको बहुत ही असह्यसा जान पड़ा। उनका एक हाथ उस नवयुवककी पीठपर था; और वे एकटक दृष्टिसे उसकी ओर देख रहे थे। उनकी उस दृष्टिमें अत्यन्त गम्भीर प्रेम भरा हुआ था। उस नवयुवकने अपना सिर नीचे करके सिर्फ इतना ही कहा, "स्वामीजी महाराज! भवानी माता, बजरंगबली और आपके कृपा-प्रसादसे मुझपर कोई भी अनिष्ट-प्रसंग नहीं आवेगा, इसका मुझे पूरा विश्वास है। इसके सिवाय, यदि मैं स्वयं ही अग्रसर नहीं हूंगा, तो इन लोगोंको आगे रखनेका मुझे कौनसा अधिकार है? बस, यही सोचकर प्रत्येक संकटके अवसरपर इनके साथ मैं भी आगे रहता हूं। स्वयं पीछे रहकर हुकूमत चलाना मुझे अच्छा नहीं लगता।" स्वामीजी इसपर कुछ भी नहीं बोले। वह नवयुवक महाशय भी कुछ देरतक चुप ही बैठा रहा। इसके बाद उसने बाहरके लोगोंसे वह पिटारा, जो उनके साथ था, भीतर लानेके लिए कहा। पिटारा भीतर लाया गया; और हनुमानजीकी मूर्तिके पीछे रखा गया। इसके बाद फिर वे लोग बाहर चले गये। वह नवयुवक, उसके दो साथी, श्रीधर स्वामी; और हमारा वह सिपाही—सिर्फ इतने ही मनुष्य भीतर रह गये। श्रीधर स्वामीने

उस नवयुवकसे कहा, "जैसा कि तू अपने इन दोनों साथियोंको समझता है कि, ये तेरे लिए प्राण देंगे—और सचमुच ये हैं भी ऐसे ही—उसी प्रकार इस (हमारे सिपाही जवानकी ओर संकेत करके) शूर पुरुषको भी तू अपना साथी समझ—यह भी तेरे लिए प्राण देगा। तेरी तरह, इस पवित्र भारतवर्षके लिये, यह भी अपनी जान देनेको तैयार है। तेरी ही तरह इसको भी उन दुष्ट म्लेच्छोंसे घृणा है। यह कहनेमें भी कोई अतिशयोक्ति न होगी कि, सर्वथा तेरीहीसी इसकी भी परिस्थिति है। यह अपना घर-द्वार छोड़कर तेरे ही गिरोहमें मिलनेको चला था; बीचमें रास्ता भूलकर इधर आगया, सो मैंने इसको रोक लिया। और अब तुझसे इसकी मुलाकात भी करवा दी।

श्रीधर स्वामी जब यह कह रहे थे, हमारा शूर सिपाही; और वह पराक्रमी नवयुवक—दोनों एक दूसरेकी ओर अत्यन्त स्तब्ध दृष्टिसे देख रहे थे—मानो इस प्रकार वे दोनों अपने अपने नेत्राकर्षणसे एक दूसरेके हृदयको खींच रहे थे।

"हनुमानजीकी जय!" का घोष किया। इसके बाद उन्होंने नियमानुसार हनुमानजीकी बैठक हटाई। फिर स्वामीजी उस तहखानेके मुँहसे अन्दर गये;और उनके पीछे ही पीछे उस तरुण महाशयके साथियोंमेंसे एक साथी भी भीतर उतरा। दूसरेने, वह पिटारा, जो वहां रखा था, उसको पकड़ा दिया। पिटारा जब भीतर पहुंच गया, तब वह नवयुवक महाशय भी भीतर उतर गया। उसके पीछे पीछे दूसरा साथी भी भीतर गया। हमारा सिपाही जवान, जो वहां बाकी रह गया था, उसे उन्होंने ऊपर ही रहनेके लिए कहा।

यह देखते ही उसके चेहरेपर असन्तोषकी एक बारीकसी रेखा क्षणमात्रके लिए झलकती हुई दिखाई दी, तथापि उसने तिल भर भी अपना पैर आगे नहीं बढ़ाया। जैसे कोई सेनापति सिपाहीको आज्ञा देवे; और वह उसे शिरोधार्य करे, उसी भांति वह जहांका तहां स्तब्ध खड़ा रहा। भीतर जो चार आदमी गये थे, वे एकके बाद एक, नियमानुसार भीतर अम्बिकाके मन्दिरमें गये। साथमें जो पिटारा ले गये थे, उसे भी अम्बिकाजीके सम्मुख रख दिया। इसके बाद सब, कुछ स्तब्धसे होकर, भवानीकी उस भव्य मूर्तिके सामने खड़े हो गये। थोड़ी ही देरमें श्रीधर स्वामी उस तेजस्वी नवयुवककी तरफ देखकर बोले:—

"जिसके विषयमें मैंने यह बतलाया कि, तू इसे अपने जीवन-का साथी बना, उसके विषयमें तूने विशेष पूछतांछ क्यों नहीं की? उसके साथ जिस प्रकारका बर्ताव करनेके लिए मैंने तुझसे

कहा है, उस तरहसे यदि तू करने लगेगा; और उसपर भी दोनोंहीके समान विश्वास रखने लगेगा, तो यह तू कैसे समझ गया कि, वह तेरे साथ विश्वासघात न करेगा ?"

स्वामीजीके ये वचन सुनकर वह नवयुवक कुछ हँसा; और उनकी ओर देखकर कहने लगा:—

"आपके वचनोंसे अधिक और क्या विश्वास हो सकता है ? इसके सिवाय, उसको देखकर मेरे विचारमें भी यही आया कि, भवानी माताका उसपर प्रसाद अवश्य है; और उसके द्वारा मुझे सचमुच ही बहुत सहायता मिलेगी। परन्तु अब, जबकि आप ही कहते हैं, तो मैं पूछता —बतलाइये, वह कौन है ? कहांसे आया है ?"

श्रीधर स्वामीने उसकी यह जिज्ञासा शीघ्र ही तृप्त की। उन्होंने जो कुछ बतलाया, उससे, जान पड़ा कि, उस नवयुवकको कुछ आश्चर्य भी हुआ ; परन्तु उस आश्चर्यको उसने वचनोंद्वारा प्रकट नहीं किया।

आधी घड़ी और हुई। इसके बाद उस नवयुवकके कहनेसे उसके एक साथीने ऊपरके उस व्यक्त (सिपाही) को नीचे आनेके लिए कहा, जिसे सुनते ही वह नीचे उतरा; और शीघ्रतापूर्वक उसके पीछे ही पीछे भवानीजीके मन्दिरतक गया। वहां जानेपर वह नवयुवक महाशय उससे कहता है:—

"अब यहां अपनी अपनी सच्ची दशा एक दूसरेसे छिपानेका कुछ भी काम नहीं है। और अबतक यद्यपि हम लोगोंने छिपानेका

प्रयत्न किया, किन्तु श्रीधर स्वामीसे कुछ छिपा नहीं है। उन्होंने मुझे सब बतला दिया है। इसलिए इस समय और कुछ अधिक मैं आपसे नहीं पूछता। परन्तु आपके बाद वहां क्या हाल हुआ, सो जाननेके लिए आपको बड़ी उत्सुकता होगी। वह अवश्य ही ·····”

आगे वह नवयुवक कुछ कहनेहीवाला था, कि श्रीधर-स्वामी एकदम बोल उठे:—

“वह पीछेसे बतलाया जासकता है। इस समय यहां जो विधियां करनी हों, सो थोड़ी देरमें कर लो!” उस नवयुवक पुरुषने एक बार भवानीकी मूर्तिके आसपास परिक्रमा की। परिक्रमा करके वह फिर भवानीजीके सामने आरहा था कि, इतनेमें उसका तेज कुछ विचित्र ही दिखाई देने लगा। उसकी पहलेकी मूर्ति; और इस समयकी उसकी कांतिमें कुछ विचित्र अन्तर दिखाई पड़ने लगा। उसके अन्य साथी उससे दूर हट गये; और बराबर उसकी ओर एकटक दृष्टिसे देखने लगे। उस समय ऐसा जान पड़ा कि, वह नवयुवक पुरुष अपने आस-पासकी सारी बातोंसे अलिप्त होकर मानो किसी दूसरी ही परिस्थितिमें पहुंच चुका था। उस समय ऐसा कुछ मालूम हुआ कि, मानो उस पुरुषको इस बातका कुछ भान ही नहीं था कि, उसके आस-पास कोई और भी मनुष्य मौजूद है। उसकी चेष्टासे उस समय ऐसा कुछ मालूम हो रहा था कि, उसकी उस अत्यन्त स्तब्ध दृष्टिको, उसके आसपासकी वस्तुओं अथवा प्राणियोंका ज्ञान

चाहे भले ही न हो, पर अन्य किसी 'वस्तु' का ज्ञान तो उसे अवश्य ही हो रहा था; और उसी ओर उसका सारा ध्यान एकत्रित हो रहा था। बहुत देरतक वह कुछ भी नहीं बोला। परंतु इसके बाद उसने दो-तीन बार भवानी माताके सामने दण्डवत् प्रणाम किया; और फिर कुछ शब्द मुँहसे निकाले। वे शब्द इस प्रकार थे:—

"संकट आवेगा, पर विनाश नहीं होगा। सावधानीसे रहना···यवन प्रबल···कुछ साहसके साथ···"

इतने ही शब्द उसके मुहँसे बाहर निकले। जिनको श्रीधर स्वामी और अन्य लोगोंने भलीभांति ध्यानमें रखा।

इसके बाद वह नवयुवक पुरुष उस देवीके आगे दण्डवत् करके बिलकुल निश्चेष्टसा पड़ा रहा। उससे उसको जागृत करनेका किसीने प्रयत्न नहीं किया। चारों मनुष्य बिलकुल तटस्थ-वृत्तिसे उसकी ओर शान्त चित्तसे बराबर देख रहे थे। श्रीधर स्वामी और उनके दो साथियोंको तो, मानो उसमें कोई विशेषता नहीं दिखाई दी; परन्तु एक चौथा महाशय, जो वहां था, उसकी वैसी दशा नहीं थी। वह अत्यन्त तटस्थ होकर यह सारी घटना देख रहा था। उसकी सूरतपर—विशेषतः नेत्रोंमें—बहुत अधिक पूज्य भाव दिखाई पड़ रहा था। उसके चेहरेपर उस समय जो थोड़ासा अन्तर दिखाई दिया, उससे यह कहा जासकता था कि, वह सम्पूर्ण लीला देखकर, उस नवयुवकको, वह व्यक्ति और भी विशेष आदरकी दृष्टिसे देखने लगा होगा।

धीरे धीरे वह नवयुवक पुरुष सचेत होने लगा। कुछ देरमें वह चारों ओर देखने लगा; और फिर अपने नवीन मित्र, हमारे सिपाही जवानको अपने निकट बुलाया; और उसकी पीठपर हाथ फिराने लगा। इसके बाद उसने अपनी तलवार निकालकर भवानी माताके सामने रख दी; और फिर उस अपने नवीन साथीसे कहा कि, "यह कहकर कि, मैं भवानी माताकी सेवामें; और गौ-ब्राह्मणोंका कष्ट दूर करनेमें अपने प्राणतक निछावर कर दूंगा—भवानी माताको साष्टांग नमस्कार करो; और यह तलवार उठाओ।"

हमारे सिपाही जवानको, मनसे यह सब करनेकी इच्छा हो, चाहे न हो;—परन्तु उस समय तो उसने क्षणभरका भी विलम्ब न लगाते हुए वैसा ही किया; और उस नवयुवककी तलवार उठाकर अपने मस्तकपर धारण की।

इतना सब हो जानेपर वह नवयुवक उठा। अब वह पूरा पूरा सचेत होगया था। इसलिए श्रीधर स्वामीकी ओर देखकर वह कहता है:—

"स्वामीजी, कुछ नवीन समाचार है ?" स्वामीजीने यह कहकर कि, "हाँ, है" इन अक्षरोंका उच्चारण किया—"संकट आवेगा, विनाश नहीं होगा", "यवन प्रबल कुछ साहसके साथ।" यह सुनते ही उस नवयुवक पुरुषके चेहरेपर कुछ चिन्तासी दिखाई देने लगी, पर यह बात उसने किसीपर प्रकट नहीं होने दी; और सबकी ओर देखकर बोला:—
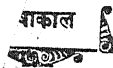
"लक्षण अच्छे नहीं हैं, माता भवानीने जैसा कि सूचि
किया है—संकट कब आवेगा, यह कुछ कहा नहीं जासकता
तथापि यह तो निश्चित ही है कि, विनाश नहीं होगा। फिर भं
अत्यन्त सावधानीसे काम लेना चाहिए। अस्तु। अब इस
पिटारेका प्रबन्ध करके यहांसे चल देना अच्छा होगा।"

यह कहकर वह उठा; और स्वामीजीको जतला दिया कि, ये
बहुत बड़े बड़े भारी जो पिटारे रखे हैं, उनमेंसे एकको खोलकर
यह नवीन ख़ज़ाना भी रख छोड़ियेगा। इसके बाद फिर
उसने कहा:—

"भवानी माताने हमको इस बातकी कभी कमी नहीं पड़ने
दी; और उनकी कृपासे आगे भी ऐसा ही रहेगा। आवश्यकता
है केवल दृढ़ श्रद्धाकी! यह नहीं कि, हमारे बड़े-बूढ़ोंको यह
बात अच्छी न लगती हो—वे भी इसको चाहते हैं; परन्तु उनको
यह भय मालूम होता है कि, हमारे हाथसे यह होगा नहीं; और
व्यर्थमें फँसेंगे, अथवा इन मुसल्लोंके चक्करमें पड़कर चकनाचूर
होजायंगे। मुझे मालूम है, जब किसी जगह हमारी जीत होती
है, गुरूजीको भीतरसे, वास्तवमें, आनन्द होता है। किन्तु वे सदैव
मुझे इसी डरसे निरुत्साहित किया करते हैं कि, मैं यदि बराबर
ऐसे ही उद्योगमें लगा रहूंगा, तो शायद किसी समय फिसल जाऊँ;
और यदि ऐसा हुआ, तो सारे कुलका सत्यानाश हो जायगा।
किन्तु हम सबके हाथसे यदि किसी दिन अभीष्ट-सिद्धि होगी,
तो न सिर्फ गुरूजीको ही आनन्द होगा, किन्तु बड़े महा-

राजको भी आनन्द हुए बिना न रहेगा। इसलिए हम सब लोगोंको बड़ी सावधानीसे काम लेना चाहिए। निष्फलता कदापि न होनी चाहिए। जबतक भवानी माताकी कृपा है, स्वामीजी महाराजकी कृपा है, भवानी माताकी कृपासे ख़ज़ानेकी कमी नहीं है; और आप लोगोंके समान शूरवीर साथियोंकी पूरी पूरी सहायता है, तबतक मुझे तो सफलता प्राप्त होनेमें किसी प्रकार भी शंका ही नहीं मालूम होती। बड़े-बूढ़े जो कुछ भी कहा करें, उसकी ओर विशेष ध्यान देनेकी आवश्यकता नहीं। अपना उद्योग जारी रखना चाहिए। न जाने क्या कारण है, मेरा मन आज कुछ उदाससा होरहा है। सच पूछिये, तो इनके समान नवीन साथी मिलनेसे उत्साह बढ़ना चाहिए, पर......" इतनेमें श्रीधर स्वामी कुछ आहटसी लेकर कहते हैं:—

"भगुआ, जान पड़ता है, दरवाज़ेको ज़ोर ज़ोरसे खटखटा रहा है। किसीको जाकर देख आना चाहिए।" उनके मुखसे ये शब्द निकलते ही, हमारा सिपाही जवान; और उन दो साथियोंमेंसे एक मनुष्य, दोनों तुरन्त ही दौड़े। ऊपर जाकर क्या देखते हैं कि, भगुआ, जो द्वारपालका काम कर रहा था, ज़ोर ज़ोरसे दरवाज़ेको ठेल रहा है। दोनोंके पूछनेपर उसने कहा, "यह ख़बर दे दो कि, "एक गुसाईं यह सन्देशा लेकर आया है कि, 'मुसल्मानोंका एक बड़ा भारी गिरोह बिलकुल निकट आगया है। जान पड़ता है कि, उन्हें कुछ पता लग गया।' सन्देह होता है कि, उस गिरोहने इधर ही अपना मोर्चा फिराया है। वह हमको घेरना ज़रूर चाहता है।"

यह सुनते ही दोनों बहुत अचम्भेमें आगये। नवीन साथी तो बिलकुल ही स्तब्धसा खड़ा रहा। तब दूसरा साथी उससे तुरन्त ही कहता है:—

"वाह वाह! इतनीहीसी ख़बरसे तुम इतने स्तब्ध होगये, फिर आगे क्या करोगे? ऐसी ख़बरें तो लाखों ही बार आवेंगी। चलो, नीचे चलकर ख़बर देवें, फिर देखो क्या चमत्कार होता है!"

इतना कहकर दोनों नीचे गये। ख़बर दी। वह नवयुवक पुरुष श्रीधर स्वामीकी ओर देखकर कुछ हँसा और बोला:—

"यह मुक़ाबिला करनेका मौका नहीं है। इस समय यदि मुक़ाबिला किया जायगा, तो कठिनाई पड़ेगी, इसलिए ऊपर जाकर आज्ञा दीजिए कि, कल राततक लोग जहांके तहां चले जायँ। हम अपना देख लेंगे।"

श्रीधर स्वामी वह आज्ञा लेकर ऊपर गये। हनुमानजीकी बैठक उन्होंने जहांकी तहां कर दी। उपर्युक्त आज्ञा बाहर दे दी। सब लोग तुरन्त ही जहांके तहां होगये। बाबाजी अपनी धूनीके पास बैठ गये; और 'सीताराम सीताराम' जपते हुए चुपके बैठे हुए अपनी चिलमके फ़ौवारे छोड़ते रहे।

बारहवां परिच्छेद ।

गोटेश्वरके मन्दिरमें ।

अब बाबाजीको तो भजन करनेके लिए हम यहीं छोड़ दें; और दूसरी ओर ध्यान दें, क्योंकि अन्य भी अनेक घटनाएं हमारे ध्यानकी अपेक्षा कर रही हैं।

बिलकुल संध्या-समय हो चुका है। जङ्गल अत्यन्त घना है। चारों ओर सन्नाटा बीत रहा है। एक छोटीसी पगडण्डी, जो ठीक ठीक दिखाई भी नहीं पड़ रही है, उसीसे दो मनुष्य सरपट चले आरहे हैं। एक मनुष्य बड़ा है, जो खूब ही झपाटे-से चला जारहा है; और दूसरा एक बिलकुल छोटा लड़का! जान पड़ता है कि, बहुत जल्द वे किसी न किसी बस्तीकी तलाशमें हैं। क्षण क्षणपर उन्हें अन्धकार घेर रहा है; और वे भी मानों अन्धकारको पीछे हटानेके लिए ही जी छोड़कर भग रहे हैं। पाठकोंको अनुमान होगया होगा कि, ये दोनों कौन हैं। और यदि न हुआ हो, तो अभी आप ही आप मालूम हो जायगा। उन दोनोंमेंसे बड़ा मनुष्य उस लड़केकी पीठपर एक थाप देकर कहता है:—

"अरे श्यामा, तू अपनी माँकी नज़र बचाकर मेरे साथ आ-होगया; परन्तु उधर वह बेचारी ढूंढ़ ढूंढ़कर थक जायगी! अरे, तुझे वह क्या कहेगी?"

श्यामा ज़ोरसे हँसकर कहता है, "कहने दो, कुछ भी कहा करे, मैं क्या जन्मभर उसके पैरमें पैर बांधकर बैठा रहूंगा? देखो, सुभान दादा, यह लड़का ऐसा-वैसा होकर नहीं रहेगा—सरदार होगा, एक दिन सरदार! जागीर पावेगा। मैंने कभीका माँसे कह दिया है कि, मैं बड़ा होनेपर घरमें नहीं बैठा रहूंगा। कहीं न कहीं निकल जाऊंगा, तलवार बजानेके लिए!"

उस छोटे लड़केका यह कथन सुनते ही सुभान—यद्यपि वह आगे जानेके लिए उतावला होरहा था, फिर भी—कुछ ठहर गया; और पेट पकड़ पकड़कर हँसने लगा। उसे उस लड़केका उक्त कथन बड़ा ही विचित्र जान पड़ा। इसके बाद फिर वह उसकी पीठपर एक चपत लगाकर कहता है:—

"वाह! वाह! तू सरदार बनेगा क्या? और तलवार बजावेगा? पर तेरी वह तलवार कहां है? तलवार भी तो चाहिए?"

यह सुनकर श्यामा कुछ खिन्न स्वरसे कहता है:—

"क्या कहें, नानासाहब चले गये! नहीं तो दिखलाता मैं तुमको, तलवार कैसी होती है! उन्होंने मुझसे तलवार देनेको कहा था! खैर, कोई हर्ज नहीं, तलवार तो किसी न किसी तरह मैं पा ही लूंगा! किन्तु सुभान दादा, तुम अब जा किस तरफ रहे हो? मैं तो तुम्हारे पीछे ही पीछे चल रहा हूं—कुछ पता भी लगने दोगे?"

सुभान तुरन्त ही उसकी ओर देखकर कहता है:—

"अरे, तुझको ऐसी पतेकी क्या फिक्र पड़ी है? तू अभी बच्चा है। जैसे आया है, मेरे साथ चलाचल!" इतना कहकर उसने फिर अपना वेग पहलेसे दूना कर दिया; और दोनों वायु-वेगसे चलने लगे। श्यामा एक बड़ा होशियार छोकरा था। उसने देखा कि सुभान इस समय मुझको कुछ भी पता नहीं दे-सकता, इसलिए जितना मुझे मालूम है, उतनेहीको रखकर काम निकालना ठीक होगा। उसको इतना निश्चित मालूम था कि, सुभान जिस कामसे जाता है, वह कोई अत्यन्त नाजुक काम है। इसके सिवाय वह यह भी जानता था कि, सुभानके खीसेमें सरकारका दिया हुआ बहुत ही महत्वपूर्ण एक लिफाफा है। फिर, जिस दिशाकी ओर सुभान जारहा था, उससे उसको यह भी मालूम होगया था कि, किस बस्तीकी ओर लिफाफा जानेको है। परन्तु चूंकि उसकी अवस्था थोड़ी थी, इसलिए उसकी जिज्ञासा भी बढ़ी हुई थी; और इसकारण सदैव ही उसकी यह इच्छा रहा करती थी कि, मुझको प्रत्येक बातका पूरा पूरा वृत्तान्त मालूम होना चाहिए। उसकी जिज्ञासा यद्यपि अधिक थी, फिर भी उसमें सारासार-विचारकी कमी नहीं थी, अतएव वह कभी किसीको अप्रिय नहीं मालूम हुआ।

अस्तु। बहुत देरतक वे दोनों ज़ोर ज़ोरसे चलते रहे, फिर भी जङ्गल ख़तम न हुआ; और अन्धेरा बढ़ता ही गया। तब सुभान श्यामासे कहता है:—

"अबे श्यामा, रास्ता तो नहीं भूल गये? अरे देख, यदि

कहीं रास्ता भूल गये; और इधरके उधर भटक गये, तो तेरी हड्डी ऐसी नरम करूंगा कि, जैसे तू हुआ ही न हो! देख, मैं तो सीधा रास्ता आ ही रहा था, लेकिन तू ही यह कहकर कि, 'चलो जल्दीका रास्ता दिखलाता हूं' इधर ले आया......"

श्यामाने उसे पूरा पूरा नहीं बोलने दिया; और बीचमें ही कहने लगा:—

"क्या कहा सुभान दादा! ऐसा कहीं हो सकता है? मैं हजारों बार, लड़कपनसे, इधर गया हूं। अभी दस ही बारह दिन पहले मैं इधरसे निकल गया हूं। तुम चले चलो।"

श्यामाके कथनकी सत्यता सुभानको तुरन्त ही मालूम होगई। थोड़ी ही देरमें वे दोनों उस बीहड़से निकलकर मैदानमें आये; और दूरपर, लगभग एक कोसके अन्तरपर, एक आकाशी दीपक उनको दृष्टिगोचर हुआ। उसे देखते ही सुभानने श्यामाकी पीठ ठोंककर कहा:—

"शाबाश! बेटा, शाबाश! यह मार्ग मुझे भी मालूम था, पर तेरी परीक्षा लेनेके लिए ऐसा कहा था"!

श्यामा कुछ नहीं बोला। ऐसा जान पड़ा कि; वह दूरपर कुछ न कुछ देख रहा था। कुछ देर उसी स्थितिमें रहनेके बाद वह सुभानसे कहता है:—

"हमको इस समय बस्तीमें नहीं जाना चाहिए। मैं समझता हूं कि, इसी गोटेश्वरके मन्दिरमें प्रातःकालतक समय बिताया जाय। और सुबह बहुत जल्द उठकर आगे चल देवें।

बस्तीमें जायंगे, तो पटेल इत्यादि आ आकर इधर-उधरकी जांच करेंगे। यहांका पटेल सर्फोजीके यहां भी यदा-कदा जाया करता है। मैंने उसको कई बार देखा है। सो वह सर्फोजीसे जाकर सब हाल बतलावेगा।"

सुभानने उसके कहनेकी ओर कुछ विशेष ध्यान नहीं दिया। "गाँवकी सीमापर पहुंचकर देखा जायगा," यह कहकर वह पहलेहीकी भांति तेज़ चलने लगा।

अब मैदान था। घिरी हुई झाड़ियां नहीं थीं। इसकारण दोनोंकी नज़र—विशेषतः उस लड़केकी चंचल दृष्टि तो और भी अधिक—चारों ओर बड़ी तेज़ीसे घूम रही थी। वह इधर-उधर देखता; और बीचमें ही सुभानसे बतलाता, अथवा कुछ दिखलाता जाता था। थोड़ी देरमें जब वे बागके बिलकुल नज़दीक आगये, तब सुभानने भी ऐसा ही विचार किया कि, अब गाँवमें न जावें; और श्यामा जिस मन्दिरमें बतलाता है, उसी गोटेश्वर महादेवके मन्दिरमें रात व्यतीत करें। क्योंकि एक तो गाँवमें जानेकी उनको कोई आवश्यकता नहीं थी; और फिर, जैसा कि श्यामाने बतलाया था, सचमुच ही यदि उस गाँवके पटेलके साथ सर्फोजीकी दोस्ती थी, तो सरकारका बतलाया हुआ कार्य बिलकुल गुप्त रूपसे नहीं किया जासकता था। इसके सिवाय वे दोनों अपने खानेका सामान भी साथ ही लाए थे। ऐसी दशामें बस्तीमें जानेका उस समय काम ही क्या था? गोटेश्वर महादेवके मन्दिरमें कुआं भी था, अतएव

पानी इत्यादिकी कोई कठिनाई पड़ ही नहीं सकती थी। अस्तु। ऐसा विचार करके सुभानने गोटेश्वरके मन्दिरका रास्ता पकड़ा। मन्दिर बिलकुल गिरी हुई हालतमें था, इसकारण वहां विशेषकर किसीके आने-जानेकी भी सम्भावना नहीं थी—सब प्रकारकी सुविधा उनके मनके अनुसार ही थी, अतएव दोनोंने मन्दिरमें ही जाकर डेरा डालनेका निश्चय किया। श्यामा भूखके मारे बिलकुल व्याकुल होरहा था। ज्यों ही वह भीतर गया; और अपनी कमली बिछाई, त्यों ही पहले उसने सुभानसे रोटी निकालनेका आग्रह किया। थोड़ी ही देरमें, प्याज;और रोटी—जो मराठोंका खाना है—से खूब छककर,दोनों कमलीपर लेट रहे।

रास्तेके परिश्रमसे दोनों ही खूब थके थे, अतएव लेटते ही खूब गहरी नींदमें सोगये। हम समझते हैं, उस समय मन्दिरमें आग भी लग जाती, तो भी उनका जगना मुशकिल ही था।

मन्दिरमें एक दीपक रखा था, वह पहले ही बिलकुल टिम-टिमा रहा था, कुछ देर बाद उसके बुझनेकी ही नौबत आगई; और जब उसने देखा कि, अब हमारे जागृत रहनेसे कोई लाभ नहीं, तब उसने भी आसपासके अन्धकारमें विलीन होजाना ही उचित समझा। मन्दिरके भीतर-बाहर, चारों ओर घना अन्धकार छागया। घड़ी, दो घड़ी, चार घड़ी समय उसी दशामें गया। अब आधी रात बीत गई। चन्द्रदेवके उदय होनेका समय निकट आगया। चन्द्रोदयकी दिशा कुछ कुछ उजली दिखाई

पड़ने लगी। थोड़ी ही देरमें चन्द्रदेवने अपना सिर ऊपर निकाला; और धीरे धीरे उस गिरे हुए मन्दिरपर अपनी कान्ति फैलानी शुरू की। वे भीतर सोये हुए दोनों प्राणी अबतक प्रगाढ़ निद्रामें थे, इतनेमें वहां दो मनुष्योंकी छाया मन्दिरके अग्रभाग-पर पड़ी हुई दिखाई दी; और धीरे धीरे स्पष्ट दिखाई देने लगा कि, वे दोनों मनुष्य मन्दिरकी ही ओर आरहे हैं। क्षण क्षण-पर वे दोनों छायाएं मन्दिरके बिलकुल पास-पास आने लगीं। उनकी पोशाकसे स्पष्ट मालूम होता था कि, इनमेंसे एक स्त्री है; और दूसरा पुरुष। वे छायाएं बहुत ही शीघ्रतापूर्वक मन्दिर-की ओर आरही थीं। मन्दिरकी चहारदीवारीके अन्दर आकर वे ठहरसी गईं; और बड़ी घबड़ाहटकी सूरतसे आस-पास देखने लगीं। उस समय ऐसा जान पड़ा कि, मानो किसीके हाथमें वे फँससे गये थे; और यही देखनेके लिए उनकी दृष्टि चारों ओर घूम रही थी कि, अब यहां आजानेसे हमारी बचत होती है या नहीं। क्योंकि दोनोंकी—उस पुरुषकी; और स्त्री-की भी—दृष्टि बड़ी घबड़ाहटसे भरी हुई थी। कह नहीं सकते कि, उनके पीछे कोई जङ्गली जानवर लगा था, अथवा किसी मनुष्यने ही उनका पीछा किया था, जोहो। मन्दिरके घेरेमें आकर जब उन्होंने देखा कि, अब हम सुरक्षित हैं, तब कहीं उनको थोड़ासा धीरज बँधा। उनमेंसे स्त्री तुरन्त ही आगे बढ़ी; और कुछ हँसीकी आवाज़ निकालकर पुरुषसे बोली :—

"यही तुम्हारा धीरज है? जरा अपने लिबासको तो देखो;

और इसकी लाज रखो !" यह सुनते ही पुरुष उसकी ओर देख-कर कहता है :—

"चुप रह, चुप ! बदमाश कहींकी ! यह हँसी करनेका समय है ? जा, अब देख, मन्दिरके भीतर अच्छी जगह है या नहीं।"

स्त्री फिर कुछ नहीं बोली। आगे बढ़कर मन्दिरके दरवाज़ेसे झांककर उसने देखा। परन्तु चांदनी अभी भीतर नहीं पहुंची थी। वह शिवमन्दिर यद्यपि ऐसा ही बना हुआ था कि, चांदनी शिवके मस्तकपर पहुंच सकती थी; परन्तु चन्द्रमा अभी इतना ऊपर नहीं आया था कि, मन्दिरके द्वारसे भीतर चांदनी-का प्रवेश होसकता। स्त्रीने भीतरकी ओर बहुत कुछ दृष्टि डाली, परन्तु अन्धकारके सिवाय और उसको कुछ भी दिखाई नहीं दिया। अन्तमें जब उसने समझा कि भीतर कोई नहीं है, तब वह पीछे लौटकर पुरुषके पास गई; और बोली, "मन्दिरमें तो कोई नहीं है; परन्तु अब हम यहांपर और कितनी देर बैठ सकते हैं ? शीघ्र ही आगे चलना चाहिए, नहीं तो सुबह हो जायगा; और बस्तीके लोग यदि इधर आने लगेंगे, तो फिर......"

पुरुष बीचहीमें उससे कहता है :—

"घड़ीभर तो मुझे भीतर बैठने दे, फिर मुझे जहां दौड़ाना हो, भले ही दौड़ा लेना !" इतना कहकर वह आगे बढ़ा। चांदनीमें दिखाई देनेपर मालूम हुआ कि, पुरुष अभी बिलकुल

नवयुवक था—यहांतक कि युवावस्थाकी विजय-पताका अभी उसके होंठोंपर अथवा ठुड्डीपर नाममात्रको भी नहीं दिखाई दे-रही थी। उसका शरीर बहुत ही उत्तम; और गौर वर्णका था। होंठ बिलकुल सुर्ख और नेत्र अत्यन्त तेजस्वी थे। उसका सम्पूर्ण डीलडौल बहुत ही सुन्दर, परन्तु अत्यन्त नाजुक, दिखाई देता था। सिरमें बड़ी मजबूत पगड़ी बाँधी थी; और लम्बा अंगरखा खूब ढीला-ढाला पहने था।

वह स्त्री उससे काफी बड़ी थी—कोई पांच-सात वर्ष बड़ी दिखाई देती थी। रंग उसका काला था; और बोली इत्यादि-से किसी नीच कौमकी जान पड़ती थी। परन्तु उसके चेहरेसे ऐसा जान पड़ता था कि, वह बड़ी चालाक और चतुर स्त्री है; और उस पुरुषपर उसका प्रेम भी बहुत अधिक है। जो हो। वह पुरुष आगे बढ़ा; और धीरेसे ही दरवाजेमें जाकर झांककर देखा, तथा आगे कदम बढ़ाना चाहा कि,इतनेमें सुभानने नींदमें ही एक बड़ी लम्बी सांस ली, जिसे सुनते ही वह घबड़ाकर पीछे लौट पड़ा। बात यह थी कि, सुभानकी वह लम्बी सांस उसको किसी भुजङ्गकी फुसकारके समान भास हुई; और इस-से स्वाभाविक ही वह नवयुवक पीछे हट गया।

अब दोमेंसे किसीको भी भीतर जानेका साहस न हुआ; और वहांसे और कहीं जानेको भी उसके पैर नहीं उठते थे। उस नवयुवकने अपना भय उस स्त्रीसे प्रकट किया, जिससे वह भी कुछ घबड़ाई। भीतरसे जो फुसकार कानोंमें आई थी,

सो वास्तवमें किसी विषधर भुजङ्गकीसी ही थी। इतनेमें सुभानने भीतर एक जमुहाई ली; और वह भी इतने जोरसे कि बाहरके लोग और भी अधिक घबड़ाये; और यह मामला क्या है, सो कुछ उनकी समझमें नहीं आया। अन्तमें वे दोनों वहांसे भगनेहीवाले थे कि, इतनेमें सुभान गिरता-पड़ता हुआ बाहरकी ओर आने लगा। इतनेमें वे दोनों व्यक्ति वहीं एक ओरको खिसक गये। सुभान बाहर आया; और एक बड़ीसी ऐंड़ाई लेकर "ऊँ: राम, राम, हरे राम!" के शब्द ज़ोर ज़ोरसे उच्चारण किये, जिन्हें सुनकर वे दोनों एक दूसरेकी ओर बड़ी विचित्र दृष्टिसे देखने लगे। अन्तमें वह स्त्री उस नवयुवकके कानमें बहुत धीरेसे, किन्तु स्पष्ट स्वरमें कहती है, "आवाज़ पहचानकी है! हमने पहचान ली!" उस पुरुषने सिर्फ गर्दन-भर हिला दी! परन्तु उसका सारा चित्त अब इसीमें लगा हुआ था कि, सुभान किस प्रकार जल्दी अन्दर जावे। शायद सुभान इधर आ न जावे, इसी विचारसे वह और भी अधिक एक कोनेमें छिपने लगा। यह देखकर स्त्री धीरेसे ही कहती है:—

"नहीं, नहीं, उधर नहीं, कहीं बिच्छू-विच्छू काट लेगा, तो फिर..."

वह नवयुवक बिलकुल ही धीमीआवाज़से, किन्तु चिन्ता-पूर्वक कहता है, "चुप चुप चण्डालिन! अरे कहीं उसको यह शंका होगई कि, इधर कोई है, तो न जाने क्या होगा! तू बिलकुल समझती ही नहीं।"

ये शब्द उसने इतने धीमे स्वरसे कहे कि, साथ ही उसने उस स्त्रीकी बांहमें चिमटी न ली होती, तो शायद युवकका उद्देश्य भी उसकी समझमें न आता। परन्तु वे जिस संकटके भयमें थे—कि मन्दिरके भीतरसे निकला हुआ मनुष्य कहीं हमारी ही तरफ न आजाय—वह संकट उनपर नहीं आया। अब शीघ्र ही उन दोनोंने वहांसे चले जानेका विचार किया; और उसी तरफसे पीछेको खिसक जानेवाले थे। इतनेमें उन्होंने सुना कि, भीतर गया हुआ मनुष्य किसीको पुकारकर नींदसे जगा रहा है; और कहता है कि, "चल, अब हमारे चलनेका समय आगया।" यह सुनकर अब स्वाभाविकः ही बाहरके दोनों व्यक्ति इस विचारमें पड़े कि, पहले हम निकल जायँ या इन दोनोंको निकल जाने दें। भीतरके दोनों व्यक्ति नींद लेकर फिर ताज़े होगये थे; और जो लोग बाहर खड़े थे, उनको नींदका मौका ही न मिला था, इसकारण उन दोनोंने सोचा कि, ऐसी दशामें यदि हम पहले चल देंगे; और उसी रास्तेसे पीछे पीछे वे भी दोनों आवेंगे, तो बातकी बातमें वे हमारे पास आजायंगे। यह उनको अभीष्ट न था। इसलिए अब क्या किया जाय, सो कुछ उनकी समझमें नहीं आया। दोनों चिन्तामग्न अवस्थामें जहांके तहां खड़े रहे। भीतरके दोनों मनुष्य जगकर बिलकुल होशियार हो चुके थे; और अब बाहर निकलनेहीवाले थे—यह देखकर उन दोनोंने वहीं खड़े रहनेका निश्चय किया।

इतनेमें सुमान और श्यामा कंधेपर अपनी अपनी कमली डालकर बाहर निकले। उनके निकलते ही बाहरके लोग और भी अधिक छिपनेका प्रयत्न करने लगे। इतनेमें श्यामाकी आवाज़ भी उनके कानोंमें पड़ी, जिसे सुनते ही दोनों एक दूसरेकी ओर एकटक देखने लगे।

तेरहवां परिच्छेद।

श्यामाका साहस।

श्यामा और सुमान, दोनों अपनी अपनी कमली लेकर बाहर निकले। उनके निकलनेके साथ ही उस नवयुवक और उस स्त्री-की ऐसी बुरी अवस्था हुई कि, कुछ पूछिये मत! दोनों ही घबड़ा गये—विशेषतः पुरुष तो ऐसा थर थर कांपने लगा कि, जैसे जूड़ी चढ़ आई हो! दोनोंकी आंखें और कान सुमान और श्यामाकी तरफ लगे हुए थे। उनकी चेष्टासे ऐसा जान पड़ता था कि, सुमान और श्यामा कब वहांसे निकलकर उनकी दृष्टिकी ओट हों? उनकी यह दशा क्यों थी? वह नवयुवक तो बहुत ही उदास दिखाई दे रहा था; परन्तु उन दोनोंको देखते ही इनकी ऐसी बुरी दशा क्यों होगई? जो कुछ भी हो, किन्तु वे बहुत अधिक घबड़ाये हुए थे। क्यों? यह मालूम होनेके लिए इस समय हमारे पास कोई साधन नहीं है।

"चल बे! चल, जल्दी ही बाहर निकल चलें—बस्तीमें चलकर हमको क्या करना है? चल, इधर पीछेकी तरफसे निकल चलें। कहीं वह पटेल न मिल जावे, नहीं तो..."

"मैं भी तो यही कहता हूं कि, इस समय जहाँतक हम लोग बस्तीको बचा सकें, वहांतक अच्छा ही है। यहांतक कि, यह भी किसीको मालूम न होने पावे कि, तुम और मैं, दोनों साथ साथ, इधरसे गये हैं।"

दोनोंके ये शब्द उन बाहरवाले दोनों व्यक्तियोंके कानमें स्पष्ट रूपसे सुनाई दिये; और इतनेहीमें वे घूमकर उनके पास-से आगे निकल भी गये। हां, श्यामाने अवश्य पीछे घूमकर देखा; और फिर आगे चला। यह बात उस पुरुषको मालूम भी होगई। फिर उस नवयुवकको यह भी भास हुआ कि, श्यामाने और भी दो-एक बार पीछे घूमकर देखा। इस प्रकार-का भास होनेपर नवयुवककी अशान्ति और भी बढ़ती हुई दिखाई दी।

इसमें सन्देह नहीं, श्यामाने एक-दो बार पीछे घूमकर देखा अवश्य था। और यह कहना भी मिथ्या न होगा कि, उसको कोई न कोई शंका भी अवश्य हुई थी; और इसीकारण उसने पीछे घूम घूमकर देखा था। हमने कई बार पीछे भी बतलाया है कि, इस लड़केके चञ्चल नेत्रोंसे कोई भी वस्तु छूट-कर बची नहीं! वह उन दोनोंके पाससे जब निकला था, तभी उसे भास हुआ था कि, मन्दिरकी दीवालके इस कोनेमें कुछ

काला; और सफेदसा दिखाई देता है। कोई न कोई खड़ा अवश्य है—फिर चाहे वह मनुष्य हो या कोई जङ्गली जानवर! कुछ दूर चलनेपर उसकी यह इच्छा भी हुई कि, क्या है, सो देखना चाहिये; लेकिन उसने समझा कि, सुभान इस बातके लिए राजी नहीं होगा, अतएव उसने अपनी इच्छाको वैसा ही दबा दिया। तथापि वह बार बार पीछे घूमकर देखता जाता था, इस मतलबसे कि, सुभान जब मुझसे कुछ पूछेगा, तो उसे बतला दूंगा। इससे शायद मेरी तरह उसको भी इच्छा हो कि, देखें पीछे क्या है; और इस तरह कदाचित् वह भी पीछे घूम पड़े।

श्यामाकी यह आशा बिलकुल व्यर्थ नहीं गई। सुभानने जब देखा कि, यह पागलकी तरह बार बार पीछे देखता है, तब उसने श्यामासे इसका कारण जानना चाहा। श्यामाने अपनी शंका उससे प्रकट की। सुभानने पहले तो उसको हँसी-में ही उड़ा दिया; परन्तु फिर पीछेसे कहा कि, "होगा कोई, हमको इससे क्या मतलब?" यह कहकर उसने श्यामाको दबा दिया; और आगे चल दिया। श्यामाको जो थोड़ीसी आशा उत्पन्न हुई थी, सो भी अब चली गई। इससे उसको बेमनसे ही सुभानके साथ आगे बढ़ना पड़ा। एक बार उसने यह भी कहा कि, "मैं अकेला ही दौड़ता हुआ जाता हूं; और देखे आता हूं।" पर इससे भी कुछ फल न हुआ। सुभान-ने उसको डांट दिया। इससे अवश्य ही श्यामाको अपनी

बाल-जिज्ञासा भीतर ही भीतर दाब रखनी पड़ी। बेचारेको यदि कहीं यह मालूम होजाता कि, मेरी यह जिज्ञासा, कुछ देर बाद, एक भिन्न मार्गसे ही तृप्त होगी, तो क्या ही आनन्द हुआ होता!

अस्तु। वे आगे चले गये। इधर उस नवयुवक पुरुष और उस स्त्रीको थोड़ासा धीरज हुआ। जो कुछ भय उनको था, सो अब दूर होगया। उस नवयुवकने बीसियों बार बड़े ध्यानसे दूरतक नज़र फेंकी होगी कि, श्यामा और सुभान अब ओझल हुए या नहीं। अन्तमें जब उसने देख लिया कि, अब वे दोनों बहुत दूर निकल गये, इतने कि, दृष्टिसे परे हो गये, तब उसको शान्ति मिली; और संकटसे छूटनेकी उसने एक लम्बी सांस छोड़ी। इसके बाद फिर वह अपने साथकी स्त्रीसे बोला, "कहां जाते होंगे? ये भी उसी दुष्टकी ही तरह हैं न? किन्तु हम लोगोंके बाद क्या हालत गुजरी होगी? क्योंरी, एक आठ दिनमें ही हम लोगोंकी कितनी विचित्र दशा हुई? नहीं तो मुझे ऐसा"

वह स्त्री कुछ देरतक बिलकुलही नहीं बोली। किन्तु फिर एकदम कहती है, "पर अब केवल खड़े रहनेसे ही काम नहीं चलेगा। आगे चलनेके लिए तो कहते हो शक्ति नहीं। फिर यहीं खड़े रहनेसे काम कैसे चलेगा? हम लोग अभी कितना कम आये हैं, सो जानते ही हो।"

"सो सब सच है, पर अब मेरे पैर ही नहीं उठते हैं, इसके लिए मैं क्या करूं? मैं अब भीतर मन्दिरमें जाकर बैठूंगा। जो

कुछ होना हो, सो हो। कुछ थकावट दूर हो जाय, तब फिर आगे चलनेकी बात हो!"

"ठीक! ठीक!" वह स्त्री कहती है, "और इसी तरह मंजिल-दर-मंजिल चलकर वहां पहुंचोगे? मेरी समझमें इस जन्ममें तो यह हो नहीं सकता!"

"चाहे जो कह। मुझमें अब इस समय यहांसे हिलनेकी ताब नहीं। और पागल कहींकी, क्या तू यह नहीं समझती कि, अब सुबह होनेमें भी कुछ देर नहीं। सुबह हो जानेपर फिर हम लोग मार्ग चल ही कैसे सकते हैं? कोई पहचानका मिल जायगा, तो फिर कैसा होगा? और कुछ हो नहीं सकता, हम तो अब सारे दिन यहीं रहेंगे; और फिर शाम होनेपर आगे चलेंगे।"

इसके आगे स्त्री फिर कुछ नहीं बोली। बात यह थी कि, उस पुरुषका कहना ही कुछ ऐसी डांटका था; और इसके सिवाय उसके कथनमें स्त्रीको कुछ सत्यता भी जान पड़ी। इसकारण कुछ देरके लिए वह चुप होगई। इसके बाद फिर उस पुरुषकी ओर देखकर कहती है:—

"परन्तु, फिर इस मन्दिरमें ही दिन कैसे काट सकते हैं? यहां बस्तीके लोग आते ही जाते होंगे। इसके सिवाय, जैसे ये दोनों आकर यहीं सोये थे, वैसे ही अन्य कोई मुसाफिर आकर नहीं रहते होंगे, इसका क्या ठीक?" परन्तु उसके इस कथन-पर उस नवयुवकने कुछ भी ध्यान नहीं दिया। वह स्वयं ही

आगे बढ़कर आया; और मन्दिरमें चला गया। लाचार, उसके पीछे पीछे स्त्रीको भी जाना पड़ा। उसकी कांखमें एक छोटीसी गठरी थी। उससे तुरन्त ही उसने एक चादर निकाली;और नीचे बिछाकर उसपर लेट रहनेके लिये उस पुरुषसे प्रार्थना की। स्त्रियोंकी चादरपर लेटनेका अवसर पुरुषोंको अच्छा नहीं लगता, किन्तु यह मौका इस प्रकारके विचार करनेका नहीं था, अथवा और कोई कारण हो—जो कुछ हो—परन्तु उस नवयुवकको उस समय उस चादरपर लेटनेमें कोई संकोच नहीं हुआ। उसने न तो शरीरके कपड़े उतारे; और न सिरकी पगड़ी, बल्कि वैसा ही लेट रहा। कुछ देर तो उसके नेत्र चटकीले दिखाई देते रहे; परन्तु फिर वे आप ही आप बन्द होने लगे। अन्तमें वे बिलकुल मुँद गये; और उसको प्रगाढ़ निद्रा आगई। वह स्त्री बड़े प्रेमसे उसके पायताने बैठकर पैर दाबने लगी।

परन्तु अब हम इनको तो यहीं छोड़कर आराम करने दें; और अपने अन्य दोनों मुसाफिरोंकी ओर कुछ ध्यान देवें।

सुभान और श्यामा, रातको खूब नींद लेकर, अब नवीन उत्साहसे भर गये थे। अतएव अब वे बड़े उत्साहके साथ मार्ग-क्रमण कर रहे थे। श्यामाके सिरमें अभी यही विचार चक्कर काट रहा था कि, “मन्दिरकी दीवारके पास मैंने देखा कुछ अवश्य था; परन्तु वह क्या था, इसकी पूरी जांच नहीं कर सका।” बस, अभीतक वह इसी धुनमें निमग्न था। परन्तु सुभानके सिरमें कोई दूसरे ही विचार चक्कर मार रहे थे। वह

इस समय इन विचारोंमें डूबा हुआ था कि, इन दस-पन्द्रह दिनोंके बीचमें हमारे किलेपर क्या क्या घटनाएं बीत चुकीं; और इन सब घटनाओंका अन्तमें क्या परिणाम होगा? वह मन ही मन कह रहा था :—

"हमारे सरकारका कैसा प्रभाव था! पर, आज देखो, उनपर भी कैसा विचित्र अवसर आगया है! बीजापुरके दरबारमें उनका कितना वज़न था; परन्तु आज उनको यह भी सोचनेका अवकाश नहीं है कि, अब हमारी क्या गति होगी; और क्या नहीं! नाना साहब न जाने कहां चले गये? आज सुबह...... क्या कहा जाय! जबसे यह सुना, तबसे तो सरकारकी तबीयत और भी विचित्र होगई! मुझे इधर भेजा है, पर न जाने इससे भी कुछ लाभ होता है या नहीं, क्या बतलाऊं? आज कितनी ही पीढ़ियोंसे जो थानेदारी चली आरही है, वही अब जायगी! इस ढलती उम्रमें इस कठोर बुड्ढे पर ऐसा विचित्र मौका आवेगा! उस दिन नाना साहबपर वे खूब बके-झके! मैंने उसी दिन कह दिया था कि, अब दिन अच्छे नहीं! नाना साहब अब अधिक दिन क़िलेपर नहीं रह सकते थे, यह तो निश्चय था। बादशाहके यहांसे उनको बुलावा अवश्य आया होता; और उन्होंने भी साफ ही लिख दिया होता कि, हम नहीं आवेंगे। और कदाचित् वे गये भी होते, तो और भी अधिक भयंकर परिणाम होनेकी सम्भावना थी। भरे दरबारमें भी उन्होंने सलाम इत्यादि नहीं किया होता, अथवा

अत्यन्त उद्दण्डतापूर्ण व्यवहार रखा होता। इससे न जाने क्या भयंकर संकट उपस्थित होजाता। ये सब बातें मैं पहले ही जानता था। उनकी आदत ही ऐसी है! इसलिए एक तरहसे जो हुआ, सो अच्छा ही हुआ। किन्तु अब जो होरहा है, वह और भी विचित्र है। इसकी अब कहांतक नौबत पहुंचेगी, इसका कोई ठीक-ठिकाना नहीं। उस बदमाश सर्फोजीने उस रातको जैसा कुछ कहा, सो क्या सचमुच ही सब वैसा ही होगा भी? यदि सारा षड्यंत्र जैसेका तैसा सफल हो गया, तो बहुत ही भयंकर, अत्यन्त भयंकर, घटना घटित होगी। और वह सफल भी हो जायगा, इसमें बिलकुल शंका नहीं।"

यहांतक जब उसके विचार आये, तब उसके रोंगटे खड़े होगये। सर्फोजीके ऊपर उसे अत्यन्त क्रोध आया। उसने सोचा कि, "जो कुछ होना हो, सो हो! लेकिन एक बार उस सर्फोजी-को अवश्य यम-धाम पहुंचाना चाहिए था। आवजी पटेल, मैं तथा; और भी एक-दोने मिलकर यदि उसे नष्ट कर डाला होता, तो इसमें कोई बुराई नहीं थी। परमात्माके घरमें इसके लिए कोई पाप नहीं लगता। दुष्ट! दुष्ट! नीच कहींका! जब एक बार यह मालूम होगया कि, यह इतना नीच है, तब फिर हमारे सरकार चुप कैसे बैठे रहे! पेड़में बँधवाकर इसको तुरन्त ही मरवा डालना चाहिए था!" इस प्रकारके विचार भी उसके सिरमें घूमने लगे; और अब उनमें वह बिलकुल ही निमग्नसा होगया। इतनेमें कुछ कुछ उजेला होने लगा; और श्यामाको

ऐसा आभास हुआ कि, वहांसे कुछ दूरपर बहुतसे लोगोंका एक गिरोह आरहा है। उसके आनेकी आहट भी कानोंमें पड़ी, जैसे कोई खरगोश निश्चिन्त होकर दूब चरनेमें लगा हो; और फिर अचानक उसके कानोंमें कोई आवाज आवे, जिससे उसके कान खड़े हो जायँ; और वह चौकन्ना होकर गुंजाके समान अपनी लाल लाल आँखें चारों ओर फिरावे—बस, यही हाल उस समय श्यामाका हुआ। उसे कुछ और ही मामला समझ पड़ा। उसके ध्यानमें आया कि, सामनेसे जो लोग आरहे हैं, वे कोई साधारण बटोहियोंके समान नहीं हैं। थोड़ी ही देरमें उसे स्पष्ट दिखाई दिया कि सामनेसे जो गिरोह आरहा है, उसमें कोई सौ-सवा सौ आदमियोंसे कम नहीं हैं—उनमें भी कुछ घोड़ोंपर हैं, कुछ पैदल हैं। वे आनेवाले कुछ चुपके भी नहीं आरहे हैं, किन्तु खूब शोर-गुल मचाते हुए, हँसते हँसते आरहे हैं। ये आनेवाले लोग हैं कौन? इसकी उसे शंका नहीं थी। वह जानता था कि, यह किन लोगोंका गिरोह है। अतएव वह तुरन्त ही सुभानसे कहता है:—"सुभान दादा, यह मुसलमानोंकी एक टोली आरही है। न जाने कौन हैं; और कौन नहीं! इसलिए अच्छा होगा कि,हम लोग ज़रा इनसे बच-कर एक ओरसे निकल जायँ।"

किन्तु सुभानके कानमें ये शब्द नहीं पड़े। वह अपना वैसा ही चला जारहा था। क्योंकि अबतक वह अपनी उपर्युक्त विचार-परम्परामें ही मग्न था। श्यामाने फिर पुकारकर उससे

कहा, तब वह समझा; और कहता क्या है—"अरे जाने भी दो दुष्टोंको ! चाहे कोई हों ! हमें क्या मतलब ! हम अपना रास्ता छोड़कर क्यों जावें ? रास्ता छोड़कर यदि जायँगे, तो उनको और भी शंका होगी, फिर और भी अधिक वे पीछा करेंगे। चलो, हम अपने चुपके निकल जायं।" इतना कहते हुए वे चार कदम आगे बढ़े थे कि, इतनेमें सामनेके लोग बिलकुल ही नजदीक आगये। सुभान यदि राजी भी हो जाता, तो भी अब रास्ता छोड़कर जा नहीं सकते थे। हां, उस गिरोहको मार्ग देनेके लिए वे दोनों एक ओर होकर खड़े होगये।

सामनेसे जो लोग आरहे थे, वे सचमुच ही सौ-सवा सौ आदमी थे। उनमें लगभग बारह तो घोड़ोंपर थे; और बाकी पैदल चल रहे थे। पीछे दस-बीस गाड़ियां सामानसे लदी आरही थीं। तम्बू-कनात-रावटियोंकी भी कोई पन्द्रह-बीस गाड़ियां थीं। छोटीसी एक पलटन ही थी, इसमें सन्देह नहीं। अश्वारोही लोग आपसमें कुछ बातचीत करते और हँसते हुए जारहे थे। उनका सारा सम्भाषण विशुद्ध उर्दू-भाषामें था। उसमें "सुलतानगढ़ सुलतानगढ़" का शब्द बार बार सुनाई देरहा था। और एकबार चन्द्राबाई, नाना साहब, हरामज़ादा सर्फोजी" इस प्रकारके नाम भी सुभानके कानमें पड़े। इससे अवश्य ही उसका पूरा पूरा ध्यान उधर गया। यही नहीं, बल्कि उसके कानमें और भी कुछ ऐसे वाक्य पड़े कि, जिनके कारण उसका ध्यान उधर जाना अनिवार्य था। उन वाक्योंने उसे पागल ही

बना दिया। उसने सोचा कि, जिस कामके लिए मैं जारहा हूं, उसे छोड़कर अब एकदम लौट ही जाना चाहिए; और इनके आनेका समाचार इसी दम जाकर सरकारको बतलाना चाहिये। बतलाना अत्यन्त आवश्यक है। परन्तु सरकारने जो कार्य बतलाया था, वह भी अत्यन्त महत्वका था। और इस समय जो बात हमने देखी और सुनी है, वह भी जितनी शीघ्रतासे सरकारको मालूम हो जाय, उतना ही अभीष्ट है—यह अत्यन्त आवश्यक है। क्योंकि जो शब्द उसने सुने थे, वे अत्यन्त भयंकर थे। करता क्या? उसको कुछ सूझ ही न पड़ा। अन्तमें वह श्यामाकी ओर देखकर बोला, "श्यामा, इस समय अत्यन्त विकट प्रसंग आगया है; और इसको बहुत जल्द, अभीका अभी, जितनी जल्दी होसके, किलेपर जाकर बतलाना चाहिए। जिस कामके लिए मुझे सरकारने भेजा है, उसीके समान यह भी अत्यन्त शीघ्र होना चाहिए।"

श्यामा एकदम कहता है:—

"दोनोंको दोनों ही काम करना चाहिए। मैं किलेपर जाता हूं; और तुम अपने कामपर जाओ।" सुभान न जाने क्या सोचकर कुछ ठिठका।

फिर एकदम उस लड़केसे कहता है, "नहीं, नहीं, मैं ही किलेपर जाऊंगा। तू यह लिफाफा लेकर जा; और......"

कहते कहते उसने लिफाफा निकाला, जो उसने अपने मुरैठेमें बड़ी मज़बूतीसे छिपा रखा था। इतनेमें, दुर्भाग्यवश, उसी गिरोहका एक सिपाही आनिकला, जो पीछे रह गया

था। उसका आना था; और इधर सुभानका अपने मुरैठेसे लिफाफा निकालकर उस लड़केके सामने करना! दोनों बातें एक ही समयमें हुईं? सुभान लिफाफेको श्यामाके सामने किये हुए यह बतला रहा था कि, वह लिफाफा कहां ले जाकर किसको देना होगा कि, इतनेमें वह सिपाही नजदीक ही आ-पहुंचा। उन दोनोंका उसकी ओर पूरा पूरा ध्यान भी नहीं जाने पाया था कि,उसका ध्यान, दुर्भाग्यवश,उनकी ओर चला गया। उसने तुरन्त ही ताड़ लिया कि, यहां कुछ गुप्त भेद है। अतएव वह एकदम चिल्लाकर उनसे कहता है:—"ऐ हरामज़ादो! तुम कौन हो? यहां क्या करते हो? यह लिफाफा कैसा है? देखें!

सचमुच वह मौका ही ऐसा अचानक आपड़ा कि, जिससे सुभान बहुत अधिक चकरा गया; और वह लिफाफा उसके हाथसे छूट पड़ा।

"ऐ हरामज़ादो! काफ़िर!"......इत्यादि विशेषणोंका उच्चा-रण करते हुए वह सिपाही उस लिफाफेको उठानेके लिये झुकने-हीवाला था कि, इतनेमें श्यामाने उसे तुरन्त ही उठा लिया; और इतने ज़ोरसे उसे लेकर वह वहांसे चम्पत हुआ कि, वह सिपाही कुछ कर ही न सका—उसको अवकाश ही न मिला कि, वह उसके पीछे दौड़नेकी बात सोचे; और अपने पैरोंको गति देवे—इतनी शीघ्रतापूर्वक वह वहांसे भगा, जैसे कोई बाघिन, बधिकके भयसे,अपने छौनेको मुँहमें दबाकर, उछलती-कूदती हुई चली जाती है—उसी प्रकार श्यामा वहांसे भग चला।

वह मुसलमान सिपाही उसके पीछे लगता अवश्य, पर जिस नौकरीपर वह उस समय था, उसको छोड़कर जाना उसके लिए उचित नहीं था, इसके सिवाय, सुभान उसके पंजेमें था ही। ऐसी दशामें शायद उसने यही सोचा हो कि, सारा क्रोध इसीको दिखाकर बदला निकाल लो। श्यामाकी वह चपलता देखकर सुभानको भी अत्यन्त आश्चर्य हुआ; और वह अभी अचम्भेमें ही था कि, इतनेमें एक और मुचण्डा आगया; और सुभानका वहांसे भगना असम्भव होगया। दोनोंने मिलकर उसे पकड़ लिया; और एकने उसे तड़ातड़ मारना शुरू किया। उसने भी काफी हाथ-पैर मारे। परन्तु इतनेहीमें उनके कोलाहलसे, आगे गये हुए लोगोंमेंसे कुछ लोगोंका ध्यान इधर आकर्षित हुआ, अतएव उनमेंसे एक-दो और दौड़ आये। फिर क्या कहना है? सुभानके ऊपर गालियों और छड़ियोंकी बौछार शुरू हो गई। फिर अन्तमें उसे कैद करके वे लोग आगे ले चले।

चौदहवां परिच्छेद ।

गड़बड़में गड़बड़ ।

सुभानकी यह दशा हुई। परन्तु उसमें भी सन्तोषकी बात उसके लिए इतनी ही थी कि, श्यामाने बड़ी अद्भुत चपलता दिखलाकर उस मुचंडेको खूब ही छकाया। उस लिफाफेकी ही उसके मनको चिन्ता थी; क्योंकि सरकारने अत्यन्त विश्वास-पात्र समझकर उसके हाथमें वह लिफाफा दिया था। अतएव वह लिफाफा यदि उस मुचंडेके हाथमें पड़ गया होता, तो न जाने कौनसा भयंकर संकट आजाता! क्योंकि यवन लोग उन दिनों सरकार साहबके पीछे पड़ गये थे। ऐसी दशामें चाहे कोई छोटी ही बात क्यों न होती, उसीको लेकर वे उपद्रव मचा सकते थे। अस्तु।

वे यवन जिस समय उसको धक्के देते हुए,गालियां देते हुए; और उसकी हँसी करते हुए उसको आगे लिए जाते थे, उस समय स्वामिभक्त सुभानके मनमें उपर्युक्त आशयके ही विचार आरहे थे। वे उसकी गर्दनमें धक्के लगाते हुए उसको आगेकी ओर ढकेल रहे थे; और साथ ही इस प्रकारके अनेक प्रश्न उससे कर रहे थे—"तू कहां जारहा था?" "लिफाफा किसका था?" "कहां लिये जारहा था?" "किसने दिया था?" "किसका नौकर है?" इत्यादि। परन्तु वह किसी मूक पुरुषकी तरह बिल-

कुल चुप था। उन्होंने हर तरहसे उसे तङ्ग किया; परन्तु वह एक अक्षर भी नहीं बोला। ज्यों ज्यों वह नहीं बोलता गया, त्यों त्यों वे उसे और भी अधिक सताते गये। सुभानने जब देखा कि ये बहुत अधिक कष्ट देरहे हैं, तब उसने भी एक बार आस्तीनें ऊपर समेटकर और आँखें तथा भौंहें ऊपर चढ़ाकर अत्यन्त उग्र स्वरूप दिखलाया। जो आदमी उसे धक्का देरहा था, उसको उसने एक ऐसा मज़ेदार धक्का दिया कि,वह ज़मीन-पर गिर गया। इसके बाद दूसरे मुचंडेने उसको पकड़ लिया। अस्तु। इस प्रकार सुभानने जब अपना उग्र स्वरूप दिखलाया, तब उन मुचण्डोंकी मस्ती कुछ कम होगई। हां, मुँहसे फिर भी वे खूब बकते-झकते रहे। सुभान बहुत देरसे सोच रहा था कि, एक झटका देकर मैं इनके हाथसे छूटकर निकल भागूं; परन्तु उसको विश्वास नहीं था कि, इस प्रकार छूटकर भगनेमें उसको सफलता होगी। इसके सिवाय उसने यह भी सोचा कि, अभी छूटकर भागनेकी अपेक्षा तो यही अच्छा है कि,कुछ समय-तक इनके साथ ही रहूं; और फिर पीछेसे रात-बिरात इनकी आँख बचाकर भाग जाऊं। क्योंकि यह उसको निश्चय था कि, ये लोग किलेपर ही जारहे हैं, और वह यह भेद भी लेना चाहता था कि, ये क्यों जा रहे हैं; और वहां जाकर क्या करेंगे। अत-एव जबतक यह भेद वह नहीं पा लेता, तबतक उसके छूटकर भगनेमें कोई विशेष बात नहीं थी। इसलिए उस समय उसने छूटकर भागनेका विचार छोड़ दिया।

आगेके लोग बहुत शीघ्रतापूर्वक नहीं चल रहे थे; और सुभानको पकड़कर पीछेके लोग ज़रा तेज़ चलने लगे थे, इस-कारण वे बहुत जल्द आगेवालोंमें जा मिले। इसके बाद उन्होंने अपने मुख्य सरदारके पास उसे लेजाकर सब हाल बतलाया कि, इस मनुष्यको हमने इस प्रकार कैद किया है, इसके पास सील-मुहर किया हुआ एक लिफाफा था। उस लिफाफेको, बन्दरकी औलाद एक लड़का, जो इसके साथ था, अचानक लेकर भाग गया। किन्तु इसको हम लोग कैद कर लाये हैं। अवश्य ही उस मुचंडेको यह बतलाते लज्जा मालूम हुई कि, हमारे देखते हुए वह लड़का लिफाफा लेकर भाग गया। इस-लिए उसने उसके साथ इतना और कह दिया कि, जब वह लड़का भग गया, तब हमने देखा; और फिर सन्देहके कारण इसको पकड़ लिया। फिर भी उसकी बड़ी हँसी हुई। तथापि उसकी हँसी करनेका वह समय नहीं था। उस समय तो उस कैद किये हुए मनुष्यको तंग करके, जो कुछ भेद उससे मिल सके, वह भेद ले लेनेका ही मौका था। इसकारण उस सर-दारने यही हुक्म, विशुद्ध उर्दू भाषामें, दिया कि, "अच्छा, ले चलो इसको, आगे जहां छावनी डाली जायगी, वहीं इसकी जांच होगी। ऐ करीमबख़्श, तू आगे जाकर छावनीकी जगह देखकर ख़ेमा लगा। दो घंटे वहीं ठहरकर तब आगे चलेंगे। चलो ले चलो, इस नमकहरामको देख लेंगे!"

करीमबख्श और उसके साथ अन्य दस-बारह आदमी, तथा

ख़ेमेकी दो बड़ी बड़ी गाड़ियां ज़रा शीघ्रतापूर्वक आगे बढ़ीं। करीमबख़्श बहुत आगे निकल गया। छावनीके लिए स्थान देखते देखते वह उसी गोटेश्वरके मन्दिरके पास पहुंचा। वहां उसने, बस्तीके बाहर, छावनी लगानेका बड़ा अच्छा मौका देखा; और ठीक महादेवजीके मन्दिरके सामने ही मुख्य तम्बू लगानेका हुक्म दिया। उस हुक्मको सुनते ही एक सिपाहीने कहाः—"लेकिन यह तो हिन्दुओंका मन्दिर है!" उन शब्दोंको सुनते ही करीम-बख़्श उससे घुड़ककर कहता हैः—

"क्यों बे! क्या तू हिन्दुओंकी औलाद है? जो तुझे हिन्दुओं-के मन्दिरकी इतनी फिक्र है! मैं तो मन्दिरमें जाकर पेशाब करूंगा। वाह! मन्दिर भी क्या ही अच्छा बना है! चलो, लगाओ तम्बू जल्दी! तबतक मैं मन्दिरमें जाकर हुक्का पीता हूं। अरे अहमद! हुक्का तो ला भाई! अल्लाः! अल्लाः!"

यह कहकर करीमबख़्श कल्लोंपर हाथ फेरते हुए शीघ्र ही मन्दिरकी ओर गया। इतनेमें भीतरसे चूड़ियोंकी आवाज़ आई। पिछले परिच्छेदमें जिस स्त्रीका ज़िक्र आया है, वह इस समय अन्दर रसोई बनानेकी तैयारीमें थी। सामान इत्यादि लाकर रखा था। करीमबख़्श और उसके साथके लोगोंके बाहर आनेकी आहट जबसे उसने सुनी थी, तबसे वह खड़ी हुई थर थर कांप रही थी। उसके पास ही वह नवयुवक भी खड़ा था। दोनों अत्यन्त घबड़ाहटकी हालतमें थे। सुभान और श्यामाके रहते समय जो संकट उनको मालूम हुआ था, उससे कहीं अधिक

संकट उनको इस समय जान पड़ा। दोनोंहीकी आँखें ज़मीन-की ओर लगी हुई थीं। स्त्रीने अपना मुख बिलकुल ढक लिया; और जान पड़ता था कि, पुरुष भी यही चाहता था कि, मैं भी इसीकी तरह हो जाऊं तो अच्छा हो! दोनोंका हृदय धड़क रहा था। अहमद एक बिछौना और हुक्का लेकर भीतर आया। उसके पीछे पीछे करीमबख़्श भी आया। भीतर आते ही अहमद उस स्त्री और पुरुष, दोनोंको देखकर ख़ूब ज़ोरसे हँसता हुआ कहता है—"जनाब, यहां तो आशिक-माशूक दिखाई दे रहे हैं!"

करीमबख़्श एकदम एक कदम पीछे हटा; और "क्या! ज़नाना?" कहकर तुरन्त ही पीछे लौट गया। इसके बाद उसने बाहर ही पेड़के नीचे बिछौना डालनेके लिए कहा। अहमदने बिछौना डालकर हुक्का दे दिया; और मसनद-तकिये भी रख दिये। करीमबख़्शने हुक्का गुड़गुड़ाते हुए कुछ सोचकर अहमदको बुलाया; और कहा कि, भीतर जाकर उस आदमीसे कह दो कि, "यहां ख़ां साहबकी छावनी पड़ेगी। तुम कहीं दूर गांववांवमें जाकर रहो।"

भीतर उन दोनोंके मनमें भी यही विचार आरहा था। दोनों ही एक दूसरेसे खुसफुसाते हुए सामान इत्यादि इकट्ठा करने; और किसी न किसी प्रकार वहांसे चल देनेका विचार कर रहे थे। इतनेमें अहमदने दरवाजेके पास आकर, उस नव-युवकको ज़ोरसे पुकारकर करीमबख़्शका सन्देशा कहा, जिसे सुनते ही उस पुरुषको बड़ा आनन्द हुआ। सामान इत्यादिकी

बहुत चिन्ता न करते हुए जल्दी जल्दीसे उन्होंने अपना डेरा-डंडा समेटा; और दोनों बाहर चलनेको तैयार होगये। स्त्रीने अपनी साड़ीसे अपना मुख बिलकुल ढक लिया था। परन्तु जिस स्त्रीका मुंह ढका होता है, उसके देखनेकी और भी आतुरता बढ़ती है। उसमें भी मुसलमान लोग उस समय मराठा स्त्रीको देखनेमें विशेष आनन्द मानते थे। अहमद सन्देशा देकर अभी दरवाजेसे अलग नहीं हुआ था कि, उसे उस स्त्रीकी सूरत देखनेकी बहुत इच्छा हुई। पहले वह बिलकुल दरवाजेके बीचहीमें खड़ा था, फिर कुछ एक ओर हट गया! किन्तु उसकी आँखें बिलकुल स्त्रीकी ही ओर लगी हुई थीं। स्त्रीने जब यह देखा कि, वह देख रहा है—बिलकुल दरवाजेमें ही खड़ा हुआ है—तब वह कुछ पीछेको हटने लगी; और उस पुरुषके कानमें धीरेसे कहा कि, इससे ज़रा अलग हटनेको कहो। उस सूचनाको पाकर नवयुवकने अपनी सुन्दर और मधुर वाणी-से, अदबके साथ, अहमदसे ज़रा हट जानेको कहा। अहमद हट गया, परन्तु अब वह उस स्त्रीकी ओर देखना बन्द करके पुरुषकी ही ओर बड़े ध्यानसे देखने लगा। कह नहीं सकते कि, उसके मनमें क्या बात आई। जो कुछ हो। अहमद ज्यों ज्यों उस नव-युवककी ओर देखता, त्यों त्यों वह नवयुवक उसकी नज़र बचानेकी कोशिश करता; और बीच बीचमें यह ताड़नेके लिए, कि अहमदकी नज़र मेरी ओर तो नहीं, एक-दो बार उसने उसकी ओर आंख छिपाकर देखा भी। अस्तु। करीमबख़्श जिस वृक्षके

नीचे बैठकर हुक्का पीरहा था, उसी ओरसे बस्तीकी तरफ जानेका मार्ग था, परन्तु वह स्त्री और पुरुष, दोनों उस ओरसे न जाकर एक दूसरी ही ओरसे जाने लगे। अहमद बराबर दोनोंकी ओर देख रहा था, बल्कि पुरुषकी ओर विशेष रूपसे। वे दोनों अभी बहुत दूर नहीं गये थे कि, करीमबख़्शके पास जाकर अहमद्ने उसके कानमें कुछ कहा। उसने भी कुछ पूछा, तब "हुज़ूर, जी हुज़ूर" करते हुए अहमद्ने फिर कुछ कहा। इसपर करीमबख़्शने गर्दन हिलाई; और अहमद शीघ्रतापूर्वक दौड़ता हुआ उस पुरुषके पास गया; और बोला, "अजी, जनाब-आली, आपको हुज़ूरने ज़रा बुलाया है।" अहमद्ने यह प्रार्थना अत्यन्त नम्रतापूर्वक और अदबके साथ की। अब, जावें या न जावें, यह विचार आया। जाते हैं, तो क्या होगा? और नहीं जाते, तो क्या होगा? यह सब सोचनेके लिये वहां अव-काश नहीं था। कुछ न कुछ शीघ्र ही निश्चय कर डालना आव-श्यक था। अहमद्ने आकर सन्देशा इतनी नम्रतापूर्वक कहा था कि, इस समय इन्कार करना मानो जान-बूझकर और भी सन्देह बढ़ाना तथा अपने मार्गमें बिना कारण विघ्न उपस्थित करना था। यह सोचकर वह तुरन्त ही अहमदको, उसीकी भाषामें, उत्तर देता है:—"मुझे बुलानेका सबब क्या है? मैं इसको बस्तीमें पहुंचाकर जल्दी ही लौटता हूं।"

ये वाक्य मानो उसने अपने अन्दर बहुतेरा साहस लाकर कहे। परन्तु अहमद्ने फिर उससे नम्रतापूर्वक कहा, "जनाब-

मन्! ज़नानेको ज़रा यहीं पेड़के नीचे बिठा दीजिए। आपको वहां कुछ देरी नहीं लगेगी।" इतना कहनेपर फिर क्या इलाज था? उसने एक बार उस स्त्रीकी ओर देखा; और यह पक्की तौरपर समझकर, कि अब एक अक्षर भी कहनेको गुंजाइश नहीं रही, अहमदके साथ होलिया। नियमानुसार बन्दगी इत्यादि होनेपर करीमबख़्शने "आइये, बैठिये" कहकर उसका स्वागत किया। नवयुवक बड़े गड़बड़में पड़ा। अहमद और करीमबख़्श, दोनों ही बड़े ध्यानसे उसकी ओर देख रहे थे, इसकारण उसकी और भी विचित्र दशा हो रही थी।

अन्तमें करीमबख़्शने उससे "आप कहांसे आये", "कहां जायँगे" इत्यादि प्रश्न किये। इस प्रकारके प्रश्नोंके उत्तर देनेके लिए वास्तवमें उस नवयुवकको पहलेहीसे तैयार रहना चाहिए था, किन्तु प्रश्नोंके उत्तर शीघ्रतापूर्वक देना तो दूर रहा, नवयुवक और भी अधिक घबड़ाता हुआ दिखाई दिया। अन्तमें, उसने कुछ उत्तर दिये भी। परन्तु प्रश्नकर्त्ता लोग बातकी बातमें ताड़ गये कि, ये उत्तर सत्यसे बहुत दूर हैं। फलतः उन्होंने और भी अनेक प्रश्न, एकके बाद एक, किये। नवयुवकने उन प्रश्नोंके भी उत्तर, जो उसे सूझ पड़े, दिये। परन्तु उन उत्तरोंसे करीमबख़्शको सन्तोष नहीं हुआ, बल्कि अहमद और वह, दोनों, बीच बीचमें एक दूसरेकी ओर देखकर हँसते जाते थे। इससे स्पष्ट मालूम होता था कि, उस नवयुवकके एक उत्तरपर भी उनका विश्वास नहीं होता था; और उसको

अधिकाधिक गड़बड़में डालनेके लिए ही वे प्रश्नपर प्रश्न कर रहे थे !

इतनेमें वह नवयुवक बीचहीमें उठ खड़ा हुआ; और "ज़नाना खड़ा है, जाता हूं" कहकर वहांसे चलने लगा। परन्तु करीमबख़्शने उसे रोककर कहा, "आपने मेरे प्रश्नोंके उत्तर ठीक ठीक नहीं दिये हैं, इसलिए ख़ाँ साहब जबतक न आजावें, जाने नहीं दे सकते। आप ज़नानेको खुशीसे मन्दिरमें बैठने दीजिए; और रसोई-पानी, जो कुछ बनाना हो, बनाइये—ख़ां साहब भी आ ही रहे हैं। उनसे अपना सच्चा सच्चा हाल बतला दीजिए; और फिर चले जाइये।"

कहते हैं कि, "छिद्रेष्वनर्थाबहुली भवन्ति," सो बिलकुल ठीक है। उस पुरुषको उस समय इस लोकोक्तिका बहुत अच्छा अनुभव हुआ। उसने सोचा कि, एकके हाथसे तो छूटने नहीं पाये; और अब यह कहता है कि, दूसरा ख़ां साहब आजाय, तब जाना—तबतक बैठो यहीं। क्या करता बेचारा? उसने अपनी ओरसे बहुत प्रयत्न किया, परन्तु करीमबख़्शका उत्तर बराबर वही बना रहा। बेचारेने उस स्त्रीको वापस बुलाया; और मन्दिरमें जाकर बैठनेके लिए कहा, तथा स्वयं भी मन्दिरमें गया। वहां स्त्रीसे बहुत देरतक धीरे धीरे बातें करता रहा। इसके बाद फिर वह बाहर आया। फिर भीतर गया। फिर बाहर आया। ऐसा जान पड़ता था कि, अहमदका सारा ध्यान उसीकी ओर है। वह पुरुष चाहे भीतर जाता; और चाहे बाहर

आता, उसकी दृष्टिसे बच नहीं सकता था। उस पुरुषने उप-र्युक्त रीतिसे चार-पांच चक्कर लगाये, इतनेमें तम्बू लगानेका कार्य समाप्त होगया; और पीछेके लोग भी आगये। उनके आते ही करीमबख़्श उठा। पलटनके मुख्य सरदारको तीन बार सलाम किया। तम्बू तैयार होनेकी ख़बर दी; और घोड़ेसे नीचे उतरनेकी प्रार्थना की। ख़ां साहब उतरे। करीमबख़्शके साथ जो लोग आये थे, उन सबने ज़मीनतक झुक झुककर सरदारको सलाम किया। उसने भी सबकी सलामें लीं। इसके बाद वह मन्दिरके सामनेवाले तम्बूमें गया।

यह सरदार बिलकुल नवजवान था। होंठोंपर और ठुड्डी-पर अब कहीं थोड़ी थोड़ी कृष्णध्वजा झलकने लगी थी। पोशाक बिलकुल सादी थी। एक कामदार लम्बा अंगरखा, उसके अन्दर कई बटनोंका हरा जाकिट, फिर कुर्ता; और एक सफेद चूड़ीदार पायजामा। एक हाथमें रेशमी रूमाल; और दूसरे हाथमें तिरछी तलवार। सिरमें चार अंगुल चौड़ी ज़रीकी ऊंची टोपी; और पीछेकी ओर गर्दनतक लटकते हुए घूंघर-वाले बाल, जो बहुत ही सुन्दर दिखाई देते थे। पुरुष ख़ूबसूरत था। तम्बूमें जाते ही एक अर्दलीने, तम्बूके अन्दर पहननेका एक जोड़ा उसके आगे रखा। वहां बिछे हुए एक पलंगपर जाकर ज्यों ही वह बैठा, त्यों ही दूसरे एक अर्दलीने उसके जोड़े निकाले; और दूसरे नवीन पहना दिये। एकने तश्तरी और तिपाई लाकर रख दी; और हाथ-मुंह धोनेको

प्रार्थना की। दूसरेने आकर सूचना दी कि, जलपान तैयार है। इस प्रकार सब तैयारी हो जानेपर उसने भी जब जलपान कर लिया, तब हुक्के की तैयारी हुई। हुक्का पीकर जब आराम कर चुका, तब उसे उस आदमीकी याद आई, जो मार्गमें कैद किया गया था। उसको लेआनेके लिए उसने अर्दलीको हुक्म दिया। तुरन्त ही एक आदमी सुभानको ले आया। सुभान भीतर आकर, सलाम करते हुए, अभी खड़ा ही हुआ था; और ख़ां साहब उसको सम्बोधन करके कुछ कह रहे थे कि, इतनेमें करीमबख़्शने भीतर आकर बहुत देरतक उसके कानमें कुछ प्रार्थना की। हुक्म हुआ कि, "उसे भी लाओ।" अहमदने मन्दिरमें जाकर उस नवयुवकसे कहा कि, ख़ां साहब आपको बुला रहे हैं। वह भी इस समय हां, नाहीं, कुछ भी न करते हुए, चुपकेसे और गम्भीर सूरत बनाकर, उसके साथ चल दिया। जान पड़ता था कि, इस बार उसने ख़ां साहबके आगे निधड़क बातचीत करनेका ख़ूब निश्चय कर लिया था। बड़ी शान्तिके साथ वह अहमदके पीछे पीछे डेरेमें गया; और भीतर क़दम रखकर, सलाम करके, ज्यों ही उसने ऊपरकी ओर देखा, त्यों ही सुभानकी और उसकी चार आँखें हुईं। इससे नवयुवककी गम्भीरता एकदम जातीसी रही; और सुभान आश्चर्यसे अत्यन्त चकित होकर घबड़ाया हुआसा दिखाई दिया।

पन्द्रहवां परिच्छेद ।

बाबाजीसे बातचीत ।

हमारे इस कथानकमें अभी और भी कई ऐसे पात्र हैं कि, जिनके विषयमें जाननेके लिए हमारे पाठक उत्सुक होंगे । इस-लिए अब उन्हींकी ओर हमें ध्यान देना चाहिए । पाठकोंको स्मरण होगा कि, [illegible] मन्दिरमें जो लोग थे, उनको यह खबर मिली थी कि, यवनोंका एक गिरोह उनके मन्दिरकी ओर आरहा है । इस खबरको पाकर उन लोगोंने अपना सब प्रबन्ध कर लिया; और मन्दिरमें किसीका कुछ पता नहीं रहने दिया । सिर्फ बाबाजी अपनी धूनीके पास बैठे हुए "राम राम" "सीताराम" कह कहकर एकाग्रताके साथ भजन करते रहे । अपनी कुबड़ीपर हाथ टेके हुए बाबाजी महाराज अपने भजनमें इतने तल्लीन होरहे थे कि, जैसे अब संसारमें एक 'सीताराम'के अतिरिक्त और किसीमें चित्त लग ही नहीं सकता हो ! परन्तु भजन करते समय बाबाजीका ध्यान भजनमें ही था, अथवा और भी किसी बातकी ओर, सो सूक्ष्म दृष्टिसे अवलोकन करनेवाले मनुष्यको विशेष रूपसे मालूम होसकता था । स्वामीजी महाराज मुँहसे यद्यपि सीतारामका ही जयघोष बरा-बर कर रहे थे; किन्तु, फिर भी, बाहरकी आहटकी ओर उनका पूरा पूरा ध्यान था; और यह स्पष्ट दिखाई देरहा था । भजन

करते करते वे धीरेसे उठे; और आगे दरवाजेके पास कफनी निचोड़ने, अथवा थूकनेके बहानेसे बीसियों बार गये; और दूर दूरतक नज़र डालते रहे। कुछ देर बाद उन्होंने क्या देखा कि, जिन लोगोंके आनेकी आहट मिली, वे लोग बिलकुल नज़दीक ही आगये हैं; और जान पड़ता है कि, मन्दिरकी ही ओर उनका मोर्चा है। यह अनुमान होते ही स्वामीजीने कुछ ऐसे ढंगसे गर्दन हिलाई कि, जैसे उनके मनमें कोई विलक्षण ही गुप्त उद्देश्य आया हो; और "देवी, तू गुरुका प्रसाद है, क्या आज तेरा उपयोग होगा?" कहकर उस कुबड़ीकी ओर गुप्त-अर्थ-पूर्ण नेत्रोंसे देखा। उसको एक बार उठाया; और फिर एक-दो बार खँखारकर गुनगुनाते हुए कहा—"जहांतक शरीरमें प्राण हैं, वहांतक तो दाल नहीं गलने देंगे, जान रहते उनके हाथमें नहीं पड़ेंगे।" इसके बाद लोगोंके आनेकी आहट बहुत नज़दीक सुनाई देने लगी—यहांतक कि, लोगोंका गिरोह दिखाई भी देने लगा। उसको देखते ही उन्होंने अपना भजन और भी ज़ोर ज़ोरसे शुरू किया। इतने ज़ोरसे कि, बाहर मन्दिरके आसपास यदि कोई आवे-जावे, तो उनकी आवाज़ सहज ही उसे सुनाई दे; और ऐसा ही हुआ भी। बाहरसे जो लोग आये, अथवा आकर निकले, उनका ध्यान उस ओर आकर्षित हुआ; और उनमेंसे दो आदमी आगे आये; और मन्दिरके द्वारपर आकर—"कौन है गुसाईं? इधर आ साले!" इस प्रकार धमकीके शब्द कहे। गुसाईं बाबा पहलेहीसे तैयार बैठे थे।

वे बहुत जल्द आगे निकल आये; और "कौन है? महाराज! मुझे क्यों बुलाया?" कहकर पूछा।

यह सुनकर उन दोमेंसे एक तुरन्त ही कहता है, "यह मन्दिर किसका है? यहां कौन कौन रहता है? तू यहां क्या करता है? तुझको रहनेके लिए यहां किसने कहा है?" इस प्रकार, एकके बाद एक, कई प्रश्न उसने कर डाले। अब बाबाजी कुछ उत्तर देनेहीवाले थे कि, इतनेमें दूसरे साहब खूब चड़बड़ाकर बोले, "आः साले सुअर! क्या कहता है? पकड़ो इसको! बड़ा बदमाश दिखाई देता है! बतला, यहां और कौन कौन रहता है?"

बाबाजीने अपनी शान्ति बिलकुल ही भंग नहीं होने दी। वे बिलकुल शान्तिके साथ उत्तर देते हैं, "यह हनुमानजीका मन्दिर है। मैं ही अकेला रहता हूं। आसपासके गांवोंसे भिक्षा मांगकर खाता हूं। सीतारामका भजन किया करता हूं।"

"और कौन रहता है यहां? बतला जल्दी!"

"और कोई भी नहीं। मेरे ही समान फक्कड़ गुसाईं, जिनके कोई घर-द्वार नहीं, कभी कभी आजाते हैं, चार घड़ी रहते हैं, अथवा बहुत हुआ, तो एक-दो दिन रह जाते हैं, फिर चले जाते हैं।"

"नहीं, नहीं, गुसाईं नहीं। और कौन आता है?"

"और कौन? कभी कभी मंगलवारको अथवा हनुमान-जयन्तीके दिन, लोग दर्शन करने आते हैं। कोई मानताके लिए,

कोई और किसी पूजाके लिए—इस प्रकार लोग आते रहते हैं। और तो कोई नहीं आता।"

"कोई नहीं?......और कोई नहीं आता? सच सच बोल! गुसाईं बना फिरता है!"

"महाराज, व्यर्थके लिए मुझे तंग न कीजिए। एक बार मैंने बतला दिया कि, यहां कोई नहीं आता-जाता। मैंने जिनको ऊपर बतलाया, उनको छोड़कर और कोई आदमी यहां बेकाम नहीं आता।"

"मैंने सुना है कि, यहां रातको गदका-फरी और कुश्ती इत्यादिके खेल हुआ करते हैं; और बहुतसे लोग इकट्ठे होते हैं। सच बतलाओ?"

"हां, ऐसे खेल भी कभी कभी हुआ करते हैं—यह मन्दिर ही बजरंगबलीका है। फिर यहां ऐसे खेल क्यों न हों?"

"बस, बस, हम बजरंग-वजरंगबली कुछ नहीं जानते! यहां कुश्ती-वुश्ती खेलने कौन लोग आते हैं? किस वक्त आते हैं? आज आये थे या नहीं?"

"यहीं आसपासके गांववाले आजाते हैं; और कहांके आवेंगे? घड़ीभरके लिये आये, अपना आनन्द किया, नारियल चढ़ाया, प्रसाद बांटा; और चलते बने! और उनका काम ही क्या है? किन्तु सरदार साहब, आप इतनी बारीकीसे जांच क्यों करते हैं?"

बावाजीके इस प्रश्नका उस सरदारने कोई सरल उत्तर

नहीं दिया। किन्तु उलटे मस्तकमें बल डालकर कहा, "तुझे जांच-वांचसे क्या मतलब? जो कुछ मैं पूछता हूं, वही बतला। अबे गुसाईं, सच सच बतला कि, यहां शाहजी भोसलेका लड़का शिवाजी कभी आता है या नहीं?...बतला। यह उसकी मुकर्रर जगह है या नहीं? उसके साथ और भी कुछ... देख, यदि तूने मुझसे कुछ भी छिपा रखा, तो कुशल न समझना। मैं जातका मराठा हूं—परन्तु बाहर बहुतसे मुसलमान खड़े हैं, जो बादशाहकी ओरसे, उसे पकड़ने आये हैं। हम सब लोग गिरोह बांधकर आये हैं। तू यदि सीधी तरहसे बतला देगा, तब तो ठीक है—नहीं तो........"

आगे वह और कुछ कहनेवाला था कि, इतनेमें बाबाजी कहते हैं, "अच्छा! आप इस मतलबसे यहां आये हैं? तब तो ठीक है! शिवाजी तो इधर कभी आते-जाते नहीं हैं। इसके सिवाय यहां यह भी निश्चित नहीं कि, रोज़ रोज़ एक ही मनुष्य आते हों। आठ आठ दिनतक कोई फटकता भी नहीं—मैं अकेला ही, इस पीपलपर रहनेवाले उल्लू और चमगीदड़ोंके साथ, अपने दिन काटता रहता हूं। आप मराठे सरदार हैं; और बादशाहकी तरफसे आये हैं, "शिवबा" को पकड़नेके लिए, गोल बांधकर! वाह! वाह! प्रभूकी लीला अगाध है!"

बाबाजीने अन्तिम शब्द कुछ ऐसी विचित्र आवाज़से कहे; और कुछ ऐसी विचित्र दृष्टिसे उस सरदारकी ओर देखा कि, उसको भी कुछ विचित्रहीसा भास हुआ। और वह तिरछी

नज़रसे बाबाजीकी ओर देखकर कहता है—"बस! बस! गुसाईं जी, व्यर्थकी बात मत करो। इसी प्रकारकी बातोंसे तुम लोगोंपर कैसी कैसी नौबत आजाती है, सो जानते हो? चुप बैठो, नहीं तो तुम्हारे ऊपरकी सारी छत फट पड़ेगी; और हनुमानजी रसातलको चले जायंगे! तुमको यदि कुछ मालूम हो, तो बतलाओ।"

"मालूम? मुझको जो कुछ मालूम था, सो बतला दिया। अब तुम चाहे जितने नाराज हो, धमकाओ—डरपाओ, पर मैं बतलाऊं कहांसे? जो मुझे......"

"मैं भीतर आकर ज़रूर देखूंगा। तुम्हारे ही समान गुसाईं और बाबा लोगोंकी उस लुटेरेको मदद है......"

"लुटेरा" शब्दको सुनते ही बाबाजीकी नस नसमें क्रोध व्याप्त होगया। उनकी आंखें सुर्ख होगईं; और मस्तकमें बल पड़ गये, तथा दांतोंसे अपने होंठ उन्होंने इस तरह चबाये कि, जैसे अब वे उस सरदारकी गर्दनपर चढ़ ही तो बैठेंगे। किन्तु नहीं, उसी दम उन्होंने आत्मसंयमन किया। यह आत्मसंयमन करनेमें उनको मानो बहुत प्रयास पड़ा; और यह उनकी चेष्टासे स्पष्ट दिखाई दिया। क्रोधके प्रथम आवेगके वश होकर यदि उन्होंने कुछ कर डाला होता, तो यह नहीं कहा जासकता कि, उसका क्या परिणाम हुआ होता। परन्तु वैसा मौका नहीं आया। साथ ही यह भी जान पड़ा कि, बाबाजीकी, क्षणभरकी, वह अत्यन्त क्रोधयुक्त चेष्टा उस सर-

दारकी नज़रमें नहीं आई; क्योंकि यदि आई होती, तो आगे उसके व्यवहारमें भी कुछ अन्तर दिखाई देता। परन्तु ऐसा कुछ दिखाई नहीं दिया। मराठा सरदार तुरन्त ही अन्दर बढ़ा। उसके साथ दूसरा सरदार भी बढ़ा। मराठा सरदार और भी आगे बढ़नेवाला था कि, इतनेमें बाबाजी बिलकुल दरवाजेमें खड़े होकर कहते हैं, "ख़बरदार! मराठाको छोड़कर—हिन्दूके अतिरिक्त—यदि कोई भी भीतर आवेगा, तो वह मेरी लाशपर ही पैर रखकर भीतर आसकेगा! मैं जीवित हूं, तबतक······"

इतनेमें वह सरदार एकदम बोल उठा, "बेशक! बेशक! मैं मराठा हूं, इसीलिए भीतर जाता हूं, ये अब भीतर न आवेंगे। पर यदि मुझे कोई सन्देह हुआ, तो फिर मैं नहीं जानता। तुम्हारा········"

किन्तु, इतनेमें वह दूसरा सरदार भी भीतर जानेको बहुत ही उत्सुक दिखाई दिया। अवश्य ही उस मराठा सरदारने यह कहा कि, "ये भीतर नहीं आवेंगे," किन्तु उसकी ओर उसका बिलकुल ही ध्यान नहीं था, अथवा जान-बूझकर उसने ध्यान दिया ही नहीं। उसका पैर अभी भीतर नहीं पड़ने पाया था कि, बाबाजी आगे बढ़े; और डाँटकर बोले—"अन्दर मत आना—अन्दर!" साथ ही उन्होंने अपना अत्यन्त मज़बूत हाथ, किसी फ़ौलादी बेंड़ेकी तरह, आड़ा लगा दिया; और चुप खड़े रहे। दूसरा मुसलमान सरदार हथियारबन्द था; परन्तु बाबा-

जीकी उस विशुद्ध उद्दण्डताके कारण वह कुछ ऐसा चकितसा दिखाई दिया कि, क्षणभरके लिए वह पीछे हटकर चुप खड़ा हुआ उनकी ओर देखता रहा। बाबाजीने बेंड़की तरह अपना हाथ जो दरवाजेमें आड़ा लगा दिया था, वह ऐसा कुछ गठा हुआ था; और ऐसा कुछ शक्तिका सार उसमें भरा हुआ दिखाई देता था कि, चाहे कोई कितना ही ढीठ क्यों न होता, उसको ठिठककर पीछे हटना ही पड़ता !

एक मामूली गुसाईंने मुसलमान सरदारको पीछे हटा दिया, इस बातपर उस मुसलमान सरदारको बहुत खेद हुआ; और उसका बदला लेनेके लिए वह अपनी तलवार भी निकालनेहीवाला था; परन्तु इतनेमें उस मराठे सरदारने भी उसे फिर भी पीछे ही रहनेके लिए कहा। विशुद्ध उर्दू भाषामें उसने उससे कहा, "सरदार साहब, आप अन्दर आनेकी जल्दी न करें। मैं भीतर आहीगया हूं, सब अच्छी तरह घूमकर देखता हूं। यदि कोई बात होगी, तो......"

"बस। बस, मैं कभी नहीं सुनूंगा। तुम मुझे कहनेवाले कौन हो? तुम इस घमण्डमें न रहना कि, मैं तुम्हारे मातहत भेजा गया हूं। तुम यदि फ़ितूरका काम करोगे, तो मैं तुम्हारी कभी न सुनूंगा।"

इस प्रकार, अत्यन्त उद्दण्डतापूर्वक, उस मुसलमानने मराठे सरदारको उत्तर दिया। इससे मराठे सरदारको बहुत बुरा लगा। उसका शरीर जल उठा; किन्तु उसके मुंहसे एक

शब्द भी नहीं निकला—शायद क्रोधका अतिरेक ही इसका कारण हो! हां, उसने एक बार उस मुसलमान सरदारकी ओर ऐसे ज्वाज्वल्य कटाक्षोंसे देखा कि, जिनसे वह भस्म हो जासकता था। फिर कुछ देर बाद वह उससे कहता है—"मेरा कहना न सुनोगे? तो मैं ज़बरदस्ती सुनाऊंगा। कभी मानूंगा नहीं। जबतक कहीं सन्देहके लिए स्थान नहीं है, तबतक मैं बिना कारण तुमको यहां भ्रष्टाचार नहीं करने दूंगा। फिर चाहे मुझे सूलीपर चढ़ा दिया जाय, अथवा तोपदम करा दिया जाय, कोई परवा नहीं। यहां तुम अगर उद्दण्डता दिखलाओगे,तो मैं यहीं उलट पड़ूंगा;और तुम्हारी एक भी नहीं चलने दूंगा।" बातों ही बातों जब यहांतक नौबत आपहुंची; और मराठा सरदार बिगड़ उठा,तब मुसलमान सरदार कुछ नरम पड़ा; और दांत किटकिटाते हुए दरवाजेपर ही खड़ा रहा।

मुसलमान सरदार दांत किटकिटाते हुए, मस्तकपर बार बार शिकनें डालते हुए; और कभी कभी उस मराठे सरदारकी ओर घूरते हुए खड़ा रहा। इसके बाद वह भीतर ही भीतर कुछ खुसफुसाया, जैसे कुछ प्रतिज्ञासी कर रहा हो! परन्तु उस मन्दिरमें जानेवाले मराठे सरदारका ध्यान उसकी ओर बिलकुल नहीं गया, अथवा जैसे उसकी ओर कुछ ध्यान देनेका प्रयोजन ही उसे प्रतीत न हुआ हो। अस्तु। वह उन गुसाईंजीके साथ भीतर गया। दरवाजेसे जब वह कुछ दूर चला गया, तब बाबाजी कुछ धृष्टतापूर्वक उससे कहते हैं, "सरदार साहब,

आप बादशाहका काम करने तो आये ही हैं। पर……क्या मैं भी कुछ कहूं ?"

"हां, हां, अवश्य कहो। जो कुछ तुमको कहना हो, कह डालो, मैं हृदयसे सुनूंगा……पर मैं जो कुछ पूछता हूं, सो बतला दो। सचमुच बतलाओ, आजकलके ये छोकरे यहां बैठकर कुछ गुप्त मंत्रणा किया करते हैं या नहीं ? हमको पता पूरा मिल गया है। चाहे तुम छिपाओ भी, परन्तु हमको विश्वास होचुका है। हम सब बातें निकाल लेंगे। परन्तु तुमसे ही यदि मालूम हो जाय, तो और अच्छा, इसलिए तुमसे पूछता हूं।"

"सरदार साहब," बाबाजी कुछ चकित चेष्टा बनाकर कहते हैं, "आप क्या कहते हैं; और क्या पूछते हैं, सो कुछ मेरी समझमें नहीं आता। मुझे जो कुछ मालूम था, सो मैंने आपको बतला दिया। इससे अधिक और क्या बतलाऊं ? बतलानेको और कुछ है ही नहीं। आप अपने धर्मको भूलकर यदि मुसल्लों-के द्वारा मन्दिरको भ्रष्ट कराना चाहते हैं, उसको नाश करवा डालना चाहते हैं; और यदि आपको अपने धर्मका कुछ अभि-मान नहीं है, तो जो कुछ आप चाहते हैं, खुशीसे करें। मेरे रोके आप मानेंगे थोड़े ही !—किन्तु मेरी प्रार्थना सिर्फ इतनी ही है कि, हम हिन्दू हैं; और उसमें मराठे हैं, हमको इन मुस-ल्लोंने मानो चूस डालनेका ही प्रबन्ध कर रखा है। इनके सामने हमारी कोई भी कीमत नहीं रही है। और यह सब

हमने अपने ही हाथों कर रखा है—आप मराठे ही तो हैं? आपको अपने कुलका, अपनी जातिका, अपने देशका कुछ भी अभिमान नहीं है?"

बाबाजी उपर्युक्त प्रश्न करते हुए मानो बिलकुल तल्लीनसे होगये। यह स्पष्ट दिखाई देरहा था कि, उनका पूरा पूरा हृदय उपर्युक्त प्रश्नमें ही उतर आया है। परन्तु उस मराठे सरदारको वह बिलकुल ही नहीं रुचा। एक मामूली गुसाईं हमको इस तरहसे कहे; और ऐसे समयमें! यह उसको बिलकुल ही सहन नहीं हुआ। वह एकदम बाबाजीकी तरफ देखकर कहता है, "बाबाजी, आपके इस कथनसे आपके महात्मापनमें बट्टा लगता है; और हमको सन्देह होरहा है कि, आप उन उपद्रवी लोगोंके मददगार अवश्य हैं। और इसलिए इच्छा होती है कि, आपहीको हम कैदकर ले जावें। आपने सर्व-संग-परित्याग किया है। यह कौपीन, ये जटा; और ये सब संन्यासीके चिन्ह, हमको ढोंग मालूम होरहे हैं! अन्यथा आपको ऐसी बातोंसे क्या मतलब?"

"मुझे? मुझे कौनसा मतलब? मुझे कैद करना चाहते हैं? खुशीसे कीजिए। कैद कीजिए, सूलीपर चढ़ाइये, तोपके मुंहमें दीजिए, वृक्षमें उलटा टांगकर प्राण लीजिए, चाहे दीवालमें चुनकर मार डालिये, अथवा आज हाथ, कल पैर, परसों कान—इस प्रकार एक एक अङ्ग काटकर—रोज़ तिल तिल काटकर—मेरी जान लीजिए, अथवा एक ही वारमें किसी

किलेपरसे लेजाकर ढकेल दीजिए। इससे भी अधिक यदि आपको कोई विचित्र युक्ति सूझ पड़े, तो उसीको भिड़ाकर मेरे प्राण लीजिए। मुझे चाहे जितना कष्ट देलीजिए, मेरे पीछे कोई रोनेवाला नहीं बैठा है; और आपको इससे कोई लाभ भी नहीं होसकता। चाहे जितने कष्टसे मुझे मरना पड़े, मैं तैयार हूं। और क्या चाहिए? मुझे कैदखानेका, सजाका, मृत्युका भय दिखलानेसे क्या लाभ? यवनोंकी नौकरी करके गौ-ब्राह्मणों-पर आपको भी कोई तरस नहीं आता। पेटकेलिए आप अपना मराठापन भूल गये हैं। अपना हिन्दुओंका व्रत भूल गये हैं! यही संसारपर प्रकट होगा! और क्या होगा!"

बाबाजी इतनी शान्तिसे; और हृदयपूर्वक कह रहे थे कि, सुननेवालेके मनपर भी कुछ न कुछ प्रभाव होता हुआसा दिखाई दिया, परन्तु उस प्रभावको उसने बाहर नहीं प्रकट होने दिया; और इसी उद्देश्यसे वह सरदार बाबाजीसे इस प्रकार बोला, "ठीक है,ठीक है,हमें आपका यह सिखावन नहीं चाहिए। हम जिस कामके लिए आये हैं, वह काम हमको करने दीजिये।"

इतना कहकर उसने एक बार बाहर दरवाजेकी तरफ देखा। उसने सोचा कि, हम इतनी देरसे इस गुसाईंसे बात-चीत कर रहे हैं। ऐसी दशामें हमारे मुसल्मान साथीको कहीं सन्देह न हो जावे; और वह कहीं भीतर न चला आवे। बस, यही सोचकर उसने अपने साथीकी ओर नज़र फेंकी। इसके बाद हनुमानजीके पासका दीपक उठाकर उसने एक बार चारों

तरफ निरीक्षण किया। तदनन्तर वह फिर एक वार बाबाजीसे पूछता है, "यहां नीचे कहीं न कहीं तहख़ाना है: और उस तहख़ानेमें कुछ न कुछ..."

उस मराठे सरदारका कथन अभी समाप्त भी न होपाया था कि, बाबाजी उससे कहते हैं, "क्या ? क्या ? यहां तहख़ाना है ? कहां, कहां है ? आपको मालूम है ? मुझे तो इसका बिल-कुल पता नहीं; पर आपको यदि पूरा पूरा मालूम है, तो मैं पता लगाऊंगा ! मेरे समान गरीब मनुष्यको छिपकर बैठनेके लिए स्थान ही मिल जायगा।"

मराठा सरदार इसपर फिर कुछ नहीं बोला। एक-दो वार नीचे पड़कर मानो उसने ज़मीनके अन्दरकी आहटसी ली। इसके सिवाय जहां जहां उसे सन्देह हुआ, वहां वहां हाथ-पैर पटककर उसने परीक्षा की। यह देखा कि, कहीं पोलाईकी आवाज़ तो नहीं आती। परन्तु वैसी आवाज़ कहीं नहीं आई; और यदि आई भी हो, तो उसके ख़यालमें नहीं आई। वास्तवमें उसको आई ही नहीं। क्योंकि नीचे भुँहारेकी रचना बड़ी विचित्र थी। जहां हनुमानजीकी मूर्त्ति खड़ी थी, वहांसे पीछे-की ओर मन्दिरका भाग बहुत थोड़ा था; और उसी ओर भुँहारा था। मन्दिरके अगले भागमें उसका कहीं पता ही न था। और यदि कहीं था भी, तो बहुत ही थोड़े अंशमें। सो वह अंश संयोग-वश उस सरदारकी परीक्षामें नहीं आया। उसने बहुत देरतक इधर-उधर देखा। हनुमानजीके पीछेसे भी उसने चार-पांच वार

प्रदक्षिणा की। सम्पूर्ण ज़मीनकी खूब अच्छी तरह जांच की। सन्देह यह था कि, कहीं एक-आध दराज़ दिखाई पड़ेगी, अथवा और ही कुछ चिन्ह मिलेगा, तो हमारी जांच पूरी होजायगी। क्योंकि उसको इस बातका तो पूरा पूरा विश्वास होगया था कि, इस मन्दिरमें कहीं न कहीं कुछ गड़बड़ अवश्य है। अन्तमें उसको यह सन्देह हुआ कि, बाबाजीकी धूनी जिस जगह है, उसी जगह, राखके ढेरके नीचे, शायद कुछ न कुछ विशेष बात मिले। बाबाजी नाहीं, नाहीं करते ही रहे, पर उसने एक न सुनी; और उनकी धूनी भी हटाकर देखी, जगह साफ करके देखी; किन्तु सब व्यर्थ! कुछ भी पता नहीं लगा। तब कुछ निराशसा होकर वह बाबाजीसे कहता है, "तो फिर तुम हमको कुछ भी पता नहीं लगने दोगे—एँ? देखो, तुम बच नहीं सकते। कुछ पता हो, तो बतलाओ।" बाबाजी ख़ास तौरपर हँसकर कहते हैं, "सरदार साहब, आप क्या कहते हैं; और किस बात-का पता चाहते हैं, सो कुछ मेरी समझमें नहीं आता। जो कुछ मुझे मालूम था, सो मैंने आपको बतला ही दिया। अब और क्या बतलाऊं? मैं आपसे यह भी कहता हूं कि, जो कुछ आप पूछते हैं, उसका यदि मुझे पता होता भी, तो भी मैंने आपको बतलाया न होता। यही नहीं, बल्कि मुझको यदि मौका मिल गया, तो मैं किसी न किसीके द्वारा शिवबाको—जहां वह होगा, वहीं—कहला भेजूंगा कि, 'भैया, तूने जिस कार्यको हाथमें लिया है, उसे नष्ट करनेके लिए मराठा-कुलके ही सिंह उद्यत

होरहे हैं। बादशाही ओहदोंके लालचने उनको पछाड़ा है!' हाय! हाय! मुसलमानोंकी गुलामी करके हमारे मराठे सरदारोंने स्वाभिमानको बिलकुल ही तिलांजलि देदी है! वे गौ-ब्राह्मणोंके उद्धारकी बात भी नहीं सोचते! सब गरीब और हीन-दीन जनोंकी आहें चुपकेसे सुनते रहो, धर्मकी अवहेलना आंखोंसे देखते रहो; और यदि किसीसे वह न देखी जावे; और वह इस नरकयातनासे छूटनेका प्रयत्न करे, तो उसके विरुद्ध होकर शत्रुको सहायता करो—उस बेचारेकी निन्दा और विडम्बना करो! इससे तो यही अच्छा है कि, राजपूत वीरोंकी तरह अपने घर-द्वारको आग लगाकर, बालबच्चोंको अपने हाथसे मारकर, उन्हींकी चितामें हम कूद पड़ें! राम! राम! सीताराम! हे ईश्वर! तू ही रक्षक है!"

बाबाजीके इस भाषणमें कोई विशेषता हो, सो नहीं; किन्तु इन शब्दोंके मुंहसे निकलते समय उनकी चेष्टा अवश्य कुछ विलक्षणसी हो रही थी। उस समय यदि किसीने उनकी वह सूरत देखी होती, तो यह कोई नहीं कह सकता था कि, ये केवल गुसाईं ही हैं। उनका सम्पूर्ण हृदय मानो उस समय उनकी सूरतमें ही आगया था। उनके शरीरका प्रत्येक अंग मानो वही शब्द उच्चारण कर रहा था। बाबाजीके उन शब्दों-का—अथवा उन शब्दोंके उच्चारण करते समयकी उनकी चेष्टाका—उस सुननेवालेपर कुछ न कुछ प्रभाव अवश्य पड़ा। क्योंकि उसकी सूरत कुछ नम्रसी दिखाई पड़ने लगी। उसकी

आंखोंमें जो पहले उद्दण्डताका पानी था, सो कुछ कम हो गया; और उनमें एक प्रकारकी शालीनता दिखाई देने लगी। इसके बाद एकाएक कुछ हँसकर वह बाबाजीसे बोला, "धीरे धीरे! इतने ज़ोरसे मत बोलिये। वह बाहर खड़ा है। उसने यदि सुन लिया, तो औरका और होजायगा। आप जो कुछ कह रहे हैं, सो मेरे मनमें नहीं आता, ऐसा नहीं—मेरे मनमें भी आता है; किन्तु मेरी कुछ चलती नहीं। इस समय उन्हींका इक़बाल है। प्रत्येक मनुष्य यदि वही प्रयत्न करने लगे, तो इससे कुछ नहीं होगा। भलीभांति सोच-समझकर काम करना चाहिए।"

उसी समय कुछ उत्तर देनेके लिए बाबाजीके होंठ स्फुरित हुए, सो सरदारने देखा। परन्तु जान पड़ा कि, अब विशेष वह उनकी सुनना नहीं चाहता था। इसलिए तुरन्त वह दरवाजेकी ओर चला गया; और दरबारी भाषामें गम्भीरता-पूर्वक उस मुसल्मान सरदारसे बोला, "यहां सन्देहके लिए कोई स्थान दिखाई नहीं देता। मैंने ख़ूब जांच की। इस गुसाईं-से और कुछ विशेष मालूम होसकेगा, सो आशा नहीं। मैंने बहुत बहुत पूछा;पर हम लोगोंको जो ख़बर मिली थी, वैसा यहां कुछ भी दिखाई नहीं दिया। इसलिए अब हमको यहांसे…"

"मेरे ख़यालसे इस गुसाईंपर विश्वास रखनेका कोई कारण नहीं," मुसलमान सरदार मस्तक सिकोड़कर कहता है, "यह बड़ा धूर्त दिखलाई पड़ता है। मैं इसे कैदकर ले

जाऊंगा ; और मन्दिरके आसपास पहरा रखूंगा। तुमने जो कुछ पता लगाया, सो सब मैंने देखा। मुझे तो यही शङ्का है कि, इस गुसाईंने तुमको पूरा पूरा चकमा दिया। तुम हिन्दू हिन्दू सब एक होगे, सो मैं अच्छी तरह जानता हूं। कुछ भी हो, मराठे लोग नमक…"

उस मराठे सरदारकी उस समयकी चेष्टा देखकर ही मानो उस मुसलमान सरदारके उपर्युक्त शब्द अधूरे रह गये। ऐसा जान पड़ता था कि, उस समय उस मुसलमान सरदारके मुखसे उपर्युक्त वचन सुनकर उस मराठे सरदारके चित्तको बड़ा खेद हुआ। उसने सोचा कि, जिस समय देखो, उसी समय हमको और हमारी जातिको ये परकीय लोग इस प्रकार धिक्कारते रहते हैं; और जो मनमें आता है, वही कहते हैं! इसके सिवाय उस समय एक कौतूहलकी बात यह भी हुई कि, उस मुसलमान सरदारके मुखसे जिस समय उपर्युक्त अन्तिम वाक्य निकले, त्यों ही बाबाजी भी पीछेसे दरवाजेके पास आगये; और मराठे सरदारकी दृष्टि भी उनकी ओर पड़ी!

जिस समयकी आख्यायिका हम लिख रहे हैं, उस समय मुसलमान लोग बहुत ही उद्दण्डताका बर्ताव करते थे। मराठे सरदार बादशाही राज्यके लिए बड़े उपयोगी होते थे, अतएव उनको भिन्न भिन्न कार्य सौंपे जाते थे। बड़े बड़े उत्तरदायित्वके कार्य भी उनके सिपुर्द किये जाते थे। किन्तु साथ ही उनके जोड़का एक एक मुसलमान सरदार भी उनके साथ दिया जाता

था। विजित और विजेता लोगोंमें चाहे जितना सख्यभाव हो, फिर भी विजेताओंके मनका अभिमान और विजित लोगोंके मनका असन्तोष पूर्णतया कदापि नष्ट नहीं होता, यही अबतकका अनुभव है। हमारे कथानकके समयमें भी ऐसा ही था। दक्षिणके सभी मराठे सरदारोंके हृदयमें इतना असन्तोष फैल रहा था कि, जिसका कुछ ठिकाना नहीं। दरबारमें चाहे जितना मान हो, अथवा बड़े बड़े उत्तरदायित्वपूर्ण कार्य भी क्यों न बतलाये जायं; किन्तु मुसलमान सरदार सदैव उन मराठे सरदारोंके साथ ऐसा ही बर्ताव करते थे, जिससे मराठे सरदारोंको यह मालूम होता रहे कि, राज्यकी ओरसे उनपर बड़ा उपकार हो रहा है। उनको बड़े बड़े ओहदे दिये गये हैं। उनका मान होता रहता है! इत्यादि। नवयुवक मुसलमान सरदार जिस प्रकार अपने उद्दण्डतापूर्ण व्यवहारमें और बातचीतमें उपर्युक्त भाव दरसाते थे, उसी प्रकार वृद्ध सरदार भी किसी दूसरी तरहसे उपर्युक्त भाव प्रकट करते थे। मतलब यह कि, उस समय सब जगह ऐसी ही अवस्था थी कि, जिससे मराठे सरदारों और महाराष्ट्र-प्रजाके हृदयमें असन्तोष उत्पन्न होचुका था। यही नहीं, बल्कि प्रत्येकके मनमें यह इच्छा उत्पन्न हो-चुकी थी कि, किसी न किसी प्रकारसे इन मुसलमान राजाओं-को यदि कोई नीचा दिखावे, तो बहुत अच्छा हो। किन्तु ऐसी दशा नहीं थी कि, उस इच्छा; और उस समयकी वास्तविक परिस्थितिसे लाभ उठा सकनेकी आशा किसीके मनमें उत्पन्न

हुई हो। सबके मनका यही भाव था कि, किसी न किसी प्रकार कुछ हो, तो अच्छा! इनका राज्य किसी प्रकारसे नष्ट हो! नवयुवक लोग जब एकत्र बैठकर इधर-उधरकी बातें करते, तब यह विषय अवश्य उनकी बातोंमें निकलता था— फिर उस समय वे लोग यही कहते कि, "यार, अमुक अमुक तरहसे यदि कोई यत्न करे, तो सफलता अवश्य हो, अमुक अमुक बात यदि इस प्रकार होजाय, तो क्या ही आनन्द हो! सबका एका यदि हो जाय, तो कोई मुश्किल बात नहीं। अमुक व्यक्ति ऐसा ऐसा प्रयत्न कर रहा है; किन्तु उसको सफलता होगी, सो नहीं दिखाई देता। मुसलमान बड़े ही धूर्त हैं।" बस, इसी प्रकारकी बातें नवयुवकोंमें हुआ करती थीं। ऐसी बातोंसे कुछ होता है, सो नहीं। हां, हवा किस तरफ बह रही है, यह जाननेके लिए ऐसी बातोंसे लाभ उठाया जासकता है। जब जब कोई राज्यक्रांतियां होती रही हैं, तब तब उनके पूर्व-लक्षण इसी प्रकारके दिखाई देते रहे हैं, असन्तोष! असन्तोष! और सो भी विशेषतः जनसाधारणके मनमें उत्पन्न होनेवाला असन्तोष! बस, यही राज्यक्रांतियोंका आदि कारण है! परन्तु जाने दो। हमको राजनीतिके सिद्धान्तोंपर यहां वाख्यान नहीं देना है। इसलिए हम अपने कथानककी ही ओर आवें, तो अच्छा होगा।

"इस मुसलमान सरदारने ऐसी बात कही कि, जिससे हमारे गौरवको धक्का लगा; और बाबाजीके कानोंमें यदि यह बात पड़

गई होगी, तो वे हमको क्या कहेंगे—"बस, यही भाव तुरन्त उस सरदारके मनमें आया। परन्तु वह मौका कुछ कहनेका नहीं था। इसके सिवाय, उसके मनमें कुछ विचार भी आया कि, जिससे उसने समझा कि, अब इस समय जितनी जल्दी हो-सके, चल देना चाहिए। यदि और कुछ समय हम यहां रहेंगे, तो यह यवन, जैसा कि कहता है, बाबाजीको सचमुच ही कैद कर लेगा। मराठा सरदार यह नहीं चाहता था। उसकी सूरतसे स्पष्ट झलकता था कि, बाबाजीके कहनेका उसपर कोई न कोई प्रभाव पड़ा है; और यह बात हम ऊपर बतला भी चुके हैं। बाबाजीके विषयमें उस मराठे सरदारके मनमें एक प्रकारका पूज्य भाव उत्पन्न होचुका था, इसलिए उनको कैद करने देना उसे बिलकुल अनुचित मालूम हुआ; और उसने उन्हें बचानेका प्रयत्न भी किया, पर उसकी सफलताके कोई लक्षण दिखाई नहीं दिये। अन्तमें वह सफल नहीं हुआ। मुसलमान सरदारने एक-दम बाबाजीको कैद करनेका हुक्म दे दिया।

सोलहवां परिच्छेद ।

बाबाजीको दण्ड !

बाबाजीको पकड़नेका हुक्म हुआ; और अब वे पकड़े जाने वाले हैं, यह बाबाजीको भलीभांति मालूम होगया । अब, ऐसी दशामें, बाबाजीकी चेष्टा कितनी गम्भीर—कितनी उद्धत— होगई होगी, इसकी कल्पना पाठकोंको, अपने मनमें, करनी चाहिए । जिन लोगोंने बाबाजीके उस दिनतकके चरित्रका निरीक्षण किया होगा, उन लोगोंको भी, बाबाजीकी उस समय-की सूरत देखकर, यह बतलाना कठिन था कि, उनके हृदयकी उस समय क्या दशा थी । जैसे किसीके हृदयमें अत्यन्त तिर-स्कार और क्रोधके भाव उठते हों; और इन दोनों मनोविकारोंको अत्यन्त कष्टके साथ वह भीतर ही भीतर दाब रहा हो । ऐसी ही दशा इस समय हमारे बाबाजीकी होरही थी । "इसको पकड़ो; और अपने साथ लेचलो!" ये शब्द ज्यों ही उनके कानमें पड़े, त्यों ही उनके शरीरकी नस नस, तनकर, फूल गई । उनके उस विशाल मस्तकको तीन नसें तो बिलकुल उँगलीके समान ही तनी हुई दिखाई देने लगीं । उनकी आँखें ऐसी कुछ क्रूर और तिरस्कारपूर्ण दिखाई देने लगीं कि, जिसका कुछ ठिकाना ही नहीं ! अपनी कृष्णवर्ण और घनी घनी भौंहोंके नीचेसे उन्होंने उस मुसलमान सरदारकी ओर आँखें फाड़कर

देखा। उस दृष्टिमें तथ्य भरा हुआ था, इसमें सन्देह नहीं। इसके बाद फिर उन्होंने अपनी उन्हीं तथ्यपूर्ण आँखोंसे एक बार अपनी कुबड़ीकी ओर देखा; और फिर उस मुसल्मान सरदारके हृदयकी ओर देखा...इसके बाद फिर अपने नेत्रकी ओर देखा ; और मन ही मन "अभी समय नहीं आया," कहकर वे चुपके खड़े रहे।

कह नहीं सकते, क्या कारण था; लेकिन बाबाजीकी वह तिरस्कारपूर्ण दृष्टि मुसलमान सरदारको अच्छी नहीं लगी। उसने फिर उनकी ओर देखा भी नहीं। मानो वह मन ही मन सोच रहा था कि, अपने हुक्मको अमलमें लाऊं या न लाऊं। जान पड़ता था, वह मुसल्मान सरदार भी कुछ कम तर्कज्ञानी नहीं था। क्योंकि, उसने बाबाजीके केवल उस दृष्टिक्षेपसे ही ताड़ लिया कि, हमारे सामने जो ये बाबा खड़ा है, सो केवल बाबा हो नहीं है! और यह बात उसकी सूरत भी बतला रही थी। सच पूछिये, तो जबकि यह शंका होचुकी थी, तब फिर बाबाजीके पकड़ने न पकड़नेके प्रश्नपर बहुत सोच-विचार करनेका कोई कारण नहीं था। परन्तु शायद स्वामीजीकी वह क्रूर और संतप्त चेष्टा, तथा ऐसी ही उनकी दृष्टि, इन दो बातोंने ही उस मुसल्मान सरदारके मनको गड़बड़में डाल दिया हो! जो कुछ भी हो; किन्तु अन्तमें उसने यही निश्चय किया कि,बस,अब इसको पकड़ो ही! इसके बाद उसने फिर एक बार उस मराठे सरदारकी ओर देखकर कहा, "तुम चाहे जो कहो, मुझे विश्वास

नहीं होता कि, यह बिलकुल बाबा ही होगा। इसलिए इसको मैं अवश्य गिरफ्तार करके ले चलूंगा।" यह कहकर उसने ज़ोरसे अपने साथ आये हुए अन्य लोगोंको बुलाया; और फिर एक बार हुक्म दिया कि, "इस गुसाईंको पकड़कर ले चलो।" हुक्म सुनते ही चार-पांच आदमी दौड़कर आये; और बाबाजीके शरीरमें हाथ लगानेहीवाले थे कि,इतनेमें ऐसी तेज़ीके साथ—जोकि केवल किसी जन्मसिद्ध राजत्व पाये हुए मनुष्यको ही शोभा देनेयोग्य थी—उन्होंने अपना केवल दाहिना हाथ ऊपर उठाया; और उतनी ही तेज़ीके साथ वे सब लोगोंकी ओर देखकर बोले, "ख़बरदार! ख़बरदार, हमारे शरीरमें हाथ लगाया तो! बस्ती छोड़कर मैं मन्दिरमें आकर बैठा हूं—मेरे समान गरीब बैरागीको भी कष्ट देनेसे तुम लोग बाज़ नहीं आते! तब, अवश्य ही तुम्हारे सत्यानाश होनेका समय निकट आगया है, इसमें सन्देह नहीं। कोई परवा नहीं। तुम्हें मेरी तरफ़ दौड़कर मुझे पकड़नेकी कोई ज़रूरत नहीं। मैं स्वयं तुम्हारे साथ होलूंगा। किन्तु ज़रा धीरजसे। एक बार जब मैं तुम्हारे पंजेमें फँस जाऊंगा, तब न जाने कब फिर इस जगह आना हो; और कब न हो, इसलिए बजरङ्गबलीकी चार परिक्रमा कर लूं।" इतना कहकर तुरन्त ही उन्होंने अपनी पीठ फिराई। उनकी उस तेज़ीसे वह मुसलमान सरदार और उसके अन्य लोग बिलकुल चकित होकर उनकी ओर देखते रहे। किसीके मनमें भी न आया कि, "जो कुछ होगा, सो देखा जायगा—इसे एक बार दौड़कर पकड़ ही लो!" केवल

उनकी उस उद्धत गति और उद्दण्ड वृत्तिकी ओर देखते रहनेके अतिरिक्त और कुछ भी मानो उन्हें सुझाई ही नहीं दिया; और वास्तवमें था भी ऐसा ही! उस मुसलमान सरदारका हृदय तो स्वामीजीका वह बर्ताव देखकर बिलकुल विचार-मग्न होगया था। "यह मनुष्य है कौन? जिस वेशमें यह दिखाई देता है, वह सच्चा तो है नहीं—कोई न कोई कपटजाल है—"यह बात उसके मनमें घर कर गई थी। बावाजीकी प्रत्येक बातसे यही दिखाई देता था कि, इनका किसी न किसी उच्च कुलका ही जन्म है—कमसे कम उस मुसलमान सरदारको तो ऐसा ही मालूम होता था। मराठे सरदारका हृदय भी कुछ उसी प्रकारके विचार-विकारोंसे व्याप्त होरहा था; और वह भी उसी दृष्टिसे बाबाजीको देख रहा था। इतनेमें वह मुसलमान सरदार उससे कहता है, "सन्ताजीराव, तुम उसपर अपनी नज़र रखो। वह हनुमानजीकी प्रदक्षिणाके बहानेसे उधर गया है। सावधानीके साथ उसपर दृष्टि रखो। वह बातकी बातमें धोखा देकर चला जायगा। तुम भीतर जाकर उसके पीछे ही पीछे रहो। वह किसी न किसीको इशारा करके अपनी सब दशा जतला देगा। देखो, वह क्या करता है; और क्या नहीं करता, सो सब हमको मालूम होना चाहिए। तुम इधर-उधर न देखो। भीतर उसपर पूरी पूरी नज़र रखो।"

इतना तो उसने स्पष्ट रूपसे कहा; और फिर अन्दर ही अन्दर खुसफुसाता है, "परन्तु तुमपर इतना भी विश्वास कैसे रखें?

क्योंकि तुम उसे भगा देनेमें भी नहीं चूकोगे। किन्तु मैं स्वयं ही नज़र रखूंगा। कभी चूकूंगा नहीं!" यह कहकर वह सचमुच ही उस गुसाईंकी ओर देखता हुआ खड़ा रहा। उसके साथके लोग भी उसीकी भांति देखते खड़े रहे।

बाबाजीने दो-तीन बार अच्छी तरहसे परिक्रमा की। जितनी बार वे हनुमानजीके पीछेसे निकले, प्रत्येक बार उस ओर फुर्तीके साथ नीचे झुककर "टक् टक् टक्" की तीन बार आवाज़ की। इस प्रकार जब तीन प्रदक्षिणा हो गईं, तब उन्होंने अत्यन्त चपलगति दिखलाकर हनुमानजीको एक-दो अंगुल आगे सरकाया; और उस दराज़से कुछ डाल दिया, तथा, फिर उसी दम हनुमानजीको जहांका तहां कर दिया। यह कार्य उस समय बाबाजीने अत्यन्त ढिठाईके साथ और फुर्तीसे किया। बाहरसे जो लोग देख रहे थे, उनकी दृष्टिमें यदि हनुमानजीका हिलना ज़रासा भी आजाता, तो सर्वनाश अत्यन्त निकट था; और बाबाजी यह बात नहीं जानते थे, सो नहीं। वे जानते थे; किन्तु अपनी कर्तव्यदक्षताके विषयमें उनको इतना अभिमान था—और वह अभिमान बिलकुल ठीक था—कि, जिसका कुछ ठिकाना नहीं। जो कुछ भी हो, क्षणभरके लिए उस मुसलमान सरदारके मनमें हनुमानजीके हिलनेकी शंका ज़रूर आई। परन्तु वह यह न समझ सका कि, हमने जो कुछ देखा, वह केवल भासमात्र है या क्या? उसने सोचा कि यह भास अवश्य हुआ, पर यह भास है क्या? हनुमानजीकी मूर्त्ति हिली क्यों? जो हो, यह केवल

भास ही होगा; क्योंकि इतनी देरसे हम बराबर देख रहे हैं, पर इस क्षणके अतिरिक्त और फिर ऐसा भास भी नहीं हुआ। अन्तमें उस सरदारने समझा कि, यह केवल भासमात्र था; और कुछ नहीं। बस, यही समझकर वह कुछ नहीं बोला। इतनेमें बाबाजी भी यह कहते हुए आपहुँचे—"हां, चलो, अब जहां लेचलनेको हो, लेचलो। चलनेके पहले एक बार फिर मैं तुमसे कह देना चाहता हूं कि, तुम बिना कारण मुझ गरीब वैरागीको कष्ट देरहे हो।"

पर उनकी सुनता कौन है? बाहर आते ही आसपाससे लोगोंने उनको घेर लिया; और उनको बीचमें करके वहांसे चल दिये। मन्दिरसे बाहर निकलते समय बाबाजीने एक लम्बी सांस ली; और कुछ खेद-प्रदर्शक हंसी हँसकर पीछेकी ओर देखा।

बाबाजीके मनमें क्या क्या विचार उस समय आरहे थे, सो कुछ कहा नहीं जासकता। परन्तु उस समयके उनके उस खिन्न हास्यसे; और पीछे घूमकर अपने मन्दिरकी ओर एक विचित्र दृष्टि डालनेसे, यह अनुमान स्वाभाविक ही होता है कि, उनके मनमें कोई न कोई विलक्षण विचार आरहे थे। बहुत देर-तक वे लोग, एक दूसरेसे कुछ भी न बोलते हुए, चुपचाप, जा-रहे थे। हां, मन ही मन वे शायद कुछ सोचते जाते थे; और कुछ खुसफुसाते भी थे। मराठा सरदार यह सोच रहा था कि, देखो, यहांपर हमारी एक भी नहीं चलने पाई, एक दूसरे मनुष्य (बाबाजी) के आगे इस मुसल्लेने हमारी वेअदबी की—

वास्तवमें यह हमारा मातहत है, पर इसने हमारी न सुनकर अपनी मनमानी कार्यवाही की; और अन्तमें हमारे देखते देखते इस मनुष्यको पकड़े लिये जारहा है—इस सबका कारण क्या है ? यही तो कि, हमारे ऊपर विश्वास नहीं। बस, इसी प्रकारके विचार उस मराठे सरदारके मनमें आरहे थे; और वह मन ही मन जलता हुआ चला जारहा था। उसके घोड़ेको भी, जान पड़ता था, अपने मालिकके मनकी दशा मालूम होगई थी; क्योंकि वह भी बिलकुल उदाससा होकर चल रहा था। मुसल्मान सरदार भी अपने मनमें आई हुई शंकाओंके विषयमें विचार करता हुआ जारहा था। वह सोचता था कि, हम इस मनुष्यको क़ैद करके लिये तो जारहे हैं; पर कहीं यह, जैसा कि कहता है, कोई वैरागी ही तो नहीं है ? हमने तो इसको यही समझकर पकड़ा है, कि यह कोई न कोई बड़ा चतुर षड्-यन्त्रकर्त्ता है; और शाहजी भोसलेके छोकरेके गिरोहका कोई व्यक्ति है। परन्तु अन्तमें यह कोई बिलकुल वैरागी ही न निकल जावे; और यदि कहीं ऐसा ही हुआ, हमारा अनुमान सत्य न निकला, तो अवश्य ही हमारी किरकिरी होगी। अच्छा, यदि हमारा अनुमान सत्य है, तो फिर यह है कौन ? यह इस मन्दिर-में वैरागीके रूपमें क्यों रहता है ? हमारे सुननेमें आया था कि, इस जगह वह शाहजीका छोकरा अपने ग्रामीण साथियोंको इकट्ठा करता है—सो क्या वास्तवमें सच है ? इन बातोंका निश्चय कैसे हो ? बस, इसी प्रकारके प्रश्न वह मन ही मन

सोचकर, अपनी कल्पनाके अनुसार, उनके उत्तर भी देता जाता था। इस प्रकार कुछ देर सोचने-विचारनेके बाद अचानक उसके मनमें यह आया कि, हनुमानजीकी मूर्त्ति हिलनेका जो भास हुआ था, सो क्या था? इस बातकी याद आते ही उसकी विचारावलीमें और भी अधिकाधिक उलझन पड़ने लगी। उसके अन्तःकरणको यह विश्वास तो था ही कि, वह जो कुछ दिखाई दिया था, सो केवल भासमात्र था; परन्तु क्षण क्षणमें उसके हृदयमें एक प्रकारकी अत्यन्त सूक्ष्म शंका-ध्वनि भी उठ ही जाती थी। वह ध्वनि जड़से निर्मूल नहीं हुई; और जितनी बार उसने बाबाजीकी ओर देखा, उतनी बार उक्त शंकाध्वनि उसके हृदयमें ज़रूर ही उठती रही। यह वैरागी सच्चा वैरागी नहीं है—यह विचार तो उस समय उसके हृदयमें इतना ज़ोर भरता था कि, उसको उस समय इसी बातपर बड़ा आश्चर्य हुआ कि, यह शंका ही मेरे मनमें क्यों आई? इधर बाबाजीके मनमें जो विचार आरहे थे, सो ऐसे नहीं थे कि, उनकी चेष्टापरसे किसीकी समझमें आजाते। उनकी चेष्टा इस समय खिन्न अथवा उदास भी न थी। वे इस समय उतने ही मज़ेसे चले जारहे थे कि, जैसे वे नित्य भिक्षाके लिए जाया करते थे, अथवा और किसी स्वाभाविक कार्यके लिए चले जारहे हों! पहले की भांति अब तिरस्कार अथवा द्वेषकी भी कुछ छटा उनके चेहरेपर दिखाई नहीं देरही थी। वे इस समय बिलकुल शान्त और गम्भीर थे। अन्य लोगोंका क्या पूछना

है—वे अपने मज़ेसे इधर-उधर देखते हुए और मार्गसे आने-जानेवालोंकी हँसी-दिल्लगी करते हुए चले जारहे थे। मार्गसे जाते हुए प्रत्येक हिन्दूकी हँसी उड़ाना अथवा उस हँसीको और भी कोई बीभत्स स्वरूप देना उन मुसल्लोंके बायें हाथका खेल था। मान लो कि, दस-पाँच मुसलमानोंका गिरोह मार्गसे जारहा है; और वहींसे कोई ब्राह्मण स्नान-संध्या करके, आचमनी और पंचपात्र लिये हुए निकला—अब उस बेचारेका कुशल नहीं! बस, यही हाल उस समय था। इसके सिवाय कभी कभी वे शिखानष्ट लोग हिन्दू-स्त्रियोंकी विड़म्बना भी, भरे रास्तेमें, कर दिया करते थे। सारांश यह कि, उस समय उनकी उद्दण्डताकी कोई मर्यादा नहीं रही थी। सो उसी स्थितिका प्रत्यक्ष अनुभव इस समय हमारे बाबाजीको होरहा था। वह सरदार अपना बिलकुल चुपचाप चला जारहा था; परन्तु पीछेके लोग, जान-बूझकर ज़रा पीछे ही रहकर, धीरे धीरे, और एक दूसरेसे हँसते-खेलते, विनोदपूर्वक, तथा बाबाजीकी हँसी उड़ाते हुए और आने-जानेवालोंकी भी ख़बर लेते हुए, चले जारहे थे। परन्तु बाबाजीने अपना गौरव इतना नहीं घटा दिया था कि, उन मुसल्लोंकी हँसी-दिल्लगीमें आजाते—यही नहीं, बल्कि उन्होंने इस बातकी ख़बरदारी भी रखी थी कि, इनके सामने हमारा गौरव कम न होने पावे—वे अपने मज़ेसे, कुबड़ी इस हाथसे उस हाथमें और उस हाथसे इस हाथमें, लेते हुए, आनन्दपूर्वक, धीरे धीरे—मस्तीसे—चले जारहे थे।

चलते चलते वे लोग एक गाँवके किसी पनघटके पाससे आनिकले। वहां बेचारी ग़रीब ग्रामीण स्त्रियां पानी भरनेमें लगी थीं। जब वे लोग बिलकुल वहां पास ही आगये, तब स्वाभाविक ही वे बेचारी लजाकर अपना आँचल संभालने लगीं; और कनखियोंसे यह देखनेके लिए, कि ये कौन हैं, कहां जारहे हैं, मुह ऊपर करके खड़ी होगईं। उनमेंसे एक स्त्री—जो ज़रा सुन्दरी भी थी, अभी हालहीमें अपना घड़ा भरकर अपनी सहेलीके सहारेसे सिरपर लेकर चलनेको थी। अवस्था बिलकुल अल्हड़ थी—स्वाभाविक ही इच्छा हो आई कि, देखें, ये लोग कौन हैं। इसलिये घड़ा वैसा ही सिर-पर लिये हुए—लजाती हुई, ज़रा मुड़कर खड़ी होगई। उसकी ओर नज़र जाते ही एक मुसलमान दूसरेसे अपनी लकड़ी टोंच-कर कहता है, "ऐ म्यां, देखो तो, कैसी अदाके साथ खड़ी है! वाह क्या कहना है! बिजलीसी चमकती है। यह नज़ाकत!" दूसरेने भी उस ओर देखा; और पहलेहीकी तरह कुछ शब्द कहे। तीसरेने दूसरेसे कुछ और अश्लील शब्द कहकर पूछा; और सब लोग ठठाकर हँसने लगे। दोनों सरदार आगे जा-रहे थे, इसलिए उनका ध्यान इस ओर जा ही नहीं सकता था कि, हमारे अनुचरवर्ग पीछे क्या कर रहे हैं। इसके सिवाय उन दोनोंका मन भी अपने अपने विचारोंमें ही निमग्न था, इसलिए उनकी ओर ध्यान जाना और भी असम्भव था। पीछेवाले लोगोंमें, बीचमें हमारे एक बाबाजीको छोड़कर, और बाकी

सब लोग उस ठट्टे में शामिल थे। सब लोग उस समय उस पनघटके सामने खड़े होगये; और उन स्त्रियोंकी ओर देख देखकर उनके विषयमें—विशेषतः उस बेचारी ग़रीब सुन्दरीके विषयमें आपसमें हसी करने लगे। बाबाजी अत्यन्त क्रुद्ध हुए। मन्दिरमें जिस प्रकार उनकी चेष्टा अत्यन्त सन्तप्त और क्षुब्ध होगई थी, उसी प्रकार इस समय भी होगई—जैसे कोई ज़बरदस्त शेर पिंजरेमें बन्द किया जावे; और फिर उसको लकड़ियोंसे टोंचा जावे, उस समय जैसी उस शेरकी अवस्था होती है, वैसी ही इस समय बेचारे बाबाजीकी भी होरही थी। उन्होंने सोचा कि,इस समय क्रोधमें आकर यदि हम कुछ कहेंगे, अथवा हाथसे इनको कुछ दण्ड देनेका विचार करगे, तो इससे कोई लाभ न होगा; और उल्टे ये लोग बिगड़कर इन स्त्रियोंका और भी अधिक अपमान करेंगे। इसके सिवाय, इतने लोगोंके बीचमें हम अकेले हैं; और अबतक खुले हुए हैं, सो ये फिर हमको बांध लेंगे। बस, यही सब सोचकर बाबाजीने उस समय गम खाई। ये शिखानष्ट लोग हमारे मराठोंकी स्त्रियोंको इस प्रकार हँसी-दिल्लगी करें; और हम चुपके देखते रहें—इससे अधिक और निर्बलता क्या होसकती है? यह सोचकर उनका मन अत्यन्त क्षुब्ध होगया। अपनी क्रोधाग्निको भीतर ही दबाकर वे उसे जहांकी तहां ही खपा देनेका प्रयत्न कर रहे थे। इतनेमें उस युवतीकी गर्दनमें न जाने लचक लगी या क्या—उसने अपने दोनों हाथोंसे घड़ेको ज़रा ऊपर उचकाकर गर्दन ज़रा इधर-उधर

घुमाई; और फिर घड़ा सँभालकर रख लिया। यह एकने देखा; और तुरन्त ही वह दूसरेसे कहता है, "आय् हाय्! क्या सुराहीदार गर्दन है! यह लचक कितनी प्यारी है! घड़ेके सबबसे बेचारीको कितनी भारी तक़लीफ़ होरही है! कैसा घड़ा उठाया! यह गर्दनकी लोच! यह नाज़! वाह वा!" सब लोग फिर खिलखिलाकर हँसने लगे। इतनेमें फिर एक कहता है, "घड़ेकी तक़लीफ़ दूर करनेकी मैं कोशिश करता हूं! ज़रा देखिये तो क्या मज़ा आता है।" यह कहकर वह नीचेकी ओर झुका। बाबाजीकी आंखें अब क्रोधसे बिलकुल लाल सुर्ख़ होगई थीं। उनके मनमें कोई न कोई भयंकर विचार अवश्य आया। उन्होंने उस नीचे झुके हुए मनुष्यकी ओर अत्यन्त क्रूरताके साथ देखा; और अब उसके पास जाकर वे उसकी कमरमें एक लात मारकर उसको नीचे गिरानेहीवाले थे कि, इतनेमें वह उठा; और हाथमें लिया हुआ एक छोटासा पत्थरका टुकड़ा उस बेचारी ग़रीब सुन्दरीके घड़ेपर तानकर मारा; और कहता है, "अभीतक तो बिजली चमकती थी; और अब देखो कैसा मेह बरसने लगा!" जैसीकि, उस दुष्टकी इच्छा थी, उस बेचारीका घड़ा फूट गया; और सारा पानी उसके बदनपर गिरनेसे वह बिलकुल तर-बतर होगई। बाक़ीके लोग "वाह! वाह! यार, ख़ूब किया!" कहकर ज़ोर ज़ोरसे हँसने लगे। परन्तु अब उस पत्थर मारनेवालेकी दशा बहुत ही शोचनीय हुई! बाबाजी अब अपना क्रोध बिलकुल ही न

रोक सके। उन्होंने एकदम जाकर, कुछ भी न बोलते हुए, उस मनुष्यकी कमरमें ख़ूब ज़ोरसे एक लात मारी और उसे नीचे गिरा दिया। इसके बाद उसकी छातीपर सवार होकर उसको कोखोंमें मुक्कोंकी मार शुरू की। वह नीच ज़ोर ज़ोरसे चिल्लाने लगा। बाबाज़ीका यह कार्य इतनी तेज़ीके साथ हुआ कि, अन्य लोग यही न सोच सके कि, यह हुआ क्या; और अब हम क्या करें! सब लोग भौचक्केसे रह गये; और उस धूलमें लोटने-वाले नीचकी ओर, तथा उसको यथोचित दण्ड देनेमें निमग्न उस वैरागीकी ओर अचम्भेकी दृष्टिसे देखने लगे। परन्तु अभी इस प्रकार एक आधा मिनट भी व्यतीत नहीं हुआ था कि, वे लोग चुपके न रह सके; और एकदम शोर-गुल मचाते हुए उस वैरागीकी ओर दौड़ पड़े। इधर स्त्रियोंने देखा कि, जिस नीच मुसल्मानने उनकी सहेलीका घड़ा फोड़ दिया, उस नीच पुरुषको वैरागी खूब दण्ड देरहा है, इसलिए वे भी साहसमें आकर उस नीचको गालियां देने लगीं। उधर वैरागीकी ओर दौड़नेवाले उन दुष्टोंका कोलाहल और इधर इन स्त्रियोंकी बक-झक, दोनों आवाज़ें एकत्र होकर उन आगे गये हुए सर-दारोंके कानोंमें पड़ी। अतएव ज्यों ही उन्होंने पीछे फिरकर देखा, त्यों ही एक प्रकारका बड़ा गड़बड़सा मचा हुआ उन्हें दिखाई दिया। बाबाजीपर लोग एकदम टूट पड़े; और बाबाजी बराबर उस दुष्टपर मुक्कोंकी मार कर रहे हैं। धूलमें तड़फड़ाने-वाला वह आदमी अन्तमें रक्त-वमन करने लगा। तब कह१

बाबाजीने दम लिया; और उठकर पहले अपनी कुबड़ी उठाई, जो वहीं एक ओर पड़ी हुई थी, इसके बाद फिर वे अत्यन्त धीर और गम्भीर दृष्टिसे, इस प्रकारकी चेष्टासे कि, जैसे कुछ हुआ ही न हो, खड़े होकर, देखने लगे। उस धूलमें लोटने-वाले मनुष्यको बाबाजीके पंजेसे छुड़ानेके लिए जो लोग दौड़े थे, उनमेंसे एक मनुष्यने बाबाजीकी गर्दनपर कटारका वार किया था, पर सौभाग्यवश उनके लगा नहीं, ऊपरसे निकल गया। इसके बाद दो सिपाही उनके ऊपर और वार करने-वाले थे कि, इतनेमें वह मुसलमान सरदार घोड़ा दौड़ाता हुआ वहां आपहुंचा; और "ख़बरदार! ख़बरदार!" कहकर उन दोनों-को पीछे हटा दिया। ऊपर बतलाया ही है कि, बाबाजी इस समय बिलकुल शान्त थे। उस सरदारने इस गड़बड़ी और मार-पीटका कारण पूछा। उसके सिपाहियोंने, जो मन भाया, सो बताया। किन्तु एक बात अवश्य ही वे छिपा नहीं सके; और वह यह कि, बाबाजी उस समय क़ैदीकी हालतमें थे, उनके आसपास इतने लोगोंका घेरा था; परन्तु फिर भी उन्होंने साहस करके एक मुसलमान सिपाहीको धूलमें गिराया। यह देखकर; और सारा वृत्तान्त सुनकर, सरदार चुप खड़ा होगया। जैसे यही उसकी समझमें न आता हो कि, वैरागीको दण्ड दिया जाय या उसके साहसपर आश्चर्य्य किया जाय। अन्तमें वह बाबाजीकी ओर देखकर कहता है, "क्यों बाबाजी, तुम बतलाओ तो सही, यह हुआ क्या? तब हम सच-झूठका निपटारा करें!"

बाबाजी तिरस्कारयुक्त हँसी हँसकर कहते हैं, "मुझसे पूछनेवाला तू कौन है? जो कुछ दण्ड मुझे देना हो, खुशीसे देसकता है!"

सत्रहवां परिच्छेद।

मन्दिरसे डेढ़ कोसपर।

समय, बाबाजीको कैदकर लेजानेके बाद लगभग दो घण्टे-का; और स्थान, उस मन्दिरसे डेढ़ कोसपर।

जिस जगह हमारी इस कथाकी अधिकांश महत्वपूर्ण घट-नाएं अबतक पाठकोंको दृष्टिगोचर हुई हैं, उसी हनुमानजीके मन्दिरसे लगभग डेढ़ कोसपर अब हमको चलना है। जिस स्थानपर हमको जाना है, वह स्थान बिलकुल जङ्गलमें—पहाड़की तराईमें—दो ऊंची ऊंची पहाड़ियोंके बीचकी घाटीमें, अवस्थित है। इस स्थानमें पास ही पास दो झोपड़ियां हैं; परन्तु उन झोपड़ियोंमें मनुष्य हैं, अथवा नहीं, सो मालूम नहीं होता। चारों ओर बिलकुल सुनसान है। इन झोपड़ियोंके अतिरिक्त कोसों आसपास मनुष्यबस्तीके कोई चिह्न कहीं दिखाई नहीं पड़ते। और इस समय, जबकि हम वहां देख रहे हैं, तब तो यह भी निश्चयपूर्वक नहीं कहा जासकता कि, इन दोनों झोपड़ियोंमें भी कोई है, अथवा नहीं। बस्तीका

अनुमान सिर्फ़ एक इसी बातसे होसकता था कि, वहां झोपड़ियां बनी हुई थीं; और बिना हाथके झोपड़ियां बन नहीं सकती थीं। इस समय वहां इतना सुनसान था कि, एक उड़ते हुए घुग्घूके मोटे पंखकी फड़फड़ आवाज़के अतिरिक्त, अथवा दूरपर गिरे हुए सूखे पत्तोंमें दौड़नेवाले किसी जीव-जन्तुकी मर-मर आवाज़के अतिरिक्त और कुछ भी सुनाई नहीं देता था। हां, उपर्युक्त आवाज़ोंके अतिरिक्त एक आवाज़ वहां और भी सुनाई देरही थी; और वह थी उन दो झोपड़ियोंमेंसे एक झोपड़ीमें किसीके खुर्राटे भरनेकी आवाज़! झोपड़ीके अन्दर निगाह पहुंचाना बिलकुल असम्भव था; क्योंकि चारों ओर अत्यन्त घना अन्धकार छाया हुआ था। किन्तु खुर्राटे भरनेकी आवाज़ काफ़ी आरही थी। हां, दूसरी झोपड़ीसे सिवाय सन्नाटेके और कोई भी आवाज़ कानोंमें नहीं पड़ रही थी। जिस झोपड़ीसे खुर्राटेकी आवाज़ आरही थी; और जिस झोपड़ीसे कोई भी आवाज़ नहीं आ रही थी—दोनोंके दरवाज़े बन्द थे। एकका भीतरसे और दूसरीका बाहरसे।

झोपड़ीमें सोनेवाले मनुष्यके खुर्राटे भरनेकी आवाज़ बिलकुल ताल-सुरसे आरही थी। इतनेमें झोपड़ीसे लगभग बीस-पच्चीस कदमपर पहाड़ीमें ऊपरकी ओर एक कोनेसे कुछ उजेलेका आभास दिखाई दिया। उजेला मशालका था; और वह मशाल एक मनुष्यके हाथमें थी। वह मनुष्य पहाड़ीकी एक

छोटीसी गुफामें था; और एक अर्धवृत्ताकार छिद्र जो वहांसे दिखाई देरहा था, उसीसे अपना सिर निकालकर धीरेसे झांक रहा था। "जीवा! जीवा!" पुकार करके उसने दो-तीन आवाज़ें भी दीं; परन्तु कोई बोला नहीं। फिर उसने "जीवा! रे जीवा!" करके ज़रा ज़ोरसे पुकारा; और शीघ्र ही बाहर आ-करके भीतर गुफाके अन्दर फिर झांका; और पीछेकी तरफ किसीसे पूछा कि, "आगये न?" उसे उसका अभीष्ट उत्तर मिल गया; और उसने मशाल बुझा दी। इसके बाद वह बाहर आया हुआ मनुष्य उस झोपड़ीके पास गया कि, जहांसे खुर्राटे भरनेकी आवाज़ आरही थी, और वहां जाकर उसने ये शब्द कहे—"जीवा! अरे जीवा! क्या मर गया, या जीता है? ऐसे ही पहरा दिया करता है? दुष्ट कहींका!"

द्वारके पाससे जब उपर्युक्त शब्द ज़ोर ज़ोरसे सुनाई दिये, तब जीवाका खुर्राटे भरना एकदम बन्द होगया; और वह बिल-कुल घबड़ाया हुआ उठा, तथा लड़खड़ाते हुए द्वारके पास आया। इसके बाद ये शब्द उसके मुखसे सुनाई दिये, "कौन? कौन? येसाजी? एँ? एँ? और भी······" आगेके शब्द दर-वाज़ा खोलनेकी आवाज़में ही लुप्त होगये। झोपड़ीके बाहर जो व्यक्ति खड़ा था, उसका ध्यान भी उस ओर न था। भीतरसे दरवाज़ा खुला; और लँगोटी सभालते हुए, तथा शरीरके भिन्न भिन्न भाग; एकके बाद एक, खुजलाते हुए और "धत् तेरीकी! आज ऐसी नींद आई!" कहकर पश्चात्ताप दिख-

लाते हुए, एक काला-कलूटा, जवान मनुष्य उसके सामने आकर खड़ा होगया। जिसको उसने येसाजी कहकर सम्बोधन किया था, उस मनुष्यने तुरन्त ही उसे एक थप्पड़ जमाकर एक ओर हटाया; और बोला, "जीवा, तुझसे कितनी बार कहा, फिर भी तेरी आदत नहीं जाती। अरे! तेरे लिए यहां दो झोपड़ियां बनवाकर रहनेके लिए कहा गया है, सो क्या इसी तरह? दुष्ट कहींका! यही तेरी ख़बरदारी है!"

"ख़बरदारी" शब्दके सुनते ही उस दरवाज़ेमें खड़े हुए मनुष्यको बहुत बुरा लगा; और यह उसकी सूरतसे स्पष्ट दिखाई दिया। इसलिए वह फिर उदास होकर कहता है, "ज़रूर भूल तो हुई सरकार!"

"अच्छा, कोई हरज़ नहीं। पर आगेसे ख़बरदार रहो। जाओ; और अपनी हमेशाकी जगहसे घोड़े मँगाकर खड़े करो। आज चार घोड़े चाहिए। वह यमाजी कहां गया? यमाजी?"

"यमाजी अभी अभी 'घड़ीभरमें आता हूं' कहकर चला गया, पर अभी लौटा नहीं। जान पड़ता है, कहीं तमाशे-तमाशेमें फँस गया; और क्या?"

येसाजी फिर कुछ नहीं बोला। जीवा फिर लँगोटी संभालकर तुरन्त ही झोपड़ीके बाहर निकला; और बातकी बातमें न जाने किधरका किधर ग़ायब होगया। उसके चले जानेपर येसाजी पीछे लौटा; और गुफाके पास गया। वहां उसके पीछे पीछे गुफासे तीन मनुष्य आकर खड़े हुए थे। उनसे उसने

कहा, "अब यहां बहुत देरतक रहनेकी ज़रूरत नहीं है। जीया उधर गया है। वह घोड़े तैयार करेगा। आप सवार हों। मैं और ये यहां रहेंगे। यमाजी आजाय, फिर हम अगले प्रबन्धमें लगें। आप ज़रा भी चिन्ता न करें। श्रीधर स्वामीका यदि बाल भी बांका हुआ, तो दक्षिणमें म्लेच्छोंका नाम-निशान भी नहीं रहने देंगे—यह प्रतिज्ञा है!......हां, अब हम लोगोंको कोई न कोई क़िला बहुत जल्द हस्तगत करके सारा बन्दोबस्त करना चाहिए, यह बहुत आवश्यक है। क्योंकि यह स्थान जबतक किसीको मालूम नहीं हुआ है, तबतक तो ठीक है। किन्तु यदि किसी अच्छे सरदारको पता लग गया, तो सँभालना मुशकिल होगा; और फिर बड़ी गड़बड़ी मचेगी। इस द्वारके लिए तो कोई भय नहीं। यह तो बातकी बातमें बन्द करके दूसरी तरफ़से निकला जासकेगा, पर उधरका क्या होगा?"

अब पाठकोंको शायद यहांपर इस बातका कुछ अनुमान होगया होगा कि, उपर्युक्त लोग कौन थे। हमारे उस हनुमानजीके मन्दिरके भुँहारेमें हमारा सिपाही जवान, एक अत्यन्त तेजस्वी नवयुवक और उसके दो साथी, तथा श्रीधर स्वामी—इतने लोग उतरे थे। जिनमेंसे श्रीधर स्वामी उपनाम बाबाजी कुछ देरके बाद ऊपर आगये थे। श्रीधर स्वामीके ऊपर आजानेपर उस मन्दिरमें क्या क्या घटनाएं हुईं, सो पिछले दो परिच्छेदोंमें बतलाई गईं। श्रीधर स्वामी ऊपर आकर उन सरदारोंसे झगड़ने लगे; और भीतर, भुँहारेके अन्दर, उन चारों

आदमियोंमें बहुत कुछ इधर-उधरकी बातें होती रहीं। वे बातें अवश्य ही, ऊपरकी घटनाओंको न जानते हुए ही, हुईं। उन लोगोंको यह स्वप्नमें भी ख़याल न था कि, हमारे बाबाजीके क़ैद हो जानेतककी नौबत आवेगी। मुसलमान सूबेदारोंका उस समय यह ख़याल ज़रूर होगया था कि, हनुमानजीके इस मन्दिरमें कुछ बाग़ी लोगोंका अड्डा है; पर निश्चयात्मक यह कभी किसीको मालूम नहीं हुआ था कि, इस मन्दिरमें अमुक ही अमुक मनुष्य एकत्र होते हैं, अथवा अमुक लोगोंने अमुक जगह झगड़ा-फ़िसाद किया, अथवा डाका डाला, इत्यादि। हां, एक-दो बार किसी किसीको सन्देह अवश्य हुआ था, पर उस सन्देहको मिटानेका कोई मार्ग न था। क्योंकि इस बातका कुछ पता था ही नहीं कि, अमुक ही समयपर लोग जमा होते हैं, अथवा अमुक ही लोग जमा होते हैं। इसके सिवाय, अभी इस बातकी आवश्यकता भी उनको मालूम नहीं होती थी कि, निगहवानीके लिए बराबर मनुष्य ही रख दिये जायँ। आस-पासके क़िलेदार लोग यही सोचते रहते थे कि, गाँवके चार-छै आदमी जिस प्रकार गप्पें मारनेके लिए अथवा खेल इत्यादि खेलनेके लिए किसी चौराहे या मन्दिरके मैदानमें जमा होजाते हैं, उसी प्रकार कुछ नवजवान वहां भी इधर-उधरकी गप्पें लड़ानेको कभी कभी जमा होजाते होंगे; और कुछ उपद्रव रचते होंगे; उनको चाहे जब दाब देंगे। हां, मराठे किलेदारोंके कानोंमें कभी कभी, इस मन्दिरमें होनेवाली बातोंका, अति-

रञ्जित वर्णन पहुंचा करता था; परन्तु वह इतना अतिशयोक्त होता था कि सिवाय ज़ोर ज़ोरसे हँसनेके और कोई भी महत्व उन्हें कभी मालूम नहीं होता था। प्रायः अधिकांशका ख़याल यही था कि, कुछ अवारा छोकरे वहां जमा होकर इधर-उधर-के उपद्रव किया करते होंगे; और उसमें कोई महत्वकी बात नहीं। पुरन्दरके क़िलेदारका तो पूरा पूरा यही ख़याल था कि, यह छोकरोंके हँसने-खेलनेकी जगह है; और कोई तत्व नहीं। यह बात तो किसीको स्वप्नमें भी मालूम नहीं थी कि, इस मन्दिरमें हनुमानजीकी मूर्त्तिके नीचे एक भुँहारेका मुंह है, जो कि डेढ़ कोसपर कहीं जाकर निकला है, अथवा भीतर भुंहारेमें भवानीजीका एक भव्य मन्दिर है, जहां अस्त्र-शस्त्र और विपुल द्रव्य इकट्ठा किया जारहा है। मालूम कैसे होता? अव्वल तो अभी वह दशा ही नहीं आई थी कि, जिससे ऐसी बातोंका किसीको स्वप्न होता। इसमें सन्देह नहीं कि, मुसल्मानी अमल-दारीके अनन्वित अत्याचारोंसे सारी प्रजा पीड़ित होरही थी; और प्रत्येककी हृदयसे यही इच्छा थी कि, कब परमात्मा वह सुदिन लावे कि, जब इस शासनका अन्त हो; और हम इस कष्टसे छूटें। परन्तु उस सुदिनके उदय होनेकी आशा, महाराष्ट्रके एक तेजस्वी नवयुवकके अतिरिक्त—और कुछ ऐसे नवयुवकोंके अतिरिक्त कि, जिन्होंने उसके अत्यन्त निकट रहकर उसके प्राणोंके लिए प्राण देनेका व्रत लिया था—और किसीके भी हृदयमें जागृत नहीं हुई थी। यही नहीं

बलिक किसी वृद्ध मराठे मनसबदार अथवा क़िलेदारके कानोंमें यदि कभी यह बात पड़ती कि, "राजा शाहजी भोसले-का लड़का शिवबा मराठोंका स्वराज्य स्थापित करना चाहता है," तो वह यही कहता कि, "वाह! वाह! इस छोकरेको भी कहांकी सूझी है! जान पड़ता है कि, अपने पिताकी भी सारी कीर्ति और सम्पत्तिपर चौका लगाकर कुत्तेकी मौत मरना चाहता है!" मराठोंका स्वराज्य और मुसल्मानोंकी पराजय, दोनों बातें केवल असम्भव मानी जाती थीं। उस समय तो वहांके लोगोंका यही ख़याल था कि, मराठोंको अब मुसल्मान बादशाहोंके ही दरबारमें रहकर बड़े बड़े पद प्राप्त करने चाहिए—कहीं किलेदारी, कहीं मनसबदारी, कहीं सरदारी प्राप्त करनी चाहिए; और जन्मभर "जी हुज़ूर, जी हुज़ूर" करते हुए मुसल्मानोंके दरबारमें राजभक्तिका प्रदर्शन करते रहना चाहिए। बस, यही उस समय एक परम पुरुषार्थ समझा जाता था। हां, बहुत हुआ, तो बीच बीचमें ऐसी भी घटनाएं होजाया करती थीं कि, कोई सरदार, बादशाहसे पूछे बिना ही, कोई प्रदेश जीत लेता; और उसकी मालगुज़ारीका अधिकांश भाग एक-दो बार शाही ख़ज़ानेमें भेज देता; और फिर मनमाने तौरसे स्वयं ही उस प्रदेशकी हुकूमत करता रहता। ऐसी ऐसी घटना-ओंमें पूरी पूरी सफलता प्राप्त करना अथवा न करना प्रत्येककी योग्यतापर निर्भर रहता था। जो मनुष्य जितना ही अधिक साहसी और शूरवीर होता, वह उतनी ही सफलता भी प्राप्त

करता था। ढीले-ढाले आदमीसे कोई भी काम कभी हो ही नहीं सकता। यही हाल उस समय भी था। अस्तु। इसी प्रकारकी सम्पूर्ण अवस्था होनेके कारण, उस समय हमारे हनुमानजीके मन्दिरमें जो लोग एकत्रित होते; और जो कुछ विचार अथवा कार्य वे करते, वे सब उपर्युक्त लोगोंको बिलकुल तिरस्कार और उपेक्षाके योग्य मालूम होते थे; और वे उन लोगोंकी नज़रमें विशेष रूपसे नहीं आते थे। इसमें सन्देह नहीं, नदीका उद्गम बहुत छोटा होता है; और फिर आगे चलकर उसीकी बहुत बड़ी नदी बन जाती है। परन्तु यह बात किसीके ख़यालमें कैसे समा सकती है कि, प्रत्येक जगहसे, जहां जहांसे छोटे छोटे स्रोत निकलते हैं, वहां वहां, सभी जगहसे महानदीका ही उद्गम होगा? पर्वत और पहाड़ियोंपर न जाने कितने छोटे छोटे झरने व्यर्थ ही चले जाते होंगे! ऐसा झरना तो शायद ही कोई होता है कि, जो सब रुकावटोंको दूर करते हुए, और दूसरे झरनोंको भी अपनेमें मिलाते हुए बराबर ज़ोर ही बांधता जाता है; और थोड़े ही अवकाशमें महानदीका प्रचण्ड स्वरूप धारण करके मनुष्यमात्रका कष्ट-हरण करते हुए सबको शीतल करता है। बस, राजा शाहजी भोसलेके बेटेका प्रयत्न भी ऐसा ही होगा, सो किसी बड़े सरदार अथवा क़िलेदारके ध्यानमें उस समय नहीं आया; और उस समयकी परिस्थिति, जैसी ऊपर बतलाई गई, उसको देखते हुए ऐसा होना स्वाभाविक ही था।

जबसे कि हमारे कथानकका प्रारम्भ हुआ, राजा शिवाजी (वे अभी महाराज नहीं हुए थे) और उनके लँगोटिये मित्रोंके मनमें यह प्रबल इच्छा होरही थी कि, कोई न कोई क़िला हमारे कब्ज़ेमें अवश्य होना चाहिए—वास्तवमें इस बातकी अब उन्हें आवश्यकता ही मालूम होने लगी थी। आजतक श्री भवानी माताकी कृपासे द्रव्य और अस्त्र-शस्त्रकी सामग्री काफ़ी एकत्र होचुकी थी; परन्तु अबतक इन चीज़ोंके रखनेकी जगहें जितनी सुरक्षित समझी जाती थीं, उतनी ही सुरक्षित आगे भी वे बनी रहेंगी, इसमें सन्देह था। इसके अतिरिक्त अनुयायियोंका गिरोह भी दिन दूना-रात चौगुना बढ़ रहा था। ऐसी दशामें राजा शिवाजीके मनमें यह विचार भी आने लगा कि, अबतक जितने प्रकारके पराक्रम किये हैं, उनकी अपेक्षा श्रेष्ठ और विशेष साहस तथा वीरताके प्रयत्न करनेका अवसर अब आगया है; और ऐसे प्रयत्नोंके शुरू होजानेपर हमारे गिरोहकी परीक्षा भी भलीभांति होजायगी। येसाजी और तानाजी उनके मानो दो हाथ ही थे। उनको भी उपर्युक्त विचार पसन्द आया था। अतएव आज दस-बारह दिनसे यही सलाह-मशविरा होरहा था कि, पहलेपहल किस क़िलेकी ओर दृष्टि रखी जावे। कोई दस-पन्द्रह दिनसे हनुमानजीके मन्दिरके नीचे, भवानीके मन्दिरमें, बैठकर वे लोग यही विवेचन किया करते थे कि, कौन क़िला कितना सुरक्षित है, तथा किसमें क्या क्या गुण अथवा अवगुण हैं। स्वयं राजा शिवाजी, तानाजी, येसाजी और

श्रीधर स्वामी, इन चारोंको दक्षिणके क़िलोंका पूरा पूरा परिज्ञान था। किस क़िलेपर कौन कौनसी सुविधाएं अथवा असुविधाएं हैं, इस विषयमें उनको इतना परिज्ञान था कि, स्वयं उनके क़िलेदारोंको भी उतना परिचय होगा, अथवा नहीं, इसमें सन्देह था। अब वे लोग इसी बातका विचार कर रहे थे कि, आज दिन हम किस क़िलेको सहजमें प्राप्त कर सकते हैं; और अपना ख़ज़ाना यदि हम मन्दिरके भुँहारेसे उठा लेजावें, तो ऐसी कौनसी जगह होगी कि, जहां वह सुरक्षित रह सकेगा। जिस रातको हमारे सिपाही जवानके साथ राजा शिवाजीका परिचय कराया गया, उसी रातको कुछ देर बाद उपर्युक्त विषयमें कोई न कोई निश्चय होनेवाला था; किन्तु जैसाकि ऊपर बतलाया, बीचमें विघ्न आगया; और श्रीधर स्वामीको ऊपर जाना पड़ा। फिर इसके बाद क्या हुआ, सो पाठकोंको मालूम ही है।

बहुत देर होगई, जब देखा कि, श्रीधर स्वामी अभीतक नीचे, भुँहारेमें, उतरकर नहीं आये, तब सबको स्वाभाविक ही चिन्ता उत्पन्न हुई। लोगोंने सोचा कि, अवश्य ही श्रीधर स्वामीपर कोई संकट आया। येसाजी तीन बार ऊपरके दरवाज़े तक आकर आहट लेगये। पर सिवाय इसके कि, ऊपर कुछ गड़बड़सा होरहा है, और कोई समाचार उन्हें विदित नहीं हुआ। चौथी बार तानाजी आये; और आहट ली, उस समय बिलकुल सुनसान था। उनको बड़ा आश्चर्य हुआ, ख़ूब ध्यानसे उन्होंने

बार बार आहट ली, पर कुछ भी मालूम न हुआ। अन्तमें जब इधर-उधर देखा, तो एक ख़ञ्जर उस द्वारकी दरारसे भीतर चुभा हुआ दिखाई दिया, जिसके सिरेपर एक फूल टोंचा हुआ था। तानाजी इस संकेतको समझ गये; और तुरन्त ही अन्य लोगोंको जाकर समाचार दिया। इस संकेतका आशय यही नियत था कि, अब सीधे रास्तेसे न जाकर दूसरे रास्तेसे जाओ; क्योंकि सीधे रास्तेसे जानेमें ख़तरा है। बस, इसी संकेतके अनुसार कार्य करना निश्चित हुआ, परन्तु तानाजी एक बार फिर ऊपरकी ओर मन्दिरमें गये; और बहुत ही सध सधकर आहट ली। इससे उनको मालूम हुआ कि, श्रीधर स्वामी पकड़े हुए जारहे हैं। अतः वे फिर नीचे चले आये। वहां आकर उन्होंने अन्य लोगोंको वह सारा समाचार दिया; और आगेकी कार्यवाहीका निश्चय करके चारों मनुष्य, भुँहारेके दूसरे मार्गसे, जैसा कि इस परिच्छेद्के प्रारम्भमें बतलाया है,उस गुफाके मुँहपर गये। यह सारा मार्ग भीतर ही भीतर भुँहारेसे गया था; और ख़ूब मुड़ता हुआ जाकर उक्त गुफासे निकला था। मार्गमें कोई विशेष घटना नहीं हुई। उस दूसरे द्वारपर जाकर क्या हुआ, सो ऊपर बतलाया ही है।

जैसे कोई बड़ा भारी काला पहाड़ी चूहा हो; और उसे पहाड़ोंमें इधरसे उधर कूदते हुए कोई कठिनाई मालूम न हो, वैसा ही हाल हमारे जीवाका भी था। वह विचित्र चपलताके साथ उछलता-कूदता हुआ चला जाता था। जैसे कोई काला

हिरन व्याघ्रसे पीछा किये जानेके कारण तीरके समान नीचेसे ऊपर चला जाता हो, उसी प्रकार जीवा भी, इस बातका ज़रा भी विचार न करते हुए कि, हमारा पैर कहां पड़ता है; और कहां नहीं पड़ता, बराबर ऊपरकी ओर चढ़ता चला जाता था। वह पहाड़की चढ़ाई क्या चढ़ रहा था—ऐसा जान पड़ता था कि, जैसे किसी ज़ीनेकी सीढ़ियां चढ़ रहा हो! इसके सिवाय, वह बारम्बार सोचता जाता था कि, देखो, हमसे कभी चूक नहीं होती थी; और आज चूक गये। यह सोच सोचकर वह उदासीनसा होरहा था। पर साथ ही उसके मनको यह उत्सुकता भी थी कि, जबकि आज हम ऐसा चूक गये, तो आज हमको, कोई न कोई विशेष सेवा करके, येसाजीको खुश करना चाहिए, जिससे वे हमारी उक्त चूकको भूल जावें। बस, इसीलिए आज वह और भी विशेष तेज़ीसे चला जारहा था। जीवा एक सीधा-सादा 'हेटकरी' जातका आदमी था। उसे अत्यन्त साहसी और सच्चा समझकर येसाजी और तानाजीने, अभी थोड़े ही दिन पहले, दक्षिण कोकनसे बुलाया था। उसीके साथ उसका चचेरा भाई यमाजी भी था। उसको भी अत्यन्त साहसी और ख़ूब मज़बूत देखकर बुलाया था। राजा शिवाजीने अभी हालहीमें कोकनकी ओर एक धावा किया था। उस समय इन दोनोंका साहस देखकर वे बहुत प्रसन्न हुए; और अपने साथ देशको लेते आये। यहां लाकर उनको दो काम सौंपे गये थे। एक तो भुँहारेके मुखपर पहरा देनेका काम; और

दूसरा आसपासके किलोंपर जाकर, लकड़ी बेचनेके बहाने अथवा अन्य किसी निमित्तसे, सब ख़बरें लेते रहना। इस दूसरे कामके लिए जीवाजी बिलकुल बेकार था। परन्तु यमाजी इस काममें बड़ा चतुर और चालाक था। वह तरह तरहसे भेष बनाकर आसपास, दस-बीस कोस अथवा और भी अधिक इर्दगिर्दमें घूमा करता; और सब प्रकारकी खबरें लाता रहता था।

अस्तु। जैसाकि ऊपर बतलाया, जीवा बराबर पहाड़ीपर चढ़ता गया; और दूसरी ओर जाकर उतरा। वहां तराईमें जाकर उसने एक बार, दो बार, तीन बार सीटी बजाई। सीटीकी आवाज़ सुनते ही लँगोटी लगाये एक दूसरा 'बारगीर' सामनेकी, गुफ़ाके समान, एक जगहसे दौड़ता हुआ आया। जीवा उसके कानमें लगकर कहता है, "चार घोड़े तैयार करके लाओ। अभी यहां लोग आवेंगे। सवार होकर पूनेकी ओर जायँगे, शायद!" जिससे यह सन्देशा कहा गया, वह एक क्षण-भर भी नहीं ठहरा; और न कोई अन्य बात पूछी। वह जहांसे निकला था, उसी, गुफ़ाके सदृश, द्वारसे भीतर चला गया। उसके पीछे यदि हम भी जाकर देखें, तो हमको पहले एकदम अंधकार ही दिखाई देगा। परन्तु एक-दो मोड़ोंके समाप्त होते ही फिर चार-पांच दीपक जलते हुए दिखाई देंगे; और फिर लग-भग चालीस-पचास घोड़ोंकी एक घुड़साल दिखाई देगी। वहां कुछ तो काठियावाड़ी और कुछ अन्य उत्तम जातिके घोड़े बक़ायदा बँधे थे। सब घोड़े ख़ूब मज़बूत-पुष्ट थे। लँगोटी

लगाये हुए वह बारगीर अभी घुड़सालके द्वारपर पहुँचा ही था कि, कई घोड़े अपनी अपनी गर्दनें मोड़कर उसकी ओर एक ही दृष्टिसे देखने लगे। हमारे बारगीरने दो-चार साईसोंके नाम लेकर उनको पुकारा; और चार घोड़ोंके नाम लेकर उनको तैयार करनेका हुक्म दिया। हुक्म पाते ही वे चारों साईस अपने अपने घोड़ोंके पास गये; और जीन इत्यादि कसकर घोड़े तैयार किये। उन घोड़ोंको मानो यह अभिमान हुआ कि, इतने सब घोड़ोंमेंसे उन्हींको किसी विशेष महत्वपूर्ण सेवाके लिये चुना गया; और इसकारण वे सब विशेष उत्सुकताके साथ अपने अपने पैर उठाकर चपलता दिखाने लगे। घोड़े ज्यों ही तैयार हुए, त्यों ही बाहर निकाले गये; और जीवाजीके बतलाये हुए स्थानकी ओर चलाये गये। चलते हुए उन साईसोंमेंसे एकने स्वाभाविक ही पूछा, "जीवाजी, अरे आज किस तरफ धावा है? देखो, घोड़े भी क्या ही चौकन्ने होरहे हैं!"

जीवा कहता है, "अरे, तुझको इससे क्या मतलब? हम लोग तो हुक्मके ताबेदार हैं। और बातें जानकर हमको क्या करना?

जीवाजीका रूखा उत्तर पाकर फिर साईसोंने कुछ नहीं पूछा। चुपकेसे वे लोग अपना अपना घोड़ा नियत स्थानपर ले-गये। तबतक जीवा आगे ही जाकर वहां खड़ा होगया था।

जीवाने आकर यह सब प्रबन्ध किया; और इसमें अभी दो घड़ी भी नहीं हुई थीं कि, इतनेमें हमारा युवक सिपाही,

तानाजी और वह नवयुवक तेजस्वी पुरुष—ये तीन मनुष्य पहाड़परसे उतरते हुए दिखाई दिये। हमारा सिपाही जवान यद्यपि उन दोनोंके समान शीघ्रतापूर्वक नहीं उतर सकता था; परन्तु फिर भी उसने जहांतक होसका, अपनी हेठी नहीं दिखने दी। तथापि उन दोनों व्यक्तियोंके ध्यानमें वह बात आहीगई। परन्तु वह पहाड़ी प्रदेश हमारे युवक सिपाही-के लिए बिलकुल अपरिचित था। ऐसी दशामें उसके उतरने-चढ़नेमें यदि कुछ न्यूनता दिखाई दी, तो कोई आश्चर्यकी बात भी नहीं थी। अस्तु। वे तीनों ज्यों ही पहाड़परसे उतरकर आये, त्यों ही तीन साईसोंने घोड़े आगे किये। उस तेजस्वी नवयुवकने एक बार उन घोड़ोंकी ओर दृष्टि डाली। इसके बाद एक घोड़ेकी ओर देखकर कहा, "बेटा, चल, तू ही आज मुझे ले चल।" यह कहकर तुरन्त ही उछलकर उसपर सवार हुआ। फिर उसने एक घोड़ेकी ओर इशारा करके हमारे सिपाही जवानको उसपर सवार होनेको कहा। शेष दो घोड़ों-मेंसे एकपर तीसरा महाशय सवार हुआ। इसके बाद यह तीसरा महाशय जीवाकी ओर देखकर कहता है, "तू थोड़ी देर चौथा घोड़ा रखकर यहीं खड़ा रह। येसाजी अभी आवेंगे। आज राजा साहबने तुझे क्षमा किया है; परन्तु फिर कभी यदि इसी प्रकार गाफ़िल दिखाई दिया, तो……"

आगेके शब्द पूरे भी न होने पाये थे कि, इतनेमें उस तेजस्वी नवयुवकने अपने घोड़ेको छोड़ दिया। उसकी एक ओर वह

युवक सिपाही और दूसरी ओर तानाजी तुरन्त ही रवाना हो-गये। साईस और जीवा, सब दांतों तले उँगली दबाये, अचम्भे-में आकर देखते रहगये।

इधर येसाजी उस पहाड़ीकी दूसरी ओर, उपर्युक्त झोपड़ीके पास ही, खड़े थे। उनके मुख-मण्डलपर कुछ चिन्ताकीसी झलक दिखाई देरही थी, जैसे किसीकी प्रतीक्षामें हों! वास्तवमें वे यमाजीकी रास्ता देख रहे थे। अन्तमें यमाजी आया। येसाजी उससे कुछ पूछनेहीवाले थे कि, इतनेमें वह स्वयं ही कहने लगा, "सरकार! आप यहां! अच्छा हुआ, जो आपकी भेंट होगई। मैं आपसे मिलनेके ही विचारमें था।"

"क्या? क्या? ऐसा क्या महत्वका काम है? कोई विशेष ख़बर! मालूम होता है, पुरन्दरकी ओर गया था? क्या हाल-चाल है उधरका?"

"सुना है कि, राजा शहाजीका पत्र आया है, उसमें आप-की इस सब कार्यवाहीके बारेमें बहुत कुछ लिखा है; और उसमें शायद ऐसा भी कुछ लिखा है कि, इन सब बातोंके बन्द करने-का जहांतक होसके जल्दी ही प्रयत्न करना चाहिए।"

"बस! इतना ही तो? अच्छा, देखा जायगा। मैंने समझा, शायद बीजापुर इत्यादिकी तरफ़से किसी सरदार इत्यादिके चलनेकी ख़बर लाया हो! उस पत्रमें क्या है, सो सब मैं बातकी बातमें समझ लूंगा; और आवश्यकता होगी, तो पत्रतक मँगा लूंगा। इसके सिवाय उसमें यदि कुछ होगा भी……"आगे

कुछ भी न कहकर उन्होंने अपनी जीभ दांतों तले दबाई। जैसे, जो कुछ वे कह रहे थे, सो कहना नहीं चाहिये था, यही समझ-कर उन्होंने ऐसा किया। इसके बाद वे कुछ समयतक विचारमग्नसे दिखाई दिये। किन्तु फिर थोड़ी ही देर बाद वे उससे कहते हैं :—

"यमा, आजतक तूने जो सेवा बजाई है, सो मैं जानता ही हूं। तेरा चातुर्य, तेरी कर्त्तव्य-दक्षता राजा शिवाजीके ध्यानमें भी आगई है। और मौका आनेपर तुझे इनाम भी अच्छा मिलेगा। किन्तु आज तुझे और एक विशेष कार्य बत-लाता हूं। वह कार्य यह कि, हनुमानजीके मन्दिरके उन बाबाजी-को तू जानता ही है, उनको आज एक मराठे सरदार और एक मुसलमान सरदारने क़ैद कर लिया है, सो तू अभीका अभी जा; और उनपर नज़र रख। जो कुछ ख़बर हो, समय समयपर बतलाते रहना। बाबाजीकी जानको यदि कुछ ख़तरा हो, तो तू जो चाहे सो करना,पर मुझे ख़बर ज़रूर देना। और यदि ऐसी कोई बात न हो,तो सिर्फ़ उन दोनों सरदारोंपर नज़र रखना और जो हालचाल हो, हमको बतलाते रहना। तीन दिनके अन्दर मैं उनको छुड़ाकर रहूंगा। जा; और उस भोंदू जीवाको इसका पता बिलकुल न लगने देना। जा, बहुत जल्द यहांसे। घबड़ाना बिलकुल नहीं। ज्यों ही तू यहांसे गया, मैं पहाड़ी चढ़ना शुरू करूंगा।"

यह सुनकर यमाजी तुरन्त ही अपनी झोपड़ीमें गया।

अभी सिर्फ दस-पन्द्रह मिनट हुए होंगे कि, इतनेमें पैरोंमें घुँघुरू इत्यादि झनकाते हुए और हाथमें डफ लेकर उसपर थाप मारते हुए, कंधेपर झोली इत्यादि डालकर तथा चेहरेपर सिन्दूर इत्यादि लगाकर वह जोगिन बनकर निकल पड़ा; और येसाजीको राम राम करते हुए वह मंदिरकी ओर चल-दिया। येसाजी उसकी ओर हास्यमुखसे कुछ देरतक देखते रहे। फिर उसके दृष्टि-ओट होते ही पहाड़ी चढ़ने लगे।

पहाड़ी चढ़कर अभी वे बहुत दूर नहीं गये थे कि, इतनेमें कुछ ठहरकर उन्होंने चारों ओर नज़र डाली; और एक दीर्घ निःश्वास छोड़ा। यह निःश्वास किस दुःखद विचारके कारण उनके अन्दरसे निकला, इसका कुछ अनुमान करना सहज नहीं था। उस लम्बी सांसके छोड़नेके बाद लगभग आधी घड़ीतक वे वैसे ही खड़े हुए बिलकुल निरुद्देश्य-दृष्टिसे किसी ओर देखते रहे; और इसके बाद फिर उन्होंने अपना चढ़नेका सिलसिला जारी किया। नवयुवक येसाजीके मनमें इस समय जो विचार आरहे थे, उनको जाननेका इस समय यदि हमारे पास कोई साधन होता, तो क्या ही अच्छा होता। हमको पूर्ण विश्वास है कि, उस समय उनके मनमें जो विचार आरहे थे, वे कोई न कोई अत्यन्त उदासीनताके थे। यह देश, जो सचमुच आज मराठोंके अधिकारमें होना चाहिये था, मुसल्मानोंके हाथमें चला गया है—फिर इस ज़ुल्मी राज्यकी हम प्रशंसा करें! दास्यभावमें आकर राजभक्ति और स्वामिभक्तिके गीत गावें! जैसाकि हमारे 'शिवबा'के

मनमें आया है, क्या कभी भी हमारे हाथोंसे—कमसे कम—इस प्रान्तका उद्धार होगा? अवश्य होगा। होगा और जल्दी होगा। राजा शिवबापर भवानी माताकी सच्ची कृपा है। बिलकुल लड़कपनसे मैं देखता हूं। हम लोगोंके खेलमें भी हार कभी उसे हुई ही नहीं। और आज दो-चार वर्षसे तो हम लोग पराक्रमके ही कार्योंमें लगे हैं। इसमें भी निष्फलता कभी नामको भी नहीं आने पाई। निष्फलताके लिये उसका अवतार ही नहीं हुआ। कदापि नहीं, सफलताहीके लिये उसका अवतार हुआ है। उसके हाथसे यह महान् कार्य पूर्ण कराने के लिये ही भवानी माताने उसे जन्म दिया है, इसमें तिलमात्र भी शंका नहीं। अब हमने किला लेनेका इरादा किया है, इसमें भी सफलता होगी या नहीं, इसकी उसे बिलकुल चिन्ता नहीं। वह तो कहता है कि, चाहे जिस क़िलेको हम बातकी बातमें लेसकते हैं। किन्तु डर लगता है, तो हमींको। इतनी अवस्थामें इतना साहस और इतना चातुर्य भवानी माताकी कृपाके बिना हो ही नहीं सकता।

बस, इसी प्रकारके कोई न कोई विचार उस समय येसाजीके मनमें आरहे थे। उनके धीर और उदार हृदयमें उस समय और विचार आ ही कौन सकते थे? अपने उन विचारोंके जोशमें ही वे बड़ी तेज़ीके साथ ऊपर जारहे थे। कुछ ही समय बाद वे दूसरी ओर जा उतरे। परन्तु जीवा जिस ओर खड़ा था, उस ओर पहले वे नहीं गये—किन्तु पहले वे घुड़सालकी ओर गये; और वहां जाकर एकबार सारे घोड़ोंका उन्होंने भलीभांति

निरीक्षण किया, फिर घुड़सालके अधिकारीसे जो कुछ पूछना था, सो पूछा; और जो कुछ कहना था सो कहा— इसके बाद फिर वे वहां आये, जहां उनके लिये जीवा घोड़ा लिये हुए खड़ा था। जीवासे फिर गाफ़िल न रहनेके लिये ताक़ीद की; और पहलेके तीन सरदारोंकी तरह वे भी फिर घोड़ा बढ़ाकर वहांसे चल दिये।

अठारहवां परिच्छेद ।

श्यामाने क्या किया ?

सुभान गड़बड़में पड़ा, श्यामाने उसके हाथसे गिरा हुआ कागज़, बड़ी चपलताके साथ, तुरन्त उठा लिया; और वहांसे लम्बा हुआ, सो सब पाठकोंको याद ही होगा—यही नहीं, बल्कि अब वे यह जाननेके लिए उत्सुक भी होंगे कि, श्यामाका फिर क्या हुआ; और उसने उस कागज़को क्या किया, इत्यादि। अच्छा, आइये, अब हम उसके पीछे पीछे चलें, जिससे हमारी वह जिज्ञासा पूर्ण हो। श्यामा, एक चपलताकी मानो छोटी-सी मूर्त्ति ही था, सो पाठकोंको अबतकके उसके वृत्तान्तसे मालूम ही होगया होगा। उस मुसलमानको धता बताकर लिफाफे सहित वह वहांसे पौ-बारह हुआ; और बराबर एकसी चाल रखकर भरी दोपहरीमें वह धारगाँव जापहुँचा। इसी

गाँवमें जाकर वह लिफाफा उसे देना था। लिफाफा इस ढंगसे देना था कि, वह मुख्य मालिकके अतिरिक्त और किसी-के हाथमें भी न जावे। श्यामाके हाथसे उसका दूसरेके हाथमें जाना बिल्कुल ही असम्भव था—और कोई होता, तो बात ही दूसरी थी। हां, उसके सामने अब यही प्रश्न था कि, वह लिफाफा मुख्य मालिकके हाथमें किस ढंगसे जावे कि, जो किसी दूसरेको मालूम भी न होने पावे। ग्रामकी सीमापर पहुँचकर श्यामा कुछ देरके लिए बाहर ठहर गया। उसने सोचा कि, देशमुखके घरमें शायद हमको पहचान लेंगे; और पूछ-तांछ करेंगे कि क्या है, क्या नहीं, इसलिए हमको बड़ी सिताबीके साथ जाकर अपना काम करना चाहिए। इस प्रकार वह क्षणभर विचार करता रहा। बात यह थी कि, देश-मुखके महलोंमें वह एक-दो बार नहीं, कई बार गया था, इस लिए वहांके सब लोग उसे पहचानते थे। अतएव उसके नन्हेसे शरीरका गम्भीर मन अब कुछ कुछ इसी विचारमें लगा था कि, असली जगहतक ख़बर कैसे पहुँचावें; और वह कौनसी युक्ति करें कि, जिससे बीचमें कुछ पूछना ही न पड़े—और यदि पूछना भी पड़े, तो कोई बात खुलने न पावे—और हमारा काम ठीक ठीक निकल जाय। वह एक बहुत ही तेज़ लड़का था, अतएव बातकी बातमें, उसने, अपने उपर्युक्त विचारोंके विषयमें जो कुछ निश्चय करना था, सो कर लिया; और सीधा देशमुख-के महलोंका रास्ता पकड़ा। वहां जाकर क्या देखता है कि,

सारे गाँवमें चारों ओर पकड़-धकड़ और भगदड़ मची हुई है! जिसको देखिये, वही बड़ी तेज़ीसे भागा जारहा है। घरोंके लोग बहुत ही घबड़ाहटमें हैं; और अपनी अपनी छतोंकी खिड़कियों इत्यादिसे अत्यन्त उदासीनतापूर्वक देख रहे हैं। यह हो क्या रहा है, सो कुछ श्यामाके ध्यानमें न आया। कई भागनेवालोंसे उसने पूछा भी कि, यह क्या बात है; पर किसीने उत्तर न दिया; और दो-एकने दिया भी, तो अत्यन्त विचित्र! एकने कहा, "तेरे बापकी बरसी है।" दूसरेने कहा, "तेरी माकी छठी है!" श्यामा बेचारा बड़े गड़बड़में पड़ा; और इधर-उधर देखने लगा। परन्तु ज्यों ज्यों वह देशमुखके महलोंके निकट पहुँचता गया, त्यों त्यों भीड़ भी बढ़ती गई। और देखता है, तो महलोंके पास भीड़का कुछ ठिकाना ही नहीं है। यह बात क्या है? अबतक तो वह इसी चिन्तामें था कि, यह पत्र सीधा देशमुख साहबके हाथमें कैसे पहुंचेगा; और यहां यह हाल दिखाई देरहा है! देशमुखके महलोंके आसपास इतनी भीड़ क्यों है? सोचता हुआ वह चालाक लड़का कुछ और आगे बढ़ा—इस आशासे कि भलीभांति निरीक्षण करनेसे, और कान लगाकर सुननेसे, जो कुछ होगा, सो मालूम हो जायगा; और उसकी यह आशा किसी अंशमें सफल भी हुई। क्योंकि उसी दम आगे घुसकर उसने देखा कि, देशमुखके महलोंको सशस्त्र मुसलमान सिपाहियोंने आ घेरा है; और महलोंके अन्दर भी मुसलमान लोग, हथियार लिये हुए, घुसे हैं। कोई

न कोई बीचहीमें खिड़कीके पास आता है; और कुछ न कुछ फेंक देता है, अथवा जो लोग नीचे एकत्रित हो रहे हैं, उनके ऊपर थूक देता है; और थूक पड़नेके कारण क्रुद्ध होकर यदि कोई ऊपरकी ओर देखने भी लगता है, तो उसके ऊपर फिर थूंक देता है, अथवा कुछ कूड़ा-कचरा डाल देता है। बस, यही हाल होरहा था। जो लोग नीचे एकत्रित थे, वे दूर दूर हटने लगते थे, अथवा कोई कोई मन ही मन क्रुद्ध होकर दांतोंसे होंठ चबाने लगते; और कुछ गुनगुनाकर गालियांसी देने लगते थे। इसके सिवाय, महलोंके अन्दर बड़ा कोलाहल मचा हुआ था। पर यह सब क्या था, कुछ पता नहीं लगता था। श्यामा एक नन्हासा छोकरा, पर उसकी जिज्ञासा बड़ी प्रबल! फिर उसमें भी देशमुखके महलोंमें मुसलमान घुसे थे, सो कुछ यों ही नहीं घुसे थे, कोई न कोई अत्याचार और अपमानकी बात अवश्य थी। इस भारी सन्देहके कारण उसके मनमें क्रोध भी बहुत आया। अपने सन्देहको मिटानेके लिए आसपासके लोगोंसे उसने बहुत कुछ पूछा; पर वहां सुनता कौन है? सब अपनी अपनी धुनमें मस्त! अन्तमें एकने त्रस्त होकर उससे कहा, “अबे छोकरे, देखता नहीं क्या? बादशाहके सिपाही महलोंमें घुसकर सबको कैद कर रहे हैं; और लूटपाट मचा रहे हैं?”

परन्तु इतनेसे उस बेचारेका समाधान कहां होसकता था? मुसलमान लोग महलोंमें घुसे थे, चारों ओर कोलाहल

मचा था, ऐसी दशामें यह तो उसे प्रत्यक्ष ही दिखाई देरहा था कि, मुसलमान लोग उपद्रव करके कोई न कोई विडम्बना कर रहे हैं; पर ऐसा क्यों होरहा है? देशमुख साहब कहां हैं? सो कुछ मालूम नहीं पड़ता था। श्यामा यह सोचकर कि, अब हमको स्वयं ही इसका पता लगाना चाहिए, क्रम क्रमसे आगेकी ओर घुसा। परन्तु अभी वह बहुत दूर नहीं घुसने पाया था कि, आगेसे एक सिपाहीने उसे पीछे हटानेके लिए, बन्दूकका कुन्दा मारा। गरीब बेचारा—क्या करता? एकदम बेहोश होकर पीछे गिर पड़ा—अच्छा हुआ, जो किसीने पीछेसे उसे सम्हाल लिया,नहीं तो मर ही जाता। किन्तु कुछ देरमें होशमें आनेपर क्या देखता है कि, अब वे मुसलमान लोग, जो अबतक महलोंको घेरे हुए थे, भीड़के ऊपर अपने घोड़ोंको बढ़ाकर लोगोंको दूर हटा रहे हैं; और महलके दरवाज़ोंकी भीड़ भी क्रमशः दूर होरही है। इसलिए श्यामाने अब समझा कि, इस भीड़में हम पार नहीं पासकते, अतएव वह पीछेकी ओर हटा। उसी समय उसके मनमें यह भी विचार आया कि, अब हमको महलोंके पीछेसे जाकर कुछ पता लगाना चाहिए। सचमुच ही वह बेचारा उस समय अत्यन्त निराश होगया था। परन्तु फिर भी उसने अपने उपर्युक्त विचारको पूर्ण करनेके लिए भीड़के अन्दरसे निकलना शुरू किया। इतनेमें सब लोग अत्यन्त घबड़ाकर इधर-उधर भागने लगे। महलके आसपासके घुड़सवारोंने एकदम भीड़पर अपने घोड़े छोड़ दिये; और

अपनी लम्बी लम्बी तलवारें इधरसे उधर घुमाते हुए—तथा इस बातकी भी कुछ परवा न करते हुए कि किसीके प्राण जायँगे या क्या—जिधर ही मन माना, उधरको जाने लगे। लोग जल्दी जल्दीसे आसपासके घरों, झोपड़ियों, खेतों और बाड़ियोंमें घुसने लगे। ऐसा न समझिये कि, उनके हाथमें शस्त्र नहीं थे, अथवा शस्त्रोंका उपयोग उन्हें मालूम नहीं था। परन्तु बादशाहकी हुकूमत ही तो ठहरी—उसके अत्याचारके सामने मामूली लोग क्या कर सकते हैं? बस, यही सबके विचार थे! गाँवके लोगोंका देशमुखपर बड़ा प्रेम था, पर लाभ क्या? मौका आनेपर कौन खड़ा हो? सब मन ही मन क्रुद्ध होरहे थे; दांतोंसे होंठ चबा रहे थे—करते ही क्या?

कुछ देरके बाद महलोंके आगेकी; और गाँवकी भी भीड़ बहुत कुछ कम होगई; अथवा यों कहिये कि, उन सवारोंने जब भीड़पर अपने घोड़े छोड़ दिये, तब भीड़ तितर-बितर होगई। रास्तेमें कोई नहीं दिखाई देता था। हां, दोनों तरफ घरोंके चबूतरोंपर और छतोंकी खिड़कियोंपर लोग दिखाई देरहे थे! ये सब लोग पुरुष ही थे। स्त्रियोंका तो पुतला भी दिखाई नहीं पड़ता था। इस प्रकार महलोंके सामनेका मार्ग जब निर्जन होगया, तब महलोंके अन्दरके लोग बाहर निकलने लगे। महलोंके अन्दरसे निकले हुए सवार बिलकुल रक्तसे नहाये हुए दिखाई देते थे। आगे लगभग छै आदमी आये। उनके पीछे पांच-छै आदमी पैदल चले जारहे थे। उनके

पीछे एक वृद्ध महाशय गर्दन नीची किये धीरे-धीरे चले जा-रहे थे। उसके पीछे पीछे दो लड़के १० और १२ वर्षकी उम्र-के होंगे। लड़कोंके पीछे बुर्का डाले हुए एक स्त्री; और उसके पीछे दो-तीन और स्त्रियां-उसीकी तरह बुर्का डाले जा-रही थीं। स्त्रियोंके पीछे पांच-सात पैदल; और फिर उनके पीछे पहलेहीकी भांति पांच-सात सवार थे। इन सबके पीछे एक अत्यन्त भयंकर सूरतका सवार था, जो अकेला ही चल रहा था। उसकी चेष्टासे स्पष्ट दिखाई देरहा था कि, इस सारे कार्यका संचालक और प्रेरक यही है। इस प्रकार एक अत्यन्त उदासीन समारम्भ बाहर निकला! श्यामा अत्यन्त उदास भावसे, एक घरके चबूतरेपरसे, यह सारा दृश्य देख रहा था। जो वृद्ध महाशय—वृद्ध न कहकर यदि उन्हें प्रौढ़ कहा जाय, तो विशेष सयुक्तिक होगा और सत्य भी होगा—आगे चल रहे थे, वेही देशमुख साहब थे। कुटुम्ब-सहित उनकी विडम्बना करके उन्हींको इस समय बाहर निकाला गया था। इसके बाद, अब जो मुसलमान सवार और सिपाही भीतर रह गये, तथा उस समय जो और भीतर गये, उन सबने मिलकर, फिर लूट-मार और तोड़-फोड़का उपद्रव शुरू किया। ठीक दोपहरका समय, सूर्य सिरपर आया, कहीं न कोई वृक्ष और न कोई छाया; और यदि हो भी, तो उसका उपयोग कौन करने दे? स्पष्ट था कि, उन छोटे छोटे बच्चों, उन वृद्ध महाशय और उन बेचारी स्त्रियोंको संकटमें डालने और उनकी विडम्बना करनेके लिए ही यह सब किया गया था।

परन्तु अचानक यह सब क्यों हुआ ? किसीको कुछ मालूम नहीं। जो कुछ हुआ, सो बिलकुल अचानक ! एकाएक दस-ग्यारह बजेके लगभग करीब पचास सवारोंका—जिनमें अधिकांश मुसलमान ही थे—गिरोह एकदम कोलाहल मचाते हुए गाँवमें पैठा। कौन हैं, क्यों आये हैं, कुछ पता नहीं। लोगोंने सोचा, कोई डाकू, चोर, उठाईगीरे होंगे, दिन-दहाड़े डाका डालने आये होंगे। इसलिए कुछ लोग उत्तेजित होकर अपना शौर्य दिखलाते हुए उन पचासों सवारोंको काट डालनेका विचार करके दौड़े। किन्तु गिरोहका सरदार एकदम चिल्लाया, "ख़बरदार ! ख़बरदार, यदि किसीने इन सवारोंके शरीरको हाथ लगाया, तो उसको टुकड़े टुकड़े करके सारे गाँवको भस्म कर दूंगा, कभी छोड़ूंगा नहीं। तुमको यदि अपने प्राणोंकी परवा हो; और अपने घरद्वारको बचाना चाहते हो, तो चुपकेसे अपने अपने घरोंमें जाकर बैठो—कमसे कम होता क्या है, सो चुपकेसे देखो। हम आये हैं बीजापुरके बादशाहका हुक्म लेकर—सो उस हुक्मके बजा लानेमें जो कोई विघ्न डालेगा, वह व्यथ के लिए अपनी जानसे हाथ धो बैठेगा; और सारा गाँव जला दिया जायगा, सो अलग !"

इससे अधिक उसने और कुछ कहा ही नहीं, बलिक एकदम वह अपने गिरोहके साथ महलोंपर ही पहुँचा। वहां कुछ लोगोंको तो उसने बाहरसे महलोंको घेरनेका हुक्म दिया; और बाकी लोगोंको दीने-इस्लामके नामपर जोश दिलाते हुए मह-

लोंके भीतर अपने साथ लिया। सिपाही भीतर घुसते हुए कहते हैं, "कहां है देशमुख ? पकड़ो बदमाशको ! उसका ज़नाना कहां है ? बग़ावत ! बग़ावत करता है—एँ ?" इस प्रकार कुछ बकते-झकते हुए उन्होंने एकदम उपद्रव मचा दिया। सदर दरवाज़े और ड्योढ़ीके लोगोंने, जहांतक होसका, मुक़ाबिला किया; पर अन्तमें बेचारे कहांतक टिक सकते थे ? सिपाहियोंने हथियारोंसे ही काम लिया;और अन्तमें स्त्री,बच्चों और बुड्ढोंकी दुर्दशा करते हुए तरुण सिपाही आगे बढ़े। महलके लोगोंको मारने-काटनेमें भी उन्होंने कसर नहीं की; और इस प्रकार रक्तस्राव करते हुए वे सीधे देशमुख साहबके कमरेमें पहुँचे। उनको क़ैद किया, उनके कुटुम्बको क़ैद किया। फिर उनको लेकर, जैसा-कि हमने पीछे बतलाया, वे लोग भरी धूपमें बाहर निकल पड़े; और पीछेसे महलोंको लूटकर विध्वंस करनेका हुक्म दिया। एकदम ऐसा क्यों हुआ, किसीके कुछ समझमें न आया। सब अपने पासवालोंसे पूछने लगे। पूछते पूछते लोग आपसमें अनुमान भी करने लगे;और अनुमान करते करते परस्पर विश्वसनीय उत्तर भी देने लगे।

अस्तु। इधर देशमुख और उनके आदमियोंको भरी धूपमें धर घसीटा। उनको और उनके बालबच्चोंको इस प्रकार कष्टित देखकर ऐसा कौन था, जिसका हृदय भर न आया हो ? पर बेचारे करते ही क्या ? चुपके उनकी वह दुःखदायक दशा देखकर दीर्घ निःश्वास लेते रहे; और मन ही मन मुसलमानी राज्यको

गालियां देते रहे। इसपर हमारे पाठक शायद कहेंगे कि, क्या मराठे लोगोंमें उस समय तेजस्विताकी कुछ कमी थी? उनके गाँवके मुखियाको—उस वृद्ध देशमुखको, कि जिसपर सारे ग्रामका इतना प्रेम था—बालबच्चों सहित दसबीस मुसल्ले सिपाही भरी दोपहरीमें घसीट लेगये; और मराठे लोग, मर्द हो-कर, अपनी आँखों देखते रहे! क्या धारगांवमें एक भी मराठा न था कि, जिसका हृदय, उस अत्याचारको देखकर, विदीर्ण नहीं हुआ? एक भी मराठेका, तलवार धारण करनेवाला हाथ स्फुरित नहीं हुआ? एक भी मराठा वीर क्रुद्ध होकर तलवार लिये हुए आगे नहीं बढ़ा? वे तो मराठोंके पराक्रमके दिन थे, फिर ऐसा क्योंकर हुआ? इस प्रकारके प्रश्न पाठकोंके हृदयमें उठ सकते हैं। पाठकवृन्द! निस्सन्देह इस प्रकारके मराठे वीर उस गाँवमें थे, उनके हृदय भी विदीर्ण हुए, उनकी भुजाएं भी फड़कीं, उनमेंसे एक-दो मराठे अपनी तलवारको मज़बूतीके साथ पकड़कर आगे बढ़े भी थे। किन्तु उनको सफलता प्राप्त होने-का समय अभी नहीं आया था। मुसलमान सरदारों और सिंहा-सनाधीशोंके पापका घड़ा अभी इतना नहीं भरा था कि, जो दुष्टोंका निर्दलन करनेके लिए परमेश्वर अवतार लेता। उनके पापका घड़ा भरनेमें अभी थोड़ीसी देरी थी। बस, इसीकारण वे मराठे वीर अपने मनको रोके हुए बैठे रहे। जो हो, अब हमको इन बातोंको यहीं छोड़कर, सिर्फ श्यामाके पीछे पीछे चलना चाहिए।

श्यामा उन सम्पूर्ण घटनाओंको देखकर क्षणभरके लिए ठहर गया। इतना छोटा लड़का, फिर सुबहसे उसको कुछ खाने-पीनेको भी नहीं मिला, परन्तु उस भयंकर अत्याचारको देखकर उसकी भी भूख-प्यास सारी हट गई। उसकी उसे याद भी नहीं आई। उसका हृदय बिलकुल भर आया। अपने हाथकी काल्पनिक तलवार कि, जिसे प्राप्त करनेकी उसे भारी महत्वाकांक्षा थी, उसने मज़बूतीके साथ पकड़ी। इसके बाद फिर उसने उन मुसलमान सिपाहियोंकी गर्दनपर कि, जो उसके आगे जारहे थे, अपने काल्पनिक वार, एकके बाद एक—बिलकुल अवकाश न लेते हुए—किये। इतनेमें वे लोग दृष्टिकी ओट होगये। इसलिए वह भी अब इस विचारमें लगा कि, अब हम कहां जावें; और आगे क्या करें। उसने सोचा कि, जो लिफाफा हम लेआये हैं, वह अब देशमुख साहबके हाथमें पहुँचा नहीं सकते; और न ऐसा करना अब इष्ट ही है। इसलिए अब उसने सिर्फ इतना ही टटोलकर देखा कि, लिफाफा अपने पास जहां रखा था, वहां है या नहीं। इसके बाद फिर वह कुछ विचार करता हुआ महलोंके पीछेकी ओरको चला। महलोंमें अब भी थोड़ा-बहुत उपद्रव हो ही रहा था। महलोंके पीछेकी ओर श्यामा इस विचारसे जारहा था कि, उस ओरसे हम भीतर चले जायँगे; और देखेंगे कि बात क्या है; और तब फिर लौटेंगे—बिना कुछ पता लिये यहांसे जाना ठीक नहीं है। यह वह सोच ही रहा था कि, इतनेमें उसे कुछ स्मरण आया;

और मन ही मन वह बोला, "क्यों ; इस गड़बड़ीमें सूर्याजी राव दिखाई क्यों नहीं दिये ? इन मुसल्लोंने उनको कहीं मार तो नहीं डाला ? अवश्य ही, उनको मार डाले बिना महलोंमें इतना उपद्रव मचानेका इनको साहस ही कैसे होसकता था ? जो कुछ हो, जान तो यही पड़ता है कि, इन बदमाशोंने सूर्याजी रावका ख़ून कर डाला। हाय हाय ! नाना साहबको जब यह वृत्तान्त मालूम होगा, तब उनको न जाने कितना दुःख होगा ! वे इसका बदला लिये बिना भी नहीं रहेंगे। उन दोनोंका प्रेम ही ऐसा था ! दोनोंमें बड़ा ही स्नेह था ! अच्छा, अब एक बार भीतर जाना चाहिए; और देखना चाहिए कि, क्या बात है। सूर्याजी रावके दर्शन जबतक नहीं कर लेवें, उनकी क्या दशा है, सो प्रत्यक्ष जबतक नहीं कर लेवें, तबतक यहांसे लौटना कदापि मुनासिब नहीं।" श्यामा यही सोच रहा था।

अब यहांपर पाठकोंको सूर्याजी रावका थोड़ासा परिचय देदेना अनुचित न होगा। वास्तवमें सूर्याजी राव देखमुख साहबके बड़े बेटे थे। वे अभी बिलकुल नवयुवक अत्यन्त शूर और उत्तम पुरुष थे। क़िलेदार साहबके लड़के नाना साहबके जो विचार थे, वही विचार सूर्याजी रावके भी थे। मुसल्मान-राज्यके ये भी कट्टर द्रोही थे। हमारा श्यामा उनपर भी बड़ी भक्ति रखता था; और इसीकारण वह इस समय सोच रहा था कि, सूर्याजीके रहते हुए उनके मा-बाप और घरद्वारकी ऐसी दुर्दशा मुसल्मान लोग कदापि नहीं कर सकते थे; और न अपनी

जीवितावस्थामें वे मुसल्मानोंको अपने महलोंमें ही घुसने दे- सकते थे। इसलिए यह निश्चय है कि, या तो सूर्याजी रावको मुसल्मानोंने मार डाला,अथवा नाना साहबकी तरह वे भी कहीं न कहीं चले गये। अन्यथा मुसल्मानोंको ऐसा साहस नहीं हो- सकता था। बस, यही समझकर श्यामा चुपकेसे महलके अन्दर जानेके लिए पीछेकी ओर गया। वहां जानेपर पहले उसने इधर-उधर देखा। परन्तु उस ओर कोई था ही नहीं। बिलकुल सुनसान था। पिछला फाटक बिलकुल टूटा पड़ा था। श्यामा आगे कुछ भी विचार न करते हुए एकदम भीतर घुस पड़ा; और प्रत्येक चौकसे खूब देखते-भालते हुए अन्दर जाने लगा। देखता क्या है कि, चारों ओर बहुतसा सामान और वस्तुएं टूटी- फूटी पड़ी हैं। चौकोंकी कितनी ही कोठरियोंमें लाशें पड़ी थीं, इस प्रकारका दृश्य श्यामाने अपने उस छोटेसे जीवनमें पहले ही पहल देखा। आजतक ऐसा भयंकर दृश्य कभी उसकी नज़रोंमें नहीं आया था; परन्तु फिर भी वह छोकरा ज़रा भी नहीं घबड़ाया। वह पहले ही जानता था कि, हमें अन्दर जाकर ऐसा ही कुछ दृश्य देखना पड़ेगा। इसके सिवाय उसको लाशोंके अतिरिक्त और विशेष देखना ही क्या था! उसको तो यही देखना था कि,सूर्याजीकी भी लाश कहीं दिखाई देती है या नहीं—दुष्टोंने उन्हें मार तो नहीं डाला! वह आगे बढ़ा। सूर्यका प्रकाश अभी काफी था। उसने प्रत्येक लाशको गौरके साथ देखा; परन्तु सूर्याजीकी लाश कहीं दिखाई नहीं पड़ी। तब वह पहले चौकसे

दूसरे चौकमें गया। वहां उसे क्या ही भयंकर दृश्य दिखाई दिया !

उन्नीसवां परिच्छेद।

महलोंका भयंकर दृश्य !

श्यामाने दूसरे चौकमें अभी क़दम ही रखा था कि, इतनेमें जो दृश्य उसे दिखाई दिया, वह अत्यन्त भयंकर था! उसका क़दम चौकमें पड़ते ही ऊपरसे एक लाश नीचे चौकमें आकर गिरी, जिसे देखकर वह बिलकुल भौंचक्का रह गया। वह लाश एक स्त्रीकी थी। श्यामा क्षणभर उस लाशकी ओर एकटक देखता रहा! वह लाश एक दासीकी थी; और यह पहचाननेमें उसे विलम्ब नहीं लगा। किन्तु ऐसा हुआ क्यों? इस दासीकी लाश इस समय नीचे कैसे आई? क्या किसीने फेंकी? क्या अभीतक कोई ऊपर मार-काट कर ही रहा है? श्यामाने ऊपर-नीचे, दायें-बायें देखा। एकदम उसके मनमें आया—यह ज़नाना चौक है। ऊपरके कमरोंमें सूर्याजीकी स्त्री, बहिन, मा इत्यादि स्त्रियां रहती थीं, सो उसके ध्यानमें आया। यह लाश—एक दासीकी लाश—ऊपरसे डाली किसने? क्या इन दुष्टोंकी निर्दयताकी सीमा यहांतक पहुँच गई! क्या अब वे डाकुओंकी तरह घरके भीतर घुसकर अपने हाथोंसे—उस अपनी कायरता-

भर तलवारसे—औरतोंका भी खून करने लगे ? श्यामाने अभी-तक तलवार अपने हाथमें कभी नहीं पकड़ी थी; पर यह वह भलीभांति जानता था कि, तलवार पकड़नेवाले मनुष्यको स्त्रियोंपर कभी हाथ न चलाना चाहिए। अवश्य ही उस समय उसने यही समझा कि, यह कोई अत्यन्त नीच मुसल्मान सिपाही है कि, जिसने इस स्त्रीका खून करके ऊपरसे उसकी लाश नीचे धड़ामसे डाली ! लाश ऊपरसे नीचे बड़े ज़ोरसे गिरी, जिससे उसका मस्तक टकराकर टूट गया; और वह बहुत ही विद्रूप दिखाई पड़ने लगी ! लाशका वस्त्र ज़रा अस्तव्यस्त होगया। यह सब देखकर श्यामाके शरीरके रोंगटे खड़े होगये। लाश नीचे कैसे गिरी, यह देखनेके लिए उसने ऊपरकी ओर देखा; पर उसे कुछ दिखाई नहीं दिया। लाश किसी मनुष्यहीने डाली; पर यह बात क्या है, सो कुछ श्यामाके ध्यानमें नहीं आया। इतनेमें उसे ऐसा भास हुआ कि, जैसे कोई चीख़ मार रहा हो ! उसने फिर ऊपर देखा। ऊपरकी खिड़कियां सब बन्द थीं। उन खिड़कियोंसे तो लाश नीचे आई नहीं; क्योंकि एक भी खिड़की खुली नहीं थी। फिर कहांसे आई ? डाली किसने ? फिर ऊपर देखा। ज़रा और ऊपर नज़र डाली। हां, ऊपर छत थी। शायद छतपर ही कोई बात हुई हो ! यह विचार अभी उसके मनमें आया ही था कि, उसको निश्चय होगया कि, छतपर ही अभी कुछ उपद्रव होरहा है। उसके साहसके लिए अब और किसी उत्तेजनाकी आवश्यकता न थी। कोई

न कोई भयंकर घटना अभी यहां होरही है। बस, इतना ही उसके लिए काफ़ी था। वह तीरकी तरह एक कोनेके ज़ीनेसे ऊपर चढ़ गया। ज़ीने, एकके ऊपर एक, बराबर छततक चले गये थे। वह अन्तिम ज़ीनेपर अभी आधी दूरतक नहीं पहुँचा था कि, इतनेमें उसे सुनाई दिया कि, किसीने बड़े ज़ोरसे चीख़ मारी। वह फिर इधर-उधर कुछ भी न देखते हुए एकदम ऊपरकी ओर चला। ऊपर ज़ीनेके मत्थेपर पहुँचकर उसने झांककर क्या देखा—एक ओरके कमरेके दरवाज़े बिलकुल खुले हैं; और एक अत्यन्त युवती तथा रूपवती स्त्री बेहोश पड़ी है। वहीं एक मुसण्डा यवन एक छोटीसी दरी बिछाकर, उसीपर उस स्त्रीको रखनेका विचार कर रहा है। पास ही एक सुन्दर हिँडोलेकी एक तरफ़, बाहरकी ओर, एक बालक पड़ा हुआ रो-रहा है। बालक अब ज़ोर ज़ोरसे रोने लगा। वह मुसल्मान मुसण्डा उस बेहोश पड़ी हुई युवतीकी ओर एक बार देखकर कहता है, "ऐ सुन्दरी, बहुत दिनसे तेरे ऊपर मेरी आँख थी। सो आज पूरी हुई। अब मैं तुझे ले जाऊंगा। तेरे उस (थूक कर)—थू: उसकी लाशपर—दरिद्री पतिको मैंने कभीका शैतान-के घर भेज दिया। तेरी उस दासीको भी, जो बहुत इधर-उधर करती थी, नरकमें ढकेल दिया। और इस अभागी बच्चेको मार डालनेका भय दिखलाया, इतनेमें तू बेहोश होकर गिर पड़ी। सो अच्छा ही हुआ। अब मैं तुझे इस दरीमें लपेटकर घोड़ेपर रख लेजाऊंगा। (बीचमें कुछ त्रस्तसा होकर) अरे! यह कम-

वक़्त कैसा चिल्ला रहा है—अभी गलेपर पैर रखकर मारे डालता हूं!" यह कहकर वह दुष्ट सचमुच ही उस बालककी ओर बढ़ा। अपनी तलवार उसने अभी डाल दी थी। श्यामाने यह सब देखा। अब एक क्षणका ही अवकाश था! वह दुष्ट—वह शैतान—अपना जूता पहना हुआ पैर उस निरपराध बालकके गलेपर रखना ही चाहता है! दृश्य अत्यन्त भयंकर था, जिसे देखकर श्यामाका स्वरूप एकदम बदल उठा। उसकी देहमें किसी विचित्र वीरने संचार किया। और इतने जोशके साथ वह आगे बढ़ा, इतने वेगसे उसने उस मुसंडेकी तलवार उठाई; और इस चपलतासे उसने उस दुष्टकी पीठपर वार किया कि, यह सब लिखनेमें तो हमें कुछ समय लगा; पर इसका शतांश समय भी उसके इतना सब करनेमें लगा होगा अथवा नहीं, इसमें सन्देह है। उस समय वह मानो कोई और ही जीव बन गया! वार उसने इतने जोशके साथ किया कि, मुसलमान सिपाहीको पीछे मुड़कर देखनेका भी अवकाश नहीं मिला। वह एकदम धड़ामसे पीछे हो उतान गिर गया। बालक बच गया। दुष्टका पैर उसकी गर्दनपर नहीं पड़ने पाया था, श्यामाका वार इसके पहले ही उसपर होगया। वार बिलकुल अचानक हुआ। उस सिपाहीको यह ख़याल स्वप्नमें भी न था कि, इस समय हमारे सिवाय यहां और भी कोई है—और वह भी ऐसा, जो हमपर वार करे! और सचमुच उसको ऐसा ख़याल हो भी कैसे सकता था—क्योंकि जिनको तलवारका

उसे भय था, उन सबको तो उसने और उसके साथियोंने कभीका यमलोक भेज दिया था, अथवा क़ैद कर लेगये थे। अब और कोई बाक़ी भी बचे होंगे तो लुक-छिपकर बैठी हुई स्त्रियां कहीं भले ही रह गई हों। इसी ख़यालमें वह चूर था। ऐसी दशामें पीछेसे जब एकदम उसपर वार हुआ, तब वह बड़े अचम्भेमें आया। सच पूछिये, तो पीछे उस वारके होनेसे उसे जितना दुखित होना पड़ा, उससे कहीं अधिक उसे चकित होना पड़ा।

श्यामाने उस समय ऐसा विलक्षण कार्य किया, जोकि किसी बड़े मनुष्यसे भी नहीं होसकता था। उसकी समय-सूचकता अत्यन्त प्रशंसनीय थी। उसे यह मालूम था कि, हमारे शत्रुकी शक्ति और हमारी शक्तिमें ज़मीन आसमानका अन्तर है। इसलिए उसने सोचा कि,इस समय यदि हम चूक जायँगे— यह इस समय वारसे घायल होकर और चालाकीसे चकित होकर गिर पड़ा है, इसी हालतमें यदि हम इसको मार नहीं डालेंगे, अथवा कमसे कम लंगड़ा-लूला नहीं कर डालेंगे, तो यह बातकी बातमें उठकर हमको साफ़ कर देगा, बातकी बातमें हमको कुचल डालेगा। यह सोचकर उसने, कुछ भी आगे-पीछे न देखते हुए, जहां बन पड़ा, अपने उस नन्हेसे हाथकी नैस-र्गिक चपलतासे, उसके शरीरमें एक-दो-तीन-चार वार किये। नाकपर, मुँहपर, छातीपर! आख़िर तलवार उसके हाथमें थी ही! उसने सोच लिया था कि, वार हमारे चाहे जैसे हों,

शत्रु के ऊपर कुछ न कुछ प्रभाव होगा ही ! तलवार उसने एक प्रकारसे कभी छुई ही नहीं थी, तलवार उठाकर वार करना तो दूर रहा। फिर भी उसने इस समय ऐसी समयसूचकता दिखलाई ! उस समय यदि कोई वीर पुरुष उसकी उस समय-सूचकताको देखनेके लिए वहां उपस्थित होता, तो उसके विषयमें उसने क्या भविष्यद्वाणी कही होती—उसे कैसा गौर-वान्वित किया होता ! परन्तु श्यामाने वह पहलेपहल जो परा-क्रम दिखलाया, उसको देखनेके लिए उस दुष्टके अतिरिक्त—जो कि उसीकी तलवारसे घायल हुआ था—और कोई भी वहां उपस्थित नहीं था। हां, एक प्राणी और भी था—और वह था वह छोटा बालक, जो रोते रोते थककर बीचमें चुप होगया था; और आँखें खोले हुए उसकी ओर देख रहा था। जैसाकि हमने ऊपर बतलाया, श्यामाने पहले चार-पांच वार किये; और फिर इसके बाद चार-पांच वार उसने और भी उसके पैरोंपर किये। क्योंकि उस समय वह यही समझ रहा था कि, इस समय हम जितने ही वार इसके ऊपर करें, उतने थोड़े ही होंगे। कहां किस प्रकारका वार करनेसे हमारा काम सहजमें होजायगा, सो उस बेचारेको क्या मालूम ! वह दुष्ट बहुत कुछ तड़फड़ाया, बहुत कुछ उठनेकी कोशिश की, पर क़ामयाब न हुआ। जिस प्रकार किसी रसीले वृक्षके तनेमें, एकके बाद एक, इस प्रकार कई वार करनेसे उसमेंसे तमाम रस बहने लगता है, उसी प्रकार उस दुष्टके शरीरसे भी, जगह जगहसे लोहू बह निकला

सारे शरीरमें घाव होगये। उसको इधरसे उधर और उधरसे इधर तड़फड़ाने अथवा मुँहसे गालियां देनेतककी ताक़त नहीं रह गई। वह जो कुछ गुनगुनाकर गालियां देरहा था, अथवा बिलख रहा था, सो उसके मनको और होठोंको ही मालूम!

इतनी देरतक उस भारी तलवारके चलानेसे, अथवा यों कहिये कि, उस मुसल्लेके स्नायुमय पुष्ट शरीरमें उस तलवारके बारम्बार घुसेड़ने और निकालनेके परिश्रमसे, श्यामाके हाथ बिलकुल थक गये। यहांतक कि, अब वह तलवार उससे उठने ही न लगी; और अब आवश्यकता भी न रही थी। उस दुष्टके आसपास रक्तके पनाले बह रहे थे। यह सब देखकर श्यामाको अन्तमें चक्करसा आगया। एक बार उसने चारों ओर देखा; और वह छोटासा छोकरा एकदम नीचे बैठ गया। बैठते बैठते वह गिर पड़ा और बेहोश भी होगया। उसका परिश्रम बहुत भारी था। इधर वह छोटा बच्चा भी रो रोकर थककर, सोगया।

उस समय उस कमरेका वह दृश्य बहुत ही भयंकर दिखाई देरहा था। एक ओर रक्तके नाले बह रहे थे, जिनमें वह दुष्ट तड़फड़ाता हुआ पड़ा "हाय! हाय!" कर रहा था। दूसरी ओर वह छोटासा बच्चा पड़ा सोरहा था; और ख़ूनके पनाले उसके नीचेतक पहुँच रहे थे। इधर उस दुष्टकी एक ओर वह छोटा छोकरा, चक्कर आजानेके कारण, अस्तव्यस्त पड़ा हुआ था, तथा वहीं दूसरी ओर वह युवती, सुन्दरी मृतककी भांति शान्त पड़ी

हुई थी ! इस समय यदि वहां किसीने आकर वह दृश्य देखा होता, तो वह क्या कहता ? उसके मनमें क्या अनुमान होता ?

एक तरफ़ तो ये सब प्राणी, उपर्युक्त रीतिसे, पड़े हुए थे; और दूसरी ओर महलके एक और कमरेमें एक मनुष्य और भी मृतवत् पड़ा हुआ था। उसके एक घाव तो बड़ा ज़बरदस्त हुआ था; और दो साधारण घाव लगे थे, इस प्रकार कुल तीन घाव थे। पहला घाव उसकी गर्दनमें था; और शेष दो घावोंमेंसे एक सिरमें और दूसरा दाहिने हाथमें था। इन घावोंसे ऐसा रक्त बहा था कि, प्रायः इसीकारण वह मरा हुआसा पड़ा था। कमसे कम जिसने, अथवा जिन्होंने, उसे घायल किया था, उन्होंने तो यही समझ लिया होगा कि, यह अब ज़िन्दा नहीं है। पर वास्तवमें उनकी वह समझ भ्रमपूर्ण थी ! कमसे कम अभीतक तो वह पुरुष मरा नहीं था, क्योंकि हम जिस समय उसको देखने जारहे हैं, उसी समय उसके मुखसे एक लम्बीसी सांस निकली। उसका शरीर थर्राया; और जैसे किसी मनुष्यकी जिह्वामें विशेष शक्ति न हो; और वह बोलनेका प्रयत्न करने लगे, तो जिस प्रकार उसके होंठ हिलने लगते हैं, उसी प्रकारे उसके भी होंठ हिलते हुएसे दिखाई दिये। यही नहीं, बल्कि उसने अपना एक पैर इधर-उधर किया; और "हाय ! हाय !" अथवा "आह ! आह !" के समान कोई शब्द भी उच्चारण किये। इतना ही नहीं, किन्तु सुननेवाला यदि अपना कान उसके मुँहके बिलकुल पास लेगया होता,

तो उसके ये, आगे लिखे हुए, शब्द भी सुनाई दे सकते थे:—
"हाय ! हाय ! पिताजी, माताजी, वहनजी और मेरी स्त्रीकी इन शिखानष्टोंने बहुत ही विडम्बना की होगी, अथवा कर रहे होंगे ! और मैं ! मैं किसी कायरकी भांति यहां पड़ा मर रहा हूं ! आह ! आह ! मन तो ऐसा ही होता है कि, इनके कलेजेको चूस लूं ! पर क्या करूं ? क्या करूं ? मुझ अकेलेपर वे तीन मुसंडे एकदम टूट पड़े; और तीनोंने तीन ओरसे मुझपर वार किये। मुसंडे थे बड़े धूर्त्त ! उन्होंने समझ लिया कि, अकेले यदि कोई मुझसे मुक़ाबिला करेगा, तो उसमें जीत मेरी ही होगी। इसीसे तीनोंने एकदम मुझपर आक्रमण किया। ईश्वरकी इच्छा ! किन्तु अब मैं क्या करूं ? महलमें तो चारों ओर सुनसान दिखाई देता है। क्या पिताजीको क़ैद कर ले-गये ? माताजी, वहनजी और मेरी स्त्री, तथा बच्चेको भी शायद पकड़ लेगये हों ! कहीं सबका ख़ून तो नहीं कर डाला ? और सचमुच ही पकड़ लेजानेकी अपेक्षा तो सबका ख़ून ही कर डाला हो, तो अच्छा ! इन शिखानष्टोंकी सेवा करना मानो बिलकुल कृतघ्नोंकी सेवा करना है। वह बिलकुल सूलीपरकी रोटी है ! हा परमेश्वर ! क्या कभी हमारे इस दुर्भाग्यका अन्त भी होगा ? हमारे धर्मका, हमारी गोमाताका यह कष्ट क्या कभी दूर होगा ? हा ! हा ! अरे ये दुष्ट हमारे देखते हुए हमारी मा-बहनोंका अपमान करते हैं ! हमारी आँखों देखते गौओंका बध करते हैं; और हमारी ओर देखकर हँसते हैं..."

इस प्रकारके प्रत्यक्ष उद्गार मानो उसके मुँहसे बाहर निकल रहे थे। बेचारा इधरसे उधर और उधरसे इधर छटपटा रहा था। एकबार उसके मनमें आया कि, हमको उठना चाहिए; और अपनी शक्तिका बिलकुल ख़याल न करते हुए वह उठने भी लगा—उठनेका उसने प्रयत्न किया—किन्तु उसकी इच्छा जितनी प्रबल थी, शरीर उतना प्रबल नहीं था। अतएव, अपना सिर उठाकर, उसे एक हाथसे टेककर, ज्यों ही वह उठने लगा, त्यों ही उसे भारी चक्कर आया; और वह फिर निश्चेष्ट होकर गिर पड़ा।

बीसवां परिच्छेद।

अन्तिम सन्देश।

इधर उस युवतीकी, उसके छोटे बच्चेकी, श्यामाकी; और उस मुसल्लेकी क्या दशा हुई, सो देखिये!

युवती वहां बिलकुल बेहोश पड़ी हुई थी। मालूम नहीं होता था कि, वह मर गई है, अथवा अभी जीती है। न कुछ हिलती थी, न डुलती! पास ही इतनी देरसे बच्चा रोरहा था; पर उसको उसकी कुछ ख़बर न थी। यह संसार उसके लिए अब भारमात्र था। श्यामाने आकर वहां क्या किया; और पीछेसे क्या घटना हुई, सो उसको रत्तीभर भी ख़बर नहीं थी। उसको

यदि यह मालूम होजाता कि, जिस दुष्टने हमको ऐसी भयंकर दशामें ला छोड़ा है, वह हमारे निकट ही दुर्दशाग्रस्त होकर मर रहा है,उसको अब हाथ-पैर हिलानेकी भी शक्ति नहीं,तो उसको बहुत ही आनन्द हुआ होता; परन्तु जिस प्रकार अपने बच्चे तथा घरके अन्य लोगोंकी भयंकर यातनाओंके कारण होनेवाले दुःखसे वह अज्ञात थी, उसी प्रकार अपने शत्रुकी अत्यन्त दुर्गति देखकर होनेवाले आनन्दसे भी वह अज्ञात ही थी। उतने बड़े उस कमरेमें, एक उस घायल होकर मरते हुए दुष्टके अतिरिक्त, और कोई भी प्राणी सचेत नहीं दिखाई देता था। हां, वह दुष्ट अवश्य ही छटपटा रहा था; और उसको विश्वास होगया था कि, अब मैं बच नहीं सकता। क्षण क्षणपर वह अधिकाधिक क्षीण होता चला जारहा था। फिर भी वह तड़फड़ा अवश्य रहा था। बड़े कष्टसे उसने करवट बदली; और आँखें खोलीं। आँखें खोलते ही उसकी दृष्टि उस सुन्दरीकी ओर गई, जिससे एकाएक उसे ऐसा मालूम हुआ कि, जैसे कुछ शक्ति-सी आगई हो। अहा! आज कितने ही दिनसे मैंने इसको प्राप्त करनेका प्रयत्न किया, कितने ही अवसरोंसे लाभ उठानेकी कोशिश की, कितनी ही कारस्तानियां कीं; और अन्तमें यह हाथ भी लगी। यह पक्वान्नोंसे भरा हुआ थाल सामने खींचा; और अब ग्रास मुँहमें डालनेभरकी देरी थी कि, इस दस-बारह वर्षके छोकरेने मेरी यह दशा कर दी! इसने मेरा सब अभिमान चूर कर दिया! धिक्कार है मेरे पौरुषको! इन मूँछोंको रखकर

क्या किया? इस दाढ़ीका अब क्या होगा? इस प्रकारके विचार उसके मनमें आये ; और उन विचारोंके आवेगमें उसे जोश भी आगया। वह नखसे शिखतक रक्तसे नहाया हुआ था, रक्तकी धाराएं अभी भी उसके शरीरसे बह रही थीं, फिर भी उसे दूसरा कोई विचार नहीं सूझा। वह बिलकुल अंधा होगया। उसको यह विश्वास होचुका था कि, अब मैं मर जाऊंगा—ऐसी दशामें ख़ुदाका नाम लेते हुए उसे पड़ा रहना चाहिए था। परन्तु नहीं,शैतानने उसके मनको ग्रसा, शैतानने ही उसके मनको शक्ति दी। मरते दमतक किसीको सुविचार नहीं सूझने देंगे—यही शैतानका व्रत है; और ऐसे लोग शैतानको अत्यन्त प्यारे हैं। अवश्य ही,उसने अपने प्यारेको इस समय भी नहीं छोड़ा। उस दुष्ट मुसलमान सिपाहीने सोचा कि, आजतक जिस बातके लिए हमने इतने प्रयत्न किये,उस बातको तो अब सिद्ध कर ही लेना चाहिए—कमसे कम इस तरुणीका ओष्ठस्पर्श करके तो हमें कृतार्थ हो ही लेना चाहिए—मृत्यु तो धरी-धराई है, सो तो कुछ मिटती नहीं। इस प्रकारके विचार उसके मनमें आये; और उन्होंने किसी प्रकार भी उसका पिंड नहीं छोड़ा। बस, इन्हीं विचारोंके आवेगमें वह दुष्ट चांडाल सचमुच ही उठनेकी कोशिश करने लगा। किन्तु जब उसमें सफल नहीं होसका, तब इस प्रयत्नमें लगा कि,घिसलते घिसलते जाकर अपना मनोरथ पूर्ण करूं। इसमें उसे कुछ सफलता प्राप्त हुई। उस युवती, सुन्दरीके बहुत पासतक वह पहुँच गया; और अब वह

अपना दुष्ट मुख ऊपरको उठानेहीवाला था कि, इतनेमें वह युवती इस प्रकार क्षुब्ध होकर जाग उठी, जैसे कोई मनुष्य किसी संकटके समय अचानक किसी कारणसे उठ पड़े। ऐसा मालूम हुआ कि, बेहोशीकी हालतमें उसे स्वप्न हो पड़ा। उस अवस्थामें उसे ऐसा भास हुआ कि, जैसे उसके पवित्र शरीरपर किसी चांडालकी छाया पड़ती हो! बस, इसीकारण वह क्षुब्ध होकर उठ पड़ी। देखती क्या है कि, सचमुच ही उसके पास वह चांडाल आकर पड़ा हुआ है। जैसे कोई किसी काल-सर्पको देखकर एकदम दूर होजाय, उसी प्रकार वह "मर जा!" कहकर चीख़ मारती हुई दूर होगई। उस समय उसके मनमें यही आया कि, इस समय मैं बड़े संकटसे बची। इसके बाद सकबकाकर वह चारों ओर देखने लगी। उसकी चेष्टा इस समय अत्यन्त भयभीत और थोड़ी थोड़ी क्रुद्ध भी दिखाई देरही थी। शायद उसकी चीख़ कानमें पड़ी, इसीकारणसे उसका वह बच्चा, जो एक ओर पड़ा सोरहा था, जाग पड़ा; और रोने लगा। यह सुनकर वह दौड़ी; और तुरन्त ही, "बेटा! अरे मेरे छोने! इतनी देर मैं तुझे छोड़कर कहां चली गई थी!" कहकर उसे छातीसे लगा लिया; और बार बार चुम्बन लेने लगी।

बच्चे के हाथ लग जानेसे उसे अत्यन्त आनन्द हुआ। उस आनन्दमें मानो वह यही भूल गई कि, मैं कहां हूं; और कहां नहीं। ऐसा जान पड़ा कि, अब उसे यह भी भान नहीं रहा कि, अभी क्षणभरके पहले मैं किस बड़े संकटसे बची। वह बिलकुल

पागलकी तरह इधर-उधर डोलने लगी। इतनेहीमें उसकी नज़र उस पड़े हुए दूसरे छोकरेकी ओर गई। और फिर वह एकदम "अरे यह कौन!" कहकर चिल्लाई। उस समय यदि किसी दूसरेने उसका वह बोल सुना होता, तो उसे यही भास होता कि, कहीं यह पागल तो नहीं होगयी। किन्तु उस समय उसकी वह दशा देखने और उसका वह वचन सुननेके लिए वहां कोई भी जागृत नहीं था। उसके उस चिल्लानेको सुनकर ही श्यामा जाग पड़ा। उसने एक लम्बी सांस ली, हाथ पैर तन्नाये, जमुहाई ली; और आंखें खोलीं—देखा, तो उसके सामने वह स्त्री खड़ी है। उसे देखते ही वह चैतन्य लड़का एकदम उठकर खड़ा होगया। इसके बाद एक बार उसने चारों ओर देखा। पहलेपहल तो उसके स्मरणमें सब बातें नहीं आईं। किन्तु धीरे धीरे सब बातें उसके ध्यानमें आगईं। क्षणभर तो यह कुछ भी उसके ध्यानमें न आया कि, मैं कहा हूं; और कैसे आया। क्योंकि जिस समय वह चक्कर खाकर गिरा था, उस समय इतना बेहोश होगया था कि, उसे कुछ भी भान नहीं रहा था। परन्तु अब, जबकि चारों ओर उसने देखा—और विशेषतः उस छटपटाते हुए दुष्टकी ओर जब उसकी दृष्टि गई, तब उसे सब कुछ याद आगया। इसके बाद, जिस तलवारसे उसने उस शिखानष्ट सिपाहीको जर्जर किया था, उसकी ओर जब उसकी नज़र गई, तब तो उसे फिर सारी बातें पूरे तौरपर याद आगईं। वह उस स्त्रीकी ओर देखने लगा; और वह स्त्री उसके मुखकी ओर देखने लगी।

इतनेमें श्यामा एकदम उससे कहता है, "सूर्याजीराव कहां हैं ?" इस प्रश्नके कानमें पड़ते ही उस स्त्रीकी जो दशा हुई, उसके वर्णन करनेकी हमारी लेखनीमें शक्ति नहीं है। वह एकदम वहांसे झपटी; और तीरकी तरह उस कमरेसे अदृश्य होगई। उसके पीछे पीछे श्यामा भी गया। श्यामाको यह भलीभांति मालूम था कि, यह सूर्याजीरावकी स्त्री है; और इसीलिए उसने उससे यह प्रश्न किया था। उस बेचारेको यह क्या मालूम कि, उसके मनकी उस समय क्या दशा थी। वह यदि मालूम होती, उसके विषयमें उसे यदि थोड़ासा संशय भी होता, तो उसने वह प्रश्न न किया होता। जो हो, वह उसके पीछे पीछे गया। किसी चकित हिरनीकी भांति वह इस दरवाज़ेसे उस दरवाज़ेमें और उस दरवाज़ेसे इस दरवाजेमें छलांगें भरती हुई जारही थी। अन्तमें वह उस जगह पहुँची, जहां वह वीर पुरुष छटपटाता हुआ पड़ा था; और जिसका उल्लेख पिछले परिच्छेदके अन्तमें हुआ है। वहां आकर वह चारों ओर शून्य दृष्टिसे देखने लगी। जिस पुरुषको ढूँढ़नेके लिए वह आई थी,वह पुरुष—वही उसका प्यारा पति—अबतक उसकी दृष्टिको छटपटाता हुआ दिखाई नहीं पड़ा। वह वहींकी वहीं पागलकी तरह घूमने लगी। उसके मनको यह भास तो अवश्य होचुका था, कि जिसकी तलाशमें आई हूं, वह पुरुष यहींपर कहीं है अवश्य। वह बार बार उसके पास जाती; और फिर दूर हट जाती। अन्तमें उसने कुछ सोचा; और गोदके लड़केको तुरन्त ही नीचे डाल

दिया। फिर उस शान्त पड़े हुए—ग्लानिके कारण बेहोश पड़े हुए—वीर पुरुषके पास गई। उसकी ओर ज़रा ग़ौरसे देखा; और बड़े ज़ोरसे चीख़ मारकर एकदम बेहोश हो गिर पड़ी। श्यामा उसके पीछे पीछे उसे ढूँढ़नेके लिए आ ही रहा था;परन्तु वह अत्यन्त वेगके साथ भागती हुई और छलांगें मारती हुई चलरही थी, इसकारण वह बराबर उसके साथ नहीं रह सका—वह इस बातपर ध्यान नहीं रख सका कि, जल्दीसे वह किस कमरेमें चली गई। वह इस कमरेसे उस कमरेमें और उस कमरेसे इस कमरेमें घूम रहा था। इतनेमें उसके उपर्युक्त चीख़नेकी आवाज़ उसके कानोंमें पड़ी, जिसे लक्ष्य करके वह दौड़ता हुआ उसी कमरेमें आया। देखता क्या है कि, सूर्याजीराव बिलकुल घायल होकर मृतवत् पड़े हैं—यही नहीं, बल्कि श्यामाने तो पहलेपहल यही समझा कि, वे बिलकुल मर ही गये हैं। उनके मरनेका विचार मनमें आते ही उसके मनकी कुछ विचित्रसी दशा होगई। क्योंकि जैसी नानासाहबपर उसकी भक्ति थी, वैसी ही सूर्याजीपर भी थी। नानासाहबके सन्देशे-वन्देशे और पत्र इत्यादि लेकर इधर कई बार वह आचुका था। सूर्यांजी और नानासाहब दोनोंमें बड़ा स्नेह था। दोनों मिलकर जब कभी शिकार-विकारको जाते, तब इस छोकरेने कई बार उनका कौशल देखा था। इसके अतिरिक्त उनके पटा-बनेठी, कुश्ती, मलखम्भ, इत्यादि खेलोंके कौशल भी उसे मालूम थे। उस छोकरेको उक्त खेलोंका मर्म तो

बहुत मालूम नहीं था—हां, इतना वह अवश्य जानता था कि, सूर्याजी भी हमारे नानासाहबके समान ही एक वीर पुरुष हैं। और इसीकारण, महलोंके अन्दर प्रवेश करते ही,यह बात उसके ख़यालमें आई थी कि, सूर्याजी यदि महलोंमें होंगे, तो, जबतक उनकी लाश न गिर जाय, वे कदापि शत्रुओंको अन्दर नहीं घुसने देंगे। यह सब चूंकि पहले ही उसे मालूम होचुका था; और इसीकारण, सूर्याजीको जबकि उसने मृतवत् पड़ा हुआ देखा, तब उसे कोई आश्चर्य नहीं हुआ। फिर भी उसके मुँहसे "हा! हा! अन्तमें मुसल्मानोंने इनको मार ही डाला"—इस प्रकारके वचन निकले बिना नहीं रहे। क्षणभर उन दोनोंकी ओर—उस स्त्री और उस पुरुषकी ओर—उसने देखा। फिर सूर्याजीके बिलकुल पास वह गया; और उनकी ओर ज़रा ग़ौरसे देखा। इतनेमें सूर्याजीके एक दीर्घ निःश्वास छोड़नेका उसे भास हुआ। उसे मालूम था कि, बेहोश आदमीकी आंखों इत्यादिमें पानी लगानेसे और उसके मुखपर जल छिड़कनेसे वह होशमें आजाता है। उसने अपनी माको इसी प्रकार एक बार एक स्त्रीको होशमें लाते हुए देखा था। वैसा ही सूर्याजीके साथ भी उसने किया। उनकी आंखोंमें पानी लगाया,एक घूंट पानी उनके मुँहमें डाला, उनके मुँहपर पानीका एक छींटा मारा। इलाज जल्दी ही काम कर गया, सूर्याजीने फिर एकबार एक लम्बीसी सांस ली; और तुरन्त ही आँखें खोल दीं। श्यामा, यह देखते ही, "सूर्याजी राव, सूर्याजी राव!" करके बड़े ज़ोरसे पुकारने

लगा। सूर्याजी राव अभी पूरे पूरे होशमें नहीं आये थे, किन्तु श्यामाके पुकारनेसे वे कुछ जागृतसे हुए। उन्होंने इधर-उधर देखा। फिर भी वह लड़का कौन है, और यह क्या हो रहा है, सो कुछ उनके ध्यानमें नहीं आया। तथापि जैसे कोई मनुष्य दूरसे ऐसी किसी चीज़को ग़ौरसे देखता हो, जोकि उसकी पहचानकी हो—बस,इसी प्रकार सूर्याजीराव उस लड़केकी ओर देखने लगे। जान पड़ता था कि, उनके मनमें यह सन्देह हुआ है कि, जो लड़का हमारे सामने खड़ा है, उसे हमने कहीं देखा है। क्योंकि वे उसकी ओर बड़े ग़ौरसे देख रहे थे। कुछ देरके बाद ऐसा मालूम हुआ कि, जैसे उन्होंने पूर्णतया उसे पहचान लिया हो। तुरन्त ही, अत्यन्त क्षीण स्वरसे, उनके मुँहसे ये शब्द बाहर निकले— "कौन? श्यामा, तू कब यहाँ आया?" श्यामाने तुरन्त उनकी ओर देखा; और कहा, "मैं कभीका आया हूं। हमारे सरकारने देशमुख साहबको देनेके लिये सुमान-को एक चिट्ठी दी थी—सो उसे पहुँचानेके लिये मैं यहां आया; और गाँवमें आकर यह सब गड़बड़ी देखी। सूर्याजी राव,यह बात क्या हुई? एकाएक ये मुसल्ले आये कहांसे और किसके हुक्मसे?

सूर्याजी रावने उसके प्रश्नोंको सिर्फ़ सुनभर लिया। उत्तर देनेकी उन्हें शक्ति ही न थी; और उनका ध्यान भी पूरा पूरा उधर न था। वे बीचमें ही एकदम अपने क्षीण स्वरसे कहते हैं, "श्यामा, पिताजी कहां हैं रे! माताजी कहां हैं? बहन कहां है? और उसका (स्त्रीका) हाल कुछ मालूम है?" इन प्रश्नोंका

क्या उत्तर दे, सो श्यामाको कुछ सूझ न पड़ा। हां—"ये देखो, यहां अपने बच्चेके पास पड़ी है" कहकर वह एकदम उस युवती, सुन्दरीके पास गया। युवतीकी दशा पहलेहीकी भांति होरही थी। श्यामाने अपना पानीका उपचार फिर किया, इससे वह होशमें तो आगई, पर पहलेसे भी अधिक पागल दिखाई पड़ी। उठते ही उसने बालकको फिर पहलेहीकी भांति उठा लिया; और एक गाना गाने लगी। फिर सूर्याजीकी ओर देखकर—अरे ये कौन हैं? नाम इनका क्या है? अजी यहां आकर क्यों पड़े हो?" इत्यादि कोई न कोई प्रश्न करके हँसने लगी। यह और क्या हुआ? सूर्याजी बड़ी चिन्तामें पड़े। परन्तु उन्होंने स्त्रीको पुकारकर—"यह क्या? तुम ऐसा क्यों करती हो? पिताजी कहां हैं? माताजी कहां हैं? तुम अकेली यहां कैसे आई?"—इस प्रकारके प्रश्न, एकके बाद एक, किये। परन्तु कई प्रश्नोंके उसने उलटेसुलटे उत्तर दिये; और कईके उत्तर देना तो एक ओर रहा, वह हँसने लगी। यह देखकर सूर्याजीने श्यामाकी ओर जिज्ञासादर्शक दृष्टिसे देखा। कमसे कम ऐसी दृष्टिसे देखा कि, जिससे श्यामाको प्रकट हो-गया कि, ये हमसे कुछ पूछना चाहते हैं; और इसलिए उसने सोचा कि, अब इनको सब वृत्तान्त बतला देना चाहिए। तद्-नुसार जबसे वह गाँवमें आया था, तबसे लेकर और सूर्याजीके पास आनेतकका सारा वृत्तान्त बतला गया। सूर्याजीने सब वृत्तान्त शान्तिपूर्वक सुन लिया; और एक लम्बीसी सांस लेकर

बहुत देरतक बिलकुल चुप रहे। उनकी स्त्रीका पागलपनका प्रलाप अभी जारी ही था। इसलिए सूर्याजी फिर अपनी स्त्रीकी ही ओर देखकर कहते हैं, "श्यामा, तूने आज इतनी वीरताका काम किया है कि, मैं यदि अच्छा होता, तो तू जो कुछ कहता, वही मैं तेरे लिए करता। श्यामा, तूने आज जो कार्य कर दिखलाया है, उसका महत्व तुझे कुछ नहीं मालूम है। तूने आज किसका प्राण लिया है, सो तुझे नहीं मालूम है। मैं अब यहां इस हालतमें पड़ा हूं। आशा नहीं है कि, बचूंगा। पर यदि मैं अच्छा होता, तो तुझे अपने पुत्रकी जगह रखता। बेटा, आज तूने मेरे एक बड़े भारी दुश्मन को—गौ-ब्राह्मणके बड़े भारी कष्टदाताको, मराठोंके एक कट्टर शत्रुको—नष्ट किया है। निस्सन्देह वह एक मामूली आदमी है, पर है बादशाहका बड़ा भारी प्यारा। उसके बिना क्षणभर भी बादशाहका नहीं चलेगा। पर सचमुच क्या वह मर गया? क्या उसके प्राण निकल गये? श्यामा, जो कुछ हुआ, सो अच्छा हुआ। किन्तु इसका परिणाम बहुत भयंकर होगा। तू अब यहां क्षणभर भी मत रह। बागमें चला जा; और घोड़ा ले। इसको एक घोड़ेपर बैठा; और एकदम यहांसे चला जा। सब सिपाही चले गये, किन्तु यह शैतान अभी नहीं गया। सो यह बात आगे गये हुए सिपाहियोंके ध्यानमें आगई होगी। वे लोग कुछ देरतक इसके आनेका रास्ता देखेंगे, परन्तु अब बहुत देर होगई; और यह अभी पहुंचा नहीं है—इसके बिना

उनको आगे जानेका साहस नहीं होगा। इसके बिना यदि वे चले भी जायंगे; और फिर चाहे जितने पराक्रमके कार्य कर जावें—उनका कुशल नहीं। बस, घड़ीभरके अन्दर ही वे लौट पड़ेंगे, और जहां उन्होंने उसकी लाश देखी कि, फिर क्या अनर्थ करेंगे; और क्या नहीं करेंगे, सो कुछ कहा नहीं जा-सकता। जा, अब तुरन्त ही जा। गाँवके लोगोंको देख, ।कतने डरपोंक हैं—अभी एक भी आदमी इधर झांकने नहीं आया…जा…जा…"

यह एकदम लम्बासा भाषण यहां बराबर दिया गया है; पर सूर्याजीके मुखसे यह सब लड़खड़ाते लड़खड़ाते और ठहर ठहर-कर निकला। प्रत्येक दो शब्दोंके बीच बीचमें वे कराहते जाते थे। बीच बीचमें उनको विस्मरणसा होजाता था। वे ठहर जाते थे। गर्दन इधरकी उधर करते थे। होंठोंपर जीभ फेरने लगते थे; और फिर कहने लगते थे। किन्तु इस प्रकार भी वे और कितनी देर बोल सकते थे? उनका गला बिलकुल सूख गया; और फिर बोल ही न निकलने लगा। "पानी" "पानी" का शब्द उन्होंने एक-दो बार कहा, किन्तु वह शब्द उनके होंठोंके बाहर नहीं निकला। श्यामा सिर्फ अनुमानसे समझ गया; और उसने उन्हें दो घूंट पानी दिया। पेटमें पानीके जाते ही वे फिर होशियार हुए। कमसे कम, आगे जो कुछ कहनेवाले थे, उसको कहनेभरके लिए उनमें शक्ति आई। वे फिर श्यामासे बोले, "जा। घुड़सालसे दो घोड़ोंके उपर ज़ीन

डाल ले; और इसको (स्त्रीकी ओर संकेत करके) अभी लेजा। यहांसे उगौती गांवकी ओर दो कोसपर जा। वहांसे चार रास्ते फूटते हैं। उन रास्तोंके पास जानेपर दाहिनी ओरके रास्ते-पर मुड़ना। वह रास्ता कुछ दूर बाद छूट जाता है, फिर जंगल मिलता है। उस जंगलमें एक बड़ा सा बरगदका वृक्ष है। वृक्ष बड़ा भारी है। उसके नीचे एक झोपड़ी है। वहां एक बुड्ढा तुझे मिलेगा। जब तू उस बुड्ढेके पास जायगा, तब पहलेपहल वह तुझे मारने दौड़ेगा; पर तू उसे तुरन्त ही यह कटार और ताबीज दिखा देना। इसके बाद यहांका सब हाल उसे बताना। कहना कि, सूर्याजीने अपनी स्त्री और बच्चेको तुम्हें सौंपा है।"

अन्तके शब्द फिर अत्यन्त क्षीण स्वरसे निकलने लगे। एक शब्द कहते, फिर होंठ चबाते और कराहते जाते थे। इसके बाद एक बार फिर उन्होंने पानी मांगा। श्यामाने फिर उन्हें दो घूंट पानी दिया; और फिर वे—इस बार बहुत ही ज़ोरसे बोलने लगे, "और श्यामा, नाना साहब यदि तुझे कभी मिल जायँ, तो उनसे ये मेरे अन्तिम वचन कह देना कि, यदि तुम सच्चे मराठे हो; और यदि, हमारी-तुम्हारी जो शपथें हो चुकी हैं, वे शपथें तुम्हारे ध्यानमें हैं, तो मेरी इस मृत्युका बदला चुकाये बिना तुम कभी न रहना। आज मेरे कुटुम्बपर जो बीती है, वही तुम्हारे कुटुम्बपर भी बीती है। मेरे हाथसे सहायता हुई होती, किन्तु उन्होंने एकदम दोनोंका गला पकड़नेकी युक्ति निकाली; और सो भी अचानक! मैं तो अब जी नहीं सकता।

मेरे कुटुम्बका अपमान हुआ। तुम्हारे कुटुम्बका भी, आज या कल, शीघ्र ही, होनेवाला है। अब तुम्हारे हाथमें और क्या रह गया है—सिवाय बदला लेनेके। सो तुम यह करनेमें भी नहीं चूकोगे, यह मैं जानता हूं। किन्तु मेरी जो दशा हुई है, उसको ध्यानमें लाकर दूने और चौगुने ज़ोरसे वही करो। किसी प्रकार भी अब—श्यामा,मेरे ये अन्तिम शब्द कहना। तू कभी न भूलना, उनसे कहना कि, 'मराठोंकी सन्तानके लिए जो उचित है, सो करनेकी—और पूरा पूरा बदला लेनेकी—अपनी शपथें कभी मत भूलो।' इतना कहकर मेरी यह कटार उनको दे देना। जा, अब तुरन्त जा।"

अन्तिम 'जा' उनके मुँहसे निकलने नहीं पाया था कि, फिर उन्हें बेहोशी आगई। अन्तके उनके वचन बहुत ही अस्पष्ट निकले; क्योंकि क्षण क्षणपर उन्हें क्षीणता आरही थी। किन्तु हां, जबकि वे ये वचन कह रहे थे, उनमें एक प्रकारकी विलक्षण स्फूर्ति, एक प्रकारका विचित्र जोश, आगया था। किन्तु जब किसी बातका अतिरेक होजाता है,तब उसका परिणाम भी वैसा ही होता है। जोशके जाते ही क्षीणताने अपना साम्राज्य इतना बढ़ाया कि, बेहोशी ही ला दी। श्यामा अवश्य ही वहांसे नहीं हिला। उसने पानीका प्रयोग फिर किया। सूर्याजीकी स्त्री अपने बच्चेको लिये हुए, उसकी ओर देख देखकर, हँस रही थी। यह क्या होरहा है; और क्या नहीं होरहा है—इसका उसे कुछ ज्ञान ही न था। वह बिलकुल पागल होरही थी। श्यामा,

जबकि सूर्याजीके मुखपर पानी छिड़क रहा था, कुछ बूंदें उस युवतीके शरीरपर जाकर पड़ीं। उनके पड़ते ही—"अरे, अरे, यह क्या! आग लग गई! चिनगारियां उड़ीं!" कहकर वह वहांसे तुरन्त ही चलती बनी। उस समय श्यामाको यही न सूझने लगा कि, अब वह उस स्त्रीके पीछे जावे, अथवा सूर्याजीको होशमें लावे। किन्तु इतनेमें सूर्याजीने आँखें खोल दीं; और श्यामाको देखते ही कहने लगे, "अरे छोकरे, तू अभी गया नहीं? जा, तुरन्त ही उसे लेकर, जहां मैंने बतलाया, जा। जिससे मेरी आंखोंके देखते मुसल्मान लोग आकर उसका अपमान न करने पावें। जा, चला जा।"

"आप इस तरहसे पड़े हुए हैं, मैं आपको अकेले छोड़कर कैसे जाऊं? यह हो कैसे सकता है?" श्यामा एकदम उनसे कहता है, "आपको इस प्रकार छोड़कर मैं कभी नहीं जाऊंगा।"

"अरे, मेरी चिन्ता न कर। मेरे विषयमें अब चाहे जितनी चिन्ता की जाय, मैं जी नहीं सकता। वह पागल होगई, अपने भानमें नहीं है,सो भी एक तरहसे अच्छा ही हुआ। मैं मरूंगा। मुझे कोई बहा देगा ही! ऐसा ही कोई मुझे बहावे तो ठीक! शिखानष्टोंके यहां रहकर जो मनुष्य अपने व्रतको भूल गया है, उसका अन्तिम संस्कार अच्छी तरह होना ही क्यों चाहिए? जा, जा। मैं तुझसे बार बार कहता हूं, श्यामा, जा। तू जितनी ही देर अब यहां रहेगा, उतनी ही जल्दी मैं

मरूंगा। तू जा; और उसे लेजा। मेरी दृष्टिके आगे अब तू मत रह। वह कटार ले। वह तावीज रख ले। जा, उसी जगह, जहां बतलाया; और फिर नाना साहबसे मेरा सन्देशा कहना न भूलना !"

इसके आगे सूर्याजीके मुखसे कोई शब्द नहीं निकला; और वे ऐसी दृष्टिसे श्यामाकी ओर देखने लगे कि, जिससे श्यामाने यह समझा कि, अब आगे यदि हम रहेंगे, तो इनके लिए अच्छा नहीं है। उसने सोचा कि, हम रहेंगे तो इन्हींके लिए अवश्य; पर इससे यदि इनको अच्छा नहीं लगा, तो फिर हमारे उस रहनेसे क्या लाभ? यह सोचकर वह उठा। इसके अतिरिक्त उसके मनमें यह विचार भी आया कि, इनका बतलाया हुआ काम करके फिर आवें; और फिर इनके पास बैठें, तो क्या हानि? यह सब सोचकर वह वहांसे चलनेहीवाला था कि, सूर्याजीने फिर उसे इशारा किया कि, "पानी दे, प्यास लगी है।" इशारा पाकर श्यामा तुरन्त ही उनके होंठोंके पास पानी लेगया; परन्तु वे पीने ही न लगे, बल्कि यह इशारा किया कि, लोटा पूरा पूरा हमारे हाथमें दे दे, और वे लोटा अपने हाथमें लेने भी लगे। श्यामा अब इस विचारमें पड़ा कि, लोटा इनके हाथमें देवें या न देवें। अन्तमें लोटा उसने उनके हाथमें दे दिया। उसके हाथमें आते ही सूर्याजी श्यामाको ज़ोर ज़ोरसे इशारा करने लगे कि, "अब तू जा, जा।" साथ ही होंठोंसे कुछ खुस-फुसाये भी। ऐसा जान पड़ा कि, उपर्युक्त अर्थके ही शब्द उन्होंने

कहे भी। श्यामाने देखा कि, अब हमारे यहां रहनेसे कोई लाभ नहीं। अतएव अब वह दरवाजेके बाहर पैर रखनेहीवाला था कि, इतनेमें सूर्याजीने फिर उसे अपने बिलकुल पास आनेका इशारा किया। उसके पास आते ही उन्होंने उसके कानको बिलकुल अपने मुँहके पास लानेका संकेत किया। अब कुल बातचीत केवल इशारोंसे ही होने लगी थी। बोलनेकी शक्ति ही न थी। जो कुछ इस समय उन्हें कहना था, सो इशारोंसे कहनेयोग्य नहीं था, कमसे कम इशारोंसे बतलाकर समझानेयोग्य तो नहीं था। श्यामा अपना कान उनके होंठोंके पास लेगया। उस समय ये अक्षर उसके कानमें पड़ेः—"तावीज और कटार किसी दूसरेके हाथ न लगने देना। नाना साहब जबतक न मिलें, कटार तू अपने ही पास रखना। तावीज यदि बुड्ढा मांगे, तो उसको दे देना,अथवा तू अपने ही हाथसे मेरे बच्चेके गलेमें बांध देना। और जो कुछ करना होगा, सो सब वह बुड्ढा ठीक ठीक करेगा। कर्मधर्म-संयोगसे यदि वह अच्छी होजाय तो......किन्तु मेरे मरनेपर यदि वह नहीं अच्छी हो, तो ही अच्छा! क्योंकि यदि वह अच्छी होजायगी; और उसे यह मालूम ह ग मर गया, तो......तो......न जाने अपना वह क्या कर डाले!"

"किन्तु आप बार बार मरनेकी बात क्यों करते हैं?" आप मरेंगे नहीं। आप शान्तिसे रहें। मैं अभी आपका बतलाया हुआ काम करके, और लौटते समय किसीको लिये, आता हूं। फिर आपके घावोंको बांधकर आपको अच्छा करता हूं।

सूर्याजीका चेहरा उस समय क्षण क्षणपर स्याह पड़ता जारहा था; परन्तु श्यामाके उपर्युक्त वचन सुनकर, उनके उस क्षण क्षण-पर स्याह होते हुए चेहरेपर भी, मृदु हास्यकी एक झलक दिखाई दी, फिर ये शब्द श्यामाके कानमें आये:—"अरे, अब मेरे जीनेकी आशा!" श्यामा मानों उन शब्दोंका ठीक ठीक अर्थ ही नहीं समझ सका। आगे वह और भी कुछ कहनेवाला था कि, इतनेमें सूर्याजीरावकी आँखे मुँदीं—हां, वे हाथोंसे बराबर "जा, जा, जा।" का इशारा करते रहे। श्यामाने अब आगे-पीछे कुछ नहीं देखा; और वहांसे एकदम चलकर सूर्याजी-की पत्नीको ढूँढ़ने लगा। अवश्य ही अब वह उस मुसल्मान सिपाहीके किये हुए अपमानके कारण बेहोश होकर पागल हो-गई थी।

महलोंमें जिस समय, चारों ओर गड़बड़ी मची, सूर्याजीकी पत्नी अपने कमरेमें अपने बच्चेको दूध पिलाती हुई खिला रही थी; और सूर्याजीका रास्ता देख रही थी कि, अब वे पानका बीड़ा खानेको आते होंगे। किन्तु अचानक ही चारों ओर कोला-हल मच गया। जिसे सुनते ही उसने बाहरकी ओर दृष्टि डाली, तो "मारो-काटो, पकड़ो, तोबा तोबा!" की ध्वनि चारों ओर सुनाई दी। मुसल्मान लोग प्रत्येक चौकके सब कमरोंमें घुस रहे थे; और उस स्त्रीके श्वसुर और पतिका नाम ले लेकर चिल्ला रहे थे; और कह रहे थे—"कहां हैं साले, बदमाश? पकड़ो जल्दी!" इस सारी गड़बड़ीका वह कुछ भी कारण समझ न

सकी। अभी हालहीमें उसके बच्चा पैदा हुआ था, जिसके बाद बीचमें वह कुछ बीमार होकर, अब कहीं कुछ कुछ अच्छी होने लगी थी। उसका पति तो उसका सर्वस्व ही था। इसलिए जब उसने देखा कि, उसकी जानपर अब कोई भयंकर संकट आने-वाला है, तब वह अत्यन्त घबड़ाई; और यह सोचा कि, जहां हमारी सास, ननँद और श्वसुर इत्यादि लोग हैं, वहीं जाकर पतिका पता लगाना चाहिए। यह सोचकर वह अपने बच्चेको रोता हुआ छोड़कर बाहर निकली; किन्तु अभी वह अपने कमरे-के दरवाज़ेसे बाहर पैर रखनेहीवाली थी कि, पीछेसे उसकी दो दासियोंने उसको पीछे खींचनेका प्रयत्न किया। उन्होंने बार-म्बार उससे यही कहा कि, "तुम इस समय बाहर न जाओ। बाहर जाओगी, तो तुमको वे पकड़ ले जायँगे। वह दुष्ट यवन आगया है। अभी अभी उस दुष्टको मैंने देखा है।" यह कहकर उन्होंने उसका हाथ पकड़ लिया, अंचल खींचा; परन्तु वह निकल ही गई। एक चौकसे वह अभी दूसरे चौकमें गई थी कि, इतनेमें, जैसाकि पिछले परिच्छेदमें बतलाया, उस चांडाल शिखानष्टकी दृष्टिमें वह पड़ गई। बस, वह "अहा हा! मेरी जान! यही है मेरी बिजली!" कहकर उसके पीछे लगा। इतनेपर उस बेचारीकी क्या दशा हुई होगी, उसका पाठक ही अनुमान करें! जैसे कोई हिरनी भेड़ियेके पंजेसे छूटनेके लिए जी छोड़कर भागती है, वैसे ही वह बेतहाशा भागती हुई अपने कमरेकी ओर गई। भेड़ियेने जब एक बार हिरनीको देख लिया—और विशे-

पतः उस हिरनीको कि, जिसके लिए वह बहुत दिनोंसे हज़ारों प्रयत्न कर रहा था; और फिर अचानक उस समय वह हाथ आनेवाली है—तब भला वह उसके पंजेसे कैसे छूट सकती थी? वह उसके लिए बिलकुल उतावला होरहा था! वह बराबर उसके पीछे ही पीछे, उससे भी अधिक वेगके साथ, छलांगें मारते हुए दौड़ा; और एकदम उसके पीछे ही पीछे उसके कमरेमें घुसा। उसकी दासियोंमेंसे एक दासी अपनी स्वामिनी और उस दुष्टके बीचमें आई। इसपर उस नरपिशाचने उसे झिड़ककर एक ज़ीनेके नीचे अत्यन्त क्रूरतापूर्वक ढकेल दिया। इसके आगे उसकी क्या हालत हुई, सो उस अंधेको क्या मालूम? दूसरी दासी अवश्य ही वहांसे तुरन्त सटक गई। अब वह अन्धा भीतर जाकर उस युवतीसे भिड़ने लगा। यह देखते ही उसका शरीर जल उठा। लगभग पन्द्रह-बीस मिनटतक उसने बड़े प्रयत्नके साथ आत्मसंरक्षण किया; परन्तु अन्तमें यहांतक नौबत आगई कि, सन्तापके मारे चीख़ मारकर धड़ाम-से वह नीचे गिर पड़ी; और बेहोश होगई। इसके आगे जो कुछ हुआ, उसका वर्णन पीछे हो ही चुका है।

श्यामाने जब देखा कि, सूर्याजी आँखें मूँदकर शान्त हो-रहे, तब वह उनको वैसा ही छोड़कर बाहर निकला; और इधर-उधर घूमकर उस स्त्रीकी खोज करने लगा। उस समय वह इस चिन्तामें था कि, इस स्त्रीको मनाकर अब उसे घोड़ेपर कैसे बैठावें कि, जिससे वह चुपकेसे हमारे साथ चल देवे।

सूर्याजीसे तो उसने कह दिया कि, अच्छा, जो काम आप बतलाते हैं, मैं अभी किये आता हूं; परन्तु यह नहीं सोचा कि, घोड़े पर ज़ीन कैसे कसेंगे, अथवा इस स्त्रीको बैठावेंगे कैसे ? सूर्याजीको भी शायद यह विचार नहीं सूझा कि, यह इतना छोटा छोकरा है—यह ये काम कैसे करेगा। किन्तु, कुछ भी हो, श्यामा पीछा पकड़नेवाला लड़का नहीं था। उसने यही सोचा कि, आओ, पहले सूर्याजीकी स्त्रीका पता तो लगावें—बस, वह इधर-उधर घूमने लगा; परन्तु कहीं उसका पता न लगा। उसने बहुत ढूँढ़ा; और अब ऐसा मालूम होने लगा कि, कोई जगह बाक़ी नहीं रही, जहांकि ढूँढ़ा जाय। इतनेमें उसके कानोंमें ऐसी आवाज़ आई कि, जैसे कोई अत्यन्त मधुर स्वरसे गाता हो। उस आवाज़को वह भलीभांति पहचान गया; और उसीको लक्ष्य करके वह चला। अन्तमें महलके पूजा-गृहमें जाकर वह क्या देखता है कि, सूर्याजीकी स्त्री देवताओंके सामने बैठी कभी हँसती, फिर रोती, बीचमें फिर हँसती और चुटकी बजाती हुई निम्नलिखित उलटा-सीधा गाना गारही है। उस स्त्रीने अपने बच्चेको देवस्थानकी सीढ़ियोंके पास, देवताओंके सामने, बैठा दिया था; और स्वयं उसके आगे चुटकी बजाती हुई अपने विचित्र गानेमें अत्यन्त निमग्न होरही थी। निस्सन्देह, उसके सम्पूर्ण कुटुम्बपर भयंकर संकट आया था, जिसे जानकर उसे अपरम्पार दुःख होना चाहिए था; परन्तु फिर भी वह, अपनी उस अज्ञानावस्थामें, अपना वह

गाना गाती हुई उसीमें तल्लीन होरही थी! वह गाना इस प्रकार था: —

पद्य।

मसल गये सब मेरे फूल।
किसी दुष्टने पैरतले ये, कुचल मिलाये धूल ॥ ध्रु० ॥
फुलवाड़ीसे चुनकर लाई, किया देव-उपचार।
किन्तु दुष्टने कुचल कुचलकर, इन्हें मिलाया छार ॥ १ ॥
मालीसे लगवाकर इनको, सिंचन किया सप्रेम।
बड़े जतनसे इन्हें बढ़ाया, करके पूरा नेम ॥ २ ॥
ताज़े थे सब; कुम्हलानेकी, नहीं कभी थी आस।
किन्तु दुष्टने कुचल कुचलकर, किया सभीका नास ॥ ३॥
चम्पा गया; जुही मुरझाई, कुम्हला गया गुलाब।
हाय! हाय! अब इन फूलोंमें, रही न कुछ भी आब!४॥

यह गीत, बिलकुल तन-मन लगाकर, वह अपने ही आप दुहरा दुहराकर गारही थी। श्यामा उसका वह सुन्दर गाना सुनकर तल्लीन होगया। वह छोटा था, इसलिए उस स्त्रीके इस गीतका सच्चा स्वरूप उसके ध्यानमें नहीं आसकता था। युवती बीच बीचमें चुटकी बजाकर हँसती जाती थी, फिर एकदम फूट फूटकर रोने लगती थी। फिर भी उसका वह उलटा-सुलटा गाना बन्द नहीं होता था। कभी कभी, बीचहीमें, वह अपने बच्चेको गोदमें लेकर, लड़कोंकी तरह, चाईं-माईं फिरने लगती थी; और कहती थी, "अब मैं नहीं आऊंगी......नहीं आऊंगी।

पहली ही बार क्यों नहीं अपने साथ लिया—जी!" हँसती, चुटकी बजाती; और चारों ओर हाथ करके फिर अपना वही गीत गाने लगती। आसपासका वह दृश्य देखकर उसका मन बहुत ही बिगड़ा। सूर्याजी जहां पड़े थे, वहां रहते हुए वह जितना पागलपन करती थी, उससे भी अधिक पागलपन इस समय कर रही थी! श्यामा बड़े चक्करमें पड़ा।

इक्कीसवां परिच्छेद।

वट-वृक्षके नीचे।

उस स्त्रीको किसी प्रकार भी बाहर निकालना, बाहर निकालकर उसको घोड़ेपर बैठाना; और फिर वहांसे उसे, जितना गुप्त रूपसे होसके, सूर्याजीके बतलाये हुए स्थानतक ले-जाना, इत्यादि बातें किसी साधारण पुरुषके लिए भी असम्भवसी ही थीं—फिर श्यामाके समान छोटे लड़केको यदि वे असम्भव जान पड़ी हों, तो इसमें आश्चर्य ही क्या है? अबतक जो कथानक लिखा गया, उससे पाठकोंको कई बार मालूम हो-चुका है कि, श्यामा एक छोटासा लड़का था। इसके साथ ही साथ पाठकोंको यह भी परिचय मिल चुका है कि, श्यामा यद्यपि शरीरमें और अवस्थामें छोटा था; परन्तु उसकी बुद्धि और उसका साहस किसी धीर-वीर और साहसी पुरुषके समान

था। फिर भी, इस समय जो अवसर उसके सामने आया था, वह एक बिलकुल विलक्षण अवसर था; और यह एक ऐसा अवसर था कि, जिससे उसका मन घबड़ा सकता था। वह युवती यदि इस समय अपने होशमें होती, तो पतिकी उस भयंकर दशाके कारण शोकान्ध होकर वह आकाश-पाताल एक कर डालती। परन्तु, फिर भी, उस दशामें, एक बार उसे समझा-बुझाकर, गुप्त रूपसे वहांसे उसे ले जासकते थे; किन्तु उसकी वर्तमान दशामें उसको समझाना-बुझाना, उसकी भयंकर स्थितिका उसको ज्ञान कराना; और यह बात उसके मनमें जमा देना कि, इस समय यदि तू जल्दी नहीं चलेगी, तो कैसा भयंकर मौक़ा तुझपर आनेवाला है, इत्यादि बातें बहुत ही असम्भव थीं! जैसाकि पिछले परिच्छेदमें बतलाया, इस समय उसे बिलकुल सुध-बुध नहीं रही थी, वह अपने भानमें नहीं थी। हां, उसके पास उसका जो बालक था, जो गीत वह गाती थी; और जो विचार उसके मनमें आते हों—बस, इतनी ही बातोंके विषयमें शायद उसको कुछ ज्ञान हो, तो हो! और बाक़ी बाह्य सृष्टिका ज्ञान तो उसे बिलकुल ही नहीं था। कभी वह अपने बच्चेको देवताओंके सामने रखकर ताली और चुटकी बजाती, कभी उस बच्चेको ही दोनों हाथोंसे ऊपर उठाकर ज़ोरसे चाईं-माईं घूमते हुए खूब हँसती, कभी उपर्युक्त गीतका कोई अन्तरा अथवा अन्तरेका कोई भाग गाती, कभी एकाएक रोने लगती; और कभी कुछ बकने-झकने लगती। यह सब देखकर

वह छोटासा छोकरा, किसी बड़े मनुष्यकी तरह, अपनी ठुड्डी-पर हाथ रखकर, चिन्तापूर्वक, खड़ा रहा। पहलेपहल तो उसे यह सब दशा देखकर थोड़ीसी हँसी भी आई। परन्तु वह छोकरा, ऐसे अवसरोंपर, केवल हँसनेके लिए ही पैदा नहीं हुआ था। इसलिए बहुत जल्द उसे इस बातकी चिन्ता हुई कि, सूर्याजीका बतलाया हुआ कार्य किस प्रकार पूर्ण किया जाय। अपने उस छोटेसे मस्तिष्कमें अब वह इस बातका विचार करने लगा कि, मैं अपना उक्त कर्तव्य निर्विघ्न रूपसे पूर्ण कैसे करूं।

सारे महलमें, घायल होकर मरे हुए, अथवा ऐसे लोग, जो मरनेपर आरहे हैं, जहां-तहां पड़े हुए हैं। एक यह युवती पागल होकर अपने बच्चेको लिये हुए हँसती-रोती है; और श्यामा अकेला वहां चिन्तामें खड़ा है! बस, इनके अतिरिक्त और किसी प्राणीकी वहां आहट भी नहीं मिल रही है। यह दशा तो देखिये! बस्तीका अथवा महलका ही यदि एक भी मनुष्य इस समय वहां सहायताको उपस्थित होता, तो बहुत अच्छा हुआ होता; पर इसकी कोई आशा नहीं दिखाई देरही थी कि, कोई मनुष्य वहां आवेगा। इसलिए श्यामा बड़े कष्ट-के साथ वहांसे चला; और घुड़सालकी ओर जाने लगा। मार्गमें वह सोचता जाता था कि, मैं यहांसे जा तो रहा हूं; परन्तु इतनेमें सूर्याजीकी स्त्री यहांसे कहीं चली तो न जायगी? इसके बाद उसके मनमें आया कि, संयोगवश घुड़सालमें यदि

कोई सहायक मिल गया, तब तो ठीक ही है; पर यदि न मिला, तो मैं क्या करूंगा ? अन्तमें उसने सोचा कि, जो कुछ होगा, सो देखा जायगा, इस समय तो मैं घुड़सालमें जाऊं। हां, जाते समय उसने उस अभागिनी युवतीसे इतना अवश्य कह दिया कि, "देखो, तुम यहांसे कहीं जाना नहीं, मैं घुड़सालमें जाकर घोड़ा इत्यादि तैयार करनेका प्रयत्न करता हूं।"

बेचारा छोकरा ! शायद अभी भी उसे उस युवतीकी सच्ची सच्ची दशाकी पूरी पूरी परीक्षा नहीं होसकी थी। आजतक सिर्फ उसने एक ही पागल स्त्री देखी थी। और वह थी उसके गाँवकी एक बुड्ढी। किन्तु उसका पागलपन कुछ दूसरे ही प्रकारका था। अस्तु।

वह चिन्ता करता हुआ घुड़सालकी ओर गया। वहां लगभग सौ-सवा सौ घोड़े बँधे थे; और कमसे कम इतने ही घोड़ोंके स्थान खाली पड़े थे। ऐसा जान पड़ा कि, जैसे कोई छोड़ लेगया हो। परन्तु मनुष्य वहाँ एक भी दिखाई नहीं पड़ा। श्यामा चारों ओर खोज खोजकर थक गया। मराठे बारगीरोंके वे घोड़े, कि जिनको सदैव ही मनुष्योंके निकट रहनेकी आदत थी, उस समय वहां एक भी मनुष्यके न रहनेके कारण, चकितसे होरहे थे। पास पासके घोड़े गर्दन फटकार फटकारकर एक दूसरेकी ओर देखते हुए ज़ोर ज़ोरसे फुड़क रहे थे, हिनहिना रहे थे; और अत्यन्त अशान्तिके साथ अपने अगले खुरोंसे नीचेकी ज़मीन खुरचना चाहते, तथा पिछले पैर

फटकार फटकारकर पिछाड़ी छोड़नेके लिए प्रयत्न कर रहे थे। मानो उनको, वहां न रहनेवाले अपने साथियोंकी यादसी आरही थी; और इसीकारण मानो वे इस बातके लिए तड़फड़ा रहे थे कि, चलो, जिस मार्गसे गये हैं, उसी मार्गसे हम भी जावें। पर उन बेचारोंको क्या मालूम कि, उनके साथियोंपर सवार होकर जो कितने ही बारगीर वहांसे चले गये हैं, वे केवल अपने कर्तव्यसे च्युत होकर अपने स्वामीकी,उस संकटसे, रक्षा न करते हुए, अपने प्राण लेकर भाग गये हैं? और सच-मुच ही यदि उन घोड़ोंको यह बात मालूम होती, तो वे कभी अपने स्थानसे हिलते भी नहीं, इसका हमें विश्वास है।

श्यामाने चारों ओर बड़े ग़ौरसे देखा। देखते देखते उस-की दृष्टि एक छोटेसे टट्टू पर पड़ी; और वह उस टट्टूको देखते हुए क्षणभर खड़ा रहा। उसके मनमें अपने विषयमें कुछ महत्वाकांक्षाकासा विचार आया। उसने सोचा कि, यह छोटासा घोड़ा मेरे लिए बहुत भला दीखेगा। यह यदि मुझको मिल जाय; और एक छोटीसी तलवार भी मेरे योग्य मिल जाय, तो क्या ही अच्छा हो! इतनेमें उसने अपनी कल्पनासे यह भी देखा कि, जैसे वह उस घोड़े पर सवार हो; और अपने ही योग्य अत्यन्त सुन्दर ढाल तथा तलवार भी हाथमें लिये हो! फिर उसको यह स्मरण आया कि, सूर्याजीने कहा था कि, यदि मैं जीवित रहता, तो तुझको अपने लड़केके तौरपर रखा होता। इस बातके मनमें आते ही उसे कुछ दुःखसा हुआ। किन्तु

इस प्रकारके विचारोंमें उसने अपना समय नहीं गमाया, अथवा यों कहिये कि, उसको ऐसे विचारोंमें समय गमानेके लिए अवकाश ही न था। क्योंकि बहुत जल्द—जबकि वह विचारोंमें निमग्न खड़ा हुआ वहां उन घोड़ोंकी ओर देख रहा था—उसे ऐसा भास हुआ कि,जैसे आसपाससे किसी मनुष्यकीसी आहट आई हो। तुरन्त ही उसने अपने कानोंको सावधान करके आहट ली। तो सचमुच ही स्पष्टतया उसे सुनाई दिया कि, कोई मनुष्य बोल रहे हैं। किन्तु यह बात उसके ध्यानमें न आई कि, वे मनुष्य हैं कहां। उसको उस समय सिर्फ यही जानकर कुछ धीरजसा आया कि, जो कुछ हो, चलो; मनुष्य पास तो हैं! और अब हमको जो कुछ करना है, उसमें कुछ सहायता मिलेगी, यह सोचकर वह कुछ आनन्दित हुआ। बस, तुरन्त ही,इस बातकी खोज करनेके लिए कि, ये मनुष्य कहां हैं, वह इधर-उधर देखने लगा। इतनेमें उसे यह भास हुआ कि, वहां एक ओर जो घासका बड़ा भारी गञ्ज लगा था, उसके अन्दरसे एक मनुष्य कुछ झाँककर देख रहा है। अब बिलकुल सूर्यास्तका समय होगया था; और घुड़साल भी चूंकि बिलकुल एक ओर थी, इसकारण बहुत अँधेरासा होरहा था, अतएव श्यामाको इस बातका विश्वास न हुआ कि, जिसे उसने देखा, वह मनुष्य ही है या क्या? तथापि धीरज धरकर वह उस घासके गञ्जकी ओर चला। और जिस जगह उसने मनुष्य देखा था, वहां जाकर एकदम पूछता है कि, “कौन है

रे !" यह सुनते ही एक मनुष्य उस गञ्जसे फिर सिर निकाल-कर चुपकेसे बाहर देखने लगा; और ज्यों ही देखा कि, "कौन है रे !" कहनेवाला एक छोटासा लड़का ही है, त्यों ही उसका वह जोश, जो अभीतक उस घासके गञ्जमें ही दबा हुआ था, बाहर निकल पड़ा; और यह कहता हुआ कि, "कौन है—यह तेरा बाप है !" वह मनुष्य एकदम बाहर निकल पड़ा; और श्यामाको मारने दौड़ा। श्यामा दो कदम पीछे हट गया सही; परन्तु बहुत जल्द फिर उस मनुष्यको पहचानकर वह उससे बोला, "कौन हैं ? हरबा नायक ! अभी तुम्हारा जोश कहां था ? सारे महलोंमें इतना भारी उपद्रव मचाकर यवन तुम्हारे मालिकको कैद कर लेगये, सूर्याजीराव मारे गये, महलोंमें लाशोंके ढेर लगे हैं, उस समय तुम कहां गये थे ? इस घासके गञ्जमें ?"

उस छोटे से लड़केके ये हृदयवेधक शब्द कानोंमें पड़ते ही हरबा नायकके गलमुच्छे खड़े होने लगे; और उसने अपने नथुनोंको विचित्र तरहसे फुलाकर अपना बायां हाथ श्यामाको पकड़ने और दाहिना हाथ उसके मुँहपर थप्पड़ जमानेके लिए आगे बढ़ाया। परन्तु श्यामा बड़ा उस्ताद था ! वह काहेको ऐसे भगोड़े सिपाहियोंकी परवा करता है ! बातकी बातमें वह एक ओर भग खड़ा हुआ; और ज़ोरसे हँसकर बोला, "हरबा नायक ! अजी हरबा नायक ! ज़रा सोचो तो सही ! सूर्याजीराव मरे पड़े हैं, देशमुख साहबको, बाई साहबको और बहनजीको

पकड़ लेगये—अब महलमें रह गई हैं अकेली बेचारी भौजाई साहबा; और वह उनका छोटासा दुधमुहां बच्चा ! और सूर्याजी राव हमको, तुमको, दोनोंको यह अन्तिम काम बतला गये हैं कि, उनको अमुक जगह पहुँचा दो। सो, यह अन्तिम आज्ञा तो, आओ, हम दोनों चलकर पूरी कर दें। सूर्याजी राव चले गये; और इसपर तुमको कुछ भी तरस नहीं आता ?"

"सूर्याजी राव चले गये; और इसपर तुमको कुछ भी तरस नहीं आता ?" ये शब्द उसके मुंहसे अभी पूरे पूरे निकले भी नहीं थे कि, इतनेमें घासके उस गञ्जसे एक दूसरा मनुष्य घबड़ाया हुआसा बाहर निकला; और श्यामाके बिलकुल पास आकर उससे बोला, "क्या ? सूर्याजी राव चले गये ? कहां चले गये ? कैसे चले गये ? कहां हैं ?" श्यामा तुरन्त ही कहता है, "वे चले गये ज़रूर; परन्तु अब मौका नहीं है कि, इसका वृत्तान्त हम बतलाते रहें; और तुम बैठकर सुनते रहो। इस समय तो भौजाई साहबाके प्राण बचाकर उनको सूर्याजीकी बतलाई हुई जगहमें पहुँचा देनेकी जल्दी करनी चाहिए। दो घोड़ोंपर ज़ीन कसकर तैयार करो, मैं उनको लिये आता हूं। तुम मेरे साथ चलो। हम दोनों ही उनको पहुँचा आवें। मार्गमें मैं तुमको सब वृत्तान्त बतला दूंगा। उनकी दशा अत्यन्त शोचनीय होरही है।"

श्यामाका यह सारा भाषण यहांपर बिलकुल स्वाभाविक रूपसे दिया गया है; परन्तु उसने इसको इतनी दीन वाणीसे

कहा कि, उस निष्ठुर सिपाही हरबा नायकके मनपर चाहे इसका कुछ भी प्रभाव न पड़ा हो, किन्तु उस दूसरे मनुष्यको; और उसके पीछे पीछे गञ्जसे निकले हुए अन्य दो मनुष्योंको, बहुत ही दया आई; और हरबा नायकको तुरन्त ही पीछे हटाकर वे आगे आगये; और फिर उनमेंसे एक मनुष्य श्यामासे पूछता है, "क्या महलोंमें कोई नहीं है ? एक चिड़िया भी नहीं है ?"

श्यामाने ज्यों ही "नहीं" कहकर उत्तर दिया, त्यों ही वह कुछ सचिन्त दिखाई दिया; और फिर बोला, "किन्तु, क्या यह निश्चित है कि, महलोंके आसपास बादशाहका पहरा नहीं है ? यदि हम जाना चाहें, तो क्या बिलकुल गुप्त रूपसे जासकते हैं ?"

यह प्रश्न अबतक श्यामाके मनमें न आया था। उसको तो अभीतक इस बातकी शंका हो न थी कि, गुप्त रूपसे बाहर निकलकर वह निर्विघ्न रूपसे, किसीको न मालूम होते हुए, अपने नियत स्थानपर पहुँच सकता है या नहीं। अभीतक तो वह यही समझता था कि, महलोंमें जबकि कोई एक चिड़िया भी नहीं है, तब और कौनसा विघ्न आवेगा; परन्तु जब उपर्युक्त कठिनाई उसके सामने उपस्थित की गई, तब उसे भी उसका महत्व मालूम होगया। इसलिए वह तुरन्त ही उन दोनोंसे बोला, "फिर अब कैसा होगा ?" कुछ देरतक कोई भी कुछ नहीं बोला। इसके बाद उन दोनोंमेंसे एक व्यक्ति दूसरेसे गद्गद

कंठ होकर कहता है, "शकराजी नायक! अबतक जो कायरता दिखलाई, सो दिखलाई—किन्तु अब तो, आओ, अपना अपना नमक अदा करें! मैं घोड़ोंपर ज़ीन कसता हूं। तुम जाओ; और चुपकेसे देख आओ कि, महलोंके आसपास पहरा है अथवा नहीं; और यदि है, तो कहां कहां। जो कुछ होना हो, सो हो, हम आठ आदमी हैं, भौजाई साहबको नियत स्थानपर पहुँचा दें; और फिर चाहे इस कामके लिए एक-दोको मरना भी पड़े; तो मर जायँ!"

इतना कहकर वह उनके पीछेसे आये हुए एक-दो आदमियोंसे कहता है, "जाओ जी, जाओ, तुम इस लड़केके साथ जाओ;और बाईसाहबाको ले आओ।" यह कहकर वह तुरन्त ही घोड़ोंकी ओर चल दिया। महलोंके आसपास पहरा कहां कहां है, इसकी जांच करनेके लिए दूसरा आदमी भी चला। हरबा नायक अपने गलमुच्छे फुलाते हुए जहांका तहां ही खड़ा रहा। अन्य दो आदमी तथा श्यामा, महलोंमें जाकर, भौजाई साहबाका पता लगाने लगे। परन्तु विचित्रता यह कि, भौजाई साहबाका वहां कहीं पता ही नहीं था!

श्यामाने ज्यों ही यह देखा कि,भौजाई साहबाको, जहां हम छोड़ गये थे, वहां वे अब नहीं हैं, त्यों ही उसने अपने साथियों सहित चारों ओर उनको खोजना शुरू किया, पर कहीं पता न लगा। इसलिए उन्होंने सोचा कि, अब एक तरफसे सारा महल ढूँढ़ना चाहिए; और सूर्याजी राव जिस कमरेमें पड़े हैं,

उसको जाकर अवश्य देखना चाहिए; क्योंकि शायद वे उसी ओर गई हों। यह सोचकर वे उसी कमरेकी ओर मुड़नेवाले ही थे कि, इतनेमें आगेके चौकसे एक बड़ा कोलाहल उनके कानोंमें सुनाई दिया। कोलाहलकी भाषा मुसलमानी थी, इससे श्यामा और उसके दोनों साथियोंने यह समझा कि, भौजाई साहबा शायद उसी तरफ कहीं हैं, इसीसे यह कोलाहल मचा हुआ है। इसलिए श्यामाने सोचा कि, अब इस कोलाहलकी ओर चलकर ही इसका पता लगाना हमारा कर्त्तव्य है। अतएव वह अपने दोनों साथियोंसे उस ओर चलनेका आग्रह करने लगा; पर उसमेंसे एकहीने उसका साथ दिया। दूसरा पीछा पकड़ने लगा। श्यामाने समझा कि, यह समय एक दूसरेकी निन्दा करने, अथवा एक दूसरेसे चिल्लानेका नहीं है, अतएव वह स्वयं और उसका एक साहसी साथी, दोनों उस कोलाहलकी ओर आगे बढ़े। परन्तु उनको इधर-उधर बहुत घूमना नहीं पड़ा; क्योंकि अभी वे सिर्फ दो ही कदम आगे बढ़े होंगे कि, लगभग दस आदमी हाथमें जलता हुआ पलीता लिये हुए, उनकी ओर आये। इन दसमेंसे पाँच-छै मुसलमान थे। सिर्फ चार ही मराठे दिखाई पड़े।

"देखिये तो, कैसी विचित्रता हुई—हम लोग अभीतक इसी आशासे जारहे थे कि, अब आते होंगे, अब आते होंगे; पर जब मुक़ाम बिलकुल नज़दीक ही आगया; और फिर भी जब उनका कोई पता नहीं लगा, तब हमको वापस भेज दिया। घोड़ोंको

हम लोगोंने कितना मारा; और वे भी ख़ूब वेगसे आये!" बस, इसी प्रकारकी बातचीत वे आपसमें कर रहे थे। महलके दरवाज़े पर आकर उनमेंसे एक व्यक्तिने तीन पहरेदार सिपाहियोंसे प्यारेख़ांका समाचार पूछा; परन्तु उन पहरेदारोंने सिर्फ इतना ही कहा कि, "हमको कुछ मालूम नहीं है। हम तो पहरेकी जगह छोड़कर अपने स्थानसे हिले भी नहीं, बाहरका कोई आदमी भीतर नहीं गया; और न भीतरका बाहर आया।" फिर प्यारेख़ां कहां गया? पहरेवाले तो यह समझकर भीतर नहीं गये कि, शायद हम अकेले-दुकेले भीतर गये; और वहां कोई आदमी छिपे बैठे हों, तो अवश्य ही वे हमें मार डालेंगे। इधर गाँवके आदमी दरवाजेके पास आ आ करके भी यह समझकर पीछे लौट जाते कि,ये तीन बड़े ज़बरदस्त मुसलमान सिपाही पहरेपर बैठे हैं, हम यदि पास जायँगे, तो न जाने ये क्या कर डालें! बस, यही हाल उस समय महलोंके आसपास था; और इसीकारण महलकी पिछली ओरसे श्यामाको भीतर घुसनेका मौक़ा मिल गया था। अन्य लोगोंको यह भय था कि, महलके चारों ओर ऐसा ही पहरा होगा। निस्सन्देह कुछ थोड़ेसे लोगोंके मनमें ये प्रश्न अवश्य उठे कि, देशमुख साहबको एकाएक पकड़ लेजानेका कारण क्या है? तथा भीतर जो लोग जीवित रह गये थे, उनकी दशा क्या हुई होगी? किन्तु भयके मारे कोई अपने घरसे निकला नहीं। हां, घरमें बैठकर उस दिनकी घटनापर इधर-उधरकी बातें करनेमें कोई हानि नहीं थी, सो सभी

लोग वैसा कर रहे थे। परन्तु वह बातचीत भी बिलकुल गुप-चुप होरही थी। शायद बातचीत करनेवालोंके मुखसे कभी कोई शब्द होंठोंके बाहर भी निकल आता हो, तो हम नहीं कह सकते!

वे नवीन लोग प्यारेख़ांको ढूँढ़नेके लिए आये थे, यह स्पष्ट था। अब श्यामा और उसके साथीके मनमें यह आया कि, इन लोगोंने यदि हम दोनोंको देख लिया, तो न जाने क्या कर डालेंगे। श्यामाको तो यह मालूम ही था कि, उस मुसलमान सिपाहीकी, कि जिसको उसने घायल किया था, अब क्या दशा हुई होगी। उसके मर जानेमें अब श्यामाको अणुमात्र भी शंका न थी। अब उस लड़केकी यही प्रबल इच्छा होरही थी कि, देखें, उसको मरा हुआ देखकर इन लोगोंकी क्या दशा होती है; और ये क्या करते हैं। श्यामाने ज्यों ही यह देखा कि, उन लोगोंके बीचमें सूर्याजीरावकी स्त्री नहीं है, तब उसको कुछ सन्तोषसा हुआ। क्योंकि उसको इस बातकी चिन्ता थी कि, वह न जाने कहां चली गई—उसके मनमें यह भी आया था कि, कहीं अगले दरवाज़ेसे वह बाहर न निकली हो; और इन लोगों-के हाथमें सहज ही फँस गई हो। किन्तु यह भय अब दूर हो-गया—अब उसे सिर्फ अपने विषयमें ही भय उपस्थित हुआ। उसने ज्यों ही देखा कि, ये लोग पलीता आगे लिये हुए आरहे हैं, त्यों ही उसने एक खम्भेका आश्रय लिया; और अपने साथी-को भी वैसा ही करनेका इशारा किया। किन्तु कुछ लाभ न

हुआ। उन लोगोंमेंसे एक व्यक्तिकी नज़र उसके साथीपर पड़ ही गई; और उसने घुड़ककर पूछा, "कौन है रे! हरामज़ादे?" यह सुनते ही उस बेचारेकी बड़ी बुरी हालत होगई। भयके मारे वह कांपने लगा; और "म···म—मैं—मैं···"करते हुए वह कुछ बोलनेका प्रयत्न करने लगा। इतनेमें एक मुसल्मानने उसके मुँहमें थप्पड़ जमा दी;और जूतेकी ठोकरसे उसे नीचे गिरा दिया। श्यामा जिस खम्भेकी ओटमें खड़ा था, उस खम्भेपर आगेके पलीता पकड़नेवाले मनुष्यकी छाया पड़ गई थी, इसकारण उसपर किसीकी नज़र नहीं पड़ सकती थी। उस महलके वे पुराने चौकोने बड़े बड़े खम्भे श्यामाके समान लड़केके छिपनेके लिए काफ़ी थे। श्यामाका वह साथी जब जूतेकी ठोकरसे नीचे गिरा दिया गया, तब वह और भी अधिक घबड़ा गया; और उस बेचारेको उठनेकी शक्ति ही न रही। अवश्य ही उस बेचारेको उन यवनोंकी और भी कुछ ठोकरें खानी पड़ीं। सभीने एक एक लात जमाई। बेचारा कर ही क्या सकता था? उसकी यह दशा देखकर श्यामाको उन यवनोंपर अत्यन्त क्रोध आया। परन्तु उस क्रोधसे लाभ क्या? वह अपने साथीको बचा नहीं सकता था। यही बड़ा कुशल हुआ कि, वह अपने लड़कपनके क्रोधके वशीभूत होकर आगे नहीं बढ़ा, अन्यथा उन क्रूर यवनोंने उस लड़केको भी, उसके साथीकी तरह, कुचलनेमें कोई कसर न की होती।

अस्तु। इस प्रकार जब उन लोगोंने उस आदमीको खूब

मारपीट लिया, तब फिर उन्होंने उसे उठाकर खड़ा किया; और उससे पूछने लगे कि, तू कौन है, कहांसे आया, इत्यादि। कोई कहता कि, यह महलको सूना देखकर यहां चोरी करनेके लिए आया। कोई कहता, नहीं, यह महलका ही कोई नौकर है, इसको यहांका जवाहिरात और सोना इत्यादि सब मालूम होगा, कि, कहां क्या रखा है, सो आओ, हम लोग इससे उसका पता लगावें; और यदि यह न बतलावे, तो इसके शरीरमें पलीता लगाकर हम लोग स्वयं सब ढूँढ़ ढूँढ़कर लेजावें। कोई कहता, हम, पहले, जिस कामके लिए आये हैं, उसको तो कर लें। इस प्रकार वे सब आपसमें कहने-सुनने लगे। इतनेमें उनका नायक उनकी ओर एकदम डपटकर बोला, "हमको समयपर ख़बर पहुँचाना चाहिए, नहीं तो अच्छा नहीं होगा। क्या तुमको मालूम नहीं कि, हमको किसकी खोजके लिए भेजा है? उसकी खोज करनेके पहले यदि तुम अन्य किसी काममें हाथ डालोगे, तो मैं एक एकको मार डालूंगा। अरे नीचो, तुम्हारे वे बाप अभी हालमें ही तो तुम्हारे हाथों सब माल-मसाला उठवा लेगये! अब यहां क्या रखा है?"

इतना कहकर उसने अपने पासके व्यक्तिकी गर्दनमें एक धक्का देकर उसे आगे बढ़ाया; और श्यामाके उस साथीके मुँहमें भी एक जमाई; और कहा, "चल, आगे बढ़। हमको महल-के सब कमरे दिखला। तेरे बापका पता लगाना है!" यह सुनते ही सब लोग आगे बढ़े। श्यामा अपनी जगहसे खड़ा

खड़ा यह सब दशा चुपके चुपके देख रहा था। उसके मनमें अब यही आया कि, जिस कमरेमें सूर्याजी पड़े हैं, उस कमरेमें जाकर जब ये उनको लाश देखेंगे, तब न जाने ये उनका क्या करेंगे? भौजाई साहबा भी यदि अपनी सनकमें कहीं महलोंके अन्दर ही इन्हें दिखाई पड़ गईं, तो न जाने उनका ये क्या करें? परन्तु उस समय इस विषयमें वह और कर ही क्या सकता था? आख़िर उसने यही सोचा कि, आओ, चुपकेसे एक बार फिर हम इधर-उधर घूम लें; और भौजाई साहबा कहीं मिल जायँ, तो अच्छा हो, अन्यथा अकेले ही सूर्याजी रावके बतलाये हुए उस वटवृक्ष-के नीचे झोपड़ीकी ओर जाव; और उस बुड्ढेको यहांका सब वृत्तान्त बतलाकर अपने घरको लौट जावें। बस, इसके अति-रिक्त और उसके हाथमें उस समय कुछ भी नहीं था। अपने इसी विचारके अनुसार अब वह उन मुसलमान सिपाहियोंकी ओर न जाते हुए इधर-उधर घूमकर आहट लेने लगा; पर भौजाई साहबाकी उसे कहीं टोह नहीं लगी। मुसलमान सिपाही एक कमरेसे दूसरे कमरेमें आ-जाकर प्यारेख़ांको ढूँढ़ रहे थे। श्यामा उनकी भी आहट रखता ही था; और जबतक उनकी कोई विशेष गड़बड़ी नहीं सुनता था, तबतक यही समझता था कि, अभीतक इनको कोई नवीन बात दिखाई नहीं दी। कुछ देर बाद वे सिपाही उस कमरेमें पहुँचे, जहां प्यारेख़ां दोपहरको घायल होकर विलख रहा था। वहां जानेपर उनकी दृष्टि उसकी लाशपर गई!

'लाश' शब्दसे पाठकगण समझ ही गये होंगे कि, अब वह दुष्ट यवन मर चुका था। उसे देखते ही सिपाहियोंके नायकका सारा शरीर जल उठा। उसने बड़ा भारी कोलाहल मचाया। इधर श्यामाने अँधेरेमें चारों ओर आहट लेकर महलसे चले जानेका विचार किया। सिपाहियोंके उस कोलाहलसे उसे इस बातका भी पता लग गया कि, जिस दुष्टको उसने घायल किया था, वह समाप्त होचुका। इसपर उसे थोड़ासा सन्तोष हुआ; और उसने इच्छा न होते हुए भी महलको छोड़कर बाहर जानेकी ठानी। शीघ्र ही वह वहांसे निकल पड़ा; और पीछेके मार्गसे बिलकुल चुपचाप घुड़सालकी ओर गया। वहां घोड़ोंको तैयार करके एक व्यक्ति खड़ा ही था, उससे उसने, सब वृत्तान्त बतलाकर, कहा, "अच्छा, अब हम दो-तीन व्यक्ति यहांसे उस वटवृक्षकी ओर चलें; और सूर्याजी रावके इच्छानुसार सिर्फ उनकी निशानी ही उस वृद्धको दिखलावें।" जो आदमी घोड़े पकड़े खड़ा था, वह पहले ही, सारा वृत्तान्त सुनकर, घबड़ा गया था। उसको श्यामाकी, यह—वहांसे चल देनेकी—बात बहुत ही पसन्द आई। सूर्याजीका बतलाया हुआ मार्ग श्यामाको भलीभांति मालूम नहीं था, इसीकारण उसे इस मनुष्यकी बड़ी आवश्यकता थी। दोनों घोड़ोंपर सवार हुए। मुसलमान सिपाहियोंका वह कोलाहल, जो उन्होंने उस दुष्ट मुसलमानकी लाशको देखकर मचा रखा था, बहुत दूरतक सुनाई देरहा था। इसकारण उन दोनोंने वहांसे चल देनेकी और भी शीघ्रता की।

श्यामाको इस बातका बड़ा खेद रहा कि, भौजाई साहबा नहीं मिलीं; और हम चल दिये। किन्तु करता क्या? उसका कोई इलाज नहीं था।

श्यामा अभी अच्छी तरह घोड़ेपर बैठना नहीं जानता था। परन्तु सौभाग्यवश जिस घोड़ेपर वह बैठा था, वह सीधा था, इसकारण मार्गमें उसे कोई कष्ट नहीं हुआ। उसका साथी आगे चल रहा था; और श्यामा उसके पीछे।

अच्छा, अब हम श्यामाको तो, वटवृक्षकी ओर जाते हुए, कुछ देरके लिए, यहीं छोड़ दें; और उधर महलोंमें चलकर देखें कि, क्या हुआ। ऊपर हम बतला ही चुके हैं कि, प्यारेख़ांकी लाशको देखकर उन मुसलमान सिपाहियोंने बड़ा गोलमाल मचाया। ख़ांसाहब इतनी देरतक महलोंमें ही होंगे, इस बातकी उन्हें कल्पना भी न थी। वे यह समझते थे—कमसे कम उनका नायक तो अवश्य ही अपने मनमें समझता था—कि, ख़ांसाहब सूर्याजी रावकी स्त्रीको लेकर, इसके बहुत पहले ही, किसी दूसरे मार्गसे निकल गये होंगे। क्योंकि उस नायकको यह भलीभांति मालूम था कि, सूर्याजी रावकी स्त्रीपर उनकी दृष्टि थी। इसके सिवाय वह यह भी जानता था कि, सूर्याजीको तो पाँच-सात जनोंने मिलकर पहले ही ख़तम कर दिया था; और अन्य लोग जबकि देशमुख तथा उनके कुटुम्बियोंको कैद करनेमें लगे थे, ख़ान अकेले ही सूर्याजीके महलोंमें गये थे। ऐसी दशामें ख़ानकी लाश जब अचानक उसकी दृष्टिमें पड़ी, तब क्या क्या

विचार उसके मनमें आये, इसका पाठक स्वयं ही अनुमान करें। सच तो यह था कि, वह अपने ऊपरके हाकिमकी आज्ञासे ही ख़ानको ढूँढ़ने आया था; और यह भी उसने सोच लिया था कि, ख़ान यदि नहीं मिलेंगे, तो महलोंमें यथेच्छ लूट मचाकर अपना मतलब सिद्ध करेंगे। परन्तु यहां आकर जब उसने वह अनपेक्षित घटना देखी, तब उसे यही न सूझने लगा कि, अब क्या करें; और क्या न करें। उसने सोचा कि, अब ख़ानकी लाश लेकर तो जाना ही चाहिए; परन्तु ख़ानका जिन्होंने ख़ून किया, उनका कुछ न कुछ पता लगाये बिना, अथवा ऐसा कोई न कोई कार्य किये बिना—कि, जिससे यह कहा जासके कि, देखो, हमने उसका बदला लेनेके लिए ऐसा ऐसा किया—यहांसे जाना बिलकुल उचित न होगा। बस, यही सोचकर वह कुछ देरतक चिन्ताक्रान्त होकर खड़ा रहा। इसके बाद उस क्रूर मनुष्यके मस्तिष्कमें कोई विचार आया; और तदनुसार करने-का उसने निश्चय किया। दो आदमियोंको उसने बस्तीकी ओर दौड़ाया; और ख़ानकी लाश उठा लेजानेके लिए अपने जात-भाइयोंको बुलाया; और लाशको बाहर निकालते ही महलोंमें चारों ओरसे आग लगा देनेका विचार किया। उद्देश्य यह कि, जिससे यह हम कह सकें, कि देखो, जिन लोगोंने ख़ानका बध किया, उनको हमने जला डाला।

मुसलमानोंके मनमें जहां एक बार कोई भयंकर बात आई कि, फिर उसको कर डालनेमें देर किस बातकी? यों ही विवेक

अथवा दयाका जहां लेश नहीं, वहां अपने शत्रुका घर जला देनेमें विवेक अथवा दया कहांसे आवेगी ? महलोंमें चारों ओरसे आग लगा देनेका विचार उसके मनमें आये हुए अभी बहुत देर नहीं हुई थी कि, ख़ानकी लाश बाहर निकाली गई; और बस्तीके लोगोंके देखते देखते देशमुखके महलोंमें चारों ओरसे आग लगाकर वे लोग, "अलविदा-अलविदा" कहते हुए, वहांसे चलते बने !

इधर श्यामा और उसका साथी, दोनों, कुछ ही समय बाद सूर्याजीके बतलाये हुए उस वटवृक्षके नीचे पहुँचकर उस वृद्ध मनुष्यसे मिले। जैसाकि सूर्याजीने बतलाया था, पहले-पहल तो वह बुड्ढा उन दोनोंको मारने दौड़ा; पर सूर्याजीकी निशानीको देखकर उसने उन दोनोंको अपनी झोपड़ीके अन्दर बुला लिया; और सब हाल पूछा। वृत्तान्त सुनकर कुछ देर तो वह चिन्तामें बैठा रहा, पर फिर बहुत जल्द वह एकदम वेगके साथ उठा; और आप ही आप कुछ गुनगुनाकर उसने बड़े ज़ोरसे सीटी बजाई, जिसे सुनते ही एक काला-कलूटा बड़ा ज़बरदस्त आदमी दूरसे आकर उसके पास खड़ा होगया। बुड्ढेने उसके कानमें कुछ कहा, जिसे सुनते ही वह बाहर गया; और एकदम, श्यामा तथा उसके साथीके लाये हुए एक घोड़ेपर सवार होकर, घोड़ेकी भी छाती फट जानेवाले वेगके साथ, वहांसे रवाना हुआ।

बाईसवां परिच्छेद ।

अग्निके मुखसे ।

महलमें ज्यों ही चारों ओरसे आग लगी, त्यों ही, कुछ देर बाद, वह खूब धड़ाकेके साथ फैलने लगी । महल बहुत पुराना था। उसके खम्भों इत्यादिने न जाने कितना तेल खाया था, बहुतसा मसाला खाया था, इसकारण आग फैलनेमें बहुत देर नहीं लगी । सारे खम्भे दीपकोंकी भांति जलने लगे । सारा काष्ठ जल जलकर, उसके धधकते हुए अंगारे बनने लगे। बीच बीचमें "धड़ाम" "धड़ाम" का भयंकर शब्द होता जाता था। ऊपरके काष्ठ जल जलकर नीचे आते; और वहां आकर अन्य ज्वालाग्राही पदार्थोंको अपना तेज प्रदान करते । दूरसे देखनेवालोंको तो यही जान पड़ता कि, जैसे सारी बस्तीकी बस्ती ही जल रही हो। वायु भी मानो यह समझकर ही कि, जैसे इस महलके स्वामियोंको यातना सहनी पड़ी, वैसी ही यातना इसको भी न सहनी पड़े, बड़े वेगसे बहने लगी; और उस महलको बहुत शीघ्र "आत्म-रक्षा" करनेके लिये सहायता पहुँचाने लगी। हवा एक बार जहां चल गई, फिर पूछना ही क्या है—सम्पूर्ण महलके आसपास ज्वाला घूमने लगी— मानो अग्निनारायणने अपने तेजका चक्र ही उस महलके आस-पास

चला रखा है ; और यवनोंके कष्टसे उसे मुक्त करनेके लिये उसको अपने अधिकारमें कर लिया है! महलकी किसी ओरसे भी भीतर जानेका मार्ग अब नहीं रहा। सब दिशाओंके दरवाज़ों, खिड़कियों और झरोखों इत्यादिसे धुएं और आगकी बड़ी बड़ी लपटें बाहरको निकलने लगीं; और वह सारा महल मानो सहस्रदल कमलकी भांति दिखाई देने लगा। मुसलमान लोग इस प्रकार अपना भयंकर कार्य करके जब वहांसे चले गये, तब बस्तीके लोग धीरे धीरे महलके आसपास एकत्रित होने लगे। परन्तु उस समय अग्निकी अवस्था उतनी प्रचण्ड नहीं हुई थी। यद्यपि किसी किसी तरफसे ज्वालाएं ख़ूब निकलने लगी थीं; परन्तु फिर भी, एक-दो दिशाओंकी ओर कुछ शान्ति थी। आसपास जो लोग जमा हुए थे, वह कह रहे थे— "क्या भीतर कोई होगा?" "कोई दिखाई तो नहीं देता!" "यदि कोई होता, तो चिल्लाता!" इत्यादि। परन्तु "आओ, भीतर चलकर देखें" ऐसा किसीके मुखसे भी नहीं निकला। निस्सन्देह,बस्तीमें उस समय ऐसा एक भी मनुष्य न होगा कि, जिसे वह सब हालत देखकर दुःख न हुआ हो। प्रत्येक मनुष्य मन ही मन यह कहकर तड़फड़ा रहा था कि,"हाय! हाय! दुष्टोंने सत्यानाश कर दिया!" आज देशमुख साहबका सत्यानाश होगया!" "हे ईश्वर, क्या कोई भी इन दुष्टोंको दण्ड देनेवाला उत्पन्न न होगा?" इत्यादि। प्रत्येक पुरुष अपने ही आप होंठ चबाते हुए क्रुद्ध होरहा था। प्रत्येक वृद्ध और युवती स्त्रियां हाथ

मल मलकर मुसल्मानोंको और उनकी हुकूमतको कोस रही थीं, बस्तीमें पानीकी भी कुछ अधिकता न थी; और महलकी आग कोई मामूली आग न थी, जिसको बुझानेमें थोथे पानीसे काम चल जाता। यही सब सोचकर मानो लोगोंने महलको बुझाने-का कोई प्रयत्न नहीं किया। महल जबतक अच्छी तरह जल नहीं उठा, तबतक उन आग लगानेवालोंने भीतर किसीको धँसने नहीं दिया; और जब वह चारों ओरसे ख़ूब जलने लगा, तब किसीको उसके बुझानेका साहस ही न हुआ। जो हो, इसमें सन्देह नहीं, महल जलकर ख़ाक होगया।

ऊपर बतलाया ही गया है कि, महलके दरवाज़ों, खिड़कियों झरोखों—और जहां जहांसे प्रकाश अथवा वायुके आने-जाने-का रास्ता था—सभी जगहसे ज्वालाएं बाहर निकल रही थीं। और अब तो वायुके झोंकोंके वेगसे वे ज्वालाएं इतनी भयंकर रीतिसे लपलपा रही थीं कि, यदि उस समय कोई एक-आध बेचारा प्राणी उस आगके बीचमें पड़कर अपने छुटकारेके लिये रोता-चिल्लाता भी, तो किसीके कानोंमें उसकी आवाज़ भी न पड़ी होती। परन्तु क्या इस प्रकारसे रोने-चिल्लानेवाला उस समय वहां कोई था? हां, था। ऐसा जान पड़ता था कि, कोई उसके भीतर है। क्योंकि उन ज्वालाओंके सों-सों शब्दके भीतरसे, और क्षण क्षणपर "धड़ाम धड़ाम" करके नीचे गिरने-वाले प्रज्वलित काष्ठोंके शब्दके भीतरसे भी, एक-दो अथवा तीन अत्यन्त दीन वाणीपूर्ण मानवी चीख़ें, स्पष्टतया सुनाई दे

रही थीं, इसमें सन्देह नहीं। वे चीखें पहले तो मानो किसी गहरी जगहसे आरही थीं; परन्तु अब धीरे धीरे वे बिलकुल स्पष्टसी सुनाई देने लगी थीं। वे एक खिड़कीसे निकलनेवाली ज्वालाओंके साथ साथ बाहर निकल रही थीं; और किसी न किसी स्त्रीकीसी जान पड़ती थीं। आसपासके लोगोंको यह भी भास हुआ कि, उस स्त्रीकी चीखोंके साथ ही साथ किसी छोटे बच्चेकी चिल्लाहट भी सुनाई देरही है। अब क्या कहना है! सभी लोग उस ओर एकत्रित हो होकर आपसमें शोक करने लगे। भीतर कौन है, यह कौन चीख़ रहा है, इस विषयमें अनेक लोगोंके अनेक तर्क-वितर्क होने लगे। अनेक लोग यह भी कहने लगे कि, भीतर जो कोई हो, उसे बचाना ही चाहिए। परन्तु कहना एक बात है; और तदनुसार साहस करके उसको कर दिखलाना दूसरी बात है! दोनोंमें बहुत अन्तर है! लगभग सौ-पचास आदमियोंके मुँहसे उक्त दयाके शब्द निकल रहे थे, पर अग्निके मुखमें प्रवेश करनेके लिये सिर्फ एक ही व्यक्ति आगे बढ़ा। भीतर जाकर इन प्राणियोंको बचाना चाहिए—इस बातका उसने निश्चय कर लिया; और—"चाहे जो हो जाय,कहीं न कहींसे मार्ग निकालकर भीतर घुसूंगा ही—फिर जो कुछ होना हो, सोहो"—इस प्रकारका साहसपूर्ण उच्च विचार उसके हृदयमें उपस्थित हुआ। उस समय अन्य कई लोगोंने उसे पीछे खींचा, किन्तु उसके मनने नहीं माना। उसने सोचा कि, देशमुख साहबका मैंने नमक खाया है,

इस समय यदि उनके घरके लोगोंको बचानेमें मेरे प्राण भी चले जायँ, तो कोई हानि नहीं। आज दोपहरको ही मुझे कुछ न कुछ करना चाहिए था; परन्तु मेरे हाथसे उस समय कुछ भी न होसका, यह अच्छा नहीं हुआ। इस प्रकारके विचार ज्यों ज्यों उसके मनमें आने लगे, त्यों त्यों उसका जोश बढ़ता ही गया। वह जल्दी जल्दीसे महलके चारों ओर चक्कर लगाने लगा। "सटवाजी नायक, तुम इस झगड़ेमें मत पड़ो। व्यर्थके लिए जान मत दो। अब भीतरसे कोई जीवित निकल नहीं सकता।" इस प्रकारके वचन कई बार उसके कानोंमें आये। परन्तु उनको सुननेके लिए इस समय उसके पास कान ही न थे। उसका तन-मन-धन, सर्वस्व, उन प्राणियोंके चीत्कारकी ओर लगा था। जिस खिड़कीके पाससे वे चीख़ें उसके कानोंमें आरही थीं, उसकी ओर बराबर वह दस-बारह मिनटतक देखता रहा। उसको ऐसा भास हुआ कि, जो व्यक्ति ये चीख़ें मार रहा है, वह कोई स्त्री है; और उसकी गोदमें एक बच्चा है। बस, तुरन्त ही उसके मनमें यह अनुमान भी आया कि, हो न हो, वह स्त्री अमुक ही है। बस, फिर तो उसे बचानेके लिये उसको और भी अधिक जोश आया। अब उसने इस बातका निश्चय किया कि, जिधरसे आगका ज़ोर कुछ कम हो, उसी ओरसे भीतर घुसना चाहिए। बस, तुरन्त ही उसने अपने शरीरके ऊपरका वस्त्र निकालकर फेंक दिया; और धोती भी खोलकर फेंक दी, क्योंकि भीतर लँगोट बँधा हुआ था। इसके बाद उसने

एक बार ताल ठोंकी; और यह निश्चय करके, कि अब जहां आगकी लपटें कुछ कम होंगी, वहींसे भीतर घुसूंगा, वह फिर एक बार महलके आसपास घूमनेको चला। लोगोंने देखा कि, इसका जोश अब फिर बढ़ा; और अब यह अपने प्राणोंकी आहुति देनेहीवाला है, इसलिये फिर एक बार उन्होंने उसे समझानेका प्रयत्न किया। इधर सटवाजी आतुर होकर किसी तरफसे मार्ग देखनेके लिये आगे बढ़ रहा था, अतएव उसने लोगोंकी ओर बिलकुल ही ध्यान न देते हुए अपनी प्रदक्षिणा पूरी की। अब, भीतर घुसनेके लिए जो एक द्वार उसने देख रखा था, उससे आगे बढ़कर वह कदम रखनेहीवाला था कि, लोग उसे पीछे खींचनेका प्रयत्न करने लगे। इतनेमें बेतहाशा दौड़ते आनेवाले घोड़ेकी टापें लोगोंको पीछेसे सुनाई दीं। घोड़ा बातकी बातमें वहां आकर ठहर गया; और उसपर जो मनुष्य सवार था, वह एकदम नीचे कूद पड़ा। फिर उसने पासके एक मनुष्यसे डपटकर घोड़ा पकड़नेके लिए कहा; और बोला, "क्यों रे, क्या है? इधर सटवाजी सामने ही भीतर जानेको तैयार था। उसको देखकर उसने उसकी पीठ ठोंकी; और कहा, शाबास! शाबास! तुम और मैं, दोनों, साथ ही भीतर जायँगे, ये सब लोग डरपोक और नमकहराम हैं! अरे हरामखोरोंकी औलाद! तुमको स्वयं तो साहस नहीं है; और दूसरेको भी पीछे खींचते हो! धिक्कार है, तुम्हारी ज़िन्दगीको! तभी तो तुम्हारी छातीको रौंदकर मुसलमान तुम्हारे घरोंमें आग लगाते हैं!

गुलामो! तुम कबतक इसी तरह चूड़ियां पहने रहोगे?" उस काले-कलूटे आदमीने घोड़ेपरसे उतरकर सिर्फ इतना ही कहा। फिर तुरन्त ही उसने उस खिड़कीकी ओर देखा कि, जिससे अत्यन्त दीन वाणीसे चीखोंकी आवाज़ आरही थी। इसके बाद एकदम उसने प्रत्येक मराठेके शरीरमें जोश उत्पन्न करनेवाले ये शब्द कहे—"हर हर महादेव!" "जय भवानी माता, तुम्हारी जय हो!—" इसके बाद फिर आगे-पीछे कुछ भी न देखते हुए वे दोनों पासके एक दरवाजेसे भीतर घुसे। उनको घुसते अभी देर नहीं हुई थी कि, एक पटाव जलकर 'अर्र्र् धम्' करके गिरा हुआ सुनाई दिया। बाहरके लोगोंने समझा कि, यह पटाव उन दोनोंके—कमसे कम दोनोंमेंसे एकके शरीर-पर तो अवश्य ही गिरा। इसलिए यह आशा किसीको नहीं रही कि, ये दोनों अब जीवित दिखाई देंगे, अथवा कमसे कम इनकी लाशें ही दिखाई देंगी। सबके मनको यही विश्वास हो-गया कि, जिसको बचानेके लिए ये भीतर गये हैं, उसके सहित ये दोनों ही जलकर ख़ाक हो जायंगे। इस प्रकारके विचार मनमें आरहे हैं; और लोग चिन्तापूर्ण नेत्रोंसे देख रहे हैं कि, इतने-में जिस खिड़कीसे चीखनेकी आवाज़ आरही थी, उस खिड़की-सहित वह दीवाल फटकर गिर पड़ी, उसके नीचे एक आदमी भी दब गया। कुछ देर बाद जिस छतमें वह खिड़की लगी थी, वह छतकी छत ही ढह गिरी। लोग एकदम वहांसे दूर भागे। अब उसके ऊपरके भाग इतनी जल्दी जल्दी गिरने लगे कि,

आसपास चालीस-पचास हाथतक खड़े होनेका किसीको साहस न रहा। सब लोग दूर दूर खड़े थे; और लम्बी लम्बी गर्दनें करके तथा आँखें फाड़ फाड़कर इस जिज्ञासाको तृप्त करनेका मार्ग देख रहे थे कि, जो दोनों पुरुष भीतर गये हैं, उनकी क्या दशा होती है—अब वे बाहर आते हैं या नहीं! भीतर जो मनुष्य घुसे थे, वे आगकी लपटोंमें और धुएंकी गुंजारमें पड़े सही, परन्तु निश्चय—कभी न डगमगानेवाला, प्राणोंपर भी खेल जानेवाला निश्चय—जब एक बार किसी बातके पीछे पड़ जाता है, तब फिर चाहे जहां जावे, चाहे जहां घुसे, सफलता प्राप्त किये बिना, अथवा प्राण दिये बिना, मान नहीं सकता! जिस खिड़कीसे चीख़नेकी आवाज़ आई थी, वह खिड़की जिस ओर थी, उसी ओरको उन्होंने अपने क़दम बढ़ाये। मार्गमें कितने ही अंगार, कितने ही दीपककी भांति जलते हुए काठोंके टुकड़े पड़े हुए थे, चारों ओर ख़ूब धुआँ गूंज रहा था! दो हाथ आगे भी कुछ दिखाई नहीं देरहा था! बड़ी भयङ्कर दशा थी। नाक और मुँहसे धुआं भीतर घुस रहा था, शरीरको आगकी लपटें चाटे जाती थीं; शरीरका एक रोम भी जले बिना नहीं रहा। परन्तु इन सब बातोंकी ओर ध्यान देनेको उन दोनोंकी—विशेषतः उस काले-कलूटे व्यक्तिकी—पंचेन्द्रियोंको फुरसत कहां थी? उनके नेत्रोंको अपने लक्ष्यके अतिरिक्त और कुछ दिखाई ही नहीं देता था। उनकी घ्राणेन्द्रियोंको धुएंसे कुछ भी हानि नहीं पहुँच रही

था। उस स्त्रीकी चीख़ोंके अतिरिक्त उनकी कर्णेन्द्रियोंको और कुछ भी सुनाई नहीं देरहा था। उनकी त्वचाको ज्वालाएं चाट रही थीं, पर इसका उन्हें भान भी न था। उनकी सारी इन्द्रियां मानो एक अन्तरिन्द्रियमें ही जालगी थीं। वह काला-कलूटा ज़बरदस्त आदमी ख़ूब आगे बढ़ा चला आरहा था। दूसरा आदमी उसके पीछे था। वे सब प्रकारके प्रयत्न करते हुए उसी खिड़कीके पास पहुँचे, जहांसे चीख़नेकी आवाज़ आ-रही थी। वहां जाकर वे क्या देखते हैं कि, सचमुच ही एक स्त्री बिलकुल बेहोश होकर पड़ी है। उसीके पास उसका बालक भी उसी हालतमें पड़ा हुआ है। उसका चीख़ना न जाने कबका बन्द होचुका था। अब उन्होंने क्षणभर इस बातका विचार किया कि, इसे किस प्रकार उठा लेजावें। उस काले पुरुषने देखा कि, नीचेकी छत ढह रही है, न जाने किस समय यह बिलकुल ढह गिरेगी, इसलिए अब इस स्त्रीको उठा लेजानेमें एक क्षणका भी विलम्ब न लगाना चाहिए। बस, उसने एक क्षणभरका भी विलम्ब न लगाते हुए तुरन्त ही उस स्त्रीको उठाकर अपने चौड़े से कंधेपर रख लिया; और दूसरे हाथसे उस बालकको उठाकर "हर हर महादेव!" "भवानी माताकी जय हो! जय हो!" कहते हुए वह बातकी बातमें उस कमरेसे बाहर निकल पड़ा। उसका क़दम उस कमरेसे बाहर निकलनेमें यदि एक पलभरकी भी देरी लगी होती, तो वह भी उस कमरेके साथ ही साथ अग्निमें गिर पड़ता; परन्तु वह अभी उस कमरेसे

बाहर निकला ही था कि, इतनेमें जैसाकि पीछे बतलाया, उस कमरेकी छत बिलकुल ढहकर गिर पड़ी; और साथ ही पूरा कमरा भी नीचे बैठ गया। इधर वह काला मनुष्य उस कमरेके बाहर निकलते ही अपने साथीसे कहता है, "सटवाजी-राव, अब इधर-उधर मत देखो। आगे बढ़कर बाहर निकलनेके लिए रास्ता करो, मैं उस रास्तेसे तुम्हारे पीछे ही पीछे आता हूं। जब बिलकुल दरवाजेके पास पहुँचो, तब इसको और इस बच्चेको तुम ले लो; और इनको कहीं दूर लेजाकर होशमें लानेका प्रयत्न करो। तबतक मैं फिर लौटकर, एक और मेरा काम रह गया है, उसे किये आता हूं।" ये सब शब्द वह खूब जल्दी जल्दी और अत्यन्त शान्तिके साथ बोल रहा था, जैसे किसी शान्तिके स्थानसे ही वह चल रहा हो! सटवाजीराव, जो आगे जारहा था, उसकी उस शान्तिको देखकर कुछ अच-म्भेमें भी आया। परन्तु अचम्भेमें ही आकर रह जानेका यह समय नहीं था; और न वह स्थान ही ऐसा था। इसलिए बहुत जल्द वह रास्ता करते हुए आगे बढ़ा। उसके भी साहसकी जितनी प्रशंसा की जाय, थोड़ी ही है! क्योंकि मार्गमें कितनी ही बार उसने जलते हुए काठोंको दूर हटाकर रास्ता निकाला। उस स्त्रीको लिये हुए जो काला मनुष्य पीछे पीछे आरहा था, उसके साहसकी तो बात ही न पूछिये; क्योंकि उसने आस-पासकी वे भयंकर ज्वालाएं उस स्त्रीके वस्त्रमें, तथा उसके बालोंमें, अथवा उसके बालकके बालोंमें अणुमात्र भी न लगने

दीं—इस विषयमें जहांतक सावधानीसे वह काम लेसकता था, वहांतक उसने लिया; और सौभाग्यसे उसके उस अपूर्व साहसको सफलता भी प्राप्त हुई। उस स्त्री और बालकको वह अपने कंधेपर इस प्रकार बाहर लेआया कि, अग्नि उनको स्पर्श भी नहीं कर सकी। इसके बाद उनको सटवाजीके सिपुर्द करके स्वयं अत्यन्त फुरतीके साथ पीछे लौट पड़ा। परन्तु इस बातका उसे विचार भी नहीं आया कि, जिस स्त्री और बच्चेको अग्निस्पर्शसे बचाकर वह बाहर निकाल लाया है, वे वास्तवमें हैं किस अवस्थामें ?

तेईसवां परिच्छेद।

पुरन्दरका क़िला।

प्रातःकालका समय है। सूर्यनारायण अब कहीं थोड़े थोड़ेसे ऊपरको आरहे हैं। उनके बाल-किरण अपने लाल लाल रंगकी छटा क़िलेके ऊपर डाल रहे हैं। ऐसे समयमें हमारे बाबाजी मन ही मन तड़फड़ाते हुए इधर-उधर घूम रहे थे। कोठरीके दरवाजेमें बाहरसे ताला पड़ा हुआ था; और पहरा देनेके लिए दो सिपाही मौजूद थे। कोठरीके अन्दर अबतक अँधेरा ही था। हां, एक ओर छोटासा एक झरोखा था, उससे अवश्य ही उन कोमल सूर्यभगवानका एक छोटासा किरण

भीतर घुसकर उस अँधेरेको और भी अधिक दुस्सह बनानेका प्रयत्न कर रहा था। जैसाकि, हमने ऊपर बतलाया, बाबाजी इस समय उसी कालकोठरीमें थे; और मन ही मन कुछ तड़-फड़ाते हुए इधर-उधर चक्कर लगा रहे थे। आज दूसरा दिन था, जबकि बाबाजी हनुमानजीके मन्दिरसे पकड़कर वहां लाये गये थे। मार्गमें उन्होंने क्या क्या किया,--जो मुसलमान उनको पकड़े लिये आरहे थे, उनके द्वारा जब उन्होंने एक मराठा युवतीका अंशतः अपमान होते हुए देखा, तब उन्होंने क्रोधके आवेगमें किस प्रकार उसकी मरम्मत की, इत्यादि वृत्तान्त हमारे पाठकोंको मालूम ही है। मुसलमान सरदारको उनका वह साहस देखकर अत्यन्त आश्चर्य हुआ; यही नहीं, बल्कि उनके उस साहस और शूरताको देखकर उसके मनमें पूज्य भाव भी उत्पन्न हुआ। परन्तु केवल आश्चर्य और पूज्य भावमें ही भूलकर वह सरदार उस समय चुप नहीं रह सकता था। इसलिए उसने अपने मुसलमान सिपाहियोंको पहले कुछ थोड़ा-बहुत धमकाया; और फिर बाबाजीको भी कुछ डांट-डपट दिखलाकर आगे बढ़नेका हुक्म दिया। जिस शंकाके कारण वह मुसलमान सरदार अपने उस मराठे सरदारको साथ लेकर हनुमानजीके मन्दिरपर गया था, वह शंका अभी उसके मनको टोंच रही थी। इसलिए वह यही चाहता था कि, कोई न कोई युक्ति करके इस वैरागीको पूरा पूरा अपने कब्ज़ेमें करके—आवश्यकता हो, तो उसको कष्ट देकर भी—उससे अपनी अभीष्ट जानकारी प्राप्त कर लेनी

चाहिए। अपने इस उद्देश्यको सिद्ध करनेके लिए अब उसके पास एक ही उपाय था; और वह यह कि, बाबाजीको क़िलेमें क़ैद कर रखा जाय; और उनको खाने-पीनेको बिलकुल न देकर, जितना कष्ट दे सकें, दिया जाय; और इस प्रकार जो पता लगाना है, लगा लिया जाय। हनुमानजीके उस मन्दिरसे पुरन्दरका क़िला बहुत नज़दीक था; और जो काम इस समय उस सरदारको सिद्ध करना था, उसके लिये वह क़िला पूरा पूरा उपयोगी भी था। किला बीजापुरवालोंके अधिकारमें था। यही नहीं, बल्कि हमारे बाबाजी जिस मुसल्मान सरदारके आज क़ैदी थे, उसीके हाथमें उस प्रान्तकी सूबेदारी भी थी। क़िलेदार एक वृद्ध मनुष्य था। उसके तीन लड़के थे; परन्तु तीनों ही पुत्रोंमें परस्पर बहुत बनती नहीं थी; और उस वृद्ध क़िलेदारको तो आजकलके नवीन छोकरोंकी नवीन चालें बिलकुल ही पसन्द नहीं थीं। क़िलेकी स्थिति चूंकि इस प्रकारकी थी, अतएव बाबाजीको क़ैद कर रखनेमें वहां तत्काल ही सब सुविधा हो-गई। साथ ही साथ दरबारमें इस आशयका एक पत्र भी भेज दिया गया कि, एक ऐसे गुसाईंको पकड़कर क़िलेमें क़ैद कर रखा है कि, जिससे षड्यंत्रका कुछ न कुछ पता मिलनेकी सम्भावना है, इतना ही नहीं, किन्तु जिसको पूरा पूरा कष्ट पहुँचानेसे बलवाइयोंकी—विशेषतः राजा शहाजीके उपद्रवी लड़केकी भयंकर कार्रवाइयां सारी मालूम पड़ जायँगी। अस्तु। उस मुसल्मान सरदारके साथ जो मराठा सरदार था, उसे ये

सब बातें केवल विषवत् मालूम हुईं। किन्तु उस समय वह लाचार था। जो कुछ हो रहा था, उसको चुपकेसे देखते रहनेके अतिरिक्त और वह कुछ कर ही नहीं सकता था। उसकी परिस्थिति ही उस समय ऐसी थी। हनुमानजीके मन्दिरमें बाबाजीने जो दो-चार मर्मस्पर्शी वचन उससे कहे थे, वे अबतक उसके हृदयमें सल रहे थे। तिसपर भी जब उसने यह देखा कि, मुसल्मान सरदारने अब बिलकुल ही हमें ताकमें रख दिया; और यों ही जिस मुसलमान सरदारको हमारे साथ कर दिया गया था, वह अब अपना ही हठ चलाता है, हमारी बिलकुल परवाह ही नहीं करता, तब उसको बहुत ही सन्ताप हुआ; पर बेचारा करता क्या? उस समयकी परिस्थिति ही ऐसी थी कि, मुसल्मान सरदारोंके आगे मराठे सरदार किसी गिनतीमें नहीं थे। दो-चार सरदारोंकी बात जाने दीजिए—जिनकी ईमानदारी और नेकनीयतीका, तथा जिनकी शूरवीरताका भी, बादशाहको अनुभव होचुका था—बाकी और सरदारोंके साथ चाहे जो मुसल्मान सरदार अथवा नवाब, चाहे जैसा व्यवहार किया करते थे। सच पूछिये, तो उस समय बीजापुर-दरबारसे उस मराठे सरदारको ही इस कामपर भेजा गया था कि, इस समय पूना, सासवड़ और मावल इत्यादिके इलाक़ोंमें जो बार बार लूटमार करके प्रजाको कष्ट दे रहे हैं, उन नवयुवक बागियोंका पता लगाकर उनका दमन किया जाय; और वास्तवमें उस मराठे सरदारके साथ मुसल्मान सरदारको सहायकके तौरपर भेजा गया था।

परन्तु वे दोनों सरदार जबसे हनुमानजीके मन्दिरपर गये, तबसे मुसलमान सरदारने कैसा व्यवहार किया, सो हमारे पाठकोंको मालूम ही है। बाबाजीको क़ैद करनेके बाद सारा अधिकार मुसलमान सरदारने अपने ही हाथमें लेलिया; और मराठे सरदारको बात ही न पूछने लगा। अस्तु।

ऐसी परिस्थितिमें हमारे बाबाजीको, जैसाकि हमने ऊपर बतलाया, क़िलेकी एक काल-कोठरीमें क़ैद कर रक्खा। बाबाजी उस जगह, मन ही मन तड़फड़ाते हुए अपने क़ैदखानेमें—जैसे पिँजरेमें कोई शेर बन्द हो, उसी तरह—इधरसे उधर और उधर-से इधर चक्कर लगा रहे थे। उनकी संगिनी—उनके जीवनकी एकमात्र सहेली—बस, एक कुबड़ीभर उनके पास थी। उसी-को वे बार बार इस हाथसे उस हाथमें और उस हाथसे इस हाथमें लेरहे थे। उसकी ओर एक विशेष अर्थपूर्ण दृष्टिसे देखते, कभी कभी कुछ हँसते; और फिर घड़ीभरके लिए उसको एक ओर रख देते थे। इस प्रकार उद्वेग-चंचल-वृत्तिसे बाबाजी घूम रहे थे। इतनेमें यदि ज़रासा कहीं कोई खुसफुसा देता, अथवा कोई दरवाजा ही ज़रासा खटका देता, तो चौकन्ने होकर अपनी कुबड़ी हाथमें लेलेते; और यह देखने लगते कि, क्या कोई अचानक आता तो नहीं है। इस प्रकारकी अवस्थामें जब-कि बाबाजी थे, तब अचानक क़िलेके नीचेकी ओरसे, कहींसे ज़ोर ज़ोरसे एक डफ़सा बजता हुआ सुनाई दिया; और ज्यों ज्यों उसकी आवाज़ उनके कानोंमें आने लगी, त्यों त्यों वे

इस बातके लिए और भी अधिक उत्कंठित होते गये कि, देखें, यह डफ़ बजानेवाला हमारी पहचानका ही है अथवा अन्य कोई। बस, जिस झरोखेसे सूर्यदेवता अपने प्रकाशका अणुमात्र अंश बाबाजीको दे रहे थे; उसी झरोखेसे उन्होंने देखनेका प्रयत्न किया कि, देखें, यदि कुछ दीखता हो। पर वहांसे क्या दीख सकता था? हां, इतना अवश्य हुआ कि, वहांसे उस डफ़की आवाज़ ज़रा और स्पष्ट सुनाई देने लगी; और उनको इस बातका अधिकाधिक विश्वास होने लगा कि, यह डफ़ सचमुच वही है कि, जिसके विषयमें हमको शंका हुई थी। इस बातका विश्वास होते ही उनके चेहरेपर कुछ उल्लासकीसी झलक दिखाई दी। इसके बाद उसी उल्लसित वृत्तिमें कुछ विचारसा करते हुए वे फिर इधर-उधर घूमने लगे।

कुछ देर बाद वह डफ़ बिलकुल ही न सुनाई देने लगा। इसलिए उसीके विचारमें वे निमग्न होगये। आधी घड़ी हुई, एक घड़ी हुई—बाबाजी सिवाय इधर-उधर घूमनेके और कुछ नहीं कर सके। इतनेमें उनकी कालकोठरीका दरवाजा खुला; और एक पहरेदार भीतर आया। पहरेदार एकदम उनसे कहता है,"बाबाजी, ख़ांसाहबकी सवारी बहुत जल्द आपके पास आने-वाली है। इसलिए आप अपना सच्चा सच्चा हाल बतलाकर क्यों नहीं छुटकारा पा लेते?" यह सुनते ही बाबाजी अत्यन्त क्रुद्ध और तुच्छ दृष्टिसे उसकी ओर देखकर मन ही मन कुछ हँसे; और फिर उससे कहते हैं, "अरे, जा, जा। ख़ांसाहबसे

यह सन्देशा कह दे कि, अकेले मत आओ—अपने बाप, दादे, परदादे, जो कोई हों, उनको भी साथ लेते आओ।"

यह सन्देशा सुनकर पहरेदार भी बेचारा कुछ चकराया; पर पीछेसे कुछ हँसा भी, क्योंकि वह जातका मराठा ही था। बाबाजीका कथन सुनते ही वह उनसे कहता है, "बाबाजी, क्यों व्यर्थमें कष्ट उठा रहे हैं? ये मुसलमान आपको इस प्रकार कभी नहीं छोड़ेंगे। व्यर्थके लिए आप अपने प्राणोंसे हाथ धो बैठेंगे। इससे तो यही अच्छा है कि, दो-चार सच्ची-झूठी कहकर अपना छुटकारा पा लीजिये।"

बाबाजी एक अक्षर भी न बोलते हुए सिर्फ उसकी ओर देखकर हँसभर दिये। फिर थोड़ी देर बाद उससे कहते हैं, "जा, जा। मुसल्मानोंकी पीकदानी उठानेवाले, तेरे समान लोग सामने नहीं आने चाहिए। जा, मुँह काला कर यहांसे। नीचो, चाहे तुम्हारे सामने गाय मारें—यही नहीं, बल्कि तुम्हारे हाथ-से पकड़कर मरवावें भी, तो भी तुम यही कहकर टाल देने-वाले हो कि, "जाने दो, क्या हुआ जी!"— ऐसी दशामें मेरे समान वैरागीके चाहे प्राण भी ले लें—फिर भी तुमको कुछ तरस नहीं आयेगा! गौ-ब्राह्मणोंका कष्ट दूर करनेके लिए जो प्रयत्न कर रहा है, अपने प्राणोंको भी न्योछावर करके जो इसके लिए तैयार है, उसीके विरुद्ध सच्ची-झूठी कहनेके लिए तू उपदेश दे रहा है? तेरी यह जीभ क्यों न काट ली जाय? अरे, धिक्कार है, तेरी ज़िन्दगीको! जा, जा। अब खड़ा मत हो, मेरी आँखोंके

सामने। जा जल्दी! बुला ला, उस खानको; और उसके कहे ही उड़ा दे मेरी गर्दन! नहीं तो, क़िलेके कोटपरसे ढकेल दे! लेकिन इस समय यहांसे चला जा।"

बाबाजीके ये शब्द हमने यहां देदिये हैं, लेकिन उस समय उन्होंने इस प्रकार इनको उच्चारण किया कि, वह पहरेदार चुपकेसे खड़ा हुआ उनको सुनता रहा। बाबाजीकी वाणीमें कुछ ऐसी ओजस्विता जो भरीहुई थी कि, उसको जो, कोई सुनी उसके मनपर कुछ न कुछ असर किये विना वह रह नहीं सकती थी—बशर्ते कि, "हृदय" जिस चीज़को कहते हैं, वह उसमें किसी न किसी अंशमें मौजूद हो। परन्तु यहां तो पहरेदारकी बात थी—फिर भी बाबाजीके उन निन्दायुक्त वचनोंसे उसका दिल बहुत कुछ हिल गया; और वह सचमुच ही एक क़दम पीछे चलता हुआ बिलकुल दरवाजेतक गया; और फिर कुछ भी न बोलता हुआ दरवाजेके बाहर निकल गया। पहरेदार जबकि पीछे लौट रहा था, तभी बाबाजीको, उसके चेहरेसे ही, मालूम होगया कि, हमारी मात्रा इसपर कुछ न कुछ काम कर गई; और इसलिए बाबाजी, मन ही मन, कुछ हँसकर कहते हैं, "देखना चाहिए, अभी हालमें जो डफ़ सुनाई दिया था, वह यदि सचमुच उसीका डफ़ है, तो आज या कल यहांसे निकलनेका कोई न कोई प्रयत्न होगा ही; और यदि ऐसा हुआ, तो फिर इस मनुष्यसे अवश्य ही कुछ काम निकलेगा। हमारे कार्यमें जिन मनुष्योंसे कुछ काम नहीं निकल सकता—ऐसे

मनुष्य बहुत थोड़े हैं। दो-चार बूढ़ी खोपड़ियां भले ही हों। और दो-चार नवयुवकोंमें भी स्वार्थी निकल ही आवेंगे!"

इसी प्रकारके विचार उनके मनमें आरहे थे कि, इतनेमें फिर उनको ऐसा भास हुआ कि, अभी जो डफ़ बजता था, फिर वही बज रहा है। इससे उनको फिर यह जाननेकी इच्छा हुई कि, सचमुच यह वही डफ़ है या नहीं। बस, तुरन्त ही उनके मनमें आया कि, अभी हमने जिस मात्राकी लकीरें घिस-कर दी हैं, देखें, उस मात्राने कहांतक पहरेदारपर काम किया है। यह सोचकर उन्होंने द्वार खटखटाना शुरू किया। कुछ ही देर बाद क्या बात है, सो देखनेके लिए वही पहरेदार भीतर आया। उसे देखते ही बाबाजी उससे कहते हैं, "क्यों जी जमादार! आजकल दिनको भी सुबह क़िलेपर, जान पड़ता है, तमाशे-वमाशे हुआ करते हैं?

पहरेदार आश्चर्यचकित होकर उनकी ओर देखता हुआ कहता है, "क्या? तमाशे? सो भी क़िलेपर? क़िलेपर तो कभी तमाशे हुए नहीं। हां, क़िलेदारके एक लड़केको कुछ शौक अवश्य है, सो भी क़िले-विलेपर कभी नहीं—वहीं कहीं अपना नीचे बस्तीमें जाकर भले ही कराया-वराया करता हो?"

"ह? हूँ! फिर सुबहके ही पहर यह डफ़ कहां बज रहा है?

"डफ़?" पहरेदार कुछ सोचकर कहता है, "डफ़! क़िलेपर तो कहीं डफ़-वफ़ बजता दिखाई नहीं देता। हां, नीचे बस्तीमें

अवश्य ही एक जोगिन आई है। वही अपना गा-बजाकर नाच रही है। हँ! हँ! आपको भीतरकी, उस तरफकी, दीवालके झरोखेसे वह डफ़ ज़रूर आपको सुनाई दिया होगा!"

बाबाजी अधिक कुछ नहीं बोले; और भीतर ही भीतर कुछ हँसे। उनके चेहरेसे स्पष्ट दिखाई दिया कि, जो कुछ उनको चाहिए था, सो मिल गया। किन्तु तुरन्त ही उनके मनमें आया कि, यदि हम कुछ नहीं बोलेंगे, तो शायद इसके मनमें शंका न होजाय; इसलिए फिर बोल उठे, "अच्छा! जो डफ़ सुनाई दिया, सो उस जोगिनका था? मैंने समझा कि, सभी बातें यहां विलक्षण ही होती होंगी। क़िलेदार ब्राह्मण हैं; परन्तु फिर भी वैरागीको कष्ट दिया जारहा है, इसीसे समझा कि, शायद दिनको भी तमाशे होते हों! यह जोगिन क्या कभी क़िलेपर भी आती है? अथवा यहां उसको आनेकी मनाई है?"

"मनाई कहांकी महाराज? ये लोग सभी जगह जाते हैं; थोड़ी देर नाचते-गाते हैं, जादू-टोना करते हैं; और भिक्षा मांगकर पेट भरते हैं। उनको कोई मना-वना नहीं करता। आज जो आदमी यह जोगिन बनकर बस्तीमें आया है, वह दस-पन्द्रह दिनके बीचमें अकसर यहां आजाता है; और भिक्षा मांगकर लौट जाता है।"

बाबाजीकी चेष्टासे मालूम हुआ कि, उनके मतलबकी बात उनको और भी प्राप्त हुई। कह नहीं सकते कि, उस जोगिनके क़िलेपर आनेसे उनका तात्पर्य क्या था!

जो हो, बाबाजीकी और पहरेदारकी इसी प्रकार कुछ देर-तक बातचीत होती रही। इसके बाद बाबाजी फिर उससे कहते हैं, "क्यों जमादार, यहांसे छूटनेमें यदि तुमने हमको सहायता दी—नहीं, मैं यह नहीं कहता कि, तुम हमको सहायता दो ही—पर, बात कहता हूं, मान लो, तुमने दी, तो ये लोग तुमको बड़ी सज़ा देंगे? हमपर तो बड़ी भारी नज़र रखनेका तुमको हुक्म होगा? रखो भाई! हम तुम्हारे हाथमें ही आफँसे हैं! तुम जो चाहो, सो कर सकते हो! पर हमारे पंजेमें यदि तुम कभी फँस गये—फँसते काहेको हो!—तो हम तुमको सब तरहसे छोड़ देंगे! पर तुम भला ऐसा कैसे कर सकते हो? यदि कहें कि, तुम सिर्फ देखी-अनदेखी ही कर जाओ; और हम अपना छूट जानेका प्रयत्न कर लें, तो भी शायद तुम न सुनोगे! पर तुम्हारा भी इसमें क्या दोष? हमको यदि तुम सहायता भी दोगे, तो हमारी जगह तुम्हींको सूली देंगे! अजी ये मुसलमान भाई हैं! कुछ पूछो मत, न जाने क्या करें और क्या न करें! कहो, जो कुछ हम कहते हैं, सच है न? देखो, सुबहसे बार बार चिलमकी तलब लग चुकी, पर कहीं मिली नहीं। जाओ ज़रा, नीचे बस्तीमें यदि मिल जाय, तो एक कोरी चिलम और थोड़ीसी ताज़ा तमाखू ही ला दो! और कुछ नहीं, तो न सही—इतना तो काम कर दो!"

बाबाजीका बोलना अभी बन्द नहीं हुआ था कि, इतनेमें

किसीने दरवाजा खटकाया। बाबाजी एकदम चुप होगये। जमादार फिर तुरन्त बाहर चला गया; और क़िलेदार स्वयं भीतर आया।

चौबीसवां परिच्छेद।

जोगिनका फेरा।

क़िलेदार एक बिलकुल वृद्ध पुरुष था। उसकी अवस्थाने तो बुढ़ापेकी छाया उसकी सूरतपर डाली ही थी; किन्तु उसके गालोंपर जो झुर्रियां और गड्ढे पड़ गये थे, वे केवल उसकी अवस्थाके ही नहीं थे। वास्तवमें जान पड़ता था कि, चिन्ताने भी उसकी सूरतपर अपना काफी पराक्रम दिखलाया है। उसकी दृष्टि मन्द पड़ गई थी; और उसके क़दम भी कुछ तेज़ नहीं पड़ते थे। उस पुरुषकी ओर देखनेसे स्वाभाविक ही ऐसा जान पड़ता था कि, चिन्ताने इसे ख़ूब सताया है। सूरत उसकी बिलकुल सौम्य और सरल जान पड़ती थी। उसमें कपट इत्यादिकी रेखा अणुमात्र भी दिखाई नहीं देती थी। सिरमें सफेद पगड़ी, शरीरमें एक बाराबन्दी और ऊपरसे एक चदरा डाले हुए था। वह भीतर ज्यों ही आया, त्यों ही पहरेदारने एक मसनद और एक गद्दी दरवाजेके पास लाकर रख दी; और दरवाजा प्रायः खुला ही रखा, तथा स्वयं पास ही खड़ा रहा। पीछेसे पानका सामान—एक बटुवेमें ही—और एक छोटासा खलबत्ता हाथमें

लिये हुए अर्दली दौड़ता हुआ आया। गद्दी, जो वहां पड़ी हुई थी, उसपर पैर रखते ही अर्दली और पहरेदारकी ओर दृष्टि फेंककर वह वृद्ध पुरुष उनसे कहता है, "देखो, तुम दोनों यहांसे बहुत दूर चले जाओ। यहां रहनेकी ज़रूरत नहीं है। जा, शान्ताराम, तू भी जा। आवश्यकता पड़नेपर मैं बुला लूंगा।" दोनों वहांसे बहुत दूर जाकर एक वृक्षके नीचे बैठ गये। और दस-पांच मिनट भी नहीं हुए थे कि, शान्तारामकी थैली और जमादार साहबकी हुक्की निकली। फिर क्या पूछना है? किसी एक रूपमें ही तमाखू लोगोंको मोहित करनेके लिए काफी है—फिर वहां तो दो दो रूपोंमें मनमोहिनी सुरती आ उपस्थित हुई। वे दोनों अपनी गप-शपमें लग गये।

इधर क़िलेदार अपनी मसनदको टेककर बैठ गया; और फिर बिलकुल सौम्यताके साथ हमारे बाबाजीसे बोला, "बाबाजी, आप इनके पंजेमें कहांसे फँस गये?"

"मैं? मैं ही क्या—महाराज, हमारा सारा धर्म, हमारा सारा देश, सारे गौ-ब्राह्मण इनके पंजेमें फँसे हुए हैं—फिर मुझ ग़रीबकी क्या कथा? आज चाहे जिसको, चाहे जिस समय, पकड़कर वे फांसीपर लटका रहे हैं—फिर मुझ ग़रीबकी वहां कौनसी बात है? ऐसा ही कुछ मनमें आया, मैं मन्दिरमें मिल गया, पकड़ लाये; और यहां बांध दिया! बादशाही अमल ठहरा, नवाबी है ही, चाहे जो कोई हो, कौन पूछता है कि, तुम कहांके हो, कौन हो!"

बाबाजी जबकि यह कह रहे थे, क़िलेदारकी सारी नज़र उनके चेहरेकी ओर थी। उनके शब्द सुननेकी ओर उसका ध्यान था, अथवा नहीं, इसमें शंका ही है! बाबाजी जबकि उपर्युक्त बात कह रहे थे; और फिर जबकि उनकी बात ख़तम भी होगई, क़िलेदार कुछ देरतक बिलकुल चुप बैठा था। हां, उसकी नज़र बाबाजीके चेहरेसे बिलकुल नहीं हटी। बाबाजीका कथन समाप्त होगया; और जब वे बिलकुल चुप होगये, इसके बहुत देर बाद क़िलेदारने एक लम्बीसी सांस ली; और फिर बोला, "बाबाजी, आपको जिस सन्देहसे पकड़ लाये हैं, उसमें क्या कुछ भी सत्यता है? आप जिस मन्दिरमें रहते हैं, वहां कुछ लोग इकट्ठे होते हैं; और आप लोग वहां कुछ गुप्त मन्त्रणा किया करते हैं—क्या यह सच है?" ये प्रश्न क़िलेदारने बिलकुल ही निर्बल आवाज़से और चुपकेसे पूछे। उन प्रश्नोंके उत्तर क्या मिलेंगे, सो मानो वह पहलेहीसे जानता था। वे उत्तर सुनने ही चाहिए, अथवा बाबाजीसे वे उत्तर उसको मिलने ही चाहिए—ऐसी कुछ उसकी अपेक्षा दिखाई नहीं दी। हां, सच्चा हाल क्या है, मानो सो जाननेके लिए ही उसकी वह दृष्टि, जोकि दूरसे वस्तु देखनेमें तो मन्द थी; पर थी बड़ी गहरी—और विशेषतः चेहरेकी ओर देखनेसे अन्तःकरणमें, भीतर, बहुत गहरी थी—देखनेमें बड़ी तीक्ष्ण थी—सो बराबर बाबाजीके चेहरेकी ओर लगी थी। बाबाजी भी मानो उस बातको समझ गये; और इसीलिए, ऐसा जान पड़ा कि, वे इस बातका प्रयत्न

करने लगे कि, जो चेष्टा उनकी थी, वही क़ायम रहे; और जहां-तक होसके उनका चेहरा क़िलेदारकी दृष्टिमें बराबर पड़ने ह न पावे। अबतक बाबाजी सबके सामने बिलकुल सीधी निगाह रखकर जिस प्रकार उत्तर देते थे, उस प्रकार इस समय उनकी स्थिति दिखाई नहीं दी। वे क़िलेदारके सामने, जहांतक हो-सकता था, निगाहमें निगाह नहीं भिड़ाते थे। बराबर दो मिनट—दो मिनट क्यों, एक मिनट भी उन्होंने क़िलेदारके मुँहकी ओर नहीं देखा। क़िलेदारकी बात बिलकुल इससे भिन्न थी। वह जो कुछ कह रहा था, सो तो बिलकुल यों ही; किन्तु देख बराबर रहा था। ऐसा जान पड़ता था कि, मानो वह बाबाजीको ख़ास तौरपर देखनेके लिए ही आया था—बातचीत करनेके लिए नहीं।

फिर भी बाबाजीने एक ओर देखते हुए, उसके प्रश्नोंके उत्तर बिलकुल शान्तिपूर्वक दिये, "महाराज, वहां और कौन लोग होंगे? और गुप्त मंत्रणा किस बातकी होगी? मामूलीसी बातको व्यर्थके लिए इतना बढ़ा रखा है! आप जानते ही हैं कि, वह पुराना हनुमानजीका मन्दिर है। उसमें आज पांच-छै वर्षसे मैं रहता हूं। वहां मन्दिरके साथ एक बड़ासा प्रांगण भी है। मेरे ही समान कोई पांथस्थ वैरागी वहां आजाता है, उतर पड़ता है, एक-दो दिन, जो कुछ रहना होता है, रहता है; और फिर अपना चला जाता है। हनुमानजीका मन्दिर ही है; और फिर मैं वहां रहने लगा, इसलिए स्वाभाविक ही देवताके सामने

दीपक लगाना पड़ा, मंगलवारके दिन एक-आध और अधिक दीपक रखने पड़े, एक-आध नारियल, भिक्षा मांगनेसे,जो मिल गया, तो उसका प्रसाद चढ़ाकर, जो लोग आ गये, उनको बाँट दिया। बस, यही क्रम जारी रहा। धीरे धीरे आसपासके गाँवोंके कुछ लड़के भी जमा होने लगे। वे मंगलवारको वहां आते रहते हैं। वहां एक छोटासा अखाड़ा भी बनाया है। इधर मावलके लड़के हैं ही क्या ? फिर भी उनके इकट्ठे होनेका इतना भय माना गया है ! वे वहां करते ही क्या हैं ? हां, कभी कुश्ती लड़ते हैं; पटा-बनेठी, मुद्गर, लेजम इत्यादिकी कसरत करते हैं, इससे अधिक और क्या है ? मेरे समान वैरागीसे गुप्त मंत्रणा करने कौन आवेगा ? और गुप्त मंत्रणा करेगा किस बातकी ?" इतना कहकर बाबाजी हँसे; और उन्होंने सीधी निगाहसे—तो क्या ?—किन्तु धीरेसे ही तिरछी नज़र करके क़िलेदारकी ओर देखा; सो केवल यह जाननेके लिए कि, हमारे कथनका उसपर क्या प्रभाव पड़ा, हमारा कथन कहांतक उसके ध्यानमें आया, कहांतक सच मालूम हुआ ? परन्तु शायद उनकी वह दृष्टि बिलकुल विफल हुई। क्योंकि क़िलेदारके उस चिन्ता-निमग्न चेहरेसे इस बातका बोध अणुमात्र भी नहीं होसकता था कि, बाबाजीके कथनका उसके हृदयपर क्या प्रभाव पड़ा, उनका कथन उसे कुछ सत्य मालूम हुआ, अथवा नहीं। बाबाजीकी कोठरीमें वह जिस समय आया था; उस समय जैसा उसका चेहरा था, वैसा ही अब भी मौजूद था—उसमें कुछ भी

अन्तर दिखाई नहीं पड़ा। इससे तुरन्त ही बाबाजीके ध्यानमें आगया कि, हम जिससे बातचीत कर रहे हैं, वह कोई मामूली आदमी नहीं है; किन्तु वह एक ऐसा आदमी है कि, जो अपने हृदयका अभिप्राय ऊपरसे प्रकट नहीं होने देसकता।

अभी ऊपर हमने बतलाया कि, बाबाजीके कथनका क़िलेदारके मनपर कोई प्रभाव नहीं पड़ा—और यदि पड़ा भी हो, तो कमसे कम उसके चेहरेपर तो उसकी अणुमात्र भी छाया दिखाई नहीं दी। परन्तु हमारे इस कथनमें थोड़ीसी भूल हुई। क्योंकि कुछ प्रभाव पड़ा सही; किन्तु वह उसकी चेष्टामें नहीं, बल्कि व्यवहारमें; क्योंकि ऐसा जान पड़ा कि, अबतक वह उस वैरागीकी ओर जितनी आतुरतासे देखता था, उससे कहीं अधिक आतुरताके साथ वह अब उसकी ओर देखने लगा। बाबाजीके कथनमें तो ऐसी कोई बात ही दिखाई नहीं दी कि, जिससे क़िलेदारपर वैसा प्रभाव पड़ता; परन्तु इसमें सन्देह नहीं कि, उनका कथन समाप्त होनेके बादसे ही वह और भी अधिक उत्कंठाके साथ उनके चेहरेकी ओर देखने लगा। इस रीतिसे क़िलेदार थोड़ी देरतक एकटक उनकी ओर देखता रहा। फिर इसके बाद वह उनसे कहता है, "बाबाजी, आप वैरागी कबसे हुए? आपकी उम्र क्या है? आप कहां कहां घूमे? आपकी स्थिति क्या है? सब बताइये।"

इतने प्रश्न करके वह फिर बाबाजीकी ओर ग़ौरसे देखने लगा। इन प्रश्नोंको सुनते ही—और विशेषतः इन प्रश्नोंके पूछनेके

बाद वह क़िलेदार जिस रीतिसे बाबाजीकी ओर देख रहा था, उस रीतिको देखते ही—ऐसा जान पड़ा कि, बाबाजीके मनमें कोई भारी आशंका उत्पन्न हुई। "मुझे जो भय होरहा था, वह कहीं सच तो नहीं है? अबतकके प्रश्न तो ठीक थे; परन्तु पीछेसे जो प्रश्न किये, वे निस्सन्देह कुछ भिन्न ही विचारोंसे किये गये! क्या इसने मुझे पहचान लिया? शायद पहचान लिया हो। अन्यथा ऐसे प्रश्नोंकी वास्तवमें आवश्यकता ही क्या थी? अबतकके प्रश्न तो ठीक थे; पर ये पीछेसे जो बातें पूछीं, सो किस कारणसे?"

इस प्रकारके विचार बाबाजीके मनमें आये; और उनकी चेष्टासे ऐसा मालूम हुआ कि, जैसे वे कुछ चिन्तातुरसे हों। अस्तु। क्षणभर तो उन्होंने कोई उत्तर नहीं दिया, चुपके बैठे हुए नीचेकी ओर देखते रहे। परन्तु फिर सोचा कि, यदि हम इसी प्रकार चुप रहेंगे, तो क़िलेदारके मनमें और भी व्यर्थके लिए शंका आवेगी। और अबतक यदि उसे कोई शंका न आई होगी, तो अब हम अपनी तरफ़से ही मानो उसका बीज बोयेंगे। यह सोचकर उन्होंने धीरेसे ही गर्दन ऊपर उठाकर कहाः—

"महाराज, मेरे समान वैरागीके विषयमें आपके समान पुरुषको ऐसे प्रश्न करनेसे क्या तात्पर्य? कौन किस कारण घरसे निकलकर वैरागी बन जाता है, इसका क्या ठिकाना? पर मैं वैसा वैरागी नहीं हूं। मेरे माता-पिता वास्तवमें छुटपनमें ही स्वर्गवासी हुए। घरमें सोलह आने दरिद्रता! पालन-पोषण

करनेवाला कोई नहीं। ऐसी दशामें यों ही एक स्वामीजी मुझे मिल गये; और तभीसे मैं इस दशामें हूं। मेरी अवस्था आज सचमुच क्या है, सो भी ठीक ठीक कह नहीं सकता। जिसने मेरा पालन-पोषण किया, वह बेचारा भी चल बसा। तबसे मैं ऐसा ही सब तीर्थोंमें घूमता हुआ; और जहां मन भाया, वहां उतने ही दिन रहता हुआ, समय व्यतीत कर रहा हूं। ऐसी दशामें मैं आपके प्रश्नोंका उत्तर क्या दूं ?"

बाबाजी ये सब बातें कह रहे थे सही; परन्तु क़िलेदारकी ओर उन्होंने एक बार भी सीधी निगाहसे नहीं देखा। हां, क़िलेदारकी दृष्टि अवश्य ही बराबर उन्हींकी ओर लग रही थी। इतनेमें उनकी कोठरीसे लगभग पन्द्रह-बीस हाथके अन्तरपर ही फिर उस डफ़की आवाज़ आने लगी, जिसे बाबाजी थोड़ी देर पहले सुन रहे थे। इसलिए बाबाजीने बड़ी फुरतीके साथ—हमारे सामने क़िलेदार बैठा हुआ है, इसका भी भान न रखते हुए—उठकर दरवाजेके बाहर झांककर देखा। देखनेके साथ ही जो कुछ उनकी निगाहमें आया, उसे देखकर वे आनन्दितसे दिखाई दिये; और यह क़िलेदारने भी जान लिया। परन्तु उसने किसी प्रकारकी व्यग्रता प्रदर्शित नहीं की। सूक्ष्म दृष्टिसे यदि किसीने उस समय उसकी ओर देखा होता, तो उसके उस चेहरेपर, जो सदासे चिन्ताग्रस्त था, उसको अत्यन्त सूक्ष्मसी स्मितछाया अवश्य दिखाई दी होती; यही नहीं, बल्कि उसकी दशा उस समय ऐसी

दिखाई दी कि, जैसे किसी मनुष्यको बहुत देरसे किसी बातके विषयमें शंका हो; और फिर वह अचानक, किसी अनपेक्षित कारणसे, दूर हो जाय। परन्तु यह सब एक आधे क्षणमें ही चेहरेपरसे न जाने कहांका कहां चला गया; और हमारे बाबाजी ज्यों ही मुड़कर देखते हैं, त्यों ही फिर क़िलेदारकी चेष्टा, जैसी पहले थी, वैसी ही फिर दिखाई दी! उसपर मुस्कुराहटकी, अथवा अन्य किसी प्रकारकी भी छाया अणुमात्र भी उनको दिखाई नहीं दी। बाहर बड़ा गोलमाल मचा। शान्ताराम और जमादार साहब, दोनों ही पेड़के नीचे बैठे हुए तमाखूकी पिचकारियां मार रहे थे; और हुक्के के कर्णमधुर गुड़गुड़ शब्दोंसे मोहित होकर इधर-उधरकी गप-शपमें बिलकुल तल्लीन होरहे थे। इसकारण, जान पड़ता है, आसपासकी उन्हें कोई ख़बर ही न रही। क्योंकि वह जोगिन अपने पैरोंके घुँघरू बजाती हुई; और कमरकी करधनीकी रुनझुन आवाज़ करती हुई, तथा मुखसे हां-हूं करती हुई बिलकुल उनके पास ही आपहुँची; परन्तु फिर भी उनको दिखाई नहीं दी। उसने अपनी एक विशेष प्रणालीके अनुसार अपने डफ़पर थाप दी; और अपना गाना शुरू किया। तब कहीं बाबाजीके साथ ही साथ उन दोनोंकी निगाह भी उसकी ओर गई। उसको देखते ही अब उन दोनों-को इस बातकी आतुरता हुई कि, इसकी ओर दौड़कर शीघ्र ही इसको यहांसे भगाना चाहिए। तदनुसार उन्होंने किया भी; पर जोगिन उनकी काहेको सुनती है—वह उलटे और उनको

गालियां देने लगी—किसी प्रकार वहांसे नहीं टली; और पूजाके लिए उनसे अनाज तथा पैसे मांगने लगी। वे उसे भगाने लगे, पर वह एक क़दम भी वहांसे नहीं टली। दोनों ओरसे बड़ी देरतक रगड़-झगड़ होती रही। परन्तु जोगिनके उस विचित्र गाली-गलौजके कारण, जान पड़ता है कि, उन दोनोंको, उसे धक्के लगाकर निकाल देनेका, साहस नहीं हुआ। शान्ताराम जमादारके ऊपर और जमादार शान्तारामके पर नाराज़ होने लगे। वह इसको निर्बल बतलाने लगा; और यह उसको। परन्तु इस बातका साहस किसीको न हुआ कि, उस जोगिन बने हुए मनुष्यको पकड़कर बाहर निकाल दे। दोनों ही उससे चिल्ला चिल्लाकर कहते कि, "अरे चुप, क़िलेदार साहब भीतर बैठे हैं, वे पास ही बैठे हैं।" परन्तु वह वहांसे टला नहीं। वह आनन्दपूर्वक डफ़ बजाता, उसके तालपर नाचता; और अपनी कर्कश वाणीसे अनेक चेष्टाएं करता था। बाबाजीने क़िलेदारसे बातचीत करते करते फिर एक बार दरवाजेके पास आकर झांककर देखा। जोगिनकी दृष्टि भी बाबाजीकी ओर गई! उसने अपनी गर्दन एक बार किसी विचित्र आशयसे हिलाई; और फिर धीरेसे ही उसने एक एक क़दम पीछे हटाना शुरू किया। उसका एक एक क़दम ज्यों ज्यों पीछे हटने लगा, त्यों त्यों शान्ताराम और जमादार भी उसकी ओर दौड़ने और उसे बकने-झकने लगे। जोगिन अपनी कर्कश वाणीसे उनको कोसती जाती थी। वह कहती थी कि, अगली बार जब

मैं आऊंगी, उस समय यदि तुमने हमको अच्छी भिक्षा न दी, सूपभर अनाज यदि पूजाके लिए न दिया, तो तुम्हारा, तुम्हारे बाल-बच्चोंका, तुम्हारे घर-द्वारका, सबका, नाश हो जायगा। इस प्रकारकी धमकी देती हुई वह वहांसे चलती बनी।

जोगिन बहुत देरतक क़िलेपर अपना फेरा लगाती रही, इसके बाद नीचे उतरी। नीचे बस्तीमें जाकर भी वह बहुत देर-तक नाचती-गाती और अपनी विचित्र विचित्र करामातें दिख-लाती रही। फिर पांच-छै आदमियोंसे कुछ इधर-उधरकी बातें करके वह वहांसे लौट पड़ी। बस्तीसे जब बहुत दूरपर वह जोगिन निकल गई; और जब यह विश्वास होगया कि, अब दो-चार कोसतक यहांपर कोई मनुष्य दिखाई नहीं देता, तब वह आप ही आप बड़े ज़ोरसे हँसी; और बोली, "जो कार्य बत-लाया गया था, सो कैसे होगा,इस बातका बड़ा भय मालूम हो-रहा था;किन्तु देवीजीकी कृपासे काम तो सब होगया। आख़िर उनको लाकर यहां क़ैद कर दिया! अच्छा, अब जाता हूं; और सलाम करके सारा समाचार बहुत जल्द देता हूं।" यह कहकर वह जोगिन फिर अपने पैरोंके घुँघरुओं और कमरकी कर-धनीकी ध्वनिपर वहांसे आगे बढ़ी।

इधर क़िलेदारने बाबाजीकी वह सारी चेष्टा देखकर, जैसा-कि हमने पीछे बतलाया, इस प्रकारकी मृदु मुस्कुराहट प्रदर्शित की,कि जो किसीके ध्यानमें नहीं आसकती थी; और फिर ज्यों ही देखा कि, बाबाजीकी दृष्टि फिर पूर्ववत् उसकी ओर आगई,

त्यों ही उसने तुरन्त अपनी उस मुस्कुराहटको अपने उसी सदैवके चिन्तामग्न मुखमण्डलमें विलीन कर लिया; और फिर पूर्ववत् बाबाजीकी ओर देखने लगा। उस समय यह बात स्पष्ट दिखाई देरही थी कि, क़िलेदार कोई न कोई बहुत महत्वपूर्ण प्रश्न बाबाजीसे करना चाहता है; पर साथ ही इस विवेचनामें भी पड़ा हुआ है कि, वे प्रश्न करूं, अथवा न करूं? यह तो स्पष्ट ही था कि, क़िलेदार इस समय वहां अपनी इच्छा-से नहीं आया था। उसके क़िलेपर जो मुसलमान सरदार उस समय उपस्थित था, उसीने शायद उसको, बाबाजीसे मीठी मीठी बातें करके सब भेद मालूम कर लेनेके लिए, भेजा होगा। परन्तु क़िलेदारने अपने चातुर्यसे यह प्रकट न होने देनेका प्रयत्न किया कि, वह किस हेतुसे और किसका भेजा हुआ आया है। बाबा-जीकी ओर चार-पांच बार जिस दृष्टिसे उसने देखा था, उससे यह भी प्रकट होता था कि, बाबाजीके विषयमें जो कुछ पूछ-तांछ वह कर रहा है, उसमें उसका निजी भी कोई न कोई उद्देश्य अवश्य है। अस्तु। उससे हमें यहांपर कोई मतलब नहीं।

पांच मिनट हुए, दस मिनट हुए, घड़ी हुई, दो घड़ी हुईं, क़िलेदार न तो वहांसे टला; और न बाबाजीसे कुछ बोला ही। सिर्फ वह उनकी ओर देखभर रहा था। बाबाजी भी बीच बीचमें उसकी ओर देखते जाते; और ज्यों ही उनको यह मालूम होता कि, क़िलेदारकी अन्तःकरणभेदी दृष्टि उनकी ओर अभी

लगी हुई है, त्यों ही वे अपनी दृष्टिको फिर नीचे कर लेते थे। और भी थोड़ासा समय व्यतीत हुआ; पर पूर्वकी दशामें कोई परिवर्तन नहीं हुआ। अन्तमें बाबाजी क़िलेदारसे नम्रतापूर्वक कहते हैं, "महाराज, यदि आप मुझसे किसी बातका पता लगानेके लिए बैठे हों, तो........."

"आपका प्रयत्न व्यर्थ है!' यही तो है न आपका कहना?" क़िलेदारने तुरन्त ही पूछा; और इसके बाद फिर वह बाबाजीकी ओर अत्यन्त सूक्ष्म और अन्तःकरणभेदी दृष्टिसे देखने लगा। उस समय उसके उस देखनेमें मुस्कुराहटकी अत्यन्त सूक्ष्म छाया भी दिखाई देरही थी। उस क़िलेदारका गत घण्टे-डेढ़ घण्टेका सारा व्यवहार देखकर कोई भी कह सकता था कि, यह क़िलेदार अत्यन्त गहरा और असाधारण राजनीतिज्ञ होना चाहिए। इसके सिवाय बाबाजीके व्यवहारसे भी यह बात छिपी नहीं थी कि, उनको भी क़िलेदारकी गहराई और उसकी राजनीतिज्ञतामें किसी प्रकारका सन्देह नहीं था।

क़िलेदारके उक्त शब्द सुनते ही बाबाजी कुछ भौंचकसे दिखाई दिये। किन्तु फिर तुरन्त ही उससे कहते हैं, "हां, हां, मेरा कहना यही है; क्योंकि आप जो कुछ पूछ रहे हैं, उस बात-का ज्ञान मुझे बिलकुल ही नहीं है। मैंने आपसे पहले ही कह दिया कि, मैं एक वैरागी हूं। आज यहां हूं, तो कल और कहीं हूं! ऐसी दशामें मुझे मालूम ही क्या होसकता है? व्यर्थके लिए आपने मुझ ग़रीबको क़ैद कर रखा है। देखिये, यदि कुछ

दया आजावे तो ! जितनी शीघ्रतासे छोड़ देंगे, उतना ही अच्छा होगा।"

क़िलेदार फिर कुछ विचित्रसी दृष्टिसे उनकी ओर देखता हुआ कहता है, "हां, बाबाजी, आपको जितनी ही जल्दी छोड़ दिया जाय, उतना ही अच्छा, सो मैं भी जानता हूं। और मेरे हाथमें यदि यह होता, तो मैंने कभीका आपको छोड़ भी दिया होता, पर मैं ठहरा केवल ताबेदार। कमसे कम जबतक यह सरदार यहां है, तबतक तो मैं सचमुच ही ताबेदार हूं।" इतना कहकर उसने एक दीर्घ निःश्वास छोड़ा। उस निःश्वासका अर्थ बाबाजीके ध्यानमें नहीं आया। बाबाजीने समझा कि, शायद यह मुसलमानोंकी नौकरीमें है, इसीलिए इसे बुरा मालूम हुआ हो। परन्तु ऐसा नहीं होसकता, सो भी उनको मालूम था। क्योंकि बाबाजीकी सच्ची पहचान चाहे क़िलेदारको न हो; किन्तु क़िलेदारका पूरा पूरा हाल बाबाजीको मालूम था। वे जानते थे कि, कुछ मराठे वृद्ध सरदार ऐसे हैं कि जो राजभक्ति और स्वामिभक्तिको ही अपने जीवनका मुख्य व्रत समझते हैं; और जिनका कि, यह ख़याल है—मुग़लोंका राज्य हमारे लिए परमेश्वरने ही दिया है, हम उनके चाकर हैं; और उन्हींका नमक खाते हैं; इसलिए उनके साथ कभी नमकहरामी न करना चाहिए, इसीमें परम पुरुषार्थ है। बस, ऐसे ही विचारवाले सरदारोंमेंसे पुरन्दरका क़िलेदार भी एक व्यक्ति था; और बाबाजीको भलीभांति यह बात मालूम थी। इसलिए, क़िलेदारके

उस निःश्वासको सुनकर पहलेपहल उनको जो सन्देह हुआ, उसको उन्होंने, उपर्युक्त विचारसे, तुरन्त ही निराधार समझा।

क़िलेदार फिर उनसे कहता है, "तो क्या जिस बातका पता लेनेके लिए यह सरदार यहां आया है, उस बातके विषयमें आपको कुछ भी ज्ञान नहीं? यों ही पकड़ लाये गये? अच्छा। और आप अपना भी वृत्तान्त कुछ विशेष नहीं बतलाते हैं! किन्तु इधर देखिये—" यह कहकर क़िलेदार बाबाजीके बिलकुल निकट चला गया; और अत्यन्त धीमी आवाज़से उनके कानमें कुछ खुसफुसाया, जिसे सुनकर बाबाजीकी चेष्टा एकदम बदल गई। वे मुँहसे अवश्य—"नहीं, नहीं। मैं वह नहीं हूं। आप भूलते हैं—" इस प्रकार कुछ कहकर गुनगुनाये; किन्तु ये शब्द ही उनके मुखसे कुछ इस प्रकार निकल रहे थे कि, जिससे स्पष्ट मालूम होरहा था कि, उनका स्वयं ही अपने उन शब्दोंपर विश्वास नहीं है। बाबाजीके कानमें जो कुछ कहना था, सो कहनेके बाद बहुत जल्द क़िलेदार वहांसे चल दिया। चलते समय जमादारसे पहरा बहुत सख़्त रखनेके लिए ताक़ीद कर दी; और आप वहांसे चलता बना।

शामके वक्ततक बाबाजीके यहां कोई विशेष बात नहीं हुई; और न कोई मिलने ही आया। शामको लगभग छः बजेके क़रीब जमादार अवश्य ही उनके पास फिरसे आया; और इस आशयका उपदेश देगया कि, "आपका कुशल नहीं है। आपपर कोई न कोई बड़ा संकट अवश्य आवेगा। आप होशियार

रहें ; और शीघ्र छूटना हो, तो जो कुछ मालूम हो, थोड़ा-बहुत बतलाकर अपना छुटकारा पा लें।" बाबाजी इस उपदेशको सुनकर सिर्फ हँसेभर; और कहा कि, "अच्छा, देखेंगे, तू जा अपने कामपर !" जमादार बेचारा फिर दरवाजा बन्द करके बाहर अपने स्थानपर जाबैठा।

अभी पहरभर रात गई होगी। सूबेदार साहब अपने नशेमें मस्त हुक्का पीते हुए बैठे हैं। इतनेमें एकदम हुक्म होता है कि, जाओ, उस वैरागीको बुला लाओ; और हमारे सामने हाज़िर करो। हुक्म पानेकी देर थी कि, सिपाही दौड़े; और बाबाजीको पकड़ लाकर सूबेदारके सामने उपस्थित किया। सूबेदार साहबका पारा उस समय बहुत चढ़ा हुआ था, इसलिए बाबाजीको देखते ही हुक्म दिया कि, "देखो, यह नमकहराम ठीक ठीक नहीं बतलाता, सो इसको ख़ूब पीटो; और रातमें ही इसके हाथों-पैरोंमें मन मनकी बेड़ी डालकर कालकोठरीमें बन्द कर दो।" यह कहनेके बाद फिर इस प्रकारके अनर्गल प्रश्न शुरू किये:— "क्यों बे हरामख़ोर ! तेरे उस मन्दिरमें कौन कौन लोग आते रहते हैं ? क्या क्या करते हैं ? लूटका माल वहां लाकर आपसमें बांटते हैं या नहीं ? बोल जल्दी ! बोलता है या नहीं ?" इत्यादि। बाबाजी बिलकुल चुप रहे—चूं भी नहीं किया। वे चुपके सुन रहे थे। सूबेदारकी बक-झक अभी जारी ही थी। आसपासका एक मनुष्य भी उस समय उसकी गालियोंसे नहीं बचा। उसकी उस अनर्गल वाक्धाराकी कुछ न कुछ छीटें

सभीके ऊपर पड़ीं। यही नहीं, बल्कि उसने जब देखा कि, मैं इतना अद्धा-तद्धा बक रहा हूं; और कोई भी मुझसे भिड़नेको तैयार नहीं होता, तब मानो उसको और भी जोश चढ़ा; और पहलेसे भी अधिक वेगके साथ उसकी ज़बान चलने लगी। वह बोला, "चलो, चलो, अभी इसे ले चलो। यह हराम-ज़ादा बिलकुल बोलता ही नहीं। लो, इसको अभीका अभी अंधा कर डालो। इसके हाथों-पैरोंमें बेड़ियां डालकर अभी इसे क़िलेके पीछेकी तरफसे नीचे ढकेल दो, नहीं तो ऐसा ही जीता गाड़ दो। बाग़ी, चोरों; और डाकुओंके गिरोहके गिरोह इसके यहां आकर इकट्ठे होते हैं; और यह कहता है कि, हमको कुछ मालूम ही नहीं। चलो, उठो, कोई सुनता नहीं?"

इतना कहकर वह स्वयं ही उठा; और बड़े जोशके साथ बाबाजीकी ओर दौड़ा। यह देखते ही बाबाजीके शरीरसे चिन-गारियां निकलने लगीं; और वे मानो एकदम अपनेको भूलकर बड़े ज़ोरसे चिल्लाकर कहते हैं—"ख़बरदार, ख़बरदार! मेरे शरीरको हाथ लगाया, तो मरा ही समझ! मुसल्मानके हाथसे मैं कभी अपमान नहीं करने देनेका! तेरे हाथसे मरना तो दूर रहा—एक घाव भी—तेरा केवल स्पर्श भी अपने शरीरको नहीं होने दूंगा। आजतक इस शरीरको मुसल्मानोंके अन्नका, अथवा उनके हाथका भी कभी स्पर्श नहीं हुआ, सो आज कैसे होने दूंगा?"

इस भाषणकी उद्दण्डता, भाषणके साथ ही साथ हस्तसंचा-

लनकी उद्दण्डता; और उस समयकी उनकी चेष्टासे दीखनेवाली क्रूरता, इत्यादि बातोंको देखकर ही मानो वह मुसलमान सरदार एकदम वहीं, जहांका तहां ठिठक गया; और पीछे हट गया। क्या सूबेदारको यह मालूम नहीं था कि, यह वैरागी इतना साहसी है? अथवा जबकि बाबाजीको वह पकड़े लिये आता था, उस समय मार्गमें जो घटनाएं हुई थीं, उनकी याद क्या उसको नहीं थी? जो कुछ भी हो, लेकिन इस समय वह हट गया अवश्य, फिर भी मुँहसे—"इसी समय मार डाला होता, लेकिन तेरे शरीरको यातनाएं देकर अभी सब बातें तुझसे मालूम करनी हैं, इसलिए छोड़े देता हूं" इस प्रकार कुछ बड़-बड़ाते हुए वह अपनी जगहपर जाकर बैठ गया। इसके बाद तुरन्त ही फिर उसने आसपासके लोगोंकी ओर देखकर यह हुक्म दिया, "अभी मेरे आगे इसके हाथों-पैरोंमें बेड़ियां डाल दो।" अब चुप बैठनेके सिवाय बाबाजी और कर ही क्या सकते थे? क़िलेदार उस समय वहां न था। सिपाहियोंने सूबेदारका हुक्म पाकर बड़ी बड़ी भारी बेड़ियां लाकर, उनको बाबाजीके हाथों और पैरोंमें जड़ दिया। जिस समय कि, यह सब होरहा था, बाबाजीकी दृष्टि पहलेहीकी भांति अत्यन्त क्रुद्ध दिखाई दे-रही थी। किन्तु उस समय उन्होंने एक अक्षर भी मुँहसे नहीं निकाला। उन्हें पूरे तौरपर मालूम था कि, इस समय हमारी एक भी न चलेगी। बेड़ी इत्यादि पहनानेका संस्कार जब यथो-चित रूपसे होचुका, तब यह हुक्म हुआ कि, इसे :एक तह-

ख़ानेमें लेजाकर ऐसी कोठरीमें बन्द करो, जहां पूरा पूरा अन्धकार हो। इसके बाद क़िलेपरके मराठे सिपाहियोंको चार-छः चुनी हुई गालियां सुनाकर अपने साथके मुसलमान सिपाहियोंको उस तहख़ानेपर पहरा देनेके लिए नियुक्त किया। यह सारा हुक्म फ़र्माते देर नहीं हुई कि, तुरन्त ही अमलमें भी लाया गया। और इस प्रकार बाबाजीकी स्थिति पहलेसे भी अधिक दुःखजनक होगई।

दूसरे दिन भी सुबह, पहले ही दिनकी तरह, कुछ देर क़िलेके नीचेकी बस्तीमें; और कुछ देर क़िलेके ऊपर भी जोगिनका डफ़ ख़ूब बजा। पर बाबाजीके कानतक उसकी आवाज़ नहीं पहुँची; और न जोगिनकी ओर देखनेको ही उन्हें मिला। जोगिन भी उनके दर्शन चाहती थी, पर उसे भी वे नहीं मिले। उस दिन क़िलेके ऊपर जोगिनका डफ़ चारों ओर ख़ूब ज़ोर ज़ोरसे बजा; और उसने अपने घुँघरुओंके तालपर तांडव भी अनेक प्रकारसे किया। इतनी देर जोगिन भी पहले कभी क़िलेपर नहीं रही थी! कुछ देर बाद उसने शान्ताराम और जमादारको भी ढूँढ़ निकाला; और फिर उनके आसपास बहुत देरतक अपना तांडव करती रही। इसके बाद अपनी नाराज़गीका बहुतसा डर दिखलाकर बाबाजीके विषयमें अप्रत्यक्ष प्रश्न किये; और जितनी कुछ जानकारी मिल सकती थी, सो सब प्राप्त करके अन्तमें उदास होकर वह वहांसे चल दी। मार्गमें जाते हुए पिछले दिन जिस प्रकार जोगिनी हँसी थी,

वैसी आज नहीं हँसी; और न कहीं जाकर आज उसने भिक्षा इत्यादि मांगनेका प्रयत्न किया।

पच्चीसवां परिच्छेद।
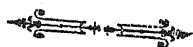
ज़बरदस्तीकी सरदारी।

आज कई दिन हुए, हमने अपने सुभान दादाको और गोटेश्वरके मन्दिरके पास करीमबख़्श इत्यादिको छोड़ा था। सो अब पाठकवृन्द उनका अगला वृत्तान्त जाननेके लिए बहुत ही उत्सुक होंगे। इसलिए अब बाबाजीको तो उनकी कालकोठरीमें और जोगिनको उसके रास्तेपर ही छोड़कर पाठकोंको उसी ओर ले चलें।

पाठकोंको स्मरण ही होगा कि, वहां तम्बूमें एक तरुण मुसलमान सरदार बैठा था। जिसके सामने एक ओर, रास्तेमें क़ैद किया हुआ, सुभान खड़ा था; और दूसरी ओर एक नवयुवक मराठा विराजमान था। सुभान मराठे नवयुवकको देख देखकर आश्चर्यचकित होता हुआ घबड़ासा रहा था; और वह नवयुवक मराठा भी सुभानको देख देखकर, धीरे धीरे, अपनी गम्भीरताको छोड़ रहा था। उस मुसलमान सरदारके दोनों नौकर—अहमद और करीमबख़्श—बराबर उस मराठे नवयुवककी ओर देख रहे थे। कह नहीं सकते कि, उनके मनमें

क्या शंका आरही थी। किन्तु कोई न कोई शंका आ ज़रूर रही थी। क्योंकि करीमबख़्शने उस मराठे नवयुवकसे स्पष्ट ही कह दिया था कि, जबतक ख़ांसाहब न आजावें, आप मन्दिरसे न जावें—आपने अपने विषयमें जो वृत्तान्त बतलाया है, वह सच नहीं मालूम होता। सुभानको देखते ही उस मराठे नवयुवकका चित्त चकराया; और ऐसा मालूम हुआ कि, ख़ान भी इस बातको ताड़ गया। क्योंकि सुभानको जो कुछ पूछनेके लिए उसने बुलाया था, सो पूछना तो एक ओर रहा—ख़ान एकटक उस नवयुवक पुरुषकी ओर; और बीच बीचमें सुभानकी ओर भी देखने लगा। परन्तु ख़ान एक ख़ानदानी आदमी था, बहुत जल्द अपने भानपर आगया; और उस नवयुवक मराठेसे, बड़े अदबके साथ—ऐसे अदबके साथ, जो किसी ख़ानदानी पुरुषके ही योग्य था—यह कहकर अपने पास बैठनेकी प्रार्थना की कि, "आइये जनाब, बैठिये साहब!" नवयुवकने भी देखा कि, अब कोई इलाज नहीं है, बैठना ही पड़ेगा, तब बहुत ही बेमनसे, वह भी, बड़े अदबके साथ, ख़ानसे कुछ दूर, वीरासन लगाकर, बैठ गया। अब ख़ानकी, आँखें भी, अहमद और करीमबख़्शकी ही भांति, उस नवयुवककी सूरतकी ओर लगीं, जोकि स्वाभाविक ही एक अत्यन्त सुन्दर युवक था; किन्तु उस समय कुछ घबड़ाया हुआसा दिखाई देता था। सुभानकी नज़र भी, यद्यपि बिलकुल एकटक तो नहीं, फिर भी बीच बीचमें उस तरुण मराठेकी ओर

मुड़ अवश्य जाया करती थी; और जब जब उसकी दृष्टि इस प्रकार मुड़ती, तब तब यह स्पष्ट दिखाई देता था कि, जैसे इसके हृदयमें कोई न कोई भय उत्पन्न होरहा हो! इस प्रकारका भय उसे क्यों मालूम होरहा था, इस बातका ज्ञान होना इस समय हमारे लिए कठिन है। जो हो। ख़ानने अब यह सोचा कि, हम कुछ भी न बोलते हुए, एकटक इस व्यक्तिकी ओर देख रहे हैं—यह कुछ अच्छी बात नहीं है; और इसीकारण शायद वह सुभानकी ओरको मुड़ा; और एकदम उससे बोला, "क्यों बे, तू कौन है? कहांका रहनेवाला है?"

सुभान पहलेहीसे जानता था कि, इस प्रकारके प्रश्न हमारे सामने अवश्य आवेंगे; इसलिए उक्त प्रश्नोंके कानमें पड़ते ही वह कहता है, "सरकार, मैं अपना यों हो इधर गाँवको जा-रहा था, रास्तेमें बिना कारण पकड़कर आपके सामने ला खड़ा किया गया। मैं एक ग़रीब आदमी हूं; और यों ही अपने कामसे रास्ते रास्ते जारहा......"

सुभान क्या कह रहा था, इसकी ओर ख़ानका बिलकुल ही ध्यान न था। उसका सारा ध्यान सामने बैठे हुए नवयुवक मराठेकी सूरतकी ओर था। हां, उस तरुण मराठेका ध्यान अवश्य ही सुभानकी ओर पूरा पूरा था कि, वह क्या कर रहा है। इसकारण, मानो उस बेचारेको इस बातका भान भी न था कि, हमारी ओर अन्य लोगोंका ध्यान है; वे हमारी ओर बराबर एकटक देख रहे हैं। ख़ानका ध्यान

यद्यपि सुभानकी ओर नहीं था, तथापि अहमद और करीम-बख़्शका भी नहीं था,सो बात नहीं। उसने उपर्युक्त उत्तर ज्यों ही दिया, त्योंही अहमद हँसा; और बोला, "ओ हो! क्या बात है! हमको तू छोटे छोटे बच्चे ही समझता है! तू नौकर किसका है? जा कहां रहा था, सो भी बतलावेगा या नहीं?"

अहमदके इस कथनसे ख़ानका ध्यान फिर सुभानकी ओर गया; ओर वह उसकी ओर देखकर तथा गर्दन हिलाकर कहता है, "बेशक! बेशक! तू सब बतला, किसके कामपर जा-रहा था? किस कामके लिए जारहा था? कहां जारहा था? सच बतला देगा, तो कुछ छूटनेकी आशा भी है, अन्यथा बहुत जल्द नीचे सिर और ऊपर पैर करके तुझे चार-छः घड़ी उस वृक्षमें लटकता रहना पड़ेगा।" ख़ानका कथन अभी समाप्त ही हुआ था कि, अहमद उसकी बातमें बात मिलाकर कहता है, "और इतनेसे भी यदि न सुनेगा, तो सीधी तरफसे गलेमें रस्सी बांधकर लटकाया जायगा।" यह कहकर वह आप ही आप ज़ोरसे हँसा। ख़ानने कुछ तिरस्कार-दृष्टिसे उसकी ओर देखा, फिर तुरन्त ही अपने चेहरेपर थोड़ीसी मुस्कुराहट लाकर उस मराठे सरदारकी ओर मुड़कर कहता है, "अजी जनाब, आपको मैंने बहुत देरसे यहां बैठा रखा है, इस तक़लीफ़के लिए माफ़ी हो। आपसे यदि पहले ही बातचीत कर ली होती, तो आपको यहां इतनी देर बैठना न होता; और मैं चाहता हूं कि,

आप कुछ देर मेरे पास रहें, क्योंकि आपसे मुझे बहुतसी बातचीत करनी है। आप कहाँ रहते हैं? इधर कहां जारहे थे? आपकी तारीफ़ क्या है? इत्यादि प्रश्न करनेकी मुझे आज्ञा हो।"

ख़ान जब यह कह रहा था, ऐसा जान पड़ा कि, जैसे उस नवयुवककी चित्तवृत्ति कुछ अत्यन्त विलक्षणसी होगई हो। उसकी सूरत कुछ भौंचक्कीसी होगई; और ऐसा मालूम हुआ कि, जैसे उसे यही न सूझता हो कि, अब क्या उत्तर देवें। ख़ानकी बात समाप्त होते ही उसने उसकी ओर सीधी नज़रसे देखनेका बहुत कुछ प्रयत्न किया; और अन्तमें उस प्रयत्नमें उसे थोड़ी बहुत सफलता भी प्राप्त हुई, तब वह धीरेहीसे कहता है, "सरदार साहब, मैं एक मामूली आदमी हूं, अपनी स्त्री लिये हुए दूसरे गाँवको जारहा था, मार्गमें विश्राम लेनेके लिए इस मन्दिरमें आबैठा, इतनेमें आपके ये लोग आकर मेरी पूँछ-तांछ करने लगे। मैं, जो कुछ बतलाना था, बतला चुका; किन्तु इन लोगोंको सन्तोष नहीं हुआ। इन्होंने मुझसे कहा कि, "ख़ांसाहब जबतक न आजावें, तुम यहीं बैठो। वे जब आवेंगे, तब तुमसे पूँछ-बता लेंगे, फिर तुम जाना।" मैं अकेला था। ये कई लोग थे। मैं लाचार होकर बैठ गया। अब आप मुझे यहांसे जाने देंगे, ऐसी आशा है।"

उस मराठे नवयुवकका यह कथन सुनकर ख़ांन कुछ मुस्कुराया; और फिर बोला, "अहाहा! आपका बोलनेका ढंग

कितना सुन्दर है! आपकी बातोंमें कितना मिठास है! और आपकी आवाज़ तो इतनी मीठी है कि, कुछ पूछिये ही नहीं! वाह यार! वाह! ऐसी मीठी ज़बान तो कभी सुनी ही न थी! भाई बोलिये! और कुछ बोलते रहिये!"

ख़ानका यह भाषण सुनते हुए अहमद और करीमबख़्श, एक दूसरेकी ओर, छिपकर, परन्तु आशयपूर्ण नज़रसे, बराबर देखते जाते थे; और हँसते भी जाते थे। यही नहीं, बल्कि हँसोड़ अहमद धीरेसे ही करीमबख़्शसे कहता है, "अजी यार, यह तो ख़ूब मौज हुई!" करीमबख़्श कुछ नहीं बोला। वह अपने मालिकके मुखकी ओर देख रहा था। ख़ान उस नवयुवक मराठेकी ओर देखकर कहता है,"आपने इन लोगोंको जो वृत्तान्त बतलाया, वही आपको फिर बतलानेका कष्ट देता हूं, इसके लिये माफ़ किया जाऊं। इन लोगोंने यदि आपके साथ कोई बेअदबीका बर्ताव किया हो, तो मैं इनको सज़ा दूंगा—"

इतना कहकर वह करीमबख़्शकी ओर मुड़ा; और उससे कहता है, क्यों करीमबख़्श, अबे अहमद! तुमने इनके साथ कोई बेअदबीका बर्ताव किया? सच बोलो?" करीमबख़्श और अहमद, दोनों—"नहीं, ख़ां साहब!" कहकर एक दूसरेकी ओर फिर देखने लगे। अब वह नवयुवक क्या करे और क्या न करे, सो उसको कुछ समझहीमें न आया। करीमबख़्शको उस समय जो उत्तर उसने दिये थे, वही फिर दिये; और कहा कि, "मैं एक मामूली आदमी, अपनी स्त्रीको लेकर, एक दूसरे गाँव

जारहा था।" परन्तु यह सुनकर ख़ानकी चेष्टापर भी कोई विश्वासकी झलक दिखाई नहीं दी। ऐसा जान पड़ा कि, उसको भी ऐसा ही विश्वास हुआ कि, यह नवयुवक कुछ न कुछ छिपाता अवश्य है। परन्तु अपने शब्दोंसे उसने इस बातको प्रकट नहीं किया; और कुछ मुस्कुराते हुए कहा, "आप इस प्रकारसे, बिना किसी लवाजमाके, और बिना किसीको साथ लिये, अकेले ज़नानेको लिये जारहे हैं, यह ठीक नहीं है। आज-कलके दिन बहुत बुरे हैं। क्या आप जानते नहीं हैं? आज-कल चारों ओर लूटमार मची हुई है। इसके सिवाय आप कहते हैं कि, आप एक मामूली आदमी हैं; पर सचमुच ही यदि आप ऐसे ही हैं, तो अब, जबकि मुझसे आपकी मुलाक़ात होचुकी है, आपका ऐसा रहना मुझे उचित नहीं दिखाई देता। आप अब कहीं न जावें। मेरे ही साथ रहें। मैं बादशाहसे आपकी मुलाक़ात करा दूंगा; और आपको एक अच्छीसी सरदारी दिला दूंगा। आजसे मैं आपको अपना दोस्त समझता हूं। आप भी वैसा ही मुझे समझें।"

ख़ान जब यह सब कह रहा था, तब उसकी चेष्टासे स्पष्ट मालूम होरहा था कि, यह सब वह हृदयपूर्वक कह रहा है। परन्तु साथ ही यह भी स्पष्ट दिखाई देरहा था कि, उसके इस कथनमें कोई और भी उद्देश्य अवश्य है। नवयुवक उसके इस कथनको सुनकर बड़े गोलमालमें पड़ा। और अब क्या करे, सो मानो कुछ उसे सूझने ही न लगा। वह अत्यन्त सूक्ष्म

आवाज़से इस प्रकार कुछ गुनगुनाया, "मुझको सरदारी क्यों? आपने कृपा की, मुझे अपना दोस्त बनाया, इतना ही काफ़ी है। सरदारी प्राप्त करनेकी मुझमें योग्यता नहीं!" इत्यादि। किन्तु उसके इस गुनगुनानेका कोई उपयोग न हुआ; और न होता हुआ दिखाई दिया। वह ज्यों ज्यों "नहीं-नहीं" कहता, त्यों त्यों ऐसा मालूम होता कि, ख़ानका प्रेम उसपर और भी बढ़ता जारहा है। अन्तमें उसने यही आग्रह किया कि, आप कहीं न जावें; और सदैव मेरे ही साथ रहें। उस मराठे नवयुवकको भी यही मालूम हुआ कि, अब पिंड नहीं बचता, ऐसा जान पड़ता है कि, इसके आग्रहके अनुसार करना ही पड़ेगा। नवयुवक बड़े चक्करमें पड़ा कि, इस पेंचसे—इस विचित्र प्रसंगसे—अब मैं छूटूं कैसे? कुछ उसकी समझहीमें न आया। उस पेंचसे छूटनेके लिए वह आतुर अवश्य दिखाई दिया।

बहुत देरतक वह कुछ भी न बोलते हुए, बिलकुल खिन्न-वदन होकर, नीची गर्दन किये बैठा रहा। ख़ानके समान, बादशाहका एक कृपापात्र, यह आग्रह कर रहा है कि, "आप मेरे साथ चलें; और मुझे अपना दोस्त समझें।"—इसपर वास्तवमें आनन्द होना चाहिए, सो तो एक ओर रहा, वह बेचारा बड़े संकटमें पड़ा—सो क्यों? कह नहीं सकते! अहमद और करीम उसकी वह अवस्था देखकर एक दूसरेकी ओर धीरेसे ही दृष्टि फेंकते और कुछ हँसते भी, मानो उनको यह सब देखकर

बड़ा आनन्द आ रहा था। अस्तु। अन्तमें ख़ान उस नवयुवकसे कहता है, "अजी साहब, आप इतने संकटमें क्यों पड़ गये? जो बात मैं आपसे कहता हूं, वही यदि किसी दूसरेसे कही होती, तो वह अपनेको न जाने कितना सौभाग्यवान् समझता! पर आप तो मेरी बात सुनकर बिलकुल खिन्नसे दिखाई देते हैं! क्यों, मुझे दोस्त कहना क्या आपको तुच्छ मालूम होता है? बादशाहकी कृपा क्या आपको नहीं चाहिए? आप खुले दिलसे मुझसे कहिये। वह चिन्ता यदि किसी मनुष्यके हाथसे दूर होनेयोग्य होगी, तो मैं उसे अवश्य दूर करूंगा। किन्तु आप मुझे छोड़कर अब और कहीं न जावें। आपको यदि स्त्रीको कहीं पहुँचाना हो, तो मैं अपने आदमी साथ देकर अभी पहुँचाये देता हूं। आप यदि साथ रखना चाहते हों, तो साथ ही लेचलिये। घरके लोगोंको सन्देशा भेजना चाहते हों, तो सांड़िनीसवार मौजूद है।"

ख़ान इतनी उत्कंठासे कह रहा था कि, अहमद करीमबख़्शके कानमें खुसफुसाकर कहता है, "वाह! यार वाह! दीवाने तो होगये!" इसके बाद फिर वह तुरन्त ही उस नवयुवककी ओर, बड़ी विचित्र भाँतिसे, हाथ मटकाकर कहता है, "वाह! वाह!" मराठा नवयुवक फिर कुछ नहीं बोला। ख़ानने उसके न बोलनेको ही सम्मति समझा; और हुक्म दिया कि, इनका सब प्रकारसे उत्तम प्रबन्ध रखो। इसके सिवाय उसने उसके साथकी स्त्रीके लिए अलग रावटी और कनातका

प्रवन्ध कर देनेके लिए भी ताक़ीद कर दी। सुभानको उसीकी तैनातीमें रखकर हुक्म दिया कि, अगले मुक़ामपर तुम फिर सामने हाज़िर हो। हां, छावनीके वाहर जानेके लिए उसे पूरी पूरी मुमानियत कर दी गई।

कह नहीं सकते, क्या कारण था; परन्तु सुभानने जब यह सुना कि, मुझे यह नवीन नौकरी मिली, तब उसके चेहरेपर—उस दशामें भी—कुछ सन्तोषकी छाया अवश्य दिखाई दी!

छब्बीसवां परिच्छेद।

रास्तेमें बतलाता हूं!

अत्यन्त घना जंगल है, और उसमें चारों ओर अन्धकार ही अन्धकार दिखाई देरहा है! जिस जगहकी अब हम चर्चा चलानेवाले हैं, वह एक भयंकर जंगल था। उस जंगलमें बरगद, पीपल, पाकर, अशोक इत्यादिके इतने घने वृक्ष थे कि, उनके अन्दरसे रास्ता निकालना बिलकुल असम्भव था। बीजापुरके बादशाहके यहां अनेक सरदारोंने प्रार्थना की थी कि, यह जंगल यदि कटवा न डाला जायगा, तो बटमार, लुटेरे; और ठग इत्यादि लोगोंकी ख़ूब बन आवेगी। उस समय ऐसे लोगोंके लिये यह जंगल बहुत अच्छा उपयोग था।' इसी जंगलमें कई बार लोगोंने बादशाही ख़ज़ानेको लूट लिया; और कुछ पता

न चला। कई बार ऐसा भी हुआ कि, उस मार्गसे जब बादशाही सेना निकली, तब मराठे बदमाशोंने, जो उसी जंगलमें छिपे बैठे रहते थे, उसपर अचानक छापा मारा; और सिपाहियोंको मार-काट टुकड़े टुकड़े कर डाला, तथा एक-दो बड़े सरदारोंको तो तिल तिल काटकर चटनी बना दिया! परन्तु इन सब बातोंकी ओर किसीने ध्यान नहीं दिया। बीजापुरकी बादशाहत मानो उस समय एक दूसरी अन्धेरनगरी ही बनी हुई थी। किसीकी कोई परवा नहीं करता था। जो बादशाहका कृपापात्र बन गया, वही सच्चा बादशाह! हिन्दुओंको यदि किसी बातमें कोई तक़लीफ़ होती, तो कोई सुनवाई नहीं होती। हां, मुसलमानोंमेंसे यदि किसीको कुछ शिकायत होती, तो उसकी सुनवाई महीना-पन्द्रह दिनमें होजाती थी; और उसको पूरा पूरा न्याय मिलता था। अवश्य ही यह दशा शोचनीय थी, परन्तु इससे आगे चलकर बहुत लाभ हुआ। अस्तु।

ऊपर जिस जंगलका ज़िक्र किया, वह पूनेसे कोई तीस-बत्तीस कोसपर बीजापुरके मार्गपर था। इस जंगलमें हिंस्र श्वापद—ख़ूनी जानवर—भी बहुतायतसे थे। इनके सिवाय कुछ मानवी प्राणी भी वहां इस प्रकारके बसते थे कि, जो क्रूर बन गये थे—फिर चाहे वे राज्यके अत्याचारसे वैसे बन गये हों, अथवा खानेको नहीं मिलता था, इसकारणसे तथा उनकी मातृभूमि और स्वधर्मकी उस समय विडम्बना की जारही थी; और जोकि उनको सहन नहीं होती थी—इसकारणसे

वे क्रूर बन गये हों ! परन्तु इस प्रकारके कुछ क्रूर मनुष्य वहां थे अवश्य ! जंगलमें चारों ओर लगभग कोस कोस, डेढ़ डेढ़ कोस घनी झाड़ियां छोड़कर, बिलकुल बीचों बीच, लगभग पाव मील क्षेत्रफलका स्थान कुछ साफ़-सूफ़ किया हुआ था। बस, इसी जगह हमको इस समय जाना है। इस अवसरपर इस जगह कोई मामूली चोर अथवा डाकू नहीं हैं—वही हमारे पुराने परिचित चार आदमी बैठे हैं। वे चार आदमी पाठकोंको पहले-पहल श्रीधर स्वामीके मन्दिरके भुँहारेमें मिले थे। उस समय उनकी जैसी चेष्टा दिखाई देरही थी, उससे इस समय, उनकी चेष्टा बहुत ही भिन्न दिखाई दी। उनमें जो तेजस्वी नेत्रोंवाला ठिगना नवयुवक था, उसकी चेष्टा कुछ क्रोध, कुछ खेद, कुछ दृढ़ता; और कुछ तिरस्कार इत्यादि विचारोंकी छायासे बिलकुल व्याप्त दिखाई देरही थी। वह इस समय अपने मस्तकमें बहुतसी शिकनें डाले हुए, किसी अत्यन्त गहन विचारमें, मन ही मन, निमग्नसा दिखाई देरहा था। ये लोग इस समय उपर्युक्त स्थानमें, एक वृक्षके नीचे, कम्बलपर बैठे थे; और अपने अपने घोड़े उन्होंने वहीं, थोड़ी दूरपर, एक वृक्षके नीचे बांध दिये थे। उन लोगोंमेंसे एक मनुष्यकी क्या स्थिति थी, सो अभी बतलाई। बाक़ी तीनों मनुष्य भी पहले ही मनुष्यकी भांति, अत्यन्त दुःखी होकर, गर्दन नीची किये हुए, चुप बैठे थे। उन तीनोंमें एक तो हमारा वही सिपाही जवान था कि, जिसका परिचय हमारे पाठकोंको पहले परिच्छेदमें ही होचुका है; और शेष दो उस

तेजस्वी तरुण पुरुषके मित्र हैं, सो भी पाठकोंको मालूम ही है। अस्तु। जैसाकि हमने ऊपर बतलाया, उसी अवस्थामें वे चारों बहुत देरतक बैठे रहे; और कोई किसीसे कुछ नहीं बोला। लेकिन यह स्पष्ट दिखाई देरहा था कि, प्रत्येक कुछ न कुछ कहनेके विचारमें हैं। अन्तमें वह तेजस्वी नवयुवक एकदम औरोंकी ओर देखकर कहता है, "क्यों? श्रीधर स्वामीके हाथों और पैरोंमें मन मनभरकी हथकड़ी और बेड़ी डाल दी गईं; और वे पुरन्दरके समान निकटके ही क़िलेमें कालकोठरीमें हमारे लिये डाल दिये गये; और फिर भी हम यहां चुपचाप बैठे हैं! धिक्कार है—इससे अधिक और लज्जाकी बात क्या होसकती है! इससे तो हम हाथोंमें चूड़ियां पहनकर चुपचाप घरमें बैठे रहें तो अच्छा!"

ये शब्द इतने तिरस्कार और दुःखके साथ उस पुरुषने उच्चारण किये कि, जिससे स्पष्ट मालूम होता था कि, उसको अपने मनमें, स्वयं अपने विषयमें ही, अत्यन्त तिरस्कार उत्पन्न होचुका था। इसके सिवाय उसने उपर्युक्त वाक्य उच्चारण भी कुछ ऐसी विचित्र आवाज़से किये कि, सुननेवाले उन तीनोंके हृदयमें वे बिलकुल भिद गये। उसमें भी येसाजीको तो उससे बहुत ही खेद हुआ। क्योंकि उन्होंने स्वाभाविक ही सबके सामने यह प्रतिज्ञा कर ली थी कि, श्रीधर स्वामीको दूसरे ही दिन छुड़ा लाऊंगा! वह प्रतिज्ञा आज बिलकुल व्यर्थ गई; और आज गर्दन नीची करके बैठनेकी नौबत आई! इस बातपर उन्हें

अत्यन्त दुःख हुआ। पहले दिन जोगिन जब पुरन्दरके किले-पर अपना फेरा डालकर वापस आई; और येसाजीसे मिलकर वहांका समाचार बतलाया, तब उन्हें अपनी प्रतिज्ञाके पूर्ण होनेका बहुत ही विश्वास और उत्साह हुआ; और उन्होंने इस बातका भी विचार किया कि, अमुक मार्गसे जाकर अमुक युक्ति करेंगे; और दूसरे ही दिन, उसी युक्तिके अनुसार, श्रीधर स्वामीको छुड़ा लेंगे। इसके बाद उन्होंने फिरसे जोगिनको क़िलेपर एक चक्कर लगा आने और सब हालचाल देख आनेके लिए कहा; और जतलाया कि, हम मार्गमें तुम्हें अमुक वृक्षके नीचे मिलेंगे, वहीं आकर सब वृत्तान्त बतलाना। तदनुसार जोगिन दूसरे दिन फिर गई; और वहां जो बात हुई थी, सो सब आकर येसाजीको उसी वृक्षके नीचे मार्गमें बतलाई। वह बात क्या थी, सो सब पाठकोंको मालूम ही है। उसे सुनते ही येसाजीको बहुत खेद हुआ। उन्होंने समझा था कि, श्रीधर स्वामीकी जो स्थिति पिछले दिन थी, वही यदि अब भी होगी; तो बातकी बातमें उनको छुड़ा लावेंगे। पर अब वह हालत नहीं रही। हमारे आलस्यके कारण श्रीधर स्वामी आज इस दशाको प्राप्त हुए—उनके इन कष्टोंका कारण मैं हूं—बस, यही सोचकर येसाजीको अत्यन्त पश्चात्ताप हुआ। एक तो पहले ही उनकी चित्तवृत्ति इस प्रकार पश्चात्तापपूर्ण थी—फिर जैसा-कि हमने ऊपर बतलाया, उस तेजस्वी नवयुवकके उपर्युक्त वचनोंसे तो उनका हृदय और भी अधिक दुःखी हुआ। वे

चुपचाप नीची गर्दन किये हुए चिन्तामें बैठे रहे। क्या कहें, सो उन्हें कुछ नहीं सूझा। इसके सिवाय वे यह भी जानते थे कि, यदि इस समय कुछ कहेंगे भी,तो अच्छा नहीं लगेगा। हां, हमारा सिपाही जवान अवश्य ही कुछ कहनेके विचारमें था। उसके होंठ फड़क रहे थे;और बोलनेकी इच्छा वह बहुत प्रयासके साथ दाब रहा था; इतनेमें उस तेजस्वी नवयुवककी तीक्ष्ण दृष्टि, उसी समय, हमारे उस सिपाही जवानकी ओर झुकी; और देखा कि, उसके मनमें कोई न कोई महत्वपूर्ण विचार आ-रहा है; और वह यही सोच रहा है कि, "कहूं या न कहूं।" यह देखकर स्वाभाविक ही वह उससे बोला, "भाई, तुम्हारे मनमें कोई विचार आया है, ऐसा जान पड़ता है, सो क्या है? बत-लानेयोग्य हो, तो बतला न डालो?" यह सुनकर हमारा सिपाही जवान कुछ हँसा; और फिर तुरन्त ही कहता है, "महा-राज, और क्या बतलाऊं—मुझे यदि आज्ञा हो, तो सचमुच ही मैं तीन दिनके अन्दर श्रीधर स्वामीके चरणोंके दर्शन आप सबको करा दूंगा।"

"क्या? तुमको तो इधरके प्रान्तकी कुछ बहुत जानकारी भी नहीं है; और तुम यह काम करनेकी प्रतिज्ञा करते हो? इधरकी कठिनाइयां क्या हैं, इसकी क्या तुमको कुछ कल्पना है? पुर-न्दरका क़िला एक बड़ा विचित्र क़िला है। उसमें प्रवेश करना कुछ हँसी-खेल नहीं है। फिर स्वामीजीके हाथों-पैरोंमें मन मनकी हथकड़ी बेड़ी डालकर उनको कालकोठरीमें, तहख़ानेके अन्दर,

बन्द कर रखा है—वहांसे तुम कैसे छुड़ा लाओगे ? मेरी समझ-में नहीं आता। यह बात केवल शूरताके बलपर नहीं होसकती। इस प्रान्तकी—विशेषत: पुरन्दर और उसके आसपासके प्रदेश-की—जिसे पूर्ण जानकारी होगी; और जो सब प्रकारके दाव-पेंचोंमें पूर्ण दक्ष होगा, उसीसे यह काम हो सकेगा। तुम्हारे समान पुरुषसे यह कैसे होगा ? (येसाजीकी ओर कुछ आंख मटकाकर) हमारे येसाजीके समान सुदक्ष वीरने जिस बातकी प्रतिज्ञा की; और वह पूरी नहीं होसकी, वह बात तुम्हारे समान नवीन पुरुषसे कैसे बन पड़ेगी ? मेरी समझमें नहीं आता !"

यह अन्तिम कथन सुनकर येसाजीको और भी खेद हुआ। परन्तु वे कुछ बोले नहीं। वे जैसे अभीतक चुप बैठे थे, वैसे ही बैठे रहे। इतनेमें वह सिपाही जवान उस तेजस्वी पुरुषकी ओर मुड़कर फिर कहता है, "आपकी आज्ञासे मैं सब कुछ कर सकूंगा। चाहे जो करूं; परन्तु श्रीधर स्वामीको आपके पास लाकर उपस्थित करूंगा, आज्ञाभर चाहिए। मैं जबसे आपके पास आया, कोई भी काम नहीं कर दिखाया। सो आज कुछ कर दिखलाऊं, यही इच्छा है। यह इच्छा पूर्ण होना आपकी आज्ञा और आपके आशीर्वादपर अवलम्बित है। जब मैंने एक वार कह दिया कि, यह काम करूंगा, तब मरनेतक पीछे नहीं हटूंगा, आप विश्वास रखें। या तो इस प्रयत्नमें मरूंगा, या श्रीधर स्वामीको आपके पास लेकर आऊंगा; और कुछ आप न समझें ! आपका अनुमोदन, आपकी आज्ञाभर चाहिए।"

"तुम्हारी शूरता और तुम्हारी दृढ़ताके विषयमें कभी मेरे मनमें शंका नहीं हुई। बस, बात एक ही है—जैसीकि तुम्हारी इच्छा है, उसके अनुसार तुमको यह कार्य सौंपनेके लिए मेरा मन तैयार नहीं होता; और यह सिर्फ इसीकारण कि, तुम्हें इस प्रदेशकी अभी पूरी पूरी जानकारी नहीं है। जानकारी यदि होती, तो मैंने तुम्हारे समान उत्साही पुरुषको निराश कभी न किया होता। अब आज मैं स्वयं ही इस कामपर जाऊंगा। स्वामीजीके समान सत्पुरुषकी हमारे पीछे ऐसी दुर्दशा हो,इससे अधिक लज्जाकी और क्या बात होसकती है? गो-ब्राह्मणोंको कष्ट न हो, उनको जो आजकल कष्ट होरहा है, उससे छुटकारा हो, इसीलिए तो हमने यह सारा प्रयत्न शुरू किया है। फिर जिन्होंने हमपर आजतक अनेक उपकार किये, आजतक हमारे लिए कितनी ही कारस्थानियां कीं, कितने ही कामोंमें हमको सलाह-मशविरे दिये, वे स्वयं ही संकटमें—और फिर हमारे ही लिये—पड़े हैं; और हम इधर-उधर करते हुए चुप बैठे हैं, यह कितनी बुरी बात है! भवानी माताने—जिस दिन वे पकड़े गये, उसके दूसरे ही दिन—संध्या समय, मुझसे कहा था कि, स्वामीजीका बाल बांका भी न जायगा; और तुझको फिर उनके दर्शन होंगे—हां, प्रयत्न भारी करना पड़ेगा। मैंने बहुत बार विचार किया, पर समझमें नहीं आया कि, किसी सहज उपाय-से यह कार्य हो सकेगा। कोई न कोई भारी युक्ति किये बिना उनके छूटनेकी आशा नहीं। सो क्या करना है; और क्या नहीं

करना है, यह सारा मेरे मनमें बिलकुल निश्चित होचुका है। पुरन्दरका क़िला तो आज हम लोग जीत नहीं सकते। निस्सन्देह, क़िला तो हम नहीं जीत सकते, पर श्रीधर स्वामीका छुड़ाना आवश्यक है। मैंने अपने मनमें सारी योजना पूरी पूरी निश्चित कर रखी है। उस योजनामें एक छोटीसी बातकी कमी है। क़िलेकी जानकारी तो मुझे पूरी पूरी है; और इन दोनोंको भी है। किन्तु..." आगे वह नवयुवक कुछ कहनेवाला था कि, इतनेमें दूर, कहीं न कहीं, किसी मनुष्यके आनेकासा आभास हुआ। तुरन्त ही उसने अपनी तलवार सम्हाली; और फुर्तीके साथ खड़ा होकर कहता है, "कोई मनुष्य हमपर नज़र तो नहीं रख रहा है? इस समय यदि हमारे विचारोंका ज़रा भी किसीको पता चल गया, तो बड़ी कठिनाई उपस्थित हो-जायगी। हमारी सच्ची शक्ति इसीमें है कि, हमारी सब बातें गुप्त रहें; और मशविरा ठीक ठीक हो। क्यों, येसाजी, तानाजी, अरे तुम आज मौन क्यों धारण किये हुए हो? येसाजी, अरे तुम्हारी प्रतिज्ञा पूरी नहीं हुई, तो तुम इतने खिन्न क्यों होरहे हो? आजतक हम लोगोंने न जाने कितने विचार किये; और कितने ही विफल हुए! पर क्या कभी भी उनके लिए खेद माना, जो आज मानें? भवानी माताकी कृपा है। उनका जो कुछ कहना है, वही सच होगा। श्रीधर स्वामीका अवश्य हमको फिर दर्शन होगा। इसकी तुम बिलकुल चिन्ता न करो।"

इसके बाद फिर उसको किसी मनुष्यके आनेकीसी आहट

सुनाई दी; और वह बोला, "कोई न कोई नज़र रखनेके लिए आया होगा, इसलिए अब हमको यहांसे चल ही देना चाहिए, अथवा यह कौन मनुष्य है, इसका पता लगाना चाहिए। यह हम लोगोंका सदैवका स्थान है। यहां यदि और किसीका प्रवेश होगया, तो सारी मन्त्रणा मिट्टीमें मिल जायगी।" इतना उसने कहा ही था कि, इतनेमें उस मनुष्यके आनेकी आहट और भी पास पास सुनाई देने लगी, जिससे वह तेजस्वी तरुण सिपाही अपनी तलवार सम्हालकर आगे लपका; और यह देखकर कि, दूरपर वृक्षकी ओटसे, कोई मनुष्य भाग रहा है, वह उसको मारने दौड़ा। परन्तु उस आगत मनुष्यने—"मैं यमाजी आपका—मैं आपका—" ये शब्द कहे; और फिर आगे आकर चरणोंके सामने लोटते हुए बोला—"महाराज, आज रातको हथकड़ी-बेड़ियों सहित, निस्सन्देह, बाबाजीको कोटके ऊपरसे ढकेल देनेका हुक्म होचुका है। आप यदि शीघ्रता करेंगे तो······"

उसकी बात अभी ख़तम भी नहीं होने पाई थी कि, वह तेजस्वी तरुण सिपाही एकदम लपककर घोड़े पर आरूढ़ हुआ; और एकदम घोड़े को बेतहाशा छोड़ दिया। हां, उस समय इतने शब्द उसके मु हसे अवश्य सुनाई दिये—"चलो, क्या करना है, सो मैं रास्तेमें तुमको बतलाता हूं। अरे इन दुष्टों···"

आगेके शब्द घोड़े पर सवार होनेमें उसके मुखसे ठीक ठीक निकले ही नहीं। चारों वायु-वेगसे घोड़े दौड़ाते हुए निकल गये।

सत्ताईसवां परिच्छेद ।

"काटपर लेगये !"

पिछले परिच्छेदमें जिस दिनका ज़िक्र हुआ, उसी दिनके संध्याकालमें एक;बुड्ढा घसियारा और उसकी घसियारिन,दोनों सिरपर बड़े बड़े दो घासके गट्ठे लिये हुये पुरन्दरक़िलेके नीचे बस्तीमें आये। वे प्रत्येक आदमीके सामने अत्यन्त दीनवाणीसे पुकारते जाते थे। "अरे घास ले लो,दयावान माई-बाप! घास ले लो! घरमें लड़के-बच्चे भूखों मरे जाते हैं, हमको कुछ खाने पीनेको दे दो!" उनका वेश क्या था? सच पूछिये, तो बुड्ढी-की कमरपर समूचा वस्त्र भी नहीं था, बदनके ऊपरके हिस्सेकी बात ही क्या कहना! एक कुर्ती पहने थी, पर वह भी बिल-कुल चिथड़ा जान पड़ती थी; और शरीर इतना काला कि, जैसे कोयलेसे पोता गया हो! बुड्ढे के एक हाथमें लाठी; और सिर-पर बड़ा भारी बोझा! बुड्ढा ज़रा कसा हुआ गठीला दिखाई देता था, पर था आख़िर बुड्ढा ही! शरीरपर एक लँगोटीको छोड़-कर दूसरा वस्त्र नहीं। हजामत कुछ कुछ बढ़ी हुई। और बोझा इतना भारी लिये कि, झुकनेसे मानो पीठ ही मुड़ी जाती हो! अन्तमें जब देखा कि, उस बस्तीमें घास कोई नहीं लेता; और सूर्यास्तका समय आगया, क्षण क्षणपर अन्धकार घना होता जारहा है, तब वह बुड्ढी अपने बुड्ढे से कहती है, "अब चलो

क़िलेके ऊपर चलें। वहां घुड़सालमें चारा बहुत लगता है, चलकर वहीं बेचें।"

ये शब्द उनके मुँहसे निकले ही थे कि, इतनेमें बुड्ढेने धड़ामसे अपना गट्ठा नीचे डाल दिया; और क्रोधसे उस बुड्ढी-की ओर दौड़कर बोला, "जा, जा, रांड़ कहींकी! कहांका झगड़ा लगाया! चार गाँव दौड़ाकर मार डाला; और अब कहती है, चलो क़िलेके ऊपर…" फिर क्या पूछना है! दोनोंमें ख़ूब झगड़ा मच गया! बुड्ढा क्रोधमें आ आकर बोल रहा था; और बुड्ढी भी उसका जवाब उसीकी ओर लपक लपक-कर दे रही थी। बड़ा शोरगुल उन्होंने मचा दिया। लोग इकट्ठे होगये। बुड्ढी अपना बोझा नहीं उतारती, कहती कि, क़िले-पर जाऊंगी। इधर बुड्ढा अपना बोझा उठाताही नहीं था। वह कहता कि,यहीं हम पटेलजीके यहां, रोटी लेकर, दे देंगे। अन्त-में न उसने सुना; और न उसने। तब बुड्ढी यह कहकर कि, मैं अकेली ही जाती हूं, वहांसे चल दी। बुड्ढा जहांका तहां ही बैठा रहा। शामका वक्त था। क़िलेपर उसे जाने कौन देता है? पर उसका पक्का निश्चय कि, मैं अपना बोझा बिलकुल ऊपर लेजाकर घुड़सालमें ही बेचूंगी। क़िलेके चढ़ावपर जाकर अब वह ऊपर चढ़ना शुरू करनेहीवाली थी कि, पहरेदारोंने उसे रोका; पर वह काहेको मानती है— बड़ी उस्ताद बुड्ढी! अपनी उसी अमंगल भाषामें ऐसी बुरी बुरी गालियां देने लगी कि, कुछ पूछो ही मत! स्त्री ठहरी, उसके शरीरको हाथ कौन

लगावे ? अंतमें एक मनुष्य बोला, "अरे जाने दो रांड़को, ऊपर-से लौटेगी जूते खाकर!" तब तो पूछो मत। इसी "रांड़को" शब्दको लेकर गालियोंकी बौछार शुरू की; परन्तु कदम एक भी पीछे नहीं उठाया—बराबर ऊपर ही चढ़ती जाती थी। किसी-को भी हिम्मत न हुई कि, उसको पकड़कर पीछे खींच ले। वह बड़ी तेज़ीके साथ ऊपर चली जारही थी। बीचमें जहां जहां पहरा लगता था, सब जगह पहरेदार लोग उसको रोकते; परन्तु वह अपनी जिह्वाकी कमान लवाकर गालियोंकी बाण-वर्षा करती ही जाती थी; यही नहीं, बल्कि जब कोई उसके पास उसे पकड़ने आता, तब वह ऐसी गालियां देती कि, कुछ पूछो ही मत। इतना ही क्यों ? बल्कि उलटे उसीकी ओर दौड़ती; और कहती कि, "अच्छा, लो, मुझे ढकेल दो! ढकेल दो!" परन्तु स्त्रीके मुँह कौन लगता ? सब हैरान होकर यही कहते कि, "जाने भी दो, ऊपर कोई न कोई पकड़ेगा ही।" करते क्या ? बस, इसी प्रकार वह ऊपर चढ़ती जारही थी।

इधर वह बुड्ढा घसियारा पटेलजीके घरके पास अपना बोझा डालकर बैठा था। वहां वह अत्यन्त दीनवाणीसे कह रहा था:—"आप मेरा बोझा लेकर रातको मुझे सोनेको जगह और थोड़ीसी रोटी दे दीजिए।" फिर कहने लगा, "आपका कुछ काम हो, तो मैं कर दूं; लेकिन रातको ठहरनेकी जगह दे दीजिये।" बस, इसी भांति बातें बना बनाकर और अपनी बुढ़ियाके हठीलेपनपर कुछ बक-झककर उसने पटेलजीकी

पशुशालाके पास बोझा डाल दिया;और घुड़साल तथा पशुशाला-के बीचमें जो घास रखनेका स्थान बना था, वहीं अपनी साथरी बिछा दी। उधरसे कोई कहता है, "अरे, यहां मत सो, यहां मत सो!" पर वह इतनेमें लुढ़क हो गया। कहने लगा, "अजी सरकार, एक रातके लिए तो जगह दीजिए। वह बुढ़िया हठ करके क़िलेपर चली गई, मेरे पैरोंमें बल नहीं रहा, नहीं तो मैं भी चला जाता।" बस, इस प्रकार कहते हुए, वह मानो घरकी ही तरह लोटने लगा। उसकी वह ढिठाई देखकर फिर कोई कुछ नहीं कह सका। उसने तो ढिठाईका यहांतक कमाल कर दिया कि, जैसे कोई पशुशालाका या घुड़सालका नौकर ही हो! किसीसे कहता कि, निकालो डफ़ली, मैं लावनी गाता हूं और अपने उस बेसुरे गलेसे उलटी-सीधी भाषामें उलटा-सीधा गीत गाने भी लगा। यहांतक, कि जब गट्टो जम गई, तब फ़िर क्या पूछना है!

बुड्ढा बड़ा तालबेली है, यह समझकर लोग उससे हँसी-मज़ाक भी करने लगे। किसीने उसे चिलममें रखनेको तमाख दी, कोई कोई उसे यह कहकर कि, "अच्छा एक गीत और गाओ।" उससे बार बार गानेका आग्रह करने लगे। आख़िर बुड्ढेका सब हिसाब जम गया। रातके लिए रोटी भी उसे मिल गई।

इधर बुढ़िया चढ़ती चढ़ती ऊपर जा ही रही थी। बीचमें उसे बहुत लोगोंने बाधा दी, परन्तु उसके निश्चयके सामने

कोई टिक नहीं सका। टिकता कैसे? उसके शरीरको कोई हाथ लगा ही नहीं सकता था। एकबार एक आदमीने अपने हाथसे उसकी बाँह पकड़ ली, तो गालियां देकर लगी शंख-ध्वनि करने! आख़िर उसको छोड़ना ही पड़ा; और वह फिर आगे चल दी। अन्तमें वह बिलकुल ऊपरके बड़े दरवाजेके पहरे-तक पहुँची। वहां नीचेके सब दरवाजोंसे भी अधिक उसने गोलमाल मचाया; और अपना प्रवेश कर ही लिया। उसने वहां क्या क्या करनेकी धमकी दी; और वह सब कर सकती हूं, अथवा नहीं—इसका नमूना दिखानेके लिए उसने वहां क्या क्या कर दिखलाया, इत्यादि बातोंका वर्णन करते रहनेकी यहां कोई आवश्यकता दिखाई नहीं देती; और यदि कुछ आवश्य-कता भी हो, तो उसका वर्णन करना इष्ट भी नहीं है। यहांपर सिर्फ इतना ही बतलाना काफी होगा कि, वह बुड्ढी, जहांतक उससे होसका, सब प्रकारका प्रयत्न करके अन्तिम दरवाजा भी पार कर गई; और एकदम घुड़सालकी ही ओर जापहुँची। मुख्य द्वारको उल्लंघन करनेके बाद घुड़सालतक जानेमें उसे कोई विघ्न उपस्थित नहीं हुआ। क्योंकि सबने यही ख़याल किया कि, घुड़सालमें घासका बोझा मंगाया गया होगा, तभी तो यह लाई है; और इसीकारण किसीने उसकी ओर विशेष ध्यान भी नहीं दिया। बुढ़िया इस प्रकार—जैसे वहांकी सब जानकारी रखती हो—इधर-उधर घूमती हुई सीधी घुड़सालमें पहुँची; और वहांके अधिकारीसे, घास लेकर रोटी देनेके लिए, आग्रह

करने लगी। इसके सिवाय, अपने पतिसे भी अधिक ढिठाई दिखलाकर रातभर वहीं टिकनेका उसने सुभीता कर लिया। अनेक इधर-उधरकी बातें कहकर उसने वहांके लोगोंको त्रस्त कर छोड़ा। अन्तमें जब उसने देखा कि, अब यदि अधिक कुछ कहूंगी, तो ये लोग यहांसे अवश्य भगा देंगे, तब उसने फिर अपना बोलना कुछ कम कर दिया। वहांसे उसे भगा देनेके लिए अनेक लोगोंने अनेक प्रयत्न किये, पर कोई लाभ न हुआ। इस प्रकार धीरे धीरे कुछ रात भी होगई।

इसी रातको आधी रातके लगभग श्रीधर स्वामीको कोटके उपरसे ढकेलकर मार डालनेका निश्चय किया गया था; पर यह बात वहांके बहुतेरे लोगोंको मालूम नहीं थी। ज्यों ज्यों रात जाने लगी, त्यों त्यों श्रीधर स्वामीके पहरेदार अत्यन्त क्रूरता-पूर्वक उनको गालियां देते हुए यह कहने लगे कि, "अब तुम्हारा अन्तकाल आगया है, अब भी पूरा पूरा पता देकर छूट जाओ।" इस प्रकार भय दिखलाते हुए, बाहरसे ही, नाना प्रकारसे उनको तंग कर रहे थे। एक मुसलमान सिपाहीने तो एक झरोखेसे उनके ऊपर थूंक भी दिया। यह देखते ही मराठे सिपाहीने उस मुसल्लेको डांटा। दोनोंमें झगड़ा शुरू होगया—यहांतक कि मार-पीटकी भी नौबत आ जाती, पर मराठा सिपाही बेचारा अकेला था; और मुसलमान दो-तीन थे। बाबाजी बेचारे गर्दन नीची किये हुए भीतर चुपके बैठे थे। करते ही क्या? उस समय उनके मनमें क्या क्या विचार आरहे होंगे? देखो, हम

इस दशामें पड़े हुए हैं; और हमको कोई छुड़ानेके लिये प्रयत्न नहीं करता ! क्या हम इन मुसलमानोंकी क़ैदमें रहकर इसी प्रकार पच पचकर मरेंगे—अथवा जैसीकि ये धमकी देते हैं, हमको सचमुच ही अब कोटके ऊपरसे ढकेलकर प्राण लेलेंगे ? बस, इसी प्रकारके विचार मनमें आनेसे उनका चित्त खिन्न हो-रहा था। जब कि, वे इस प्रकार अत्यन्त दुःखद विचारोंमें निमग्न थे, एकाएक बाहरके लोगोंके मुखसे कुछ शब्द उनके कानोंमें पड़े। जिस प्रकार पिंजरेमें पड़े हुए शेरकी अत्यन्त हीन दशा होजाती है, उसी प्रकार बेचारे बाबाजीकी भी होरही थी। जो शब्द उन्होंने अभी कानोंसे सुने थे, वे इतने त्वेषजनक थे कि, यदि बाबाजी उस समय अपनी उस हीन अवस्थामें न होते, तो एक-दो मुसलमानोंको अवश्य ही उन्होंने क़ब्रका रास्ता दिख-लाया होता। परन्तु उस समय वे क़ैदीकी हालतमें थे—हाथों और पैरोंमें भयंकर हथकड़ियां बेड़ियां पड़ी हुई थीं—फिर भी उनको इतना त्वेष आया कि,उन्होंने अत्यन्त क्रोधसे दांतोंसे होंठ चबाकर ज्यों ही धड़से अपने हाथ-पैर पटके,त्यों ही ज़मीनतक हिल उठी। उनके पैरोंमें अवश्य कुछ चोट आई, पर इसकी उन्होंने परवा नहीं की। इसी प्रकार होंठ भी उन्होंने दातोंसे ऐसे चबाये कि, शायद ख़ून निकलनेतककी नौबत आगई। उनकी आँखोंसे मानो आगकी चिनगारियांसी निकलने लगीं; और सदैवकी भांति वे अपनी कुबड़ी ढूँढ़ने लगे, पर कुबड़ी वहां थी कहां ? वह तो कभीकी उनके हाथसे छिना लीगई थी। शक्तिहीन क्रोध क्या

कर सकता था ? "इस वैरागीको कोटके नीचे ढकेलनेके पहले, आओ, इसके मुंहमें हम गोमांस डालें; और इसको मुसलमान बनावें।"—ये शब्द बाहरके जिस मुसलमानने कहे थे, उसीके ऊपर बाबाजी चड़बड़ा रहे थे। पर करते क्या ? सिर्फ उन्होंने यह निश्चयभर मनमें कर लिया कि, मौका आनेपर, ऐसी दशामें भी, कमसे कम एक को तो अवश्य ही उलटा दूंगा; और यह दिखला दूंगा कि, सच्चे हिन्दू-धर्मका क्या तेज होता है। धीरे धीरे आधी रातका समय ज्यों ज्यों निकट आने लगा, त्यों त्यों उन मुसलमान पहरेदारोंकी छेड़छाड़ अधिकाधिक बढ़ने लगी। कुछ देर बाद क़िलेदार तथा और कुछ एक, दो आदमी बाबाजोकी कोठरीकी ओर आये। क़िलेदारका चेहरा बिलकुल उदास होरहा था। यहांतक कि उसपर बिलकुल मुर्दनीसी छाई हुई थी। उसके क़दम इस प्रकार पड़ रहे थे, जैसे किसी मन मनकी बेड़ियां डाले हुए मनुष्यके पड़ रहे हों। बीच बीचमें वह दीर्घ निःश्वास छोड़ता जाता था, सो इस प्रकार, जैसे उसके प्राण ही निकल रहे हों! जैसे उसको अत्यन्त—अत्यन्त ही शोक हो रहा हो! क़िलेदार साहब साथके लोगोंसे कुछ बोलते नहीं थे—चुपके चले आरहे थे। अन्तमें जब बिलकुल कोठरीके पास ही आगये, तब उनको देखकर एक पहरेदार तुरन्त ही उठा, और कोठरीका दरवाजा खोलने लगा। उस समय क़िलेदार साहबने अपने साथके एक मनुष्यसे कहा, "कुशाबा, जो कुछ कहना हो, अब तू ही कह ले,

मेरा......" इसके आगे मानो वे एक अक्षर भी नहीं बोल सके। इतनेमें दरवाजे खुल जानेसे उनके साथकी मशालका उजेला भी कोठरीके अन्दर गया; और बाबाजी, जो दरवाजेके पास ही बैठे हुए थे, उनके मुखपर पड़ा। इससे उनका वह अत्यन्त त्रस्त, क्रुद्ध; और कुछ खिन्नसा चेहरा उन लोगोंको दिखाई दिया। उसे देखते ही क़िलेदारके शरीरपर रोमाञ्च होआया। यही नहीं, बलिक उनकी आँखोंमें जैसे आंसू भी आगये हों, ऐसा भास हुआ। क्योंकि मशालके उजेलेसे उनकी आँखोंमें पानीकी झलक दिखाई अवश्य दी। लोगोंके भीतर आते ही बाबाजीने अपनी स्तब्ध दृष्टिसे सिर्फ एक बार उनकी ओर देखा। मुँहसे एक शब्द भी उच्चारण नहीं किया। हां, कुशावा अवश्य ही आगे होकर बोला, "बाबाजी, अब प्राण जानेका समय आगया, अब तो कुछ कह दो! नहीं तो व्यर्थके लिये मरोगे, और कुछ नहीं।" बाबाजी कुछ नहीं बोले। फिर कुशावा उनसे कहता है :—

"देखो, तुम वैरागी हो। आज हमारे क़िलेपरसे एक वैरागी व्यर्थके लिये ढकेला जाकर प्राणोंसे हाथ धो बैठेगा। हमको एक वैरागीकी हत्या लगेगी, यही सोचकर क़िलेदार साहबको आज दो दिनसे नींद नहीं आरही है। सच्ची सच्ची बात यदि तुम बतला दोगे, तो ये कुछ न कुछ विनय-प्रार्थना करके तुमको छुड़ा देंगे। तुमको यदि कुछ भी मालूम न हो, तो सच्चे-झूठे ही दो-चार नाम बतलाकर अपना छुटकारा पा लो। लेकिन

व्यर्थके लिये हमारे क़िलेपरसे तुम्हारी हत्या न होनी चाहिए। कहो, जो कुछ कहना हो। कमसे कम इतना तो प्रकट करो कि, आज नहीं बतलावेंगे, कल बतलावेंगे, परसों बतलावेंगे— फिर······”

परन्तु बाबाजीके स्तब्ध देखते रहनेके अतिरिक्ति और कुछ भी उत्तर उसके इस सारे कथनका नहीं मिला। ऐसा जान पड़ा कि, ज्यों ज्यों अधिकाधिक समय जाने लगा, त्यों त्यों उनमें और भी अधिक शान्ति आने लगी। कुशाबाने बार बार उनसे कहा कि, “तुम कुछ नहीं बोलोगे, तो इसका परिणाम अच्छा नहीं होगा। इसलिये तुम कुछ न कुछ कहो अवश्य। नहीं तो ख़ां साहब स्वयं कोटपर खड़े होकर तुमको नीचे ढकेलनेका घोर कर्म अपने सामने ही करावेंगे।” कुछ नहीं, सब व्यर्थ! बाबाजीने मुख ही नहीं खोला। कुशाबाने साम, दाम, दण्ड, भेद इत्यादि चारों प्रकारसे समझाया; और सिर्फ़ अपने भिन्न भिन्न दृष्टिक्षेपोंसे ही क़िलेदारने भी बाबाजीपर आनेवाले भावी संकट-का महत्व दर्शाया; पर सब व्यर्थ। उनके मुखसे एक चकार शब्द भी नहीं निकला। अन्तमें वे दोनों बिलकुल हैरान होगये। समझा कि, अब कोई भी उपाय बाक़ी नहीं रहा। और यह कहते हुए कि, “क्या किया जाय, तुम्हारा भाग्य” वे वहांसे चलने लगे। किन्तु क़िलेदारका वहांसे पैर नहीं उठता था; और जो आंसू अबतक केवल उनकी आँखोंमें ही थे, वे अब दो बड़े बड़े बिन्दुओंके रूपसे एकदम बाहर निकल आये। परन्तु क़िलेदारने

उन्हें इतनी जल्दीसे पोंछ डाला कि, उनका आना शायद किसीको मालूम भी न हुआ होगा। हां, बाबाजीकी दृष्टिसे वे नहीं छिप सके। यही नहीं, बल्कि उनको देखकर, ऐसा मालूम हुआ कि, स्वयं उनके नेत्रोंमें भी वैसे ही आंसू आनेको हुए। क़िलेदार साहब अत्यन्त कष्टसे वहांसे पैर उठाकर चलने लगे। कोटरीसे बाहर आनेतक उन्होंने कई बार बाबाजीकी ओर देखा होगा; पर इससे लाभ क्या? अन्तमें जब वे बिलकुल चलने ही लगे, तब उनसे नहीं रहा गया। वे कुछ ठिठकसे गये; और बाबाजीकी ओर मुड़कर बोले, "क्यों? फिर? प्राणोंकी कुछ भी परवा नहीं? ख़ां साहबने हुक्म देदिया है, उसमें अब उनकी ओरसे कोई भी दया-मया नहीं होगी। इसीलिये कहता हूं, ज़रा सोच लो,......कहो, तो एक-दो दिनकी मुद्दत दिला दूं। मैं उनसे कहे देता हूं कि, वह कल सब कुछ बतला देगा ......"

ये अन्तिम शब्द क़िलेदारके मुखसे अभी पूरे पूरे निकले भी नहीं थे कि, बाबाजी बहुत जल्द उनकी ओर मुँह करके ज़ोरसे कहते हैं, "नहीं! नहीं! जो आज वही कल! और जो कल वही परसों! तुम एक अक्षर भी न बोलो! जब कोई बतलानेकी बात मेरे पास है ही नहीं, तब बतलाऊं क्या? बस, बार बार वही मरनेका डर ही तो? आजतक मेरे समान न जाने कितने मर गये! जाओ, और ख़ानसे कह दो कि, खुशीसे चला आवे; और उसको जो कुछ करना हो, सो करे। मैं, मृत्युको डरूंगा! मृत्युहीको मुझसे डरना चाहिए—मृत्युको!"

इतना कहकर उन्होंने फिर अपने होंठ ऐसी मज़बूतीसे बन्द कर लिए कि, जैसे बिलकुल सी डाले गये हों। इसके बाद फिर वे पहलेहीकी भांति उदास दृष्टिसे बैठकर देखने लगे। कुशाबाने अपनी चर्पट-पंजरी फिर शुरू की। क़िलेदारने भी संक्षिप्त शब्दोंसे; और अर्थपूर्ण दृष्टिसे अपना मनोगत भाव बाबाजीसे प्रकट किया, पर कोई परिणाम न निकला। बाबाजी किसी पाषाण-मूर्तिके सदृश अचल रहे।

अन्तमें वे दोनों चले गये; और कुछ ही देर बाद ख़ान, चार-पांच मनुष्योंके साथ, फिर क़िलेदार साहबको; और उनके साथवाले पहलेके ही दोनों मनुष्योंको लेकर आया। ख़ानके आते ही पहरेदारों और मशालचियोंकी बड़ी गड़बड़ी मची, शीघ्र ही कोठरीका दरवाजा खोला गया। ख़ानके लिये एक उच्चासन लाया गया था, जिसपर वह बैठा। उसका हुक्म छूटनेकी देर थी कि, दो-तीन सिपाही जाकर बाबाजीको बाहर लेआये। बाहर लानेके पहले एक मुसल्मान पहरेदारने बाबाजीसे यह कहकर कि, "उठ बे उठ, वैरागी बना फिरता है!" उन्हें लात मारनेके लिए पैर आगे बढ़ाया। बाबाजीने अपने हथकड़ीभरे हुए हाथसे उसको ऐसा तमाचा मारा कि, उसकी कनपटी सुर्ख़ पड़ गई। इससे वे लोग और भी अधिक चिढ़ गये, परन्तु बाबाजीको इसकी बिलकुल परवा नहीं हुई। वे धीर और शान्त दृष्टिसे देखते हुए तथा गम्भीरताके साथ बाहर आये। ख़ानने उनके ऊपर बुरी बुरी गालियोंकी बौछार

शुरू की, किन्तु उनका ध्यान ही उस ओर न था। उनका ध्यान बारम्बार क़िलेदार साहबके चेहरेकी ओर जाता था। क्योंकि उनका चेहरा इस समय इतना गिर गया था कि, कुछ कहा नहीं जासकता। उनकी आँखें भी बिलकुल दुःखसे भरी हुई दिखाई देरही थीं। ऐसा मालूम होता था कि, उनके ऊपर कोई न कोई बड़ा संकटसा आनेवाला है। इधर ख़ानकी बड़बड़ जारी ही थी। उसने बाबाजीसे बहुत कुछ डरा-धमकाकर पूछना चाहा, पर बाबाजीने उसकी एक बातका भी जवाब नहीं दिया। अन्तमें उसने बाबाजीको कोटके ऊपर ले चलनेका हुक्म दिया। दो-तीन सिपाहियोंने बाबाजीको पकड़ा; और क़िलेकी पिछली ओर जिस कोटपरसे उनको ढके-लनेका निश्चय किया गया था; और जहांसे अबतक कितने ही लोगोंको ढकेलकर उनके प्राण लिए जाचुके थे, वहीं बाबाजीको भी ले चले। बाबाजी बिलकुल धीर-प्रशान्त थे। किसी प्रकारकी घबड़ाहट उनके चेहरेपर दिखाई नहीं पड़ती थी। हां, मुखसे "जय रघुवीर" "जय गुरुदेव" का उच्चारण कर रहे थे। इतनेमें कोटसे दो हाथके अन्तरपर ले जाकर उन्हें खड़ा किया गया।

अट्ठाईसवां परिच्छेद ।

——::०::——

छुटकारा ।

जैसाकि ऊपर बतलाया, जब कोटसे दो हाथके अन्तरपर बाबाजीको लेजाकर खड़ा किया, तब इसके बाद ख़ान फिर एकबार उनके पास आया ; और अपनी उद्दण्ड वाणीसे दो-चार कटुवचन सुनाते हुए बाबाजीसे कहा कि, "बतला, बतला, नहीं तो तू आज यहांसे ज़िन्दा छूटकर नहीं जासकता !" बाबाजीने केवल तिरस्कारपूर्ण दृष्टिसे उसका अधिक्षेपमात्र किया। मुँहसे एक अक्षर भी नहीं निकाला। क़िलेदार ख़ानके पास ही खड़ा था। उस बुड्ढे के अन्तःकरणमें, उससमय, ऐसा जान पड़ता था कि, कोई न कोई अत्यन्त खिन्न विचार आरहे हैं। इसके सिवाय उसकी चेष्टासे यह भी दिखाई दिया कि, जैसे वह कुछ कहना चाहता हो, पर कहनेकी हिम्मत न पड़ती हो। आख़िर जब उससे न रहा गया, तब दिलको कड़ा करके सर्जेख़ांको सलाम करते हुए, रूमालसे हाथ बांधकर, वह बोला, "हज़रत ! इस वैरागीको आप बिना कारण दण्ड देरहे हैं। मैंने; और आपके साथ जो ये मुरारसाहबके भतीजे आये हैं, इन्होंने; और इस कुशाबेने, इन सबने मिलकर बहुत कुछ पूछा-बताया; पर वैरागी कुछ भी बतला नहीं सका, इसलिए प्रार्थना है कि, वैरागीकी हत्या जैसे आजतक कभी नहीं हुई, वैसे ही आज

भी न हो। वैरागी सच्चा वैरागी दिखाई देता है—फिर आगे आपकी मर्ज़ी—"

क़िलेदारके मुँहसे आगे और कोई शब्द ही न नकले; और यदि कुछ नि ले भी तो वे स्पष्ट सुनाई नहीं दिये। अस्तु। इसके बाद वह बराबर बाबाजीकी ओर देखता हुआ खड़ा रहा। सर्जेख़ांने क़िलेदारकी उपर्युक्त बात सुनकर कुछ तिरस्कारसा दिखलाया; और तुरन्त ही उससे बोला, "तुम सभी एक हो। किन्तु मैं कभी तुम्हारी ऐसी बातोंमें नहीं आऊंगा। चाहे तुम हो, चाहे मेरे साथ आये हुए ये मुरार साहबके भतीजे हों, सब एक ही हैं। और तुम ऐसे लोगोंको बचाना अवश्य चाहोगे। पर मैं एक भी न सुनूंगा। क्योंकि मुझको विश्वास होचुका है कि, इस वैरागीको सब बातें पूरी पूरी मालूम हैं। यही नहीं, बल्कि इसको उस मन्दिरमें ही किसी विशेष उद्देश्यसे रखा है—अन्यथा इसकी कुबड़ीमें गुप्तीकी क्या ज़रूरत थी? आजकल तुम मराठे सरदारों और क़िलेदारोंने बादशाह सलामतके पास तो अपना विश्वास जमा रखा है; और मेरे समान सरदारोंके साथ अपने नौकरोंकासा बर्ताव करते हो; और इस प्रकार तुम लोगोंने ऐसे ऐसे बाग़ियोंको लूट-मार मचानेके लिए एक प्रकारसे स्वतन्त्रतासी दे रखी है। इसीका तो यह फल है। ये हज़रत, सरदार शिवदेवराव—मुरार साहबके भतीजे हैं; इसलिए ये समझते हैं कि, बस, हम जो कुछ करें, वही ठीक है। परन्तु हनुमानजीके मन्दिरमें जब

इन्होंने इस वैरागीसे कुछ गुन-गुनाकर गुप्त रूपसे बातें कीं; और मुझे बाहर रख दिया, तभी मैं समझ गया! लेकिन कुछ बोला नहीं। फिर यहां जबसे आया, तबसे तुम लोग जो व्यवहार कर रहे हो, उससे तो मुझे पूरा पूरा विश्वास होगया है कि, तुम लोग इस वैरागीको छोड़ देना चाहते हो। नमकहरामी तो तुम लोगोंकी नस नसमें भरी है। ठीक है। धीरे धीरे ये सारी कार्रवाइयां प्रकट हो जायंगी; और प्रत्येक क़िलेकी जांच की जायगी। मैं यहांसे जाते ही तुम लोगोंका सब हाल बतलाऊंगा। अब मैं एक भी नहीं सुननेका। तुम सब लोग यहांसे चले जाओ। मैं स्वयं अब यहां रहूंगा; और अपनी आँखोंके सामने इसके मुँहमें गोमांस डलवाकर इसे मुसलमान बनाऊंगा; और तब फिर इसे कोटके नीचे ढकेलूंगा। इतना किये बिना मैं यहांसे उठ नहीं सकता। तुमको देखना न हो; तो जाओ, चले जाओ, नमकहरामो कहींके!" बस, क़िलेदारका सारा शरीर जल उठा; उस बुड्ढेका क्रोध सम्हाले नहीं सम्हला; और वह एकदम आगे बढ़कर, अत्यन्त क्रोधके कारण टूट टूटकर निकलनेवाले शब्दोंमें कहता है! "दे-देखता हूं⋯कै-कैसे तू इसे ढकेलता है, क़िला मेरा है; और आज इस घड़ीतक तो मेरा ही अमल है। इस अमलमें, जो चाहूंगा, मैं करूंगा। तू कहांसे आया? देखता हूं, तू कैसे इसे ढकेलता है! मैं अवश्य, तेरे समान प्रत्यक्ष कालके जबड़ेसे, उसे निकालूंगा। देखता हूं, कौन माईका लाल है, जो मेरे सामने इसको ढकेले!"

ये शब्द बिलकुल स्वाभाविक रूपमें यहां दिये हैं; परन्तु वह बुड्ढा जब इन शब्दोंका उच्चारण कर रहा था, उस समय उसकी दशा देखनेयोग्य थी—मानो प्रत्यक्ष जमदग्निने ही उसके शरीरमें संचार किया हो! सब लोग उसका वह क्रोध देखकर बिलकुल स्तब्ध होगये। प्रत्येक आदमी बिलकुल स्तब्ध रूपसे एक दूसरे-की ओर देखता हुआ खड़ा था; परन्तु सर्जेखां, ऐसा जान पड़ा कि, बड़े आश्चर्यमें आगया है। परन्तु उसका वह आश्चर्य बहुत जल्द अब क्रोधके स्वरूपमें परिणत होगया। यहांतक कि वह अत्यन्त चड़फड़ाकर उस बुड्ढेकी ओर दौड़ा; और कहता है, "तू समझता है कि, मैं तेरी ऐसी धमकी या डांटसे डर जाऊंगा? इस प्रकार यदि हम डर जाते, तो हमारा राज्य ही यहां कभी न हुआ होता। जा, यहांसे चुपके चला जा। और तुम सभी यहांसे चले जाओ। अब मुझे पूर्ण विश्वास हो-गया कि, तुम सब लोग बलवाइयोंकी तरफ देखी-अनदेखी करते हो—यही नहीं, बल्कि ऐसा जान पड़ता है कि, तुम सब भीतरसे उनमें मिले हो। तुम क्या समझते हो कि, यह मैं नहीं जानता कि, राजा शहाजी भी भीतरसे अपने लड़केको मदद दे-रहे हैं? चलो, जाओ!"

बस! इस अन्तिम कथनसे तो हद होगई। बुड्ढेके क्रोध-की सीमा नहीं रही। उसने कुशाबाके हाथकी तलवार छीन-कर तड़ाकसे निकाल ली; और एकदम सर्जेखांकी ओर झपटा। एक क्षणका भी यदि विलम्ब होगया होता, तो सर्जेखां उस

बुड्ढे की तलवारके घाट उतर जाता; पर सरदार शिवदेवरावने आगे बढ़कर उस बुड्ढे को पीछे खींच लिया। कुशावा इत्यादि अन्य लोग भी दौड़ पड़े; और सबने मिलकर बुड्ढे को रोक लिया। उसने बहुत कुछ कहा—"छोड़ो! छोड़ो! कौन नमक-हराम है, सो मैं इसे दिखला दूं!...जहां राज्य दबानेको मिले, वहां उसे दबा बैठनेवाले नमकहराम हैं, या विजातीय स्वामी-की भी अत्यन्त विश्वासपूर्वक सेवा करनेवाले नमकहराम हैं; सो मैं इसे दिखा दूं!" परन्तु किसीने उसे छोड़ा नहीं। अतएव अब वह उस साधूकी ओर मुड़कर कहता है, "भैया! अब तू बच नहीं सकता। आज कई वर्षों बाद तू दिखाई दिया। यह नहीं, कि मैंने तुझे पहचाना न हो। समझा था कि, छूट जायगा......किन्तु नहीं। कोई परवा नहीं। खुशीसे मर! सत्य-के लिये मरेगा, तो तू ज़िन्दा ही है! हम इन बेईमान लोगोंकी नौकरी, मरतेतक सचाईके साथ करते हुए भी अन्तमें "नमकहराम" की पदवी पाते हैं! ऐसी दशामें हम लोग सच-मुच ही मरे ही हैं! मैं अब किस लिये यहां खड़ा रहूं? एक मा......"आगे उसके मुँहसे क्या शब्द निकले, सो पूरे पूरे सुनाई नहीं दिये। सरदार शिवदेवराव और कुशावा, दोनों उसको वहांसे हटा लेगये। और वह भी वहांसे अत्यन्त दुःखके साथ, परन्तु अब कुछ अपनी इच्छासे ही, चला गया।

इधर सर्जेखांका क्रोध और भी बढ़ गया था। इसलिए प्रथम निश्चयके अनुसार उसने बाबाजीको देहान्त-दण्ड देना ही

स्थिर रखा। उसने निश्चय किया कि, अब इससे कुछ पूछा न जावे; और एकदम ढकेल ही दिया जाय। बस, यही सोचकर उसने एकदम दो मुसलमान सिपाहियोंको बुलाया; और कहा कि, "अब और कुछ विचार नहीं करना है। अब तुम दोनों मिलकर उसे आगे लाओ;और उसके हाथों और पैरोंको एक ही जगह करके एक बार फिर मज़बूत ज़ंज़ीरसे बांध दो। अब उसका कोई डर नहीं, ज़ंज़ीर ख़ूब मोटी और मज़बूत लाओ!"

यह हुक्म पाते ही दो आदमी जंज़ीर लेने चले गये। अब ख़ानके सहित सिर्फ तीन आदमी ही वहां रह गये। दो मशालची भी थे। रात बिलकुल अँधियारी थी। परन्तु उस भयंकर अवसरका अन्त देखनेके लिए फिर भी वहां अनेक तमाशबीन दूर दूर, कुछ डरते हुए, खड़े थे। सरदार साहबके साथ आये हुए उनके मुसलमान नौकरोंके अतिरिक्त और कोई इस काममें आगे नहीं था। इतनेमें वे लोग, जो ज़ंज़ीर लेने गये थे, एक अच्छी-सी भारी और मज़बूत ज़ंज़ीर ले आये, जिसे देखते ही उन सिपाहियोंको बाबाजीको जकड़नेका हुक्म मिला। दूसरा एक भी मनुष्य आगे नहीं हुआ। एक तो वे साधू थे! और फिर उसमें भी ब्राह्मण! फिर अनेक लोगोंके परिचित! ऐसी दशामें, उनकी हत्यामें जान-बूझकर सहायता देना किस मराठेसे हो-सकता था! जितने लोग दूर दूर खड़े देख रहे थे, सब आपसमें शोक कर रहे थे। परन्तु बेचारे करते ही क्या? उनमेंसे कितने ही ऐसे भी थे कि, जो आपसमें दांतोंसे होंठ चबा रहे थे; परन्तु

शक्तिहीन क्रोध वैसा ही है, जैसे क्रिया बिना वाचालता। हां, एक बात ज़रूर थी कि, यदि सर्जेख़ां बाबाजीको गोमांस खानेके लिए लाचार करके उनको मुसलमान बनानेकी चेष्टा करता, तो अवश्य ही उस साधुकी [illegible] अथवा कमसे कम उसके साथ ही साथ, उसको भी कुएँके नीचे गिरकर अपनी जानसे हाथ धोना पड़ता, [illegible] दूर खड़े हुए उस दर्शक-समाजमें ऐसे भी पुरुष थे कि, जिन्होंने मन ही मन निश्चय कर लिया था कि, सर्जेख़ांने यदि कोई भी ऐसा अत्याचार बाबाजीके साथ किया, तो हम अवश्य ही इसको भी नीचे ढकेल देंगे। परन्तु सर्जेख़ांको उन लोगोंके इस विचारसे क्या मतलब था? उसका तो तात्पर्य इतना ही था कि [illegible] वैरागीसे यदि कुछ पता मिल जाय, तब तो ठीक ही है, अन्यथा यह कोई ज़बरदस्त आसामी ज़रूर है। ऐसी दशामें उन बाग़ियोंके गिरोहसे इसे नष्ट कर देना ही लाभदायक होगा। इस प्रकारका सारा विचार जब वह कर चुका, तब फिर और कौन बात उसे सूझ सकती थी? दो-चार सिपाही जो आगे थे, उन्हींको उसने बाबाजीके हाथ पैर जकड़ देनेका हुक्म दिया। बाबाजी बिलकुल शान्त थे। जान पड़ता था कि, उन्होंने उस समय इस बातका निश्चय कर लिया था कि, अशान्ति किसी प्रकारसे नहीं दिखलावेंगे। वे अपने उपास्यदेव और श्रीगुरुजीका स्मरण बराबर कर रहे थे—यह बात उनके हिलते हुए होंठोंसे दिखाई पड़ रही थी। परन्तु होंठोंके बाहर एक शब्द भी सुनाई नहीं पड़ता था।

सब तैयारी होजानेके बाद सर्जेख़ांने फिर एक वार उनसे कहा कि, "यदि तुझको कुछ पता हो, तो बतला। नहीं तो तुझे शैतानके घर तो भेजूँ होगा, इसके सिवाय, जैसाकि मुझे भारी सन्देह है, तेरे मन्दिरको भी जड़से खोद डालूंगा। कभी नहीं छोड़ूंगा। बतला, बतला, व्यर्थके लिए अपने प्राण मत गमा।" फिर भी बाबाजीके मुँहसे एक शब्द भी नहीं निकला। हां, सिर्फ इतना अवश्य दिखाई दिया कि, उनके नेत्रोंसे कुछ आंसूसे निकल रहे हैं। परन्तु सर्जेख़ांको वे भी दिखाई नहीं दिये। दिखाई देते, तो शायद उसे कुछ आशा उत्पन्न होती; और उसने अपने प्राणदण्डके हुक्मको शायद कुछ कालके लिए मुलतवी भी कर दिया होता, परन्तु ऐसा कुछ नहीं हुआ। उसने जब पूरे तौरसे जान लिया कि, अब हमारी धमकी अथवा डरवानेसे कोई लाभ नहीं होता, तब उसने अत्यन्त क्रूरताके साथ—"जाने दो, सालेको फेंक दो!" कहकर हुक्म दिया। परन्तु इतनेमें कोटके नीचेकी ओरसे कुछ खरभरानेकीसी आवाज़ आई, जिसे सुनकर ख़ानके सिपाही कहते हैं—"यह क्या? यह क्या?" परन्तु देखते हैं, तो वहां कुछ नहीं है! सर्जेख़ांने उनको दो-चार अश्लील गालियां सुनाकर फिर उन्हें वही हुक्म दिया। इतनेमें पीछेकी ओरसे एकदम बड़ा भारी गुलगपाड़ा और कोलाहलसा कानोंमें सुनाई दिया। सब लोग पीछे मुड़कर देखते हैं, तो घुड़सालके पास घासका जो बड़ा-भारी गञ्ज था, उसमें एकदम ख़ूब ज़ोरकी आग लगी हुई है;

और घुड़सालके आसपास जो छप्पर था, वह भी आगसे जल रहा है। यही नहीं, बलिक क़िलेके नीचे पटेलके घरमें तथा उसके घासके ज़खीरेमें और आसपासकी अन्य दस-पांच झोंपड़ियोंमें भारी आग लग रही है! जब ऐसा मौक़ा उपस्थित हो गया, तब तमाशबीनोंमेंसे तो कोई भी आदमी वहां, बाबाजीकी बधक्रिया देखनेके लिए, खड़ा नहीं रह गया, सब उस आगकी ओर दौड़े। इतनेमें एक और प्रकरण उपस्थित हुआ—अर्थात् सरदार सर्जेख़ां क़िलेके जिस भागमें ठहरा था, उसमें भी आग लगी। इस प्रकार जब सभी मार्केके स्थानोंमें आग लग गई; और हवाके वेगसे वह फैलने भी लगी, तब फिर क्या पूछना है? जिसको देखो, वही उसी ओरको दौड़ा चला जारहा है। घुड़सालके पास पानीके कुछ कुंड थे, उनसे आग बुझानेका बहुत कुछ प्रयत्न शुरू हुआ, पर हवाकी मारके आगे पानीकी मार क्या काम कर सकती थी? आगका स्वरूप बहुत ही विलक्षण दिखाई दिया। नीचेकी बस्तीमें भी वही दशा हुई। चारों ओर हाहाकार मच गया। कोई किसीकी नहीं सुनता था। उस समय आज-कलकी तरह पहरा-चौकी इत्यादि बहुत कड़ी नहीं थी। यही नहीं, बलिक क़िलोंकी पहरेदारोंमें तो बहुत कुछ अंधाधुंधी चला करती थी। इसलिए किसी पहरेपर कहीं कोई सिपाही इत्यादि नहीं रहा, सबलोग जल्दीसे जल्दी, कुछ तो नीचे बस्तीमें; और कुछ ऊपर क़िलेपर, आगकी मौज देखनेको चले गये। सब दरवाजे जैसेके तैसे खुले पड़े रहे। ऐसी दशा जब बड़े दरवाजों-

की हुई, तब क़िलेके पीछेकी क्या अवस्था हुई होगी, सो पाठकगण स्वयं ही सोच सकते हैं। आग लगनेका जिस समय गुल-गपाड़ा मचा, उस समय सर्जेख़ां, उसके दो-चार हस्तक; और बाबाजी—बस, यही दो-चार लोग कोटके पास थे। इधर आगका गोलमाल मचते अभी देर नहीं हुई थी; और सर्जेख़ां तथा उसके आदमियोंका ध्यान अभी उसी ओर गया ही था कि, इतनेमें कोटके नीचेकी ओरसे, बिलकुल निकट ही, मशालेंसी जलती हुई एकदम दिखाई पड़ीं; और लगभग पच्चीस आदमी उसी ओर-से एकदम, जल्दी जल्दीसे, ऊपर चढ़ते हुए दिखाई दिये। अब ख़ांसाहबका ध्यान आगकी ओरसे हटकर, वैतालगणके दीपकों-की भांति जलती हुई, उन मशालोंकी ओर आकर्षित हुआ; और एकदम वे कहते हैं— "तोबा! तोबा! यह क्या? यह क्या!" उनके मुखसे ये शब्द निकलते अभी देर नहीं हुई थी कि, वे आदमी एकदम ऊपर आगये; और उनमेंसे चार आदमि-योंने—आदमियोंके रूपमें उन्हीं वैतालोंने—ख़ांसाहबको चारों-ओरसे घेर लिया। दूसरे दो-तीन मुसलमान, जो ख़ांसाहबके सिपाही थे, चिल्लानेहीवाले थे कि, उनके मुँहमें घासके गूंजे ठूंस दिये गये; और उनके हाथपैर बांध दिये गये। इसके बाद बहुत जल्द चार-पांच आदमियोंने मिलकर बाबाजीकी ज़ंज़ीर खोलना और हथकड़ी बेड़ी काटना प्रारम्भ किया। क़िलेके ऊपर और नीचे आग लग ही रही थी; और उसीके बुझानेमें सब लोग फँसे थे, इसलिए पिछली ओरसे धावा करनेवाले उन लोगोंको इस

बातका कोई संशय नहीं था कि, बस्ती या क़िलेके अन्य लोग, कोई दौड़कर हमारे पास आवेंगे; और हमारे कार्यमें बाधा डालेंगे। किन्तु, इसके विरुद्ध, उनको इस बातका पूरा विश्वास था कि, हमको जो कुछ कार्य करना है, सो बिलकुल ठीक ठीक और निर्विघ्नरूपसे ही कर सकेंगे। बस, इसी पक्के विश्वाससे, वे निर्भयतापूर्वक अपना काम कर रहे थे। उन्होंने सावकाश, बाबाजीको अणुमात्र भी तकलीफ़ न देते हुए, उनके हाथों और पैरोंकी बेड़ियां काटनेका उद्योग प्रारम्भ किया; परन्तु मुँहसे एक अक्षर भी उच्चारण नहीं किया। आये वे इतने चुपकेसे कि, जैसे पचास-साठ चूहे जल्दी जल्दीसे किसी पर्वतपर चढ़ आवें—बस, ऐसा ही उनका आना मालूम हुआ! उन्होंने जिस उद्योगका प्रारम्भ किया था, उसे पूर्ण कर लिया। बाबाजीको मुक्त किया। चार-पांच जनोंने उन्हें उठाया; और फिर उनके आगे साष्टांग नमस्कार किया। यह सब घटना देखकर बाबाजी इतने अचम्भित होगये कि, उनको एक अक्षर निकालनेका भी भान नहीं रहा। वे यह सारी लीला स्तब्ध होकर देखते रहे। अस्तु। बाबाजीके मुक्त होते ही सब लोगोंने उनके चरणोंकी वन्दना की; और फिर एक ज़बरदस्त आदमीने उनको अपने कन्धेपर चढ़ाया, तथा दो और आदमी संरक्षणार्थ उनके साथ होलिये। इस प्रकार तीन आदमी, बातकी बातमें, जिस मार्गसे आये थे, उसी मार्गसे उतरे; और इसके साथ ही "हर हर महादेव! जय भवानी माताकी!" इत्यादि शब्दोंको सबने

मिलकर घोषणा की। जो लोग शेष रह गये, उन्होंने सर्जेख़ांको कोटपरसे ढकेलनेका विचार शुरू किया। सर्जेख़ां पहलेहीसे जानता था कि, अब मेरा कुशल नहीं है। उसने सोचा कि, मेरे हाथका शिकार इन पहाड़ी चूहोंने एक विचित्र तरहसे उड़ा लिया; अब ये मुझे क्या जीता छोड़ेंगे? अवश्य ही यह आशा अब उसे नहीं रही थी; परन्तु जीवनकी आशा भी एक बड़ी ज़बरदस्त आशा होती है। जबतक शरीरमें प्राण मौजूद हैं, तबतक आशा किसी प्रकार भी नहीं जाती। "जबतक स्वासा, तबतक आसा" के न्यायसे सर्जेख़ांने भी सोचा कि, शायद मेरे घुड़की-धमकी दिखलानेसे—अथवा कमसे कम हाथपैर जोड़कर चिरियां-बिनती करनेसे ही—ये मुझे छोड़ दें! अस्तु।

उन लोगोंने ज्यों ही देखा कि, बाबाजी अब नीचे बहुत दूर-तक निकल गये, तब उन्होंने सर्जेख़ांको उसकी जगहसे उठाया; और एकदम यह कहकर कि, "तू ब्राह्मण साधुको सता रहा था, अब तुझको नीचे डालते हैं, छोड़ते नहीं।" उसको बिलकुल कोटके किनारेपर लेगये। परन्तु इतनेमें वह बहुत लाचारी दिखलाकर चिरियां-बिनती करने लगा, तब उन लोगों-मेंसे एक तेजस्वी तरुण पुरुष आगे आया; और एकदम उन लोगोंसे बोला, "गाफ़िल आदमीको पकड़कर उसका वध करना हिन्दुओंका व्रत नहीं है। जा, तुझको जीवनदान दिया जाता है। लेकिन अगर फिर कहीं, लड़ाईमें, इनमेंसे किसीकी तलवारके सामने तू आगया, तो जीता नहीं बचेगा, यह अच्छी

तरह समझ ले!" उस पुरुषके मुखसे इन शब्दोंके निकलते ही वे लोग, जो सर्जेखांको कोटके किनारेपर ले गये थे, उसे पीछे हटा लाये। इसके बाद उसके हाथ-पैर उन्होंने उसी ज़ंज़ीरसे जकड़ दिये, जिससे बाबाजीके जकड़े हुए थे। इसके बाद फिर वे सब एक बार "हर हर महादेव! भवानी माताकी जय!" का घोष करते हुए, जिस मार्गसे आये थे, उसी मार्गसे चले गये।

उन्तीसवां परिच्छेद।

इधर क्या और उधर क्या?

श्रीधर स्वामीको जबकि वे लोग इस प्रकार छुड़ा रहे थे, उधर घुड़सालकी ओर एक और ही कोलाहल च रहा था; और उधर जितना कोलाहल मच रहा था, उतनी ही इधरके हमारे आगन्तुक लोगोंको और भी सुविधा होरही थी। वे अपना कार्य बिलकुल निर्विघ्न रूपसे पूरा कर लेगये। उस क़िलेपरसे नीचे ढकेलकर किसी साधुको बध किया जावे, यह क़िलेके एक व्यक्तिको भी अच्छा नहीं लग रहा था; परन्तु सत्ताके आगे विवेकका क्या काम? अथवा यों कहिये कि, कोई भी सद्गुण सत्ताके सामने नहीं चलता; और यही बात आख़िरमें सच निकली। प्रत्येक अपने मन ही मन डरता रहा। बादशाहने वास्तवमें शिवदेवरावको ही मुख्यतः इधर भेजा था कि, तुम

जाकर यह देखो कि, "राजा शहाजीकी नष्ट सन्तान" ने उधर क्या गोलमाल मचा रखा है; और सर्जे ख़ांको उसने सिर्फ़ इसी एक वाह्य उद्देश्यसे भेजा था कि, मराठे सरदारके साथ साथ एक मुसलमान भाई भी रहना चाहिए। शिवदेवरावको वास्तवमें मुरार जगदेवरावका बड़ा भारी सहारा था; क्योंकि मुरार साहब ही उस समय अधिकांशमें बीजापुरके प्रति-बादशाह अर्थात् राज्यके कर्त्ता-धर्त्ता थे। परन्तु अपनी जातिकी बात ही भिन्न होती है; और सोई हुआ। सर्जेख़ां शिवदेवरावका मातहत बनाकर भेजा गया था, पर बन गया मुखिया! वह शिवदेवरावकी बात ही न पूछने लगा; और जो मनमें आया, वही करने लगा। इधर शिवदेवरावको यह साहस न हुआ कि, फटकारकर उससे कह देते कि,"जो कुछ हमारे मनमें आयगा,सो करेंगे, तुम चुपके देखो।" क्योंकि वे डरते थे कि, कहीं सर्जे ख़ां जाकर हमारी शिकायत न कर दे, जो बादशाह व्यर्थके लिये हमपर नाराज़ हो जाय। यदि कहीं जाकर उसने हमारी शिकायत कर दी, तो हम क्या कर लेंगे? बस, बात यही थी। वास्तवमें सर्जे ख़ां जबसे श्रीधर स्वामीको उस मन्दिरसे क़ैद कर लाया, तबसे; और जबतक वह उन्हें कोटपरसे ढकेलकर मार डालनेको तैयार हुआ, तबतक बराबर उसने किसी बातमें भी शिवदेवरावकी एक भी नहीं चलने दी; और फिर उसमें भी दिल्लगी यह कि, क़िलेदार साहब उसके सामने हाथ-पैर जोड़ते रहे,उसपर अपना अधिकार भी जताया;और कहा कि,बाबाजीको

छोड़ दो, सब प्रकारसे उन्होंने सर्जे ख़ांको समझाया-बुझाया; फिर भी उसने नहीं सुनी। तब उस बेचारे (क़िलेदार) ने यह सोचकर अपने मनको समझाया कि, "अब क्या किया जाय, बाबाजीको छुड़ानेके लिये और अधिक ज़ोर यदि हम देते हैं, तो दरबारमें मानो यह संशय सबके मनमें और पैदा करनेका मौका देते हैं कि, हम इन बाग़ी लोगोंकी प्रत्यक्षरूपसे सहायता कर रहे हैं। इसके सिवाय, हमने पहलेहीसे कुछ बातोंमें इसके मनके अनुसार कार्य नहीं किया है, सो यह और नाराज़ होगया है। इसलिये अब देखना चाहिये कि, उसका क्या परिणाम होता है; और क्या नहीं!"

अस्तु। इस प्रकारकी सारी परिस्थिति उस समय उपस्थित थी। इसके सिवाय यह विचार भी उस समय सबके मनको दुःख देरहा था कि, हमारे क़िलेपरसे आज प्रत्यक्षतया एक ब्राह्मण साधुकी व्यर्थमें हत्या होरही है; और उसमें भी दूसरी ओर भयंकर आग लग रही थी। यही कारण था कि, सर्जे ख़ांके ज़ोर ज़ोरसे चिल्लाकर बुलानेपर भी उपर्युक्त तमाशबीनोंमेंसे किसीने उसकी ओर ध्यान नहीं दिया; और सब आगकी ओर ही दौड़ पड़े। आगकी ओर दौड़नेके बाद पीछे इधर क्या हुआ, सो पाठकोंको मालूम ही है। सर्जे ख़ां ज़ंज़ीरसे जकड़ दिया गया; और उसके साथी सिपाहियोंके मुँहमें गूंजा ठूंसकर उनके भी हाथ-पैर बांध दिये गये। ऐसी दशामें वे सभी छटपटाते हुए पड़े थे। सर्जे ख़ांका वह शक्तिहीन क्रोध तो

उस समय देखनेहीयोग्य था। पहलेपहल, जब वैतालवृन्दकी वे मशालें उसको एकाएक दिखाई दीं; और फिर जब वे बिलकुल उसके पास ही पास आने लगीं, तब तो पहलेपहल बहुत देरतक उसे यही नहीं मालूम हुआ कि यह बला क्या है? उसके विषयमें कुछ विचार उसके मनमें आनेहीवाला था कि, इतनेमें उधर आग लगनेका गोलमाल मच उठा; और उसी ओर उसका ध्यान चला गया। इसके बाद फिर वह उधरसे अपने सामनेके कार्यकी ओर ध्यान देता, किन्तु बैतालोंकी मशालें बिलकुल नज़दीक ही आगईं; और उसके सिपाहियोंको वहीं जमीनमें लुढ़काकर स्वयं उसको भी चारों-ओरसे घेर लिया। यह सब घटना इतनी शीघ्रतापूर्वक हुई कि, उस बेचारेको यह सोचनेतकका अवसर नहीं मिला कि, यह हुआ क्या—और कैसे? अस्तु। फिर—हमारे चक्करमें मत आना—इस प्रकारकी धमकी देकर वे लोग बातकी बातमें वहांसे ग़ायब होगये; और तब कहीं उस बेचारेको, अपंग-अवस्थामें पड़े हुए, उन बातोंके विषयमें विचार करनेका अवसर मिला कि, जो उस समय हुई थीं। इधर क़िलेपरके लोगोंने भी, ऐसा जान पड़ा कि, शीघ्रतापूर्वक उसकी ओर आनेकी विशेष आतुरता नहीं दिखलाई। बात यह थी कि, उनका सारा ध्यान उस भयंकर रूपसे भभकनेवाली आगकी ओर लगा था। आग लगी कैसे? और वह एकदम नीचेकी बस्तीमें और ऊपर क़िलेपर—दोनों जगह एक ही समयमें कैसे भड़क

उठी? इस बातका किसीको पता नहीं चला। आग भड़की भी, सो कुछ एक जगह नहीं भड़की। घुड़सालके आसपास एकदम चारों ओरसे भड़की। वास्तवमें यह घटना हुई कैसे? बस, इसी बातपर सिपाही लोग अचम्भा करते रहे। अभी लड़ती-झगड़ती हुई जो घसियारिन ऊपर आई थी, उसीका तो यह काम नहीं है? यह विचार सिर्फ एक ही व्यक्तिके मनमें आया; और बस, तुरन्त ही वह उसका पता लगाने लगा। पर उस गड़बड़में उसका कहां पता लगता है? इसके सिवाय, उस भयंकर गोलमालमें ऐसे क्षुद्र व्यक्तिका अधिक पता भी कौन लगाता है? जो हो, सच्चा कारण कोई बतला नहीं सका। लोगोंने अपनी ओरसे खूब परिश्रम किया; और ज्यों-त्यों करके आग बुझानेका प्रयत्न किया, पर उसमें सफलता प्राप्त करनेमें उन्हें बहुतसा वक्त लगा। कुछ जानवर जल गये; पर उस समयकी उस हवासे जितना नुकसान होना चाहिये था, उतना नहीं हुआ। परमात्माने कृपा की। परन्तु उस आगके बुझाने इत्यादिमें लगभग पहर-डेढ़पहर लग गया। अब लोगोंको याद आई कि, उधर बाबाजी कोटपरसे गिराये जानेवाले थे। परन्तु साथ ही उन्होंने सोचा कि, सर्जेखां अबतक कभीका अपना वह घोर कर्म करके अपने बँगलेमें आगया होगा। इधर क़िलेदार साहब आगकी उस भीषणताके समयमें भी बाहर इधर-उधर कहीं दिखाई नहीं दिये। उस बुड्ढेने ज्यों ही देखा कि, बाबाजीको छुड़ानेका उसका प्रयत्न व्यर्थ गया, त्यों ही

वह अत्यन्त दुःखी होकर वहांसे चल दिया। वह अपने महल-में जाकर अपने पलङ्गपर पड़ रहा। उसका चित्त बहुत ही अशान्त होगया था। इसलिये वह बराबर तड़फड़ाता हुआ; और लम्बी सांसें भरता हुआ पड़ा रहा। क़िलेके विषयमें उत्तरदायित्व उसीपर था; परन्तु फिर भी, ऐसा जान पड़ा कि, उस भयंकर आगको उसने कोई भी महत्व नहीं दिया। हाँ, उसने अपने आदमी कुशावासे उसके विषयमें कहकर आग बुझाने-का सारा प्रबन्ध उसीके सिपुर्द कर दिया था; और आप स्वयं, जैसाकि अभी बतलाया, अपने निजी कमरेमें जाकर अपने पलङ्गपर पड़ रहा था। वह वहां पड़ा था सही; किन्तु उसका सारा चित्त उसी कोटकी ओर था, जहां वे दुष्ट बाबाजीको ढकेलनेके लिए लेगये थे। कहीं कुछ खटका होता, अथवा कोई आवाज़ होती; तो बस, उसे यही ख़याल हो आता कि, अब बाबाजी नीचे गिराये गये, उन्हींकी यह आवाज़ है—वही नीचे गिरते हुए चिल्ला रहे हैं, उन्हींकी यह मृत्यु-समयकी चिल्लाहट है, जिसको मैं सुन रहा हूं। बस, जहां ऐसा ख़याल किलेदार साहबको होआता, वहीं वे बिलकुल भौंचक्के से होजाते थे। उनकी यही दशा थोड़ी देरतक रही, परन्तु फिर एकबार उनसे रहा ही नहीं गया; और वे उठकर एकदम उसी ओर चल दिये। जिस समय वे अपने कमरेसे उधरकी ओर चले, उस समय आगका उपद्रव कुछ कम नहीं हुआ था। उनके मनमें शायद उस समय यह भी आया कि, अब यदि हम

जायँगे भी, तो कोई लाभ नहीं होगा; परन्तु फिर तुरन्त ही शायद उन्होंने यह भी सोचा कि, चलो एक दफ़ा प्रयत्न करके और देखें, शायद अभी बाबाजीको 'कड़ेलोट' न किया हो। बस, यही सोचकर उन्होंने अपनी तलवार उठाई। तुरन्त ही अपनी कमर बांधी। उस अवस्थामें वह वृद्ध अत्यन्त क्रूर दिखाई पड़ने लगा। ऐसा जान पड़ा कि, मानो उसके बुड्ढेपनने इस समय उसको बिलकुल ही छोड़ दिया हो, उसके शरीरमें मानो अब युवावस्थाका जोश आगया हो। आगे-पीछे वह कुछ भी न देखते हुए, जल्दी जल्दी क़दम बढ़ाते हुए, उसी कोटकी ओर चला। वह बार बार अपनी तलवारकी मूठ मज़बूतीसे पकड़ता; और दूसरा हाथ म्यानको पकड़नेके लिए आगे बढ़ाता। इससे यह स्पष्ट मालूम होता था कि, उसके मनमें रह रहकर शायद यह विचार भी आरहा था कि, "मौका आजायगा, तो अब तलवारके उपयोगसे भी अपना काम निकालेंगे।" विचार कोई भी आरहे हों—उन्हीं विचारोंके जोशमें वह उस समय उस कड़ेलोट करनेकी जगहकी ओर जारहा था! बेचारा क़दम क़दमपर यह सोचते हुए ठिठक जाता कि, किसीकी चिल्लाहट तो सुनाई नहीं देरही है? अब किसीके रोनेकी आवाज़ तो नहीं आरही है? बीच बीचमें, हमारे हमेशाके पुकारनेके नामको लेकर, कोई करुण स्वरसे पुकार तो नहीं रहा है? बस, इसी प्रकारकी बातें मनमें ला लाकर वह बीच बीचमें ठिठकता जाता था। उसकी उस समयकी हालतसे यह भी मालूम हुआ कि, उसको इस

बातकी बड़ी उत्कंठा थी कि, उसको उस हालतमें कोई देखने न पावे। ज्यों ज्यों वह बधस्थलकी ओर बढ़ता गया, त्यों त्यों और भी उत्सुकताके साथ आहट लेने लगा; पर कुछ सुनाई नहीं दिया। तब—"होगया, जान पड़ता है, बेईमानोंने ढकेल दिया! हाय, हाय······जिस तरह मैं······उसी जगहसे मेरे······मेरे······उसके भा······देखते······उसका कड़ लोट हो; और मैं कुछ न कर सकूं! अरे खूसट, तेरे इस सारे बुढ़ापे-को आग नहीं लग गई?" —इस प्रकारसे कुछ गुनगुनाता और फिर आगे चलता। उधर आगकी ओर इतना कोलाहल मच रहा था; पर उसका ध्यान उसकी ओर बिलकुल नहीं था। सारा तनमन उसका उसी बधस्थलकी ओर था। अस्तु। इस प्रकार कुछ देर बाद वह उस कोटके बिलकुल पास पहुँच गया, तो क्या देखता है कि, सर्जेख़ां पड़ा हुआ छटपटा रहा है, उसके हाथ-पैर ज़ंज़ीरसे बिलकुल जकड़े हुए हैं, जिनको क्रोधमें आकर वह पटक रहा है; और "या अल्ला! बिस्मिल्ला!" करके ज़ोर ज़ोरसे बिलख रहा है! कहां तो वह दूसरी आवाज़ोंके सुननेकी अपेक्षा करता हुआ आरहा था; पर यहां उलटे सर्जेख़ांका बिलखनामात्र उसके कानोंमें पड़ा। "यह क्या गोलमाल हुआ?" सोचकर क़िलेदार साहब स्वाभाविक ही थोड़ी देरके लिये वहीं ठिठक गये। सर्जेख़ांकी आवाज़ तो उन्होंने पहचानी; पर यह उनकी समझमें नहीं आया कि, सर्जेख़ांके इस प्रकार बिलखनेका कारण क्या है? और यह बात क्या

हुई ? जो हो, वे अपनी तलवार बढ़ाकर और भी आगे चले। रात उजेली न होनेके कारण उन्हें अच्छी तरह कुछ दिखाई नहीं देता था—फिर उनकी दृष्टि भी बुढ़ापेके कारण कुछ मन्द थी, इसलिए जो कुछ थोड़ा बहुत दिखता भी था, उससे कुछ बहुत लाभ नहीं होता था। बहुत देर जब इधर-उधर घूमकर उन्होंने देखा, तब उन्हें इतना स्पष्ट दिखाई दिया कि, सर्जेख़ांके मनके अनुसार होना तो एक ओर रहा, उलटे उसीको किसीने ज़ंज़ीरोंसे जकड़कर डाल दिया है। क़िलेदारको यह कैसे मालूम हुआ कि, सर्जेख़ांके मनके अनुसार कार्य नहीं हुआ ? स्वयं सर्जेख़ांके उद्गार ही उपर्युक्त बातको प्रकट कर रहे थे; क्योंकि उस समय वह यही बड़बड़ा रहा था कि, "अरे दुश्मन ! इस समय तो तुझको छुड़ा लेगये, पर अब सर्जेख़ांसे मुक़ाबिला है !" "तुझको इस समय छुड़ा लेगये।" इन शब्दोंके सुनते ही क़िलेदार साहबको जो आनन्द हुआ,उसका वर्णन नहीं किया जासकता। उनका चेहरा एकदम प्रफुल्लित होउठा। "अच्छा ! तो उसे वे छुड़ा लेगये ? वह छूट गया !" पहलेपहल तो उन्हें यह सच भी नहीं जान पड़ा। परन्तु इस बात की सत्यताका प्रत्यक्ष प्रमाण उनके सामने ही मौजूद था। जिन ज़ंज़ीरोंसे बाबाजी जकड़े हुए थे, उन्हीं ज़ंज़ीरोंसे बँधा हुआ सर्जेख़ां तड़फड़ा रहा है; और उसके साथके सिपाही भी हाथों-पैरोंसे बंधे हुए पड़े हैं; और उनके मुँहमें घासके गूंजे ठूँसे हुए हैं ! इससे अधिक और प्रत्यक्ष प्रमाण क्या चाहिए ? वह

सारी दशा जब पूर्ण रूपसे क़िलेदारके ध्यानमें आगई, तब उनके मनमें यह प्रश्न उपस्थित हुआ कि, अब आगे क्या करना चाहिए? पहला विचार अवश्य ही उनके मनमें यह आया कि, जबतक और कोई आदमी आकर देख न लें, तबतक इस बदमाशको ऐसा ही पड़ा हुआ, तड़फड़ाते हुए, लुढ़कने क्यों न दें? और हम यहांसे चले जावें! किन्तु वृद्धावस्थामें इस प्रकारके उपद्रवपूर्ण और निर्दययुक्त विचार बहुत थोड़ी देर मनमें टिकते हैं। वही हाल क़िलेदारका भी इस समय हुआ। उन्होंने सोचा कि, जो भय था, सो तो निकल गया, अब हमें अपने कर्तव्यपर ही आरूढ़ होना चाहिए। यह विचार उनके मनमें आया; और इसीकी विजय भी हुई। ख़ानके पास जाकर उन्होंने पूछा, "यह क्या हुआ? यह कौनसी विचित्र घटना हुई?" स्वाभाविक ही ख़ानको इन प्रश्नोंसे, मृत्युसे भी ज़्यादा दुःख हुआ। उसने दाँतोंसे होंठ चबाते हुए अपना वृथा त्वेष भी दिखलाया। उस समय उसके मुखसे जो शब्द निकले, वे ये थेः—"तुम सभी हरामख़ोर हो! क्या तुम समझते हो कि, मैं कुछ जानता नहीं? जल्दी हमारे हाथपैर छुड़वाओ, मैं सब बतलाता हूं! इस हरामख़ोरीका भी कुछ ठिकाना है! नमकहराम! नमकहराम! हमारा ही नमक खाकर हमारी ही जान लेना चाहते हो? इन सब बलवाइयोंसे तुम मिले हो! सब लोग उनमें शामिल हैं! क्या मैं जानता नहीं? पहलेसे उनको बुलाकर यहां बैठा किसने रखा? आगका निमित्त किसने किया? ऐन मौकेपर

यहांसे भग कैसे गये ?......" इस प्रकार बराबर उसकी बक-झक जारी रही। वह भलीभांति जानता था कि, हम इस दशामें भी चाहे जितनी हृदयबेधक बातें इनको कह लेंगे, फिर भी प्रत्यक्षरूपसे हमारे साथ कोई अत्याचार करनेकी इनमें शक्ति नहीं है; और यदि शक्ति भी हो, तो इनको उसका साहस नहीं होसकता। क़िलेदार साहब विशेषतः अपने इसी आनन्दमें थे कि, जो कुछ वे चाहते थे, सो अचानक आप ही आप होचुका था। इसलिए उन्होंने सर्जेख़ांकी उन बातोंकी ओर ज़रा भी ध्यान नहीं दिया; और ज़ोर ज़ोरसे दूसरे आदमियोंको पुकारकर, किसी न किसी तरह, एक बार उसको उस बन्धनसे मुक्त किया। बन्धन-मुक्त होते ही सर्जेख़ांका वह क्रोध और भी भयंकर रूपसे भड़का, तथा वह और भी तेज़ीके साथ बक-झक करने लगा। उस समय उसको उचित था कि, वह इस बातकी पहले जांच करता कि, आग कैसे लगी—सो एक ओर रहा, पहले हनुमानजीका मन्दिर ही गिरवा देनेकी बात उसने निकाली। शिवदेवराव और क़िलेदार, दोनों ही उसका विरोध करने लगे। फिर क्या कहना है ? वह और भी अधिक बमका ! परन्तु कर क्या सकता था ? हनुमानजीका वह मन्दिर एक अत्यन्त प्राचीन मन्दिर था—कोई भी समझदार हिन्दू, जिसमें कुछ भी हिन्दुत्वका अभिमान होगा, उस मन्दिरको गिरानेका अनुमोदन नहीं कर सकता था। सर्जेख़ां केवल अपनी इच्छासे उसे गिरवा सकता था; पर उसे यह

अच्छी तरह मालूम था कि, इस वातमें हमारी एक भी नहीं चल सकती। मन्दिरकी वात आपड़नेपर शिवदेवराव और क़िलेदार एक होकर हमको अवश्य ही नीचा दिखावेंगे; और यह वात हमारे लिए ठीक नहीं। सर्जेख़ां एक वड़ा होशियार और दूरदर्शी राजनीतिज्ञ था। इसलिए सव वातोंपर ख़याल दौड़ाकर अन्तमें उसने यह विचार किया कि, पहले यह जो घटना हुई है, उसीको, और नमक-मिर्च मिलाकर, हुज़ूरके सामने पेश करना चाहिए। इसके वाद फिर एक सैन्यदल लेकर हम इस प्रान्तमें आवें; और इन सवकी ख़ूव ख़वर लें। यह सोचकर वह शिवदेवरावको लेकर क़िलेसे चल दिया। इस पन्द्रह दिनमें ही हम इनको नीचा दिखावेंगे, ऐसी आशा करके सर्जेख़ांने वहांसे कूच किया। अस्तु। हमको सर्जेख़ां, क़िलेदार; और क़िलेको भी वहीं छोड़कर वावाजीको छुड़ा लानेवाले लोगोंकी तरफ आना चाहिए; और देखना चाहिए कि, उनका क्या हाल हुआ!

* * * * *

वावाजीको जो लोग छुड़ा लाये थे, वे वड़े आनन्दसे उछलते-कूदते हुए, क़िलेके उस विकट पश्चात्-मार्गसे, एकदम निकल गये। जो दो आदमी वावाजीको अपने कंधोंपर उठा लाये थे, वे वातकी वातमें क़िलेके नीचे आपहुंचे; और जवतक अन्य लोग भी न आपहुंचें, वहीं कुछ विश्राम लेनेको ठहर गये। जैसाकि पिछले परिच्छेदमें वतलाया, वाक़ी लोग भी, सर्जे-

ख़ांको उस प्रकार दुर्दशा करके, बहुत जल्द वहाँ पहुंच गये। इस तरह जब सब लोग नीचे एक जगह जमा होगये, तब उन सबकी, ओर उस तेजस्वी और तरुण वीर, नायकने, एक बार देखकर, सिर्फ़ इतना ही कहा कि, "शाबाश!" इसके बाद उसने तीन चुने हुए लोगोंकी ओर उँगली दिखाकर इशारा किया कि, ये लोग तो मेरे साथ आवें; और बाक़ी यहीं-से, इसी क्षण, ग़ायब होजावें; और फिर परसोंके दिन रातको, हमेशाकी तरह, अपने सुरा-गाँवके जङ्गलमें जमा हों। उस युवक वीरके मुखसे "शाबाश!" ये अक्षर ज्यों ही बाहर निकले, त्यों ही आसपास जमा हुए उन लँगोटिये जङ्गली लोगोंके चेहरे अत्यन्त प्रफुल्लित होगये! हमारे ख़यालसे, उस वीरने उनकी प्रशंसामें चाहे एक लम्बा चौड़ा व्याख्यान भी दे दिया होता, तो भी उनके चेहरेपर वह प्रफुल्लता दिखाई न पड़ती, जो केवल एक शब्दसे दिखाई पड़ गई! उसके एक शब्दसे उनको जितना आनन्द हुआ, उतना हज़ार शब्दोंसे भी हुआ होता, अथवा नहीं, इसमें शंका है। अस्तु। ज्यों ही उसने उन लोगोंको वहांसे चले जानेका इशारा किया, त्यों ही, एक-दो क्षणके अन्दर बाबाजीको लेआनेवाले दो आदमी, स्वयं बाबाजी, वह तेजस्वी तरुण पुरुष; और जिनको रह जानेके लिए उसने कहा था, वे तीन आदमी बस, इनको छोड़कर और एक भी वहां नहीं रह गया। इन सात आदमियोंके अतिरिक्त और जितने भी आदमी उस समय वहां मौजूद थे, सबके सब, बातकी बातमें, इधर-

उधर चले गये। वे लोग जब जहांके तहां चले गये, तब उस तेजस्वी नवयुवकने स्वामीजीकी ओर देखा; और उनके चरणों-पर मस्तक रखकर प्रार्थना की:—स्वामीजीके लिए घोड़ा तैयार है। घोड़ेपर बैठनेकी यदि शक्ति न हो, तो मियाना भी तैयार है। जैसी मर्ज़ी हो, वैसा किया जाय। यहांसे अब जल्दी चलना चाहिए। हम सभी यदि घोड़ोंपर ही चलें, तो नियत स्थानपर पहुँचनेमें शीघ्रता होगी;और अगला विचार करनेमें भी सुभीता होगा।" स्वामीजीने भी तुरन्त ही कहा, "कोई हानि नहीं। मुझे मियानेकी आवश्यकता नहीं, बातें बहुतसी करनी हैं, इसलिए जल्दी ही चलना चाहिए।" यह कहकर उन्होंने आगे क़दम बढ़ाया। साथके लोगोंको बड़ा आनन्द हुआ। फिर आपसमें कुछ भी न बोलते हुए सब लोग वहांसे चल दिये। लगभग पाव मीलके अन्तरपर एक और घनी झाड़ीमें पांच घोड़े तैयार थे। लोग उनपर सवार हुए; और दो आदमी, जो स्वामीजीको कंधेपर उठा लाये थे,उनसे भी कहा गया कि, "तुम भी अब जाओ, परसों रातको उसी जगहपर आकर मिलना।" यह कहकर सबने घोड़ोंको एंड़ मारी। घोड़े भी क्या थे—वायुसे प्रतिस्पर्द्धा करनेवाले थे। लगभग आधे घंटेके अन्दर ही यमाजीकी झोपड़ीके पास उस गुफापर सब लोग आगये। इस गुफाके द्वार :इत्यादिका परिचय हमारे पाठकोंको पहलेही होचुका है। घोड़ोंके खड़े होते ही लोग नीचे उतर पड़े।हां,एक आदमी नहीं उतरा; और वह घोड़ेपर बैठा हुआ ही आसपास

इधर-उधर घूमकर देखने लगा कि, कहीं कोई नीचे-ऊपर छिप-कर तो नहीं बैठा है। और ज्यों ही उसको यह विश्वास होगया कि, कोई नहीं है, त्यों ही उसने लोगोंको इशारा किया। लोग तुरन्त ही एकके पीछे एक उस गुफाके द्वारसे भीतर पैठे; और जो मनुष्य घोड़े पर बैठा हुआ आसपास निरीक्षण कर रहा था, वह वैसा ही खड़ा रहा। लोग भीतर पैठकर बराबर उस गुफामें लगभग दो-तीन मिनटतक चलते रहे। इसके बाद पृथ्वीके गर्भकी ओर, नीचे, कुछ सीढ़ियां बनी हुई थीं, उनको उतरकर लोग और भी नीचे चलने लगे। भीतर बड़ा घना अन्धकार था। पर उन चारों आदमियोंमेंसे चलते समय न किसीने टटोला; और न कोई टकराया। वे इस प्रकार चलते गये, जैसे रोज़मर्राके आने-जानेवाले मार्गपर जारहे हों! दो आदमी आगे थे; और वह तरुण पुरुष, तथा बाबाजी पीछे पीछे चल रहे थे। बहुत देरतक उसी अन्धकारमय मार्गपर वे लोग चलते गये। ऐसा जान पड़ता था कि, उनमेंसे प्रत्येक आदमी, अपने अपने मनमें, कोई न कोई बहुत ही महत्वपूर्ण विचार कर रहा है; क्योंकि चार आदमी जारहे थे; और उनमेंसे किसीके मुँहसे भी एक शब्द न निकला। सब मानों इसी विचारमें क़दमपर क़दम रखते हुए चले जारहे थे कि, हमको किसीसे मतलब नहीं— हमारा मार्ग अच्छा, हम अच्छे! इस प्रकार जब वे लोग लग-भग आधा घण्टा, या पौन घण्टा, चल चुके, तब वे एक ऐसे मोड़पर आये कि, जो बहुत घूम-फिरकर गया था। परन्तु अन्ध-

कार अभी वैसा ही था। चलते चलते अन्तमें एक जगह सबसे आगेवाला पुरुष ठिठक गया। ठिठकनेका कारण यही कि, आगे किसी तरफ भी जानेका मार्ग न था। सामने एक दीवालसी खड़ी थी। वहां टटोलकर उसने एक ताला, जो वहां लगा था, खोला, जिससे एकदम दरवाज़ा खुला, जिसमें वह पैठा; और उसके पीछे पीछे अन्य लोग भी गये। इसके बाद फिर लगभग पांच मिनटतक इधर-उधर मुड़कर चलनेके बाद वे लोग फिर एक वैसे ही दरवाजेके पास आये। उसी आगेवाले मनुष्यने उसको भी खोला। उसके खुलते ही वहांसे कुछ दीपकका प्रकाश दिखाई देने लगा। जिसे देखते ही उन लोगोंने तालियां बजाई—जैसे उनको अन्तमें वहांतक आपहुँचनेमें बहुत आनन्दसा हुआ हो! हमारे ये लोग अब जिस जगह भीतर आपहुंचे, वह जगह पाठकोंको मालूम है। वह जगह और कोई नहीं—बाबाजीकी हनुमानमूर्तिके नीचेका भुँहारा है। इसी भुँहारेमें भवानी माताका वह मन्दिर था, जिसका हम पीछे एक बार वर्णन कर चुके हैं। उसी मन्दिरके द्वारपर अब ये लोग पहुँचे। पाठकोंको मालूम है कि, इसी स्थानपर बैठकर सदैव ये लोग अपने सलाह-मशविरे और सारी कारस्थानियां किया करते थे। मन्दिरमें प्रवेश करते ही बाबाजीने और उस तरुण पुरुषने "भवानी माताकी जय" कहकर एकदम उनके आगे साष्टांग नमस्कार किया। इसके बाद बाबाजीने इस आशयके वचन कहे—"भवानी माता! केवल तुम्हारी कृपासे

ही आज हम फिर तुम्हारे दर्शनको आये। माता, तुम्हारी इच्छा प्रबल है! तुम्हीं यहांतक लाई हो, तभी यह सब कुछ हुआ!" फिर अन्य लोगोंने भी माताको नमस्कार किया; और स्वामी महाराजको बीचोंबीच देवीजीके बिलकुल पास बैठाकर इस प्रकार विचार प्रारम्भ किया:—

पहले तो बाबाजीने अपनी सारी हकीकत बताई, जिसे सुनते हुए उन सबको इतना जोश चढ़ा कि, उनमेंसे प्रत्येक आदमी क्रोधके मारे बिलकुल सुर्ख़ सा दिखाई देने लगा। अपना सारा वृत्तान्त बतलानेके बाद बाबाजी अन्तमें बोले—"मुझे दूसरे दिन कोई आशा नहीं थी कि, तुम इस प्रकार मुझे यहांसे छुड़ा लाओगे। पहले दिन यमाजी जोगिनका भेष धरकर क़िलेपर गया। वहां मेरी उसकी चार आँखे हुईं। कुछ आशाका अंकुर उदय हुआ। परन्तु दूसरे दिन जब उन दुष्टोंने पहलेकी जगहसे हटाकर, हाथों-पैरोंमें हथकड़ियां-बेड़ियां डालकर, तहख़ानेकी कालकोठरीमें बांध दिया, तब स्वाभाविक ही सारी आशापर पानी फिर गया। मुझे यह भी शंका थी कि, तुम लोगोंको हमारी इस परिवर्तित दशाका समाचार भी मिला होगा या नहीं। परन्तु हां, उस दशामें भी कभी कभी यह आशा-झलक दिखा ही जाती थी कि, हमारा शिवबा आकाश-पाताल एक किये बिना न रहेगा; और सोई हुआ! शिवबा! सचमुच तू धन्य है! भवानी माताकी जो तुझपर कृपा है, सो यों ही नहीं। सचमुच ही तेरे हाथसे, सम्पूर्ण मराठा-मंडल एकत्र होकर, एक महाराज्यकी स्थापना

होगी—इसमें अणुमात्र भी शंका नहीं।" इतना कहकर स्वामीजीने उस तेजस्वी तरुण पुरुषकी पीठपर हाथ मारकर "शाबाश! शाबाश!" के शब्द कहे। इसके बाद कुछ देर वे चुप रहे। इतनेमें तानाजी स्वामीजीकी ओर देखकर एकदम कहते हैं, "स्वामी महाराज, हम लोग अभीसे शिववाको "राजा शिववा" कहते हैं, सो यों ही नहीं। आजके मौक़े पर इन्होंने यदि यह युक्ति निकाली न होती, तो बड़ा विकट अवसर आ उपस्थित होता, इसमें तिलमात्र भी सन्देह नहीं। इन्होंने जो युक्ति निकाली, उस समय हम सबको इतनी असम्भव जान पड़ी कि, कुछ पूछिये मत। आपको जब वे दुष्ट लोग पकड़ लेगये, तब उस समाचारको पाकर येसाजीने ऐसी प्रतिज्ञा की कि, तीन दिनके अन्दर ही स्वामी महाराजको छुड़ा लावेंगे। और पहले दिन जब यमाजीने आकर पिछले दिनका आपका सारा समाचार दिया, तब उनको यह आशा भी हुई कि, हम अपनी प्रतिज्ञाके अनुसार अवश्य काम कर ले जायँगे। पर जब दूसरे दिनका समाचार सुना, तब उनके हाथ-पैर कुछ ढीले पड़ गये। शिववाने बातकी-बातमें ताड़ लिया। परन्तु यह देखनेके लिए कि, येसाजी अब भी क्या युक्ति भिड़ाते हैं, इन्होंने एक दिन और जाने दिया, फिर तीसरे दिन, जबकि हमलोग उस जङ्गलमें बैठे थे, इन्होंने येसाजीसे कह दिया कि, अब तुम्हारी प्रतिज्ञा पूरी होती दिखाई नहीं देती। इसके बाद ये और कुछ कहनेवाले थे कि, इतनेमें यमाजी घबड़ाया हुआ आया;और आपके ऊपर जो संकट आने-

वाला था, उसका समाचार दिया। उस समय एकदम राजा साहबने हम लोगोंसे कहा कि,"अब अवकाश नहीं रहा,जैसा हम बतलावें, वैसा तुम करो।" फिर क्या था—हम चारों, घोड़ोंपर सवार होकर, दौड़ निकले। रास्तेमें राजा साहबने येसाजीसे दिल्लगीमें कहा, "येसाजी, तुम अपने कहनेके अनुसार अपनी प्रतिज्ञा पूरी करके दिखला न सके। इसलिये अब मैं जैसा तुमसे कहता हूं, वैसा भेष धरकर काम पूरा करो। यमाजी और तुम घसियारा-घसियारिनका स्वांग लो। यमाजीको तो बुड्ढा घसियारा बनाओ; और तुम अच्छे जवान दिखाई देते हो, अभी रेख भी नहीं आई है, सो तुम घसियारिन बन जाओ। अपने गुरुका, ब्राह्मणोंका, त्राण करनेके लिए, कुछ भी करना पड़े, कोई परवा नहीं। इस प्रकार भेष बनाकर, सिरपर घासके बोझ रखकर, शामके पहर क़िलेके नीचे जाओ। वहां जाकर इस बातका पहले एक झूठा ही झगड़ा उपस्थित करो कि, घासके गट्ठे क़िलेपर बेचे जाँय या नीचे बस्तीमें। फिर यमा, इस बातपर रूठकर, कि हम ऊपर नहीं जावेंगे, नीचे ही रह जावे। तुम ऊपर जानेकी ज़िद्द करके ऊपर चले जाओ। तुम नक्काल भी अच्छे हो। किसी की भी नक़ल उतारना तुमको बहुत अच्छा आता है। देखो, जोगिनकी नक़ल तुमने यमाको कैसी अच्छी सिखाई है। सो यदि तुम्हीं ऊपर जाओगे; और सो भी घसियारिनका भेष लेकर, तो तुमको स्त्री समझकर कोई विशेष रोकेगा भी नहीं, यमासे कहना कि, तू नीचेकी

बस्तीमें पटेलकी घुड़सालमें जाकर रह; और तुम सीधे ऊपर चले जाना; और जिस तरहसे होसके, क़िलेपरकी घुड़सालमें जाकर रहना। और जब चार-पांच घड़ी रात जावे, तब एकदम दोनों जने दोनों जगह आग लगा देना। इधर क़िलेके पीछेकी ओरसे मैं, तानाजी और हमारे ये नवीन साथी, कुछ चुने हुए लोगोंके साथ, शामसे ही, आधेसे अधिक पहाड़ी चढ़कर चुपके बैठ रहेंगे। और जहां तुमने आग लगाई; और उसकी पहली चमकारी हमें दिखाई दी कि, हम ऊपर जाकर सारा काम ठीक ठीक करके नीचे आ जावेंगे। बस, जैसाकि हमने यह बतलाया, इसके अनुसार यदि सब बातें ठीक ठीक होंगी, तो फिर स्वामी महाराजका छुटकारा होनेमें विलम्ब नहीं लगेगा; और यदि इसमें कुछ भी कसर पड़ गई, तो सब खेल बिगड़ जायगा!" शिवबाकी ये बातें सुनकर येसाजीने कुछ आनाकानी की। ऐसा जान पड़ा कि, घसियारिनका भेष धरना उनको प्रशस्त नहीं जान पड़ा। राजा शिवबाने तुरन्त ही इस बातको ताड़ लिया; और बोले, "येसाजी, आगा-पीछा सोचनेका यह मौक़ा नहीं है। तुमको यदि इसमें कुछ हीनता मालूम हो, तो तुम इधर क़िलेपरका काम सम्हालो—मैं यमाजीके साथ घसियारिन बनकर जाऊंगा; और वह काम कर आऊंगा।" तब येसाजीने स्वीकार कर लिया; और यमाजीको साथ लेकर अपने कामको चले गये। उनको अब यहां आजाना चाहिये, अभीतक आये नहीं, इसीका मुझे आश्चर्य है।" तानाजीने

यह विचित्र वृत्तान्त संक्षेपमें बतलाया कि, इतनेमें येसाजी उनके सामने आकर खड़े होगये। उनको देखते ही बाबाजीने "आओ आग लगाऊ!" कहकर उनकी हँसी की; और शिवबा-की अद्भुत युक्तिपर आश्चर्य प्रकट किया। इस प्रकार सम्पूर्ण कार्यवाहीके उत्तम रीतिसे पूर्ण होनेपर आनन्द मनाते और हँसते-हँसाते हुए उन सबने थोड़ासा समय व्यतीत किया। इसके बाद बाबाजी कुछ गम्भीर चेष्टा करते हुए बोले, "अच्छा, जो कुछ हुआ, सो तो अच्छा हुआ। पर अब आगेका भी विचार करना आवश्यक है। क्योंकि अगले विचारपर ही हमारी सारी इमारत अवलम्बित है। सर्जेखांको हम लोगोंने सोलह आना नीचा दिखाया, इसलिए अब वह कुछ न कुछ किये बिना न रहेगा। मन्दिरसे हमारा कोई न कोई पक्का सम्बन्ध है, इस बातका उसे पूर्ण विश्वास होगया है। दो-तीन बार उसने मेरे सामने ही मुझे यह स्पष्ट धमकी दी थी कि, तुम्हारा मन्दिर गिरा-कर उसे धूलमें मिला देंगे; और उसके नीचे जो कुछ होगा, उसे देखेंगे। अब, जबकि हम लोगोंने उसे नीचा दिखाया है, यह बात और भी प्रकट हो जाती है कि, नहीं, कुछ न कुछ हमारा सम्बन्ध उस मन्दिरसे अवश्य है। इसलिए, आज नहीं तो कल, वह अपने कहनेके अनुसार करेगा अवश्य, इसमें तिल-मात्र भी शंका नहीं। सो, अब हमको, उसके वैसा करनेके पहले ही, कहीं न कहीं कोई भारी काम कर दिखलाना चाहिए। मुग़लोंके हाथमें आजदिन कितने ही क़िले हैं। उनमेंसे दो-

चार—कमसे कम एक तो फ़िलहाल अवश्य ही—जब हमारे हाथमें आवे, तब हमारा काम चले—इसके बिना काम चल नहीं सकता। इसलिए आजकी इस बैठकमें इस बातका निश्चय अवश्य होजाना चाहिए कि, कोई न कोई एक क़िला अवश्य हम जीत लें; और फिर इस बातका भी निश्चय होजाय कि, वह क़िला कौनसा हो। इसमें सन्देह नहीं कि, यह बात कठिन अवश्य है; पर साथ ही साथ यह भी है कि, एक बार प्रयत्न करने-पर सफलता अवश्य मिलेगी। और यदि क़िला हम नहीं लेंगे, तो आगेके काममें बड़ी कठिनाई होगी…"

जबकि उपर्युक्त सम्पूर्ण भाषण होरहे थे, वह तेजस्वी पुरुष—जिसका कि हमने तानाजीके भाषणमें, कुछ समय पहले 'शिवबा' के नामसे पाठकोंको परिचय कराया है—चुपके सुन रहा था। बीचमें उसने एक अक्षर भी उच्चारण नहीं किया। ऐसा जान पड़ता था कि, उसका सारा चित्त किसी न किसी अत्यन्त महत्वके विचारमें लगा हुआ था। बाबाजीका कथन जब समाप्त होचुका, तब वे बिलकुल ध्यान लगाकर शिवबाकी ओर देखने लगे। तानाजीके मुखसे अभी हालमें ही उन्होंने जो वृत्तान्त सुना था, वह अभी उनके मनमें बना हुआ था; और उसीसे उनके मनमें उस नवयुवककी युक्ति, बुद्धि; और साहसके विषयमें अत्यन्त आदर-भाव उत्पन्न होरहा था। बस, उसी आदर-भावमें आकर बाबाजी इस समय उसकी ओर बहुत ही दत्तचित्त होकर देख रहे थे। क्योंकि उनके

चेहरेपर आदर-भाव-प्रदर्शक कुछ मन्द मुसकान दिखाई पड़ रही थी। उस समय उन्होंने यही समझा कि, अब यह कोई न कोई उत्तम युक्ति और साहसका कार्य निकालकर कोई न कोई क़िला लेनेके विचारमें निमग्न है। और फिर वे अत्यन्त आतुरताके साथ यह प्रतीक्षा करने लगे कि, देखें, अब यह किस समय क्या कहता है। इस समय प्रत्येकके मनमें वही विचार बार बार आरहे थे। और यह कहनेमें कोई अतिशयोक्ति न होगी कि, शिवबाके अन्तःचक्षुओंके सामने तो दक्षिण-महाराष्ट्रके सम्पूर्ण क़िले, एकके बाद एक, दिखाई पड़ रहे थे; और अपने अपने अच्छे गुण और लाभ, तथा बुरे गुण और हानियां उसके सामने रख रहे थे। राजा शहाजीकी जागीरके प्रान्तोंमेंसे, कौन कौन प्रान्तसे कौन कौन क़िला कितने कितने अन्तरपर है, कौन कौनसा क़िला किन किन बातोंमें हमारे लिए विशेष सुविधाजनक होगा, इत्यादि सब बातोंका पूर्णतया मनन शिवबाके मनमें उस समय होरहा था। प्रत्येक क़िलेकी उसको जानकारी भी बहुत अच्छी थी। पुरन्दरका क़िला लेनेकी उसको बहुत दिनसे इच्छा थी। इसलिए उसने सोचा कि, यह क़िला हमारे लिए सब प्रकारसे सुभीते-का और अत्यन्त मज़बूत भी है। परन्तु साथ ही साथ उसके मनमें यह भी आया कि, पुरन्दरका क़िलेदार हमारे पिताजीका बहुत पुराना साथी है, उसके साथ उनका स्नेह भी बहुत ज़बर-दस्त है। ऐसी दशामें एक मित्रका लड़का दूसरे मित्रके क़िले-

पर धावा करके उसको जीते; और फिर उसको क़ैद इत्यादि करे—यह कुछ ठीक नहीं जँचता—ऐसी बात भी मनमें न लाना चाहिए। इसके सिवाय, क़िला लेनेका प्रयत्न भी यह पहला ही होगा, सो ऐसे भारी और विकट क़िलेपर पहले ही पहल हाथ डालना, यह भी उचित दिखाई नहीं देता। वास्तवमें हमको क़िला जो इस समय लेना चाहिए, वह चाहे विशेष महत्वका न हो; पर उपयोगिताकी दृष्टिसे अच्छा होना चाहिए। इसलिए हमको ऐसा कोई क़िला सोचना चाहिए कि, जिससे हमारे काममें सहायता पूरी पूरी मिले। यह सोचकर उसने पुरन्दरके क़िलेको अपनी दृष्टिके सामनेसे हटा दिया। और एकके बाद एक, इस प्रकार अन्य अनेक क़िलोंके विषयमें मन ही मन विचार करने लगा; पर कोई बात निश्चित नहीं होसकी। इतनेमें स्वामी महाराज उसकी पीठपर हाथ मारकर कहते हैं, "क्यों शिवबा, किसी क़िलेका निश्चय नहीं हुआ? मेरे मनमें एक क़िला आता है; और उस क़िलेके मालिक भी यहीं बैठे हैं। कह नहीं सकते, उनको यह विचार कहाँतक पसन्द आवेगा।" यह कहकर बाबाजीने उस सिपाही जवानकी ओर अत्यन्त सहेतुक दृष्टिसे, मुस्कुराते हुए देखा। इसपर वह युवक सिपाही भी बाबाजी तथा शिवबा राजाकी ओर देखकर कहता है, "मैं भी यही कहनेवाला था। उस क़िलेको जीतनेका यदि विचार किया जायगा, तो बातकी बातमें काम फ़तह होजायगा। इसके सिवाय उस क़िलेपर, सब प्रकारकी सुविधाएं—जो

कुछ हमारे लिए आवश्यक हैं—सहजहीमें होसकती हैं। क़िला जीतनेमें यदि किसी भेदनीतिकी आवश्यकता होगी, तो वह भी सहजमें सिद्ध होजायगी। कुछ देर नहीं लगेगी! सूर्याजी और मैं, दोनों इस कामको बातकी बातमें कर डालेंगे, मैं उनको इधर लानेवाला भी हूं......"

उस सिपाही जवानकी बात अभी ख़तम नहीं होने पाई थी कि, इतनेमें एक मनुष्य—जो उस गुफाके बाहर घोड़ेपर सवार होकर पहरा देरहा था—भीतर आया; और तानाजीके कानमें कोई समाचार बतलाया। उसे सुनते ही तानाजीने बाबाजीके कानमें कुछ कहा; और राजा शिवबाकी आज्ञा लेकर वहांसे चले गये। इसके बाद, शीघ्रतापूर्वक वे गुफाके द्वारपर आकर देखते हैं, तो वहां एक वैरागी खड़ा हुआ है। तानाजी उसके पास गये। दोनोंमें कुछ देरतक अत्यन्त धीमी आवाज़में बातचीत होती रही। उस बातचीतको सुनकर तानाजीका चेहरा एकाएक बहुत ही चिन्ताग्रस्त हुआ; और वे वैसे ही उलटे पैरों फिर गुफामें वापस आये। तानाजी जितनी तेज़ीके साथ पहले गुफासे बाहर गये थे, उतनी तेज़ीसे उनके क़दम अबकी बार नहीं उठे। क्योंकि उस वैरागीने आकर उनको जो हाल बतलाया, वह बहुत ही खेदजनक जान पड़ता था; और साथ ही साथ क्रोधोत्पादक भी। अभी वैरागीने जो हाल बतलाया, वह भीतर जाकर "उसके सामने" क्योंकर बतलावें? बस, यही प्रश्न उनके मनमें बारम्बार आरहा था। पर धीरे धीरे वे

तो जा अवश्य ही रहे थे। फिर भी अन्तमें, कुछ देर बाद, वे पहुंचे; और भीतर जाकर बाबाजीको एक ओर बुलाया, तथा उनको वह सब समाचार उन्होंने कानमें बतलाया।

तीसरा परिच्छेद।
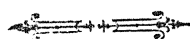
नवयुवक सरदार।

तानाजीने बाबाजीके कानमें आकर जो वृत्तान्त बतलाया, वह वृत्तान्त अवश्य ही कोई न कोई अत्यन्त विलक्षण वृत्तान्त होना चाहिए; क्योंकि उसको सुनते ही बाबाजीकी चेष्टा भी कुछ त्रस्त और कुछ खिन्नसी होगई। उन्होंने तानाजीसे एक-दो प्रश्न भी किये; और ज्यों ही उनके उत्तर तानाजीसे उनको मिले, त्यों ही उनके मस्तकमें और भी अधिक विचारकी शिकनें पड़ गईं। वे बार बार उस सिपाही जवानकी ओर देखते; और अन्दर ही अन्दर कुछ गुनगुनाते। इसके बाद फिर एक-दम वे तानाजीसे पहलेहीकी भांति धीमे स्वरसे कहते हैं:— "एक तरहसे जो बात हुई, यह हमारे लिए अनुकूल ही हुई; क्योंकि पहलेकी परिस्थितिमें हमारे कार्यमें बहुत कठिनाई उपस्थित हुई होती। परन्तु यह दूसरा हाल जो बतलाया, सो भी चिन्ताजनक अवश्य है।" इतना कहकर फिर उन्होंने, अपनी दाढ़ीपर हाथ फेरते हुए, एक बार, चिन्तायुक्त चेष्टासे, सब लोगोंकी ओर, विशेषतः उस सिपाही जवानकी ओर, देखा।

उस बेचारेको क्या मालूम कि, यह सब क्या बात है। यही नहीं, बल्कि शायद उसके मनमें यह शंकातक न आई होगी कि, ये धीरे धीरे जो बातें होरही हैं, उनसे उसका भी कोई सम्बन्ध है। येसाजी कुछ अपने ही विचारमें निमग्न थे। शिवराज भी पहलेहीकी भांति बराबर अपने विचारोंमें निमग्न दिखाई दिया। तानाजी और बाबाजी अपने इसी विचारमें थे कि, जो समाचार अभी हमारे कानोंमें पड़ा है, वह बतलाया जाय या नहीं; और यदि बतलाया जाय, तो क्योंकर और किस क़दर। अन्तमें दोनों किसी निश्चयपर पहुंचे। और उस सिपाही जवानको अपने पास बुलाकर, जो समाचार अभी आया था, धीरेसे बतलाया। उसे सुनते ही वह एकदम अत्यन्त सन्तप्त होउठा। उसका सर्वाङ्ग—विशेषतः उसका मुख, उसकी चेष्टा; और उसकी आंखें सन्तापसे इतनी आरक्त होगईं कि, बाबाजी और तानाजी, जोकि बिलकुल उसके पास ही खड़े थे, उन्होंने यही समझा कि, न जाने अब यह क्या कर डाले—इसका कुछ ठिकाना नहीं।

"मैंने समझा ही था। हज़ार बार मैंने उन्हें जतलाया था—हज़ार बार मैंने उनसे कहा था, कि चाहे भिक्षा मांगनेकी ही नौबत क्यों न आजावे, तो भी अच्छा; पर इन हरामख़ोरोंकी नौकरी करना उचित न होगा। पर उन्हें वह विचार ही पसन्द न आया। उलटे मुझीको—'तू नमकहराम है, मेरे नामको बट्टा लगानेके लिए उपजा है' कहकर गाली देने लगते थे। अब उनकी

भी आँखें खुल गईं, सो अच्छा ही हुआ। स्वामी महाराज, इस बातको सुनकर तो आनन्दित होना चाहिए, सो आप चिन्तातुर क्यों दिखाई देते हैं? घड़ीभर पहले जिस बातके लिए हम विचार कर रहे थे, उसके लिए तो अब रास्ता ही खुल गया। पहले तो इस काममें बड़ी कठिनाई थी; क्योंकि जबतक उनके शरीरमें प्राण रहते, कभी भी क़िला उन्होंने अपने हाथसे जाने न दिया होता। अवस्थामें वे अवश्य बुड्ढे हैं; पर उनका क्रोध, उनकी वीरता, उनका पराक्रम, जैसेका तैसा बना है। इस बातका अनुभव प्रायः बहुतसे लोगोंको है। जो बात एक बार उनके मुखसे निकल जाती है, वह फिर त्रिकालमें भी कोई मेट नहीं सकता। वे यदि हमारे अनुकूल होजावें, तो शिवराजके इच्छानुसार स्वराज्य संस्थापित होनेमें एक पलभरका भी विलम्ब न लगे। किन्तु—यह 'किन्तु' ही बड़ा बुरा है। किन्तु राजभक्ति उनकी नस नसमें इतनी समाई हुई है, कि हुज़ूर यदि, बीजापुर जानेपर, उनसे स्वयं अपने हाथसे ही अपनी गर्दन उड़ानेको कहें, तो भी वे उसको उड़ानेमें नहीं चूकेंगे। मान लो, मैं कल इन दुष्टोंके पंजेमें पड़ जाऊं; और वे मुझे बीजापुर लेजाकर उनके सामने खड़ा करें; और अपने हाथसे उनको मेरी गर्दन काटनेका हुक्म दिया जाय, तो वे एक हाथसे आंसू पोंछते हुए, दूसरे हाथसे मेरी भी गर्दन उड़ानेमें कसर न करेंगे। अरेरेरे! ऐसे स्वामिभक्तको इन दुष्टोंने कुछ भी न समझा; और उनका इस प्रकार अपमान किया! हे ईश्वर, इस नरकयातनासे क्या हम भी कभी बाहर होंगे?……"

इसमेंसे अन्तिम कथन बाबाजीको अथवा अन्य किसीको सम्बोधन करके, नहीं कहा गया था। किन्तु ये उसके हार्दिक उद्‌गार थे, जो उसके मनमें सध नहीं सके—और जब हृदय भेद्‌कर बाहर निकलने लगे, तब जिह्वाके द्वारा उसने उनको बाहर प्रकट कर दिया। यह बात उस समय उसकी चेष्टा-परसे ही मालूम होगई। इतना बोलनेके बाद फिर बहुत देर-तक वह एक अक्षर भी नहीं बोला। उसका मन अपने उन विचारोंसे पूर्णतया ग्रस्त था। हम कौन हैं, क्या करते हैं, हमारे सामने कौन है; और कुछ समय पहले हम क्या विचार कर रहे थे, इत्यादि बातोंका मानो उस समय उसे कुछ ध्यान ही न रहा। वह शून्यदृष्टिसे चारों ओर देखने लगा। इस प्रकार जब बहुतसा समय व्यतीत होगया, तब फिर वह बाबाजीकी ओर मुड़कर पूछता है, "आख़िर उनको पकड़कर बीजापुर ले ही गये? पर······पर—" उसको जो कुछ कहना था, उसके विषयमें मानो अब वह इस विचारमें पड़ा कि, कहूं या न कहूं; और फिर वह एक सहेतुक दृष्टिसे बाबाजीकी ओर देखताभर रहा। बाबाजीकी भी चेष्टासे यह दिखाई देरहा था कि, मानो जो कुछ वह कहनेवाला था, उसे वे तुरन्त ही ताड़ गये; परन्तु फिर भी वे मानो इस बातका प्रयत्नसा कर रहे थे, कि जहांतक होसके, यह इसे मालूम न होने पावे; और इसीलिए वे उसे टालने अथवा छिपानेकी चेष्टा कर रहे थे। तानाजीकी चेष्टा भी कुछ इसी प्रकारकी दिखाई देरही थी।

परन्तु अन्तमें उस सिपाहीने बाबाजीकी ओर फिर एक बार देखकर स्पष्ट शब्दोंमें पूछा, "उनको पकड़ लेगये? और बाक़ी लोगोंको भी क्या पकड़ लेगये?"

बाबाजी एक अक्षर भी नहीं बोले। अतएव वह बहुत ही उत्कंठित और अधीरसा दिखाई दिया। बाबाजीकी चेष्टासे उसको यह अनुमान हुआ कि, कोई न कोई अनिष्ट घटना अवश्य घटी है, इसलिए वह फिर उनसे कुछ अस्त स्वरमें कहता है, "कहिये, कहिये। जो बात है, उसके स्पष्ट मालूम होजानेसे मुझे उतना दुःख नहीं होगा, जितना आपके इस न बोलनेसे हो-रहा है। बतलाइये, साफ़ साफ़ बतलाइये, जो आपने सुना हो। मुझे संशयमें न डाले रखिये। वे नीच हरामखोर क्या करेंगे और क्या नहीं, इसका कुछ ठीक नहीं। बतलाइये, उनके साथ साथ क्या मेरी पत्नीको भी पकड़ लेगये? उनके साथ साथ उन्होंने उसका भी अपमान किया? क्यों? स्वामी महाराज, बतलाते क्यों नहीं? परन्तु बतलानेकी क्या ज़रूरत है? आपके इस न बोलनेसे ही मेरे प्रश्नोंका उत्तर मिल गया। अच्छा है। अब मैं आपको नमस्कार करता हूं; और अभी वापस जाता हूं। मुझे बड़ी आशा थी कि, आपके समान सज्जनोंके साथसे स्वधर्म और स्वदेशकी सेवाका कुछ कार्य मेरे इस जीवनसे होसकेगा। पर मालूम होता है, भाग्यमें लिखा नहीं। बस, अब मैं ऐसा ही लौट जाऊंगा; और उनको तथा पत्नीको छुड़ाकर ही रहूंगा, अथवा इस प्रयत्नमें अपने प्राण दे-

दूंगा। यही मेरा मुख्य कर्त्तव्य है। मैं मराठेका बच्चा हूं। अपने कुटुम्बका अपमान मैंने अपने कानों सुना है—अब, जब-तक मेरी भुजाओंमें बल है—नहीं नहीं, जबतक इस शरीरमें प्राण हैं—तबतक चुप नहीं बैठनेका!......"

उसका यह भाषण बराबर जारी रहा। परन्तु बाबाजी अथवा तानाजी, दोमेंसे किसीने भी, बहुत देरतक, उसके समझाने इत्यादिका प्रयत्न नहीं किया। क्योंकि बाबाजी यह भलीभांति जानते थे कि, इस ख़बरको सुनकर इसे बड़ा गहरा शोक हुआ है; और उसका आवेग जबतक एक बार इसके शब्दोंसे निकल नहीं जायगा; और इस प्रकार जबतक उसका ज़ोर कम नहीं होजायगा, तबतक हमारे समझानेका कोई फल न होगा। इसकारण; उन्होंने उसको ख़ूब बोलने दिया। फिर जब बोलते बोलते वह किसी हदतक पहुँच चुका, तब बाबाजी उससे कहते हैं, "अरे, क्या तू समझता है कि, ऐसी दुष्ट वार्ता केवल बतलाकर ही हम रह जाते? पगले, तेरी स्त्री काफ़ी चतुर है! वह उनके हाथ आई ही नहीं। पहले ही दिन वह कहीं चली गई। कहां गई, यह अभी मालूम नहीं हुआ। इसलिए अब तू पागलपनका कुछे भी विचार अपने मनमें मत ला। यह अपमान केवल तेरा ही नहीं—हम सबका, सारे महा-राष्ट्रका; और सारे मराठोंका है, यह तू अभी अच्छी तरह समझ। तेरी पत्नी कहांपर, किस दशामें है, यह दो दिनके अन्दर ही तुझे मालूम होजानेका मैंने प्रबन्ध कर दिया है। तू रत्तीभर

भी इसकी चिन्ता मत कर। इसके सिवाय, तेरी स्त्री ऐसे-वैसे घरकी नहीं है—वह यादवोंकी लड़की है—अपमानका मौक़ा आनेपर प्राणतक त्याग देगी; परन्तु अपना व्रत रखेगी, इस बातका क्या तुझे विश्वास नहीं ?"

इधर जबकि यह सब बातचीत होरही थी, दूसरी तरफ़ दो आदमियोंने—शिवबा और येसाजीने—अपने विचारोंसे फुरसत पाई; और उस तरफ़ सिपाही जवान तथा बाबाजीकी जब ज़ोर ज़ोरसे बातें होने लगीं, तब उनका ध्यान भी उधर आकर्षित हुआ; और वे चुपकेसे सुनते रहे। जो बातें उधर हो-रही थीं, उनका बहुत कुछ अनुमान उनको हो ही गया होगा; परन्तु अब मानों वे इसी विचारमें थे कि, बीचमें एकदम जाकर हम उनकी बातोंमें शामिल हों या नहीं। इधर वह सिपाही, जो कि शोकसे बिलकुल उद्विग्न होरहा था, ऐसा जान पड़ा कि, उसका चित्त अब कुछ स्थिर हुआ। बाबाजीके ध्यानमें ज्यों ज्यों यह बात आती गई कि, अब उसका शोकावेग धीरे धीरे दूर होता जारहा है, त्यों त्यों उन्होंने अपने समाधानकारक वचन कहने शुरू किये—"तेरा और इन लोगोंका, अब सबका उद्देश्य एक ही है। जो तेरा मानापमान, जो तेरे चित्तकी चिन्ता, वही मानापमान और वही चिन्ता इन सबकी है, यह तू अच्छी तरह समझ। तू जिस बातकी इतनी चिन्ता कर रहा है, उतनी चिन्ता करनेकी कोई आवश्यकता नहीं। तेरी स्त्री सचमुच ही उस समय क़िलेपर नहीं थी। वह एक दिन पहले ही, अपनी दासीके

साथ, वहांसे चली गई थी। बहुत करके वह अपने नैहरको ही गई होगी; और फिर, मैं इस बातका तुझको वचन देता हूं कि, तीन दिनके अन्दर ही मैं उसका पूरा पूरा पता लगा दूंगा।"

सिपाहीकी उस समय जो चेष्टा होरही थी, उससे यह नहीं कहा जासकता था कि, बाबाजी यह जो कुछ कह रहे थे, उसकी ओर उसका ध्यान भी होगा अथवा नहीं। क्योंकि ऐसा जान पड़ता था कि, वह अपने मन ही मन कोई विचार करनेमें निमग्न है। स्वामीजी बहुत देरतक, अपनी ओरसे जो समाधानकारक वचन उससे कहते थे, कह रहे थे। फिर, जैसे उनके मनमें यह बात आई कि, देखो, हम क्या विचार कर रहे थे; और बीचमें यह क्या अरिष्ट आ उपस्थित हुआ, अतएव वे किंचित् खिन्न और त्रस्तसे दिखाई दिये। इसके बाद, फिर सिपाहीको सम्बोधन करते हुए, उन्होंने कहा, "देख, शिवबासे मैं तीन दिनके अन्दर ही उसका पता लगा लानेका वचन दिलाता हूं—तू घबड़ा मत। मराठेके बच्चेको ऐसा घबड़ाना उचित नहीं।" येसाजीने भी उससे यही कहा। तब कहीं उसका चित्त जाकर कुछ शान्त हुआ। और फिर सब लोग अपने अगले विचारपर आये। तानाजीको गुफाके द्वारपर जो वैरागी आकर मिला था, उसने अपनी गत सप्ताहकी सारी कार्यवाहीका विवरण आकर बतलाया था; और इस सप्ताहमें जिन जिन बातोंका वह पता लगा सका था, उन सबका वृत्तान्त उसने बतलाया था। क्योंकि आज कितने ही दिनोंसे इस बातका प्रबन्ध हो-

चुका था, कि महाराष्ट्रमें जहां कहीं कोई बात हो, तुरन्त उसका पक्का पता मिल जाय; और उससे जिस समय जो लाभ उठाया जा सके, उठा लिया जाय। स्वामीजी महाराजका उपदेश था कि, महाराष्ट्रके सम्पूर्ण क़िलोंपर—स्वयं बीजापुरमें, नहीं, नहीं, बड़े बड़े मुग़ल सरदारों और मराठे सरदारोंके घरानोंमें भी—समय समयपर जो घटनाएं हों, उन सभी घटनाओंका जबतक हमको ठीक ठीक पता नहीं मिलता रहेगा, तबतक हमारा काम नहीं होगा। बस, अपने इसी उपदेशके अनुसार उन्होंने चारों ओरका पता रखनेके लिए, संन्यासी, वैरागी, इत्यादि लोगोंमेंसे कुछको अपनी मण्डलीमें मिला लिया था; और उन्हींको, अपना उपर्युक्त उद्देश्य सिद्ध करनेका, साधन बनाया था। किस क़िलेपर क्या क्या घटनाएं हुईं अथवा होनेवाली हैं; किस मुग़ल सरदारने किसका, किस प्रकार, अपमान किया; किसका क्या हुआ; दरबारमें किसके विषयमें क्या क्या चर्चा हुई, इत्यादि बातोंके विषयमें, जिस रीतिसे ठीक ठीक पता लग सकता था, उसी रीतिसे प्रयत्न करनेमें स्वामीजी महाराज अत्यन्त निपुण थे। जिस वैरागीने आकर आजका समाचार बतलाया, वह वैरागी भी स्वामीजीके उन्हीं साधनोंमेंसे एक था। उसने आज किस क़िलेके विषयमें समाचार लाकर दिया, सो हमारे चतुर पाठकोंने ताड़ ही लिया होगा। बीजापुरका मुसलमान सरदार रणदुल्लाख़ां, सुलतानगढ़के क़िलेदारको अधिकारच्युत करके क़ैद कर लेजानेको आया था; और सुभान तथा श्यामा, जबकि

क़िलेदारका पत्र लेकर देशमुखके यहां जारहे थे, तब उन्होंने जिस गोटेश्वरके मन्दिरमें रात बिताई, उसी मन्दिरके पास, दूसरे दिन सुबह आकर, उसने अपनी छावनी डाली थी। इसका स्मरण हमारे पाठकोंको अवश्य ही होगा। वहांसे अपनी छावनी उठाकर फिर वह सीधा सुलतानगढ़के क़िलेपर पहुँचा। ख़ानके क़िलेपर पहुँचते ही, उस समयके नियमानुसार, क़िलेदार रूमालसे हाथ बांधकर उसके स्वागतको आया। सरदार रणदुल्लाख़ां उम्रमें बिलकुल छोटा था, पर विचारमें बड़ा गम्भीर था; और उसकी कर्तव्यदक्षता भी विशेष प्रसिद्ध थी, अतएव बादशाहका उसपर बड़ा विश्वास था। यही कारण था कि, बीजापुरमें, मुरार जगदेवरावकी तरह, उसका भी अच्छा प्रभाव था। इसके सिवाय, स्वभावमें भी वह एक अच्छा मनुष्य था। सद्गुणोंकी क़द्र करता था। क़िलेदार साहब जब उसके सामने आये, तब उसने स्वयं आगे बढ़कर उनके हाथ पकड़े; और बोला, "क़िलेदार साहब, मैं हुक्मका गुलाम हूं—इसलिए हुक्म बजाने आया हूं। आप यह बिलकुल न सोचें कि; मेरे हाथसे आपका किसी प्रकार अपमान होगा। आप सिर्फ हुक्मके अनुसार मेरे साथ चलें। आपकी इज़्ज़त और प्रतिष्ठाके अनुसार ही मैं आपको लेचलूंगा। इसके सिवाय मैं इस बातकी ख़बरदारी रखूंगा कि, आपके पीछे यहां किसीको कोई कष्ट न हो।" उसका यह अदबका भाषण सुनकर क़िले-दार साहबको बड़ा आश्चर्यसा हुआ। क्योंकि ऐसा ख़याल

उनको स्वप्नमें भी न था कि, मुसलमान सरदार, जोकि हमको क़ैद करने आया है, हमारे साथ ऐसा अदबका बर्ताव करेगा। ख़ानने जब पहले ही इस प्रकारका बर्ताव क़िलेदारके साथ किया, तब उसके सिपाहियोंको यह देखकर अत्यन्त आश्चर्य हुआ—मालिकने जब स्वयं ही इस प्रकारका बर्ताव किया, तब उसके सिपाही क्या कर सकते थे? ख़ान क़िलेपर बिलकुल ही मुक़ाम नहीं करना चाहता था, इस कारण उसने अपना सारा ख़ेमा नीचे ही रखा। जिस नवयुवक मराठे सरदारको उसने पिछले मुक़ामपर अपना कृपापात्र बनाया था, वह भी उसके ख़ेमेके साथ था। ख़ानने उससे अपने साथ क़िलेपर चलनेके लिए बड़ा आग्रह किया, पर उसने यह बात स्वीकार नहीं की। इसलिए यह कहकर कि, अच्छा, जो कुछ करना है, मैं ही बहुत जल्द करके आता हूं, वह ऊपर चला गया। इधर नीचे जो तम्बू लगा हुआ था, उसमें वह नवयुवक मराठा सरदार, जिसपर कि ज़बरदस्तीकी सरदारी लादी गयी थी, अत्यन्त विचारमें निमग्न इधर-उधर घूम रहा था। उसके मनमें जो विचार इस समय आ रहे थे, बहुत ही उद्वेग उत्पन्न करने-वाले मालूम होते थे। क्योंकि, ऐसा दिखाई दिया कि, बारबार वह बीच बीचमें, अपने आंसू, जोकि उसके नेत्रोंसे निकल रहे थे, पोंछ रहा था। साथ ही बीच बीचमें वह दीर्घ निःश्वास भी छोड़ता जाता था। "प्रसंग बहुत ही बिकट है; और अब बहुत जल्द जो प्रसंग आनेवाला है, वह तो बहुत ही बिकट

होगा, इसमें सन्देह नहीं। भाग जावें, तो यह भी सम्भव नहीं। ऐसी दशामें करना क्या चाहिए?" इस आशयके उद्गार उसके मुँहसे, उस थोड़े समयके बीचमें ही, न जाने कितनी बार निकले होंगे। "करने कुछ जाओ; और होता कुछ है! ऐसा प्रसंग! ऐसा प्रसंग आजतक किसीपर भी न आया होगा। न आया होगा क्यों? सचमुच ही नहीं आया। किन्तु इस प्रसंगकी विचित्रतापर आश्चर्य करते रहनेसे क्या लाभ? किसी न किसी उपायकी योजना करनेसे ही काम चलेगा।" इस प्रकारके भी विचार और उद्गार उसके मनमें मानो आरहे थे। उसे यह भी मालूम था कि, हमारी सब बातोंके ऊपर दूसरेकी निगहबानी है। यहांतक कि, वह जानता था कि, हम जो कुछ अपने आपसे कह रहे हैं, वह भी किसी न किसी अनर्थका कारण होसकता है। इसलिए उसने सोचा कि, जो कुछ करना हो, अत्यन्त सोच-विचार करके करना चाहिए। ये सब बातें मनमें लाकर ही वह वहांपर पूरी पूरी सावधानीका बर्ताव कर रहा था। ऐसी दशामें भी, कह नहीं सकते, उसपर ऐसा कौनसा प्रसंग गुज़र रहा था। जो हो।

विचार करते करते कोई युक्ति उसे सूझी; और उसके सचिन्त चेहरेपर कुछ मुस्कुराहटकी झलक दिखाई दी। जिस प्रसंगके आनेसे उसको अत्यन्त कष्टकी संभावना जान पड़ती थी, उस प्रसंगको टालनेके लिए कोई न कोई युक्ति उसे सूझ पड़ी। इससे उसके मनको जो कुछ थोड़ासा आनन्द हुआ,

उसीका वाह्य चिन्ह उसके चेहरेपर उस मन्द स्मितके स्वरूपमें प्रकट हुआ। युक्ति सूझी सही; पर ज्यों ज्यों अधिकाधिक समय जाने लगा, त्यों त्यों मानो यह शंका भी उसके मनमें आने लगी कि, देखना चाहिए, यह युक्ति हमारे मनके अनुसार कहां-तक सफल होती है।

इकतीसवां परिच्छेद।

खानकी रात कैसे बीती ?

इधर रणदुल्लाख़ां और क़िलेदार साहबकी—जैसाकि पिछले परिच्छेदमें बतलाया—जब वह आगत-स्वागतकी भेंट होचुकी, तब वे दोनों बहुत देरतक, एकान्तमें कुछ बातचीत करते रहे। बातचीत समाप्त होनेपर जब अन्य लोगोंको उस कमरेमें आनेकी इज़ाज़त हुई, तब लोगोंने देखा कि, दोनोंके चेहरे बिलकुल हास्यपूर्ण हैं; और इसकारण, रणदुल्लाख़ांके देखते ही क़िलेपरके लोगोंमें जो एक प्रकारका यह आतंक छा-गया था कि, "अब क़िलेपर कोई न कोई भयंकर हलचल होगी, बड़ा उपद्रव मचेगा," सो आतंक, यद्यपि बिलकुल तो नहीं, फिर भी बहुत कुछ अंशमें कम होगया। यह सब हालत देखकर अन्य सब लोगोंको बहुत सन्तोष सा हुआ। सिर्फ एक व्यक्तिको अवश्य, मानो यह देखकर ही कि, यह सारा हाल हमारी आशाके

बिलकुल विरुद्ध हुआ, बहुत बुरा मालूम हुआ । वह व्यक्ति कौन था ? पाठकोंने प्रायः ताड़ ही लिया होगा । इसलिए अब विशेष स्पष्ट करके बतलानेकी आवश्यकता नहीं जान पड़ती । लोगोंको यह स्पष्ट दिखाई दिया कि, क़िलेदार साहब कुछ दिनके लिए बीजापुर जारहे हैं; और इसके अतिरिक्त अन्य कोई क्रान्ति होनेका रङ्ग दिखाई नहीं देता । रणदुल्लाख़ांने बहुत देरतक क़िलेपर मुकाम किया । अन्तमें यह निश्चित हुआ कि, दूसरे दिन क़िलेदार साहब रणदुल्लाख़ांके साथ बीजापुरके लिए कूच करेंगे । इसके बाद ख़ान अपनी छावनीमें नीचे वापस आगया । वह मराठा सरदार, जिसको कि ख़ानने अभी हालहीमें अपना कृपापात्र बनाया था, इस बातके लिए बड़ा उत्सुकसा दिखाई दिया कि, ख़ांसाहब कब नीचे आवें; और कब उनकी हमारी मुलाक़ात हो । इधर ख़ांसाहब जब नीचे आये, तब उनको भी मानो अपने नवीन मित्रसे मिलनेकी बड़ी भारी उत्कंठा हुई । क्योंकि नीचे आते ही उन्होंने यह सन्देशा भेजा कि, "सरदार साहब क्या करते हैं ? विशेष काममें न हों, तो उनसे मुलाक़ात करनेकी हमारी बड़ी इच्छा है ।" सन्देशा पाते ही सरदार साहब उठकर रणदुल्लाख़ांके पास आये; और बड़े अदबसे मुजरा करके दूर बैठ गये । यह देखकर ख़ांसाहब उनकी ओर देखकर हँसते हुए कहते हैं, "क्यों सरदार साहब, मैं आपको अपना पक्का दोस्त समझता हूं; और आप यह दूजा भाव रखते हैं—आप ऊपर नहीं चले, इसलिए वहांका सब वृत्तान्त बत-

लानेके लिए ही मैंने आपको इस समय बुलाया है। आज ऊपर जाकर क़िलेदार साहबकी मैंने पूरी पूरी इज़्ज़त-प्रतिष्ठा रखी; और कहा कि, "क्या बतलाऊं साहब, मैं हुक्मका गुलाम हूं। क़िलेको अपने अधिकारमें लेकर आपको क़ैद कर लेजानेका मुझे हुक्म हुआ है। उस हुक्मकी तामील करना आवश्यक है। पर मैं आपको अपने पिताके तुल्य समझता हूं। आप बिना किसी संकोचके मेरे साथ चलें। बीजापुर पहुँचनेपर भी आपकी इज़्ज़त और प्रतिष्ठामें किसी प्रकारका धक्का न लगने पावेगा और जहांतक होसकेगा, आपके रहनेका प्रबन्ध भी उत्तम रखा जायगा, इसका दायित्व मैं अपने ऊपर लेता हूं।" मैंने ज्यों ही उनसे ऐसा कहा, उनको बड़ा आनन्द हुआ। इसके बाद बहुत देरतक हम दोनों अनेक प्रकारकी बातचीत करते रहे। उनके पुत्र नानासाहबके विषयमें भी बातचीत निकली थी। उससे मालूम हुआ कि, क़िलेदार साहब यह जानते हैं कि, नाना-साहबकी उद्दण्डताके कारण ही आज उनपर ऐसी नौबत आई। नानासाहब इस फन्देमें न पड़कर यदि बीजापुर चले जाते, तो हुज़ूरकी तरफ़से उनकी बड़ी मान-प्रतिष्ठा होती; पर क्या किया जाय, उनकी बुद्धि ही विपरीत होगई, इसके लिए कोई उपाय नहीं। मैं स्वयं वहां था, बातकी बातमें उनके गुणोंकी क़दर होती; और उनकी उन्नति होगई होती।"

कह नहीं सकते, क्या कारण था, रणदुल्लाख़ांने जब अन्तमें नानासाहबके विषयमें बात निकाली, तब वह बारम्बार अपने

साथीके चेहरेकी ओर देखता जाता था; और जब रणदुल्लाख़ां उसके चेहरेकी ओर देखता; और यह बात उस सरदारके ध्यानमें आती, तब वह उसकी नज़र बचानेकासा प्रयत्न करता था। क़िलेपरका सब वृत्तान्त बतला चुकनेके बाद रणदुल्लाख़ांने उससे स्वाभाविक ही पूछा, "आप क़िलेपर सुबह क्यों नहीं चले?" सरदारने पहले तो "यों ही, कोई बात नहीं" कहकर मौका टाल दिया; पर फिर, जब ख़ानने यह कहा कि, "कोई हानि नहीं, कल सुबह उनसे आपकी मुलाक़ात कराऊंगा; क्योंकि अब बीजापुरतक वे हम लोगोंके साथ ही रहेंगे ," तब सरदार साहब कहते हैं, "नहीं, नहीं। मेरी और उनकी मुलाक़ात आप, जहांतक होसके, न करावें; बल्कि न कराना ही अच्छा होगा। क्योंकि मुझको वे जानते नहीं; और न मुझपर उनका कोई प्रेम है। बल्कि मुझको देखते ही शायद उनको क्रोध भी आजावे; क्योंकि उनका ख़याल है कि, जिनके कारण उनके ऊपर आज यह नौबत आई, वे मेरे ही बहकानेसे बिगड़ गये हैं। इसलिए कृपा कीजिए; और ऐसा मौक़ा न लाइये कि, जिससे मेरी उनकी आमने-सामने मुलाक़ात होजाय। यही आपसे प्रार्थना है। मैंने आपसे बहुत बार निवेदन किया कि, अब मुझे आप अपने घर जाने दीजिए, पर आपने स्वीकार नहीं किया, मैं लाचार होगया। पर इतनी प्रार्थना तो आप अवश्य स्वीकार करें!"

इतना कहकर वह रणदुल्लाख़ांके चेहरेकी ओर आतुरतासे

देखने लगा। उसका कथन—विशेषतः उसका अन्तिम वाक्य अभी समाप्त न होने पाया था कि, रणदुल्लाखां एकदम उससे कहता है, "आपकी मर्ज़ीके विरुद्ध मैं आपको सरदारी देरहा हूं, इसपर आपको इतना बुरा लगनेका कोई कारण नहीं। क्योंकि आपके अन्दर सरदारोंके योग्य सभी सद्‌गुण मौजूद हैं; और मैं नहीं चाहता कि, उन सद्‌गुणोंका कोई उपयोग न हो। इसीलिए मैं आपसे यह आग्रह कर रहा हूं। आपने जैसाकि पहले स्वीकार किया है, मेरे साथ बीजापुरतक तो अवश्य ही चलें। वहां आपकी कैसी क्या मान-प्रतिष्ठा होती है, सो देखिये। फिर यदि आपको वहां रहना पसन्द न आवे, तो आप खुशीसे लौट आइये। पर इस समय तो जानेकी बात न निकालिये। क्योंकि जानेकी बात जब आप निकालते हैं, तभी मेरे मनमें आता है कि, मैं तो आपके साथ इतना प्रेमका बर्ताव करता हूं; और आपका विश्वास मुझपर बिलकुल नहीं जमता।"

इस प्रकार जब रणदुल्लाखांने कुछ तेज़ीके साथ कहा, तब हमारे सरदार साहब कुछ चकितसे दिखाई दिये। इसके बाद कुछ देरतक इधर-उधरकी और गप-शप हुई, फिर ख़ांसाहबके "बैठिये, बैठिये" कहकर आग्रह करनेपर भी हमारे सरदार साहब उठकर अपने तम्बूमें चले आये। अब रात बहुत हो-चुकी थी। अहमद भीतर आकर ख़ांसाहबसे "खाना तैयार है" कहकर चला गया। परन्तु ख़ांसाहबका मन उस समय कुछ अंशमें अस्वस्थ सा दिखाई दिया—कह नहीं सकते कि, उस

मराठे सरदारसे अभी इतनी देरतक जो बातचीत हुई, उस कारणसे, अथवा अन्य किसी कारणसे—चाहे जो कारण हो, किन्तु ख़ांसाहबका चित्त उस समय कुछ अशान्त अवश्य था। इसलिये उन्होंने नौकरसे कहला भेजा कि, हमें भूख बिलकुल नहीं है, और फिर कपड़े इत्यादि निकालकर पलँगपर जालेटनेकी तैयारी करने लगे। निद्राकी जितनी कुछ बाह्य तैयारी करनी चाहिए, उतनी सब उन्होंने की। ऊंचे और विस्तीर्ण पलँगपर घुटनोंतक ऊंचा परोंका गद्दा पड़ा हुआ था, उसपर लेटकर तकियेपर सिर रखे हुए घंटों वे निद्रादेवीकी आराधना करते रहे। परन्तु कुछ लाभ न हुआ—सारा समय उन्हें करवटें बदलते ही बिताना पड़ा। उस समयकी उनकी सारी चेष्टाओंसे यही प्रतीत होरहा था कि, नींद उनको किसी प्रकार भी नहीं आरही है। ऐसी अस्वस्थ अवस्थामें भी कितनी देर पड़े रहते? अन्तमें बेचारा उठा; और कुछ देरतक पलँगपर ही बैठा रहा। पर उस अवस्थामें भी चैन नहीं! अन्तमें पलँगपरसे भी उठा; और तम्बूके द्वारपर आकर आकाशमें टिमटिमाते हुए तारागणोंकी ओर देखता हुआ चुपके खड़ा रहा। कितनी ही बार उसने दीर्घ निःश्वास छोड़े; और उसी दरवाजेपर खड़े हुए, कमसे कम, बीस-पच्चीस बार उसने उस मराठे सरदारके तम्बूकी ओर देखा होगा; पांच-सात बार अपनी उस खड़े रहनेकी जगहसे उस तम्बूकी ओर जानेको प्रवृत्त हुआ होगा। क्योंकि उस तम्बूकी ओर नज़र रखकर कई बार उसके क़दम

अपने तम्बूसे बाहर निकले; परन्तु बहुत जल्द फिर उसने उनको पीछे हटासा लिया। इसी प्रकार उसने पलँगसे लेकर तम्बूके द्वारतक और तम्बूके द्वारसे लेकर पलँगतक, अनेक चक्कर लगाये। इसके बाद फिर ख़ांसाहब मानो अपने विचारमें ही निमग्न होकर चुपके खड़ेसे होगये। उस समय चाहे आस-पास कोई आया-गया भी होता, तो भी उनके ख़यालमें न आया होता। न जाने ऐसा कौनसा विचार उनके मनमें आरहा था! जो विचार उस समय उनके मनमें आरहा था, वह खेदप्रद अवश्य था, इसमें सन्देह नहीं; क्योंकि उनके चेहरेपर उस समय खिन्नताके अतिरिक्त और किसी विचारकी भी छाया दृष्टिगोचर नहीं होरही थी।

इस प्रकार जबकि ख़ांसाहब स्तब्ध खड़े हुए थे, उनके तम्बूमें कोई व्यक्ति आया; और बिलकुल उनके पास ही आकर ये शब्द उच्चारण किये, "अजी हज़रत, आज आपकी यह क्या हालत होरही है? रोज़ आप इस वक़्त गहरी नींदमें हुआ करते थे, पर आज क्या होगया?" इन शब्दोंके कानमें पड़ते ही ख़ां-साहब एकदम चौंक पड़े; और उक्त व्यक्तिकी ओर विचित्र दृष्टिसे देखने लगे। यह कौन व्यक्ति है, क्या कह रहा है, सो मानो कुछ उनकी समझहीमें न आया। बहुत देर जब वे उस व्यक्तिकी ओर उसी दृष्टिसे देख चुके, तब एकदम, जैसे होशमें आकर, उन्होंने उस व्यक्तिको पहचाना; और फिर बोले, "अह-मद, तू क्या मुझपर नज़र रख रहा है? मैं किस समय क्या

काम करता हूं, उसपर क्या तेरी नज़र रहती है ? तू अपनी रावटी छोड़कर इधर क्यों आया ? तुझे आये कितनी देर हुई ? आनेका कारण ?"

इस प्रकार, अत्यन्त त्रस्त स्वरसे, उन्होंने एकके बाद एक, अनेक प्रश्न अहमदसे किये। अहमद बेचारा घबड़ा गया; और जब उन प्रश्नोंका प्रवाह बन्द हुआ; और उससे उसे कुछ फुरसत मिली, तब वह हाथ जोड़कर बोला—"सरकार, मैं यों ही अपनी रावटीसे बाहर निकला; और आपकी आहट मेरे कानोंमें गई। सोचा कि, शायद आपको किसी चीज़की ज़रूरत हो, इसलिए आपके तम्बूकी तरफ़ चला; लेकिन देखा कि, आप न जाने कितनी देरसे तम्बूके द्वारपर ही खड़े हैं। इसपर यों ही मुझे यह लालसा हुई कि, देखें, इतनी रातको आप यहां खड़े हुए क्या कर रहे हैं ? यह भी समझा कि, शायद आप मुझे ही पुकारनेके लिए द्वारपर आये हों, इसलिए जब आपकी ओर देखने लगा, तब आपके चेहरेकी रंगत कुछ और ही दिखलाई दी। मैं उसी वक्त आकर आपसे अर्ज़ करनेवाला था; पर यह समझकर कि आप कहीं नाराज़ न होने लगें, मैं इतनी देर ठहर गया। अन्तमें जब इस फ़र्मांबरदार नौकरसे बिलकुल ही रहा नहीं गया, तब आगे बढ़कर आपसे अर्ज़ किया। यदि इसको बतलानेलायक कोई काम हो, तो ज़रूर फ़रमावें। ऐसा नहीं कि, मैंने आपका दिल ताड़ न लिया हो। पर जबतक आप इजाज़त न दें, मैं कुछ कह नहीं सकता, यह बिलकुल यकीन रखिये।"

अहमद जबकि इस प्रकार अपना लम्बा-चौड़ा तुंबार बांध-रहा था, ख़ांसाहबका ध्यान अधिकांशमें उस ओर नहीं था। परन्तु ज्यों ही उन्होंने अहमदके मुखसे अन्तिम वाक्य सुना, त्यों ही एकदम उनका ध्यान उस ओर आकर्षित हुआ; और वे तुरन्त ही उसकी ओर देखकर बोले, "क्यों? मेरे मनमें क्या है, जो तूने ताड़ा है? अहमद, यह यदि सच है, तो कहना चाहिए कि, मुझसे भी अधिक तुझको मेरे मनकी जानकारी है। क्योंकि मेरे मनमें क्या है, सो मुझे ही ठीक ठीक इस समय मालूम नहीं होरहा है!"

इतना कहकर उन्होंने एकदम एक लम्बीसी सांस छोड़ी; और फिर बहुत देरतक अहमदकी ओर शून्यदृष्टिसे देखते हुए खड़े रहे। अहमदने, मानो यह समझकर ही कि, मेरे बोलनेका यही अच्छा मौका है, ख़ांसाहबकी ओर देखकर कहा, "ग़रीब-परवर, उस तम्बूकी ओर जाकर अपने नवीन दोस्तसे बातचीत करनेकी क्या आपको इच्छा नहीं हुई? आपने इसी उद्देश्यसे न जाने कितनी बार तम्बूसे बाहर क़दम निकाला और फिर पीछे हटाया!" ये वाक्य बोलते समय अहमद ऐसी कुछ विचित्र रीतिसे हँसा कि, उसका वह हँसना उस समय यदि और किसीने देखा अथवा सुना होता, तो उसे थोड़ा बहुत क्रोध उसपर अवश्य आया होता। क्योंकि उसके उस हँसनेमें कोई न कोई बहुत ही गूढ़ अभिप्राय अवश्य था, जो स्पष्ट दिखाई दिया।

कह नहीं सकते कि, उसका वह हँसना और बोलना ख़ां-साहबके कानोंमें पड़ा, अथवा नहीं! क्योंकि उनका ध्यान उस ओर नहीं था। वे किसी अपने ही विचारमें निमग्न थे। ऐसा यदि न होता, तो अहमद्के उक्त कथनसे उनको भी क्रोध आये बिना नहीं रह सकता था। फिर भी अहमद्के कथनमेंसे कोई कोई शब्द उनके कानोंमें अवश्य पड़े होंगे। क्योंकि अहमद्का कथन समाप्त होनेके बाद कुछ देरतक वे चुपके खड़े रहे; और फिर अन्तमें उन्होंने कहा, "अहमद, तू यह कहता है कि, मेरे मनके सारे उद्देश्य तूने ताड़ लिये हैं? तू क्या यह कह सकता है कि, मेरे अस्वस्थ होनेका कारण तेरे ध्यानमें आगया है? अच्छा, तो तू बतला तो सही कि, मैं इतना अस्वस्थ क्यों हूं? अरे मूर्ख, मैं अस्वस्थ नहीं हूं। अस्वस्थ होनेका कोई कारण भी नहीं। यों ही गत सप्ताहमें जो मुझे हैरानी उठानी पड़ी है; और जो परिश्रम मुझसे हुआ है, उसीके कारण मुझे नींद नहीं आई; और मैं इधर-उधर टहल रहा था। तेरे मनमें यदि कोई शंका आई हो, तो बिलकुल छोड़ दे। बिलकुल चुपकेसे अपनी रावटीमें जाकर सो!" यह सुनकर अहमद फिर हँसा; और उनसे बोला, "हुज़ूर, यह बन्दा आपकी ऐसी बातोंमें नहीं आ-सकता। आपके मनको कोई न कोई बात बहुत दुःख देरही है, इस विषयमें मुझे कुछ भी सन्देह नहीं। ग़रीबपरवर, आप-का प्रेम इस नवीन मराठे दोस्तसे बहुत होगया है; और इसी-कारण तो आप इतने बेचैन नहीं होरहे हैं?"

इतना कहकर अहमदने अपनी जीभ दांतोंतले दबाई। मानो उसने यह समझा कि, हम आवश्यकतासे अधिक बोल गये। परन्तु इसमें सन्देह नहीं कि, जो कुछ उसने कहा, सो जान-बूझकर ही कहा। कुछ समय पहले भी उसने इसी आशयके वाक्य कहे थे; और उनको कहते समय वह एक विचित्र तरहसे हँसा था, इत्यादि बातें पाठकोंको अभी भूली नहीं होंगी। उस समय उसके वे शब्द खानके कानोंमें नहीं पड़े थे। पर अबकी बारके शब्द वैसे नहीं थे। इस बारके शब्द खानके कानमें पूर्ण रूपसे पड़े; और एकदम उसका चेहरा भी बदल उठा। वह इतना क्रुद्ध दिखाई दिया कि, उसके मुँहसे शब्द भी न निकलने लगा; और शब्द निकलनेयोग्य स्थितिमें वह आनेहीवाला था कि, इतनेमें विवेकने भी उसके मनमें प्रवेश किया; और उसमें कुछ मृदुतासी ला दी। बस, तुरन्त ही उसने सोचा कि, हमारे सच्चे सच्चे विचार जब इसको मालूम होगये हैं, तब फिर इसपर क्रोध करनेसे क्या लाभ? परन्तु ठीक ठीक कह नहीं सकते कि, उसने यही सोचा, अथवा और कुछ सोचा—हां, इतना अवश्य हुआ कि, उसके चेहरेपर पहले जो क्रोध दिखाई दिया था, वह उसके कथनमें दिखाई नहीं दिया। क्योंकि धीरेसे उसने अहमदसे इतना ही कहा, "अहमद, तू क्या कह रहा है—कुछ होशमें भी है? और कोई मालिक होता, तो तुझको इस समय उसने बड़ी भारी ताड़ना दी होती। जा, अब तू यहांसे चला जा। फिर यदि तूने इस विषयमें

मुझसे, अथवा और किसीसे एक अक्षर भी कहा, तो तुझको जानसे मार डालूंगा! अच्छी तरह समझ लेना। जा, अब यहांसे टल जा।"

परन्तु ढीठ अहमद वहांसे एक क़दम भी नहीं हिला, वहीं खड़ा रहा; और फिर ख़ानसे बोला, "परन्तु सरकार, जो बात बिलकुल अपने हाथकी है, उसके लिए इतनी बेचैनी और इतने विचारकी आवश्यकता ही क्या है? आपकी आज्ञा हो, तो मैं......" आगे उसने क्या कहा, सो, ऐसा जान पड़ा कि, ख़ां-साहबको, जोकि क्रोधसे बिलकुल बधिर होगये थे, सुनाई ही नहीं दिया।

बत्तीसवां परिच्छेद।
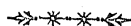
बीजापुर जानेपर।

ख़ान क्रोधसे इतना पागल होगया कि, न सिर्फ़ उसे कानोंसे सुनाई ही दिया; बल्कि आंखोंसे दिखाई भी नहीं दिया। वह अहमदकी सूरतकी ओर किस नज़रसे देखने लगा, सो अह-मदको ही मालूम! आजतक अहमदको उसके मालिकने ऐसी दृष्टिसे कभी भी नहीं देखा था। ख़ानका क्रोध इतना बढ़ा हुआ दिखाई दिया कि, उसके मुँहसे एक शब्द भी नहीं निकल सका। वह कुछ कहना अवश्य चाहता था; यही नहीं, बल्कि बोलनेके लिए उसके हौंठ आतुरसे होरहे थे; पर एक शब्द भी

मुंहसे नहीं निकलता था। लगभग एक मिनट वह उसी दृष्टिसे अहमदकी ओर देखता रहा। इसके बाद फिर ख़ानके शब्द, जो बहुत देरसे संचितसे होरहे थे, एकदम उसके मुखसे बाहर निकले :—"अहमद, मैं ख़ूब जानता हूं कि, आज अनेक वर्षसे तेरे बापके साथ ही साथ तेरे घरके सब लोग मेरे घरमें बड़ी ईमानदारीसे नौकरी करते आते हैं; और इसीकारण आज मैं तुझे माफ़ करता हूं, नहीं तो मार ही डाला होता। तू अपने मालिकको अच्छी तरह जानता नहीं है; और इसीलिए अन्य मालिकोंकी भांति उसे समझकर तू इस समय इतना भ्रममें पड़ गया। बस, इसी ख़यालसे आज मैं तुझे छोड़े देता हूं। परन्तु आगेसे फिर कभी तूने यदि ऐसी ढिठाई दिखलाई, तो जानसे मार डालूंगा। पहलेसे ही तू इस सम्बन्धमें क्या क्या ख़याल करता आया है, सो, ऐसा नहीं कि, मेरे ध्यानमें न हो। इसलिए अब तू बस, मेरी आंखोंके सामनेसे टल जा। और आगे तू इस विषयमें यदि मुझसे एक अक्षर भी कहेगा, अथवा और किसीसे कहा—ऐसा मैं सुनूंगा, तो तुझे जीता ही गड़वा दूंगा, यह तू अच्छी तरह समझ ले।"

यह सब कहते हुए ख़ानने इतनी शान्ति धारण की थी कि, उस समयके उसके क्रोधको देखते हुए यही आश्चर्य करना पड़ता था कि, इतनी शान्ति वह धारण कैसे कर सका। उसने जो शब्द उच्चारण किये, वे शान्तिपूर्ण तो अवश्य थे; परन्तु वे इस प्रकारकी आवाज़में उच्चारण किये गये थे कि,

जिससे अहमद्के मनपर यह पक्का विश्वास होसकता था कि, मौका आनेपर हमारा मालिक इनमेंसे एक एक शब्दको सच कर दिखलानेमें चूक नहीं सकता। इसलिए अब आगे अहमद्को ढिठाई दिखलानेका साहस नहीं हुआ; बल्कि इस बातपर अब उसे आश्चर्यसा हुआ कि, इतना होनेपर भी मैं बचकर कैसे जारहा हूं। स्वामीका कथन समाप्त होते ही अहमद् कुछ घबड़ासा गया; और फिर वहांसे चलता बना। उसके जानेके बाद ख़ान मानो और भी अधिक अस्वस्थसा हुआ; और बराबर, पहलेहीकी भांति, वह अपने तम्बूमें इधरसे उधर चक्कर लगानेलगा। उस समय ऐसा जान पड़ा कि, मानो कुछ अत्यन्त खेदजनक विचारोंने आकर उसके मनको उद्विग्न कर डाला हो।

मनुष्य जब अपने विचारोंसे बहुत ही उद्विग्न होजाता है, तब कभी कभी उसके विचार—उसको न मालूम होते हुए—उसके मुँहसे अचानक बाहर निकलने लगते हैं। वास्तवमें, ऐसे समयमें, उसके विचार इतने कुछ क्षुब्ध होजाया करते हैं, कि वे शब्दोंके रूपसे आप ही आप बाहर निकलने लगते हैं। बस, ख़ांसाहबकी भी उस समय यही हालत थी। अव्वल तो उनको नींद नहीं आई थी; और फिर उसमें भी विचारोंने ज़ोर मारा! फिर क्या पूछना है। मानो, जल्दी जल्दी इधरसे उधर बार बार चक्कर लगानेके कारण ही थककर वे अपने पलँगपर जापड़े। और फिर आप ही आप कहते हैं, "आजतक मैं

ऐसी बातोंको बिलकुल काल्पनिक ही समझता था। परन्तु, देखो तो, केवल चार आंखें होनेसे ही यह हालत! अबतक मैं इसको बिलकुल असम्भव समझता था; पर अब तो यह प्रत्यक्ष अनुभव है!……परन्तु नहीं। यह रणदुल्लाख़ां ऐसी नीचता कभी नहीं करेगा। "संगतिसे वंचित न हों,सहवास न छूटे"—बस, इतनेहीके लिए अबतक जैसा बहाना दिखलाता आया, वैसा ही दिखलाता रहूंगा, इससे अधिक और कुछ मैं जानता हूं—सो प्रकट ही न करूंगा। परन्तु………परन्तु इससे अधिक यदि मेरे हृदयमें कोई विचार आने लगेगा, तो यह शस्त्र, जो मैंने दूसरेपर चलानेके लिए हाथमें धारण किया है, अपने ही ऊपर चला लूंगा। इसमें ज़रा भी अन्तर नहीं पड़ेगा!"

इतना कहकर उसने एक अत्यन्त लम्बीसी सांस छोड़ी। और नींद आनेके लिए फिर वह सब प्रकारके प्रयत्न करनेमें निमग्न हुआ। उसके अन्तिम निश्चयने मानो उसके ऊपरका बड़ा भारी बोझा हलका कर दिया। क्योंकि नींदके लिए वह जो प्रयत्न कर रहा था, उसमें सुबहकी ठंढी हवाने भी सहायता दी; और बहुत जल्द उसे गहरी निद्रा आगई। उस निद्राके समय यदि कोई वहां होता; और वह बराबर उस निद्रा-निमग्न ख़ानके चेहरेकी ओर देखता रहता, तो अवश्य ही उसे यह दृष्टिगोचर होता कि, ख़ानका मन, उस निद्रामें भी, विचारमग्न है; परन्तु हां, उस दशामें, उसके विचार कुछ उद्-वेगकारक और कुछ सुखकारकसे हैं! अस्तु।

ख़ानने पिछले दिन, जैसाकि मराठे सरदारसे कहा था, तदनुसार ही सब बातें हुईं। ख़ान क़िलेदार साहबको लेकर चला। मराठे सरदारने जैसाकि पिछले दिन ख़ांसाहबसे वचन लेलिया था, उसके अनुसार ही, क़िलेदार साहबसे उन्होंने उसकी मुलाक़ात न होने देनेके लिए पूरी पूरी सावधानी रखी। सच तो यह था कि, उस मराठे सरदारपर ख़ांसाहबकी इतनी भक्ति होगई थी कि, वह जो कुछ कहता, वही ख़ां-साहब करते जाते, उसके विरुद्ध कुछ भी नहीं करते थे। अभी हमने बतलाया कि, उन्होंने उस मराठे सरदारको क़िलेदारकी मुलाकातसे बचानेकी सावधानी रखी—यह नहीं, बल्कि उस मुलाक़ातका मौक़ा न आने पावे, इसके लिए उन्होंने एक एक मुक़ाम आगे-पीछे रखनेका भी प्रबन्ध किया। मराठे सरदारको उन्होंने, अपने साथके बहुतसे लश्करके सहित, एक मुक़ाम आगे रवाना कर दिया। हां, उससे यह वचन पूरे तौरपर लेलिया कि, वह उनको छोड़कर और कहीं चला न जावे। ख़ांसाहब अच्छी तरह समझते थे कि, अब इसपर विश्वास रखनेमें कोई हानि नहीं। उन्होंने जिस समय उसको एक मुक़ाम आगे भेजनेका विचार निश्चित किया, उस समय उनको बहुत बुरा मालूम हुआ।

उनके चित्तको इस बातका बड़ा खेद हुआ कि, अब बीजा-पुरतक मार्गमें हमारे मित्रकी संगति छूटती है। परन्तु उन्होंने सोचा कि, हमारा मित्र क़िलेदारसे मिलना नहीं चाहता; और

मार्गमें क़िलेदार, तथा हम सब जब एकत्र रहेंगे, तब यह सम्भव नहीं कि, एक बार भी क़िलेदारसे उसकी भेंट न होने पावे। ऐसी दशामें, इतना मित्र-वियोग सहन कर लेनेमें कोई हानि नहीं, उसको राजी रखना चाहिए। बस, यही सब सोचकर उसने उपर्युक्त रीतिसे, मराठे सरदारसे वचन लेकर, अपने और उसके मुक़ाममें एक मुक़ामका अन्तर रख दिया।

मार्गमें कोई विशेष घटना नहीं हुई; और रणदुल्लाख़ां अपने सब लोगोंके साथ बीजापुर पहुँच गया। वहां पहुंचनेपर ख़ांसाहबने अपने नवीन मित्रका, उसके ज़नाने सहित, एक अलग स्थानमें रहनेका उत्तम प्रबन्ध कर दिया। हां, सरदार साहबसे गप-शप करनेके लिए बहुधा—जब जब अवकाश मिलता, तभी—अथवा यों कहिये कि, जब जब अवकाश निकाल सकते, तब तब—ख़ांसाहबकी सवारी उनके पास जाया करती थी।

इधर ख़ांसाहबने क़िलेदार साहबके रहनेका भी बहुत उत्तम प्रबन्ध कर दिया। और यथायोग्य समयपर हुज़ूरके कानोंमें यह समाचार भी पहुँचा दिया कि, हम उनको लेआये—अथवा यों कहिये कि, क़ैद कर लेआये। बादशाहके ध्यानमें यह बात जमी थी कि, देखो, हमारे हज़ार बार कहनेपर भी क़िलेदारने अपने लड़केको हमारे पास दरबारमें नहीं भेजा; और ज्यों ही यह ख़बर लगी कि, हम उसे बुलानेके लिए आदमी भेजते हैं, त्यों ही न जाने उसे कहाँ भगा दिया। बस, इसीकारण वह

क़िलेदारपर बहुत नाराज़ था, और उस नाराज़ीका ही यह परिणाम था कि, आज उनके हाथसे क़िलेका सारा अधिकार छीन लिया गया; और उनको क़ैद होकर बीजापुर आना पड़ा। उनके हाथसे क़िलेका अधिकार छीनकर उनको क़ैद कर ले-आनेका कार्य पहले सैयदुल्लाखांको देनेका निश्चय किया गया था; और सैयदुल्लाखां भी इस कार्यके लिए बहुत उत्सुक था; क्योंकि क़िलेदार रंगराव अप्पाके विषयमें, इसी ख़ास उद्देश्यसे, उसीने बादशाहका मन कलुषित कर रखा था। परन्तु जब उस कामपर उसे भेजनेका मौक़ा आया, तब बादशाहने सोचा कि, रणदुल्लाखांको स्वयं ही जाना चाहिए; और उसीको उसने सुलतानगढ़ भेज दिया, तथा सैयदुल्लाखांको दूसरी तरफ अन्य किसी कामपर भेज दिया। हम पहले ही कह चुके हैं कि, रणदुल्लाखां एक बहुत अच्छे स्वभावका मनुष्य था; बल्कि यों कहना चाहिए कि, उस समयके मुसलमान सरदारोंमें वह एक अपवादस्वरूप था। उसे दरबारके अनेक सरदारोंकी कार्यवाही बिलकुल ही पसन्द न आती थी। किन्तु वह अच्छी तरह जानता था कि, हुज़ूरके सामने यदि दूसरोंके विषयमें बार बार कुछ कहेंगे, तो उसका अच्छा परिणाम होना तो एक ओर—बल्कि कुछ बुरा ही परिणाम होगा; और इसीलिए वह दूसरोंके झगड़ेमें कभी नहीं पड़ता था। वह जानता था कि, जहां हम दूसरोंके झगड़ेमें पड़े; और बादशाहको यह पसन्द न आया, तो वह हमींपर नाराज़ हो जायगा; और यह एक प्रकारसे, ब

कारण, अपने पैरमें आप कुल्हाड़ी मारनेके समान होगा। इसके सिवाय, आज हमारा दरबारमें जो कुछ प्रभाव है; और जिसके कारण हम, कमसे कम, दूसरोंका कुछ भला तो कर सकते हैं, सो भी जायगा। बस, यही सब बातें मनमें लाकर वह कभी दूसरोंके विवादमें नहीं पड़ता था। स्वयं बादशाह भी यह बात भलीभांति जानता था कि, चाहे हम कहें भी, फिर भी रण-दुल्लाख़ां किसी निन्दनीय कार्यमें हाथ नहीं डालेगा; और इसी-कारण बादशाह ऐसे ही कामोंमें उसकी योजना करता था कि, जो बिलकुल सरलताके साथ करनेयोग्य होते थे। बादशाहके मनमें था कि, क़िलेदार ज्यों ही लाया जाय, उसको जेलमें डालकर नाना भांतिके कष्ट दिये जायँ, अथवा यों कहिये कि, सैयदुल्लाख़ाँने उसके मनको ऐसा सुझा दिया था। जो हो। मुरार जगदेव और रणदुल्लाख़ांका प्रभाव उस समय बादशाह-पर विशेष था; परन्तु सैयदुल्लाख़ांने भी अब धीरे धीरे अपना प्रभाव उसपर जमाना प्रारम्भ किया था। सैयदुल्लाख़ांका नाम इतिहासमें प्रसिद्ध नहीं है; पर यह ध्यानमें रखना चाहिए कि, उसका अनिष्ट प्रभाव बादशाहपर दिन दिन बढ़ता जाता था; और अनेक बातोंमें उस प्रभावका बुरा परिणाम भी हुआ। सैयदुल्ला पहले एक सरदार-ख़ान्दानमें अर्दलीका काम करता था; परन्तु कुछ समय बाद वह बादशाहकी अर्दलीमें आगया। फिर अर्दलीसे शीघ्र ही सरदार बनकर "सरदार सैयदुल्लाख़ां" होगया। वह बादशाहको सदैव यही सुझानेका यत्न करता

कि, मुरार जगदेव, राजा शहाजी भोसले; और रणदुल्लाखां इत्यादि लोग बीजापुर राज्यका अनिष्ट चिन्तन करते रहते हैं। ये नहीं चाहते कि, मराठे बागी, जो नवीन हो उमड़ रहे हैं, उनका दमन हो। और यही कारण है कि, राजा शहाजीका लड़का उन्मत्तताका बर्ताव कर रहा है; और सुलतानगढ़के क़िलेदारका लड़का भी जो अनर्गल व्यवहार करता है, इसका भी कारण यही है। सैयदुल्लाख़ांने इस बातका भी प्रबन्ध कर रखा था कि, सुलतानगढ़पर यदि छोटीसे छोटी भी कोई घटनाएं हों, तो उनका समाचार उसे बराबर मिलता रहे; और इस कामके लिए उसने उक्त क़िलेपर सर्फोजी (जिसका कि स्मरण पाठकोंको होगा) की नियुक्ति कर रखी थी। सर्फोजी सैयदुल्लाख़ांका ही आबुर्दा था; और यही वहांका सब हाल-चाल समय समयपर सैयदुल्लाख़ांको दिया करता था। सैयदुल्लाख़ांकी बड़ी इच्छा थी कि, सुलतानगढ़पर जाकर रंगराव-अप्पाको, तथा और भी एक व्यक्तिको, पकड़ लानेका उसे मौक़ा मिले। परन्तु यह मौक़ा उसे नहीं मिला, सो पाठकोंको मालूम ही है। नानासाहब और उनके पिता रंगराव अप्पासाहब, इन दोनों पिता-पुत्रके बीचमें जो बात होती, वह जैसीकी तैसी सर्फोजीके द्वारा सैयदुल्लाख़ांको मालूम होजाया करती थी। सर्फोजीकी भारी महत्वाकांक्षा यह थी कि, रंगराव-अप्पाके हाथसे क़िलेदारी जाकर, सैयदुल्लाख़ांकी मिहरबानीसे, उसके पास आवे। सैयदुल्लाख़ांका एक और आबुर्दा था;

और वह वही, जो धारगाँवके देशमुख साहबके महलोंमें मारा गया। वही समय समयपर सुलतानगढ़ आता; और सर्फो-जीको एकान्तमें लेजाकर सब ख़बरें पूछता था। यही नहीं, बल्कि यदि उसको सुलतानगढ़पर अपनी इच्छाके अनुसार और भी कोई घटनाएं घटित करानी होतीं, तो उनके लिए भी वह सर्फोजीको तैयार करता रहता था। यहां यह भी बतला देना आवश्यक है कि, सैयदुल्लाख़ांकी दृष्टि नानासाहबकी स्त्रीपर भी बहुत दिनसे थी। उसने एक बार उसे उसके नैहरमें देखा था; और एक बार वह ख़ास तौरपर केवल इसी कामके लिए छिपकर सुलतानगढ़पर भी गया था, तब भी उसने उसे देखा था। सुलतानगढ़के क़िलेदारके विषयमें, और विशेषतः नाना-साहबके विषयमें, तभीसे उसके मनमें वैरभाव विशेष उपस्थित हुआ। उस वैरभावका कारण क्या था, सो यहांपर विस्तार-के साथ बतलानेका कोई प्रयोजन नहीं है। यहां सिर्फ इतना-ही बतला देना पर्याप्त होगा, कि वह कारण उसके हृदयपर ही नहीं, किन्तु उसके शरीरपर भी अपना काम कर चुका था। ऊपर हमने बतलाया है कि, सैयदुल्लाख़ांकी यह बड़ी इच्छा थी कि, वह स्वयं सुलतानगढ़पर जावे; और वहांके क़िलेदारको क़ैदकर लेआवे। इसके साथ ही अपने दूसरे इष्ट कार्यके सिद्ध होजानेका भी उसे पूरा पूरा भरोसा था। बादशाहकी ओरसे क़िलेदारके पास जो अग्रिम खरीता गया था, उसमें भी यही सूचित किया गया था कि, सैयदुल्लाख़ां आपके पास

आवेगा; और आपके कई कार्योंके विषयमें आपसे जवाबतलब करेगा, सो आप यथोचित रूपसे उसे उत्तर दें; और जो आज्ञा वह देवे, उसको हुज़ूरकी ही आज्ञा समझकर ठीक ठीक उसका पालन करें। यही आशय उस खरीतेमें प्रकट किया गया था। सो, रंगराव अप्पा भलीभांति जानते थे कि, इसका परिणाम क्या होगा; इसलिए उन्होंने भी, इधर-उधर चिट्ठियां इत्यादि भेजकर, जो कुछ प्रबन्ध उनको अपनी ओरसे करना था, किया था। सैयदुल्लाख़ां भी, यह समझकर कि, अब हमारे मनोरथ पूर्ण होनेमें देर नहीं, बड़ा आनन्दित हुआ था। उसने सुलतानगढ़के क़िलेदारके साथ ही साथ सूर्याजीके पिता, धारगाँवके देशमुखको भी क़ैदकर लेआनेका षड्यन्त्र रचा था। इसमें उसने प्रकट तो यह किया था कि, नानासाहबकी भांति सूर्याजी भी उन्मत्त होगया है; और ये दोनों मिलकर बहुत जल्द राज्यके विरुद्ध बग़ावत करनेवाले हैं; किन्तु वास्तवमें सच्चा उद्देश्य, देशमुखको क़ैद करानेमें, उसका यही था कि, उसके आबुर्दे की इच्छा पूर्ण हो। इधर जब सुलतानगढ़पर जानेका मौक़ा आया, तब बादशाहका कोई अत्यन्त निजी काम निकल आया, जिसको सैयदुल्लाख़ांके अतिरिक्त और कोई कर ही नहीं सकता था, इसलिए सैयदुल्लाख़ांको बादशाहने रख लिया; और उसकी जगह रणदुल्लाख़ांको सुलतानगढ़ भेज दिया। इससे बेचारे सैयदुल्लाख़ांका बहुत ही मनोभंग हुआ। हां, उसके आबुर्देका वैसा नहीं

हुआ; क्योंकि देशमुखके महलोंमें अपना इष्ट कार्य सिद्ध करनेको जानेके लिए उसे अवसर मिल गया; परन्तु वहां उसकी क्या दशा हुई,सो पाठक जानते ही हैं।

बीजापुरका खरीता जब रंगराव अप्पाके हाथमें पहुँचा, तब उन्होंने इस बातकी थोड़ी-बहुत सावधानी अवश्य रखी कि, इसका वृत्तान्त किसीको मालूम न होने पावे; परन्तु फिर भी उनकी पतोहूको उसका हाल मालूम ही होगया; और वह बहुत जल्द, मौक़ा पाकर रात ही रात, एकाएक ग़ायब होगई; और यह बात पाठकोंके ध्यानमें अवश्य होगी। उस स्त्रीको कुछ पिछले प्रसंगोंसे (जिनका कि वृत्तान्त आगे आवेगा) यह अच्छी तरह मालूम होगया था कि, सैयदुल्लाख़ां किस तरहका मनुष्य है; और वह मुख्यतः किस उद्देश्यसे सुलतान-गढ़पर इस समय आरहा है। और इसीलिए उसने आत्मरक्षाके हेतुसे, जो युक्ति उसकी दृष्टिसे उसे उत्तम दिखाई दी, उसका अवलम्बन किया। वह युक्ति कौनसी? यही कि, सैय-दुल्लाख़ांके आनेके एक दिन पहले ही वह अपनी दासीको साथ लेकर गुप्त रूपसे अपने नैहर चली जाय।

अस्तु। सैयदुल्लाख़ांने जब यह देखा कि, उसका उद्देश्य सिद्ध नहीं हुआ; बल्कि रणदुल्लाख़ांके समान मनुष्य कि, जिसपर उसका कुछ भी बस नहीं चल सकता था, उसके इष्ट कार्यपर भेज दिया गया, तब उसका हृदय बहुत ही सन्तप्त हुआ। फिर उसमें भी जब उसने देखा कि, एक ऐसा व्यक्ति,

जोकि उसकी नाकका बाल था, देशमुखके महलोंमें मार डाला गया, तब तो उसके सन्तापकी सीमा ही न रही।

हमारे इस कथानककी अधिकांश घटनाएं अब बीजापुरके मुक़ामपर ही घटित होंगी। पिछले परिच्छेदोंमें हमने सैयदुल्लाख़ां और उसकी कारस्तानियां, तथा रणदुल्लाख़ां और उसका वृत्तान्त पाठकोंके सामने उपस्थित किया है। अस्तु; पिछले परिच्छेदमें हम यह बतला चुके हैं कि, रणदुल्लाख़ांने सुलतानगढ़से वापस आकर बादशाहको वहांका सब वृत्तान्त बतलाया। उन्हीं दिनोंके लगभग सर्जेख़ां भी शिवदेवरावके साथ बीजापुर आपहुँचा। सर्जेख़ांसे हमारे पाठक भलीभांति परिचित हैं। इस सरदारको बादशाहने शिवदेवरावके साथ, उसपर गुप्त नज़र रखनेके लिए,भेजा था। बात यह थी कि,सैयदुल्लाख़ांने ही बादशाहको यह सुझाया था कि, सासवड़ और पुरन्दरकी ओर राजा शहाजीके लड़केने तथा अन्य कुछ बाग़ियोंने बड़ा उपद्रव मचा रखा है, सो उसीकी जांचके लिए—कि यह बात क्या है,-मुरार जगदेवके द्वारा शिवदेवराव भेजा गया था। शिवदेवराव और सर्जेख़ांकी कैसी क्या पटी, उन दोनोंके उक्त धावेमें क्या क्या घटनाएं हुईं, सो सब हमारे पाठकोंको विस्तारपूर्वक मालूम हैं। सच तो यह था कि, मुरार जगदेवरावका बीजापुरके दरबारमें जो प्रभाव था, सैयदुल्लाख़ां उससे बहुत जला करता था; और इसकारण सदा उसका यही प्रयत्न रहता कि, मुरार-जगदेवका बादशाहपर जो प्रभाव है, वह जहांतक कम किया

जा सके, वहांतक काम किया जाय। परन्तु मुरार जगदेव चूंकि बीजापुर राज्यका बहुत पुराना और ईमानदार नौकर था, इसलिए उसकी सलाहके विरुद्ध कोई भी काम करना स्वयं बादशाहके लिए भी कठिन था। उत्कृष्ट कार्योंमें काम देनेवाले दो थे—एक मुरार जगदेव और दूसरा रणदुल्लाख़ां; और अवांच्य कामोंमें, जिसका सदैव उपयोग होता था, तथा इसी एक बातके कारण जिसका प्रभाव बादशाहपर पड़ता था, वह था सैयदुल्लाख़ां। बस, इसी त्रिकूटके बीचमें फँसकर बादशाहकी एक बड़ी विचित्रसी दशा होरही थी। रणदुल्लाख़ां और मुरार जगदेव, इन दोनोंको एक ही कहा जाय तो भी कोई हानि नहीं; क्योंकि मुरार जगदेव और रणदुल्लाख़ांके पिताका अत्यन्त स्नेह था; और इसकारण मुरारपन्त जो कुछ करते, रणदुल्लाखां उसे कभी न टालता; और रणदुल्लाख़ां जो बात कहता, मुरारपन्त भी उसे पूर्ण करनेको तत्पर रहते। मतलब यह कि, दोनोंकी गट्टी ख़ूब जम गई थी। बादशाहका भी झुकाव इन्हीं दोनोंकी ओर था; परन्तु कममार्गमें चूंकि सैयदुल्लाख़ांका प्रभाव विशेष था, इसकारण उसकी भी बात बादशाहको माननी ही पड़ती थी। सारांश यह कि, मुरारपन्त और रणदुल्लाख़ां एक ओर थे; और सैयदुल्लाख़ां दूसरी ओर। मुरारपन्त और रणदुल्लाख़ांका सदैव यह प्रयत्न रहता कि, राज्यका प्रबन्ध उत्तम रीतिसे चलता रहे; और जो मराठे सरदार राज्यकी सेवामें हैं, उनका मन जहांतक सन्तुष्ट रहे, वहांतक अच्छा। दोनोंका

उद्देश्य यही था कि, मराठे सरदारोंका मन बिना कारण बिगड़ने न पावे; और उनकी राज्यभक्ति जहांतक क़ायम रखी जासके, क़ायम रखनेका प्रयत्न किया जावे। परन्तु सैयदुल्लाख़ांका यह उद्देश्य नहीं था। उसका उद्देश्य यह था कि, जहांतक होसके, अपना प्रभाव बढ़ाया जाय; और प्रधानमंत्रीका अधिकार जितनी शीघ्रतासे होसके, अपने हाथमें आजाय, तथा मराठोंका प्रभाव बिलकुल नष्ट करके सब जगह अपना ही प्रभाव रहे; और अपने ही आबुर्दे जहां-तहां रखे जावें। मुरारपन्त और रणदुल्लाकी इच्छा यह थी कि, जहांतक मिल सकें, अच्छे अच्छे आदमी राज्यके अधिकारपर रखे जावें। क्योंकि मुरारपन्त यह अच्छी तरह जानते थे कि, आजकल मुसलमानोंके अत्याचारोंके कारण मराठी प्रजामें असन्तोष अत्यधिक फैल रहा है, शिवाजीके समान नवयुवक मराठे बग़ावत करनेको खड़े हुए हैं, सो केवल यों ही नहीं—और इसीलिए उन्होंने सोचा कि, शिवाजीके समान प्रबल व्यक्तिके दमन करनेका सबसे पहला उपाय यही है कि, मराठे सरदारोंको—विशेषकर उन सरदारोंके युवक लड़कोंको सन्तुष्ट रखा जाय। इसकारण सदैव वे ऐसी बातोंके प्रयत्नमें रहते कि, ऐसे ख़ान्दानी नवयुवकोंको दरबारमें बुलवाकर उनकी इज़्ज़त-प्रतिष्ठाकी जाय; और उनको अच्छे अच्छे ओहदे देकर उनको बहादुरी और ज़िम्मेवारीके काम बतलाये जाँय। मुरारपन्त सदैव बादशाहसे कहते रहते कि, "इन सरदारों अथवा क़िले-

दारोंके हाथसे यदि कभी कोई प्रमाद होजाय, तो उनको क्षमा करना चाहिए। यह मौक़ा उनके मनको दुखानेका नहीं है। नित्य हम सुनते रहते हैं कि, शिवाजीने विद्रोह मचा रखा है, हमारे प्रान्तमें वह बड़ा उपद्रव कर रहा है; पर इसमें बहुत कुछ अतिशयोक्ति है। राजा शहाजीके हाथसे उसको एक धमकीका पत्र लिखा दिया जाय, बस, काम होजायगा। उसके लिए फौज-फांटा भेजकर अनावश्यक महत्व देनेसे कोई तात्पर्य नहीं।" मुरारपन्तकी यह सलाह अत्यन्त चातुर्यपूर्ण थी, सो सभी जान सकते हैं। परन्तु सैयदुल्लाखांको, जो-कि अपने सामने किसीको समझता ही नहीं था, उसकी उत्कृष्टता कैसे मालूम होसकती? वह मालूम हुई हो, चाहे न मालूम हुई हो—परन्तु उसने उसका निराला ही अर्थ निकालकर बादशाहको यह सुझाया कि, मुरारपन्तका इसमें यह हेतु है कि, मुसलमानोंकी बादशाहत डूबकर वह मराठोंके हाथमें चली जाय। इसलिए राजा शहाजीको, उसके लड़केके उपद्रवोंपर, यदि इस समय सज़ा न दीजायगी; और उस लड़केको पकड़कर यदि नष्ट न कर दिया जायगा, तो आगे बहुत बड़ा अनर्थ उपस्थित होगा। इसके सिवाय, सुलतानगढ़के क़िलेदार और उसके लड़के, तथा धारगाँवके देशमुख तथा उसके लड़केको भी क़ैद करके जेलमें डाल देना चाहिए। अब बादशाह, किसकी सुने; और किसकी न सुने, सो कुछ उसकी समझमें न आता; क्योंकि बादशाहके पास अपनी निजकी अक़्

अपनी ज़रूरतभरके लिए ही थी! सैयदुल्लाख़ां जब पास होता, तब वह अपना कथन उसके दिमाग़में भर देता; और जब उसको सोचकर बादशाह वैसा करनेके लिए मुरारपन्तके सामने बात निकालता, तब मुरारपन्त बड़ी चतुराई और अदबके साथ उसका खण्डन कर देते। यही हाल बहुत दिनतक होता रहा। सैयदुल्लाख़ां बड़ा आग्रही और दृढ़प्रयत्नी मनुष्य था। उसने सोचा कि, ऐसे काम नहीं चलेगा, बादशाहके यहां हमारी चल सके—इसके लिए अब कोई अच्छीसी युक्ति करनी चाहिए। बस, यही सोचकर उसने, बादशाहसे न बतलाते हुए ही, सुलतानगढ़की, धारगाँवके देशमुखके यहांकी; और सासवड़की ओरकी, सब छोटी-मोटीतक ख़बरें मँगानेका प्रबन्ध किया। सुलतानगढ़के क़िलेपर सर्फोजीको फोड़कर उसके द्वारा वह वहांकी सब ख़बरें जान लेता; और फिर उनको, और भी नमकमिर्च मिलाकर, प्रति दिन बादशाहको बतलाता रहता। इसी प्रकार धारगाँवके देशमुखके यहांके भी सब समाचार वह बादशाहको देता रहता। सासवड़की ओरका ठीक ठीक समाचार उसे कभी प्राप्त नहीं हुआ। हां, जो कुछ प्राप्त भी होता था, वह संशयात्मक होता था; इसलिए उसमें और भी नमक-मिर्च मिलाकर उसे वह निश्चयात्मक स्वरूप देता; और तब फिर उसको बादशाहके सामने कहता था। इस प्रकार वह बहुत दिनतक करता रहा; और इधर मुरारपन्त तथा रणदुल्लाख़ांको उसकी इस

भीतरी कार्रवाईका ठीक ठीक पता नहीं था, इसकारण उनकी ओरसे उसका कोई प्रतिकार भी नहीं होसका। परिणाम यह हुआ कि, बादशाहके मनमें यह बात बिलकुल बैठ गई कि, उक्त तीनों स्थानोंकी ओर कोई न कोई आदमी भेजकर इसका कुछ बन्दोबस्त करना चाहिए। सैयदुल्लाख़ांकी सलाहके अनुसार उसने इस कामके लिए तीन आदमियोंकी तजवीज भी कर ली। वे तीन आदमी क्रमशः ये थे :—सैयदुल्लाख़ां खुद, सर्जेख़ां और प्यारेख़ां। सर्जेख़ांको शिवाजीके प्रान्तमें भेजना निश्चित हुआ। सुलतानगढ़पर सैयदुल्लाख़ां खुद जानेवाला था; और प्यारेख़ांको देशमुखके महलोंमें भेजना निश्चित हुआ। राजा शहाजीपर बादशाहकी अच्छी कृपा थी। इधर मुरारपन्त और शहाजीका तो पूरा पूरा स्नेह था ही। इसलिए मुरारपन्तको जब उपर्युक्त बातोंका पता चला, तब उन्होंने बादशाहसे कहा कि, आप यदि ऐसा करेंगे, तो व्यर्थके लिए राजा शहाजीका चित्त बहुत दुःखित होगा; इसलिए आप ऐसा न करें, तो अच्छा। राजासाहब आपके बहुत पुराने और ईमानदार कार्य-कर्त्ता हैं। उनको व्यर्थके लिए कष्ट देना राजनीतिज्ञताकी दृष्टिसे उचित न होगा। उस तरफका समाचार लानेके लिए यदि किसी मनुष्यको भेजनेकी आवश्यकता ही हो, तो मैं अपना एक विश्वासपात्र आदमी भेजता हूं। लेकिन सर्जेख़ांके समान आदमी-को उधर भेजना ठीक न होगा। इस प्रकार मुरारपन्तने जब बादशाहको बहुत कुछ समझाया, तब बादशाहको उनके कथनकी

सत्यता तो प्रतीत होगई; पर सैयदुल्लाख़ांका मनोभङ्ग भी उससे नहीं हो सकता था। इसलिए अन्तमें यही निश्चित हुआ कि, मुरारपन्तका आदमी मुखिया बनकर जावे; और सर्जेख़ां फिर उसके साथ साथ रहे। सैयदुल्लाख़ांको अवश्य ही यह बात पसन्द न आई, परन्तु फिर भी उसने यह सोचकर इस प्रस्तावका अनुमोदन कर दिया कि, अच्छा, बिलकुल ही न होनेसे यही अच्छा कि, हमारा आदमी साथ तो रहेगा, तब अवश्य ही वह मुरारपन्तके आदमीकी एक भी न चलने देगा। सुलतान-गढ़पर वह स्वयं जानेवाला था; परन्तु यह भी न होसका; और वहां भी मुरारपन्तका ही साथी रणदुल्लाख़ां भेजा गया। परन्तु इस विषयमें पहले उसे कोई विशेष रूपसे बुरा नहीं लगा; क्योंकि उसने सोचा कि, हम स्वयं यदि वहां गये होते, तो तुरन्त ही हमारा मनोरथ पूर्ण हुआ होता; परन्तु अब, बहुत होगा, तो थोड़ी देर लग जायगी; किन्तु बादशाहके जिस निजी आवश्यक कार्यके कारण हमारा जाना वहां इस समय नहीं होता, उसको यदि हम कर लावेंगे, तो बादशाहकी मर्ज़ी हमपर और भी अधिक होजायगी; और तब फिर अपना कार्य सिद्ध करनेमें और भी सुगमता होजायगा। बस, यही सब सोचकर उसने उस समय धैर्य धारण किया। जो मुख्य कार्य उसे सिद्ध करना था, उसके विषयमें उसका यह विचार था—विचार ही नहीं, बल्कि उसे विश्वास भी था कि, रणदुल्लाख़ां जब क़िले-दार और उसके कुटुम्बके सब लोगोंको क़ैद करके बीजापुर

ले आवेगा, तब भी हमारा वह कार्य अवश्य सिद्ध होसकेगा। परन्तु जब उसने देखा कि, रणदुल्लाख़ां सिर्फ क़िलेदारको ही क़ैद करके बीजापुर लेआया है; और उसकी पतोहूको उसके साथ नहीं लाया; तब, जैसाकि हमने पिछले परिच्छेदमें बतलाया, उसको बहुत ही सन्ताप हुआ। उस समय उसको इतना दुःख हुआ कि, रणदुल्लाख़ां उसकी आंखोंमें काँटेकी तरह चुभने लगा। उसने सोचा कि, रणदुल्लाख़ांको मार डालूं या क्या करूं? फिर उसने इस बातका पता लगाया कि, वह तरुणी इस समय है कहां? क़िलेपर ही है या रणदुल्लाख़ां स्वयं अपने लिए उसे उड़ा लाया? अन्तमें उसको पता लगा कि, रणदुल्लाख़ां जिस समय क़िलेपर गया, उस समय वह क़िलेपर थी ही नहीं—एक दिन पहले ही वह अपने पिताके घर चली गई थी। अस्तु। इसके बाद, जब उसको यह मालूम हुआ कि, रणदुल्लाख़ांने क़िलेदारके साथ बहुत ही प्रेम और अदबका बर्ताव किया, तब उसने रणदुल्लाख़ांसे ही बदला लेनेका निश्चय किया। साथ ही यह भी उसने प्रतिज्ञा की कि, क़िलेदारको अपने अधिकारमें लेकर उसको क़ैदखानेमें डाल दूंगा; और उसको नाना प्रकारकी यातनाएं देकर जानसे मार डालूंगा—यही नहीं, बल्कि उसके समधीका, अर्थात् नानासाहबके श्वसुरका भी, घर-द्वार लूटकर कुटुम्बसहित उसको पकड़ लाऊंगा; और इस प्रकार अपनी इच्छाको तृप्त करूंगा।

उधर सर्जेख़ांने भी बीजापुर आते ही सैयदुल्लाख़ांको अपना सब वृत्तान्त बतलाया। शिवदेवरावकी और हमारी किस प्रकार नहीं पटी, शिवदेवराव हमको बाहर ही रखकर अकेला किस प्रकार हनुमानजीके उस संशयात्मक मन्दिरमें गया, वह हमको किस प्रकार धोखा देना चाहता था; परन्तु हम उसके धोखेमें नहीं आये; और बाबाजीको किस प्रकार क़ैद कर लिया; क़ैद करनेके बाद जब उसको पुरन्दरके क़िलेपर लेआये, तब शिवदेवराव और क़िलेदार दोनों किस प्रकार बाग़ियोंसे मिल गये; हमसे न पूछते हुए उस वैरागीसे मिले; और उसको छुड़ानेके लिए हमसे किस किस प्रकारसे प्रार्थना की, अन्तमें फिर किस प्रकार उद्दण्डताका व्यवहार किया, बाग़ियोंको किस प्रकार पहले ही समाचार देकर ऐन मौक़ेपर किस प्रकार उस बाग़ी वैरागीको छुड़ा लेनेका प्रयत्न किया; घुड़-सालमें ख़ास तौरपर आग किस प्रकार लगा दी गई; वैरागी-को कड़ेलोट करनेतककी सब तैयारी जबकि हमने कर ली, तब किस प्रकार, आगेका सब हाल जानकर, उन दोनोंने हमको अकेला ही उस कोटकी तरफ़ छोड़ दिया; और फिर शत्रु लोग एकाएक छापा मारकर किस प्रकार उस वैरागी-को छुड़ा लेगये, तथा हमारे साथ जो सिपाही थे, उनको जानसे मार डाला—हां, हम केवल अपनी बहादुरीसे बच गये, इत्यादि बातें उसने उसी तरहसे नहीं बतलाईं, जैसी कि हुई थीं; बल्कि जैसी उसके मनमें आईं, वैसी और कुछ

नमकमिर्च मिलाकर, तथा अपनी कुछ बड़ाई मारते हुए, बतलाईं। सैयदुल्लाख़ांको और क्या चाहिए? उसका मुख्य उद्देश्य तो यही था कि, मुरारपन्तका प्रभाव बादशाहके ऊपरसे जितना कम किया जासके, उतना कम करना चाहिए; और अपने इस उद्देश्यको सिद्ध करनेके लिए उसने यह मौक़ा बहुत अच्छा देखा। उसने इस बातका तो निश्चय कर ही लिया कि, इस मौक़ेसे जितना लाभ उठाया जासके, उठाना चाहिए—इसके सिवाय, उसने एक अच्छा अवसर पाकर बादशाहके कानोंमें भी ये बातें डाल दीं कि, देखिये, मुरारपन्तके भेजे हुए आदमी, शिवदेवरावने, बाग़ियोंसे मिलकर किस प्रकार नीचताका व्यवहार किया; और सर्जेख़ांके साथ भयंकर विश्वासघातका बर्ताव किया, इत्यादि। उन्हीं दिनोंके लगभग एक और भी ऐसा कारण उपस्थित होगया था कि, जिससे बादशाहपर सैयदुल्लाख़ांका प्रभाव पहलेसे कुछ अधिक बढ़ गया था। इन्हीं सब कारणोंसे उस समय बादशाहके मनपर उसकी बातोंका अधिक प्रभाव पड़ा; और विषका पहला बीज बोया गया।

तैंतीसवां परिच्छेद ।

कुछ अन्य लोग ।

(१)

बीजापुरकी बहुत बड़ी इमारत—गोलगुम्बज़—अभी पूरी पूरी तैयार नहीं हुई थी, उसका काम जारी था; और उससे हज़ारों लोगोंका पेट भरता था। इसी प्रकार और भी कितने ही नवीन नवीन बाज़ार बसानेके लिए तेज़ीके साथ प्रयत्न हो-रहा था। नगर उस समय वैभवके अत्यन्त उच्च शिखरपर पहुँच चुका था। बादशाह और उसके अमीर-उमरा अपने अपने अन्तःपुरोंमें केवल ऐश-आराम करनेमें निमग्न थे। बादशाहको यह स्वप्नमें भी ज्ञान नहीं था कि, हमारे अमीर-उमरावोंसे हमारी हिन्दू-प्रजाको कितना कष्ट होरहा है; और यदि उससे जाकर इस विषयमें कोई कुछ कहता भी, तो उसकी वह कोई परवा नहीं करता था। मतलब यह कि, क्या बादशाह; और क्या उसके अमीर-उमरा-सभी इस प्रयत्नमें रहते कि, जो स्त्री नज़र तले पड़ जावे, उसीको प्राप्त किया जाय। इधर सैयदुल्लाखां नाना प्रकारकी कपटयुक्तियां करके रम्भावतीके समान अनेक सुन्दरी युवतियोंको अपने जालमें फँसा लाता; और उन्हें बाद-शाहको समर्पित करता। बादशाह भी अपने इसी भोग-विलास-में लिप्त रहता। बस, इसी सम्बन्धकी कारस्तानियां उस समय

बीजापुरमें जारी रहती थीं। इनको छोड़कर राज्य-प्रबन्ध-विषयक कार्यवाहियां मानो उस समय वहां बिलकुल थी ही नहीं। सो, इस प्रकारके बीजापुर नगरमें प्रविष्ट होकर उसका सारा रंगढंग देखनेमें अभी हम नहीं फँसना चाहते। किन्तु, इसके पहले, कुछ और भी ऐसे पात्र हैं कि, जिनका हाल-हवाल देखनेके लिए हम अपने पाठकोंको लेचलना चाहते हैं। बीजा-पुरकी बड़ी बड़ी दरगाहें, बड़ी बड़ी मसज़िदें, अमीर-उमरावोंके बड़े बड़े महल, इत्यादि इमारतें देखनेके लिए पहले हम अपने पाठकोंको नहीं लेचलेंगे; और न मुहम्मदशाहबाज़ार और इलाक़ाबाज़ारके समान बड़े बड़े चौकोंकी ही सैर करावेंगे। इसके सिवाय रणदुल्लाख़ां और उसके नवीन मित्र (उस मराठे सरदार), रंगराव अप्पा, सैयदुल्लाख़ां, सर्जेख़ां और स्वयं बाद-शाह इत्यादिकी भी कारस्तानियोंमें अभी हम अपने पाठकोंको नहीं डालेंगे—किन्तु अभी तो हम उनको उस बटवृक्षके नीचे-वाली झोपड़ीके लोगोंके पास लेचलेंगे, जो धारगाँवसे कुछ मीलकी दूरीपर थी। पाठकोंको स्मरण होगा कि, बरगदके नीचेकी उस झोपड़ीमें जो एक वृद्ध मनुष्य रहता था, उसके पास जानेके लिए सूर्याजीने श्यामासे कहा था। उन्होंने श्यामा-को जो अन्तिम सन्देशा दिया था, उसका पूर्वार्द्ध यही था कि, तू किसी न किसी प्रकार मेरी स्त्री और बच्चेको घोड़ेपर बैठा-कर उस झोपड़ीमें ले जा; और वहां जो बुड्ढा रहता है, उसको पहचानके तौरपर यह कटार और ताबीज देना, तथा उसे

यह सन्देशा बतलाना कि, "सूर्याजीने अपनी स्त्री और लड़कीको तुम्हारे सिपुर्द किया है।" परन्तु सूर्याजीकी इच्छाके अनुसार श्यामा उनकी स्त्री और लड़कीको वहां ले नहीं जासका। इसके बाद वे दोनों आगके बीचमें पड़ गये। परन्तु श्यामाने उस झोपड़ीमें आकर उनका समाचार पहले ही देदिया था, इस-कारण उस बुड्ढेने एक कालाकलूटा आदमी वहां भेजा; और उसने जाकर उस आगसे उन दोनोंके प्राण बचाये। अस्तु। ये सब बातें पाठकोंको मालूम ही हैं, अतएव अब उनकी विशेष रूपसे याद दिलानेकी आवश्यकता नहीं। यहांपर सिर्फ इतना ही बतलाना आवश्यक है कि, उपर्युक्त घटनाओंके होजानेके कोई पांच-छै दिन बाद आज हम फिर उस झोपड़ीपर जारहे हैं। जिस समय अब हम वहां पहुंचकर देख रहे हैं, उस समय वह बुड्ढा अकेला ही वहांपर है; और मन ही मन कोई अत्यन्त उद्-वेगकारक विचार कर रहा है। यह बुड्ढा वास्तवमें हमको जितना बुड्ढा दिखाई देरहा है, उतना बुड्ढा वह नहीं है; और यह बात उसके चेहरेकी कुछ रेखाओंसे सहज ही दिखाई पड़ रही है। ऐसा जान पड़ता है कि, अवस्थाका प्रभाव उसपर उतना नहीं पड़ा है, जितना चिन्ता और दुःखका; और इसीकारण उसकी शक्तिका इतना ह्रास होगया है। अस्तु। इस समय भी उसका चित्त किसी न किसी भारी चिन्तामें हो निमग्न होरहा था। ऐसा जान पड़ता था कि, वह किसी न किसीकी प्रतीक्षा कर रहा है। ज़रा कहीं कोई चीज़ खटकती

कि, वह बाहर सिर निकालकर देखने लगता; और जब किसी-को न देखता, तब निराश होकर पीछे हट जाता। इसके बाद फिर वह अपनी दीन झोपड़ीमें इधरसे उधर चक्कर मारने लगता। ऐसा करते करते वह आप ही आप कुछ गुनगुनाने लगा।

"ईश्वरकी गति कैसी विचित्र है। चार वर्ष पहले मेरी क्या हालत थी; और आज क्या होगई? 'जिन दुष्टोंने मुझपर ऐसा भयंकर प्रसंग उपस्थित किया है, उनके कलेजेका ख़ून चूस लेंगे, तभी हम दोनों संसारमें रहेंगे'—इस प्रकारकी प्रतिज्ञा की थी, सो क्या अब व्यर्थ जायगी? आजतक तो कोई बात हम-से नहीं होसकी, जिससे उस प्रतिज्ञाके पूर्ण होनेके कोई लक्षण दिखाई देते; बल्कि चोरोंकी तरह आज कितने ही वर्षोंसे इसी झोपड़ीमें मुँह काला किये हुए बिता रहे हैं। इससे तो यही अच्छा होता कि, हम दोनों ही कुएंमें जाकर डूब मरते! आह! (दांतोंसे होंठ चबाकर) कभी वह कलेजा चूसनेको मिलेगा? दुष्टोंने घर-द्वार, जागीर-माफी इत्यादि, सबका नाश कर दिया; और हमको इस देशमें लाछोड़ा! यह लड़की ही कुछ सुखमें रही। इसीमें आनन्द मानकर अब हम केवल बदला लेनेकी ही चिन्तामें थे। इतनेमें लड़कीके सुखका भी नाश किया! अब यह काहेको ज़िन्दा रहेगी? मुझे तो कुछ भी आशा नहीं। पर, अबतक राणू क्यों नहीं आया? और वह छोकरा श्यामा भी न जाने किधर चला गया, उसका भी पता नहीं। यह एक बड़ी

बला आई ! कुटुम्ब बढ़ता जारहा है; और इससे तो हमारे स्थानका पता चल जानेका भय है……”

इस प्रकार उस बुड्ढेके मनमें बराबर विचार आरहे थे; और उन विचारोंके कारण उसका मस्तक इतना संतप्त होउठा था कि, मस्तकके दोनों ओरकी नसें बिलकुल फूल गई थीं। इस प्रकार बहुत देरतक विचार करते रहनेके बाद सचमुच ही किसी मनुष्यके आनेकी आहट उसे सुनाई दी। तुरन्त ही उसने दरवाजेको ज़रा खोलकर देखा, तो वही काला-कलूटा मनुष्य, जोकि देशमुखके महलोंसे सूर्याजीकी स्त्री और बच्चेको आगके मुखसे निकाल लाया था, सामने ही बिलकुल दरवाजेके पास आगया। बुड्ढेने उसको देखते ही तुरन्त दरवाजा खोल दिया; और उसको भीतर लेकर “कहो, कुछ आशा है ?” कहकर पूछा। उसका उत्तर जितनी जल्दी मिलना चाहिए था, उतनी जल्दी नहीं मिला—यही नहीं, बल्कि उस बुड्ढेको, जो कुछ न कुछ उत्तर पानेके लिए बड़ा आतुर होरहा था, फिर प्रश्न करना पड़ा “क्यों ? बोलता क्यों नहीं ? क्या कुछ आशा नहीं ?” यह प्रश्न होते ही, मानो यह सोचकर कि, अब कुछ न कुछ उत्तर देना ही चाहिए, वह आदमी कहता है, “नहीं, बिलकुल निराश होनेकी आवश्यकता नहीं, परन्तु……”

इस “परन्तु” में जितना अर्थ था—कमसे कम जितना उस बुड्ढेने समझा—उतना अर्थ उसके पिछले वाक्यमें नहीं था, सो स्पष्ट ही था। उसका उक्त वाक्य सुनते ही बुड्ढा एकदम

कहता है, "मैंने तो पहले ही समझा था। जिस दिन वह भयंकर प्रसंग आया, जिस दिन हमारे महलोंमें घुसकर हमारे देखते देखते (दांतोंसे होंठ चबाकर) आह! हमारे......"

शोक और सन्तापके विकारोंने मानो उस बुड्ढेकी जिह्वामें बिलकुल शक्ति ही नहीं रखी; और उसके मुँहसे कोई शब्द नहीं निकल सका। आंखें लाल सुर्ख होगईं; और उनसे पानी भी बहने लगा। यह देखकर वह काला-कलूटा आदमी कुछ पछताया कि, यदि हमने कुछ भी न कहा होता, तो ही अच्छा था। परन्तु फिर इसके बाद वह उस बुड्ढेसे कहता है, "सचमुच ही मैं कहता हूं, इतना निराश होनेका कोई कारण नहीं। और यदि कोई निराश होनेका कारण भी हो, तो दादा, आप ही जब ऐसा करने लगेंगे, तब मैं अकेला क्या कर लूंगा? आप जानते ही हैं कि, हम लोगोंकी दशा कितनी विचित्र होरही है। हमको अपनी प्रतिज्ञा किसी न किसी प्रकार पूरी करनी है। इसलिए आप यह चिन्ता, यह खेद, बिलकुल छोड़ दें; और जैसाकि आप मुझसे कहा करते हैं, परमात्मापर विश्वास रखकर आगेके कार्यको देखें। मेरा तो ऐसा ख़याल है कि, इस समय चाहे कोई विशेष आशा दिखाई न देती हो, फिर भी वे दोनों अन्तमें बच ज़रूर जायँगे; क्योंकि यदि उनको बचना न होता, तो मेरे हाथों उस भयंकर आगसे ही उनका छुटकारा कैसे होता? आप सोचिये। हम लोग किस दशामें हैं, उसपर ज़रा ग़ौर कीजिए। हमको जो कुछ करना

है,सब गुप्त रूपसे ही करना है। और उसमें भी यदि आप धैर्य छोड़ देंगे, तो कैसे काम चलेगा ? चलिए, मैं आपको वहीं लेचलनेके लिए इस समय आया हूं। आइये, वहां चलें; और रात-दिन प्रयत्न करके, जिस तरहसे होसके, उनके प्राण बचावें। अब आप शोक न करें।"

बुड्ढे का ध्यान उस मनुष्यके कथनकी ओर था, अथवा नहीं, कुछ कहा नहीं जासकता। वह बिलकुल शून्य और भयंकर दृष्टिसे एक ओर देख रहा था। उसकी चेष्टासे स्पष्ट मालूम होरहा था कि, उसके मनमें कोई अत्यन्त ही क्रूर विचार आरहे हैं। उसका सारा चित्त उन विचारोंकी ही ओर लग रहा था। इसलिए, पास ही खड़े हुए उस मनुष्यने उपर्युक्त जितने शब्द कहे, उनमेंसे एक भी शब्द मानो उसके हृदयमें नहीं पैठा। क्योंकि वह अपने उन्हीं विचारोंके आवेगमें एकदम उस मनुष्यसे कहता है, "हम दोनों और वे दोनों, तथा वह छोटा बच्चा—ये सब एक ही झोपड़ीमें बन्द होकर यदि उसमें आग लगा लेवें, तो क्या बुरा ? बतला, अब हम अपनी प्रतिज्ञा किस प्रकार पूर्ण कर सकते हैं ? यह कुछ नहीं हो-सकता। मेरी इन नष्ट आंखोंके देखते देखते अभी न जाने कौन कौन विपदाएं आवें ! जा, अब तू ही वहां जा। मैं अब चाहे जहां जाकर, चाहे जो कर लूंगा।" इतना कहकर सचमुच ही वह पागलकी भांति झोपड़ीके बाहर निकल पड़ा। उसकी वह विचित्र हालत देखकर वह दूसरा आदमी भी उसके पीछे

ही पीछे झोपड़ीसे बाहर निकला; और बड़ी कठिनाईसे उसने उस बुड्ढेको रोककर, "दादा", "दादा", कहकर स्थिर किया। बुड्ढेके उस भयंकर उद्वेग और कोपका आवेग ज्यों ही एक बार दूर हुआ, वह बिलकुल किसी गौकी तरह दीन दिखाई देने लगा; और फिर वह अपने उस साथीके साथ, जिधर वह चला, उधर ही जाने लगा—मानो अब उसका निजका अपना कोई विचार उसके पास रहा ही नहीं। वह युवक उसका हाथ पकड़कर अपने अभीष्ट स्थानको ओर लिये जारहा था। उस समय वे दोनों अपनी झोपड़ीसे और भी अधिक घने जङ्गलके अन्दर प्रवेश कर रहे थे। न जाने वे अपना रास्ता वहांसे किस प्रकार निकाल रहे थे? दूसरा यदि और कोई होता, तो उसको उन घनी झाड़ियोंमें कुछ दिखाई भी न दिया होता। परन्तु आगे आगे वह युवक और पीछे पीछे बुड्ढा, दोनों उस बिकट मार्गसे ऐसे चले जारहे थे, जैसे अपने घरमें ही घूम रहे हों। इस प्रकार चलते चलते, अनेक मोड़ोंमेंसे, फिर वे एक दूसरी झोपड़ीके पास आये। झोपड़ीके अन्दर एक बहुत ही धीमा दीपक, टिम टिम करता हुआ—मानो अपनी उस अत्यन्त धीमी रोशनीसे—झोपड़ीके अन्दरके अन्धकारकी सघनताको और भी अधिक विशेष रूपसे प्रत्यक्ष करनेका प्रयत्न कर रहा था। अस्तु। उन दोनोंके आनेकी आहट पाते ही बड़ी फुर्तीके साथ एक छोकरा बाहर निकला, जिसे देखते ही उस युवकने कहा, "श्यामा, कोई विशेष बात तो नही?" श्यामा तुरन्त उत्तर देता

है, "कोई बात नहीं। बक-झक तो अब बिलकुल बन्द है। हां, बच्चे की हालत बहुत बुरी दिखाई देती है। उसको जो हिचकियां आरही हैं, सो तो......" आगे वह कुछ कहनेहीवाला था कि, इतनेमें वह युवक और बुड्ढा, दोनों झोपड़ीके अन्दर धीरेसे पहुँच भी गये। देखते हैं, तो उस बच्चे को उलटी सांसें चल रही हैं; और प्रत्येक उसांसके साथ उसका पेट और छाती ऊपर उठ रहे हैं! बुड्ढे ने पहली ही नज़रसे उस बच्चे का भविष्य ताड़ लिया। फिर शीघ्र ही आगे बढ़कर उसने बच्चे-को उठा लिया; और गोदमें लेकर इधर-उधर हिलाने लगा। कुछ समय बाद उसके पेटके बार बार ऊपर उठनेका वेग धीरे धीरे कम होने लगा। उसके हाथ-पैर पहलेसे भी अधिक टेढ़े होगये; और उसकी घबड़ाहट बढ़ गई। वह इतने ज़ोरसे चीख़ मारता और ऐसा मालूम होता कि, उसके प्राण निकले जारहे हैं। उस समय स्पष्ट ही ऐसा जान पड़ा कि, अभी-तक उस बच्चे और उसकी मातापर जो भयंकर संकट आये थे, उनसे तो वह बच गया था; पर अब बच नहीं सकता। उसकी जननी भी बिलकुल बेहोश पड़ी थी; और ऐसा जान पड़ता था कि, उसकी भी हालत बहुत ख़राब होरही है। झोपड़ीके एक दूसरे कोनेमें एक और भी मनुष्य वैसी ही बुरी हालतमें पड़ा हुआ था। सच तो यह था कि, वह झोपड़ी उस समय एक अस्पताल ही बन रही थी, सब बीमार ही बीमार दिखाई देते थे। वह छोकरा बार बार उस कोनेवाले

मनुष्यके पास जाता, वहां कुछ समयतक आहटसी लेता; और फिर उस स्त्रीके बिछौनेके पास आता, वहां भी कुछ काल लगाकर सुनता; और फिर उस बुड्ढेके पास आता, जो उस बच्चेको कंधेमें लगाये इधरसे उधर घूम रहा था। इस प्रकार कुछ समय बाद उस बच्चेने एक बड़ी भयंकर चीख मारी कि, जिसे सुनते ही वह स्त्री, जो अबतक बिलकुल निश्चेष्ट, बिलकुल मृतवत्. पड़ी थी, एकदम चिहुँक उठी; और ये शब्द उसके मुखसे निकलते हुए सुनाई दिये :—"अँः अँः! कहां है मेरा बच्चा! दुष्टने मार ही डाला, जान पड़ता है! अरे दुष्ट! मैं स्त्रीकी जात हूं, इसलिए मुझे......" अगले शब्द मानो उसके होंठोंमें ही रह गये, कमसे कम बाहर तो सुनाई नहीं दिये। ऐसा जान पड़ा कि, कुछ देरतक वह अपने अन्दर ही अन्दर कुछ गुनगुनातीसी रही। बीच बीचमें वह अधूरीसी कुछ उठती और "कहां है मेरा बच्चा? कहां हैं वे?" ये शब्द कहती; और शून्य तथा क्रूर-दृष्टिसे इधर-उधर देखने लगती। बीचमें कभी हँस देती; और कुछ गानासा गाने लगती। सच तो यह था कि, उस समय उसकी ऐसी दशा नहीं थी कि, वह अपने बच्चेकी वास्तविक दशाको ध्यानमें ला सकती।

बुड्ढा, जो अभीतक उस बच्चेको लिये घूम रहा था, एकदम बैठ गया। बच्चेको अन्तिम हिचकी आई; और उसके प्राण निकल गये। बुड्ढेको मालूम ही था कि, बच्चा बच नहीं सकता—वह बुड्ढा और वह युवक मनुष्य, दोनों ही जानते थे

कि, आज नहीं, तो कल इस बच्चेका अन्त होनेहीवाला है। इतना ही क्यों ? बल्कि उस झोपड़ीमें क़दम रखते ही जिस समय उनकी दृष्टि उस बच्चेके मुखकी ओर गई थी, उसी समय उन्होंने जान लिया था कि, यह अब घड़ी-दो घड़ीका ही मेहमान है। इस प्रकार यद्यपि उनके मनकी सारी तैयारी होचुकी थी, फिर भी शोककी विह्वलता, जो उस मौक़ेपर आनेको थी, आये बिना रुक थोड़े ही सकती थी ? बुड्ढेने ज्यों ही देखा कि, बच्चेके प्राण निकल गये, त्यों ही उसे अत्यन्त शोक हुआ; और एकदम नीचे बैठकर उसने अपनी गर्दन घुटनोंके अन्दर कर ली। बच्चेको आगे डाल लिया। यह देखकर उस युवकको-और श्यामाको भी बड़ा भारी दुःख हुआ। आगसे वह माता; और उसका वह बालक, जबसे छूटकर आये थे, विशेषकर बालककी सेवा-शुश्रूषा श्यामा ही किया करता था। बुड्ढा दो-तीन बार उसके मुँहमें दूध डाल जाया करता था; और सारा दिन श्यामा उसकी देखभाल रखता था। यही नहीं, बल्कि श्यामा बार बार बुड्ढेसे कहा करता कि, आप यदि मुझे जाने दें, तो मैं अपनी मांको ले आऊं। वह यदि आगई, तो इस बच्चेकी और इसकी माताकी भी देखभाल उत्तम रीतिसे होसकेगी। पर बुड्ढेने किसी प्रकार उसकी बात स्वीकार नहीं की। श्यामा भी उस बच्चेको, उस दीन-दशामें, छोड़कर जा नहीं सका, तीनोंने मानो उन तीनों बीमारोंकी देखभाल अपने हाथमें लेरखी थी। श्यामा बच्चेको सम्हालता, बुड्ढा

उसकी माताकी देखभाल करता; और वह युवक मनुष्य उस तीसरे आदमीकी शुश्रूषामें लगा रहता था। अब, बच्चा जब नहीं रहा, श्यामाको इतना दुःख हुआ कि, जिसका वर्णन नहीं किया जासकता। बुड्ढे की हालत तो बहुत ही ख़राब दिखाई पड़ी। इतनेमें, कुछ देर बाद, वह युवक मनुष्य उस बुड्ढेसे कहता है, "दादाजी, अब चुप बैठनेसे क्या होगा? आगेका प्रबन्ध करना चाहिए।" बुड्ढा कुछ नहीं बोला। सिर्फ उसने एक दीर्घ निःश्वास छोड़ा; और उस बच्चे की ओर अपनी उस दृष्टिसे कि, जो दुःखके मारे मन्द होरही थी, एकटक देखने लगा। युवकने कुछ देर प्रतीक्षा की; और फिर कुछ बोलनेको हुआ—इतनेमें बुड्ढा अचानक कहता है, "राणू, तो अब अपने वंशका, अपने नाते-गोतेका, सबका हो, सत्यानाश होनेवाला है? सोचा था कि, इतना अंकुर ही बच जायगा, सो भी परमात्माको मंजूर नहीं हुआ! अस्तु। कोई हानि नहीं। अब देखना चाहिए, इन दोनोंका क्या होता है। जो कुछ होनेवाळा है, सो तो प्रत्यक्ष है ही, पर सिर्फ आशाभर है। अब, जाओ, इसको ले-जाओ; और तुम तथा श्यामा, दोनों ही, जो कुछ करना हो, करो। मुझसे तो अब अपनी जगहसे उठा भी नहीं जाता। सचमुच ही यदि इस बच्चेको सम्हालनेके लिए कोई स्त्री होती, तो शायद यह बच जाता; पर अब क्या? हे ईश्वर! अब, जब यह अच्छी होगी, जब यह होशमें आवेगी, तब यह पूछेगी कि, हाय! मेरा बच्चा कहां! उस समय हम··· हाय! हाय! उस

समय हम इसको क्या जवाब देंगे? होशमें आते ही, पहले, यदि उसको यह ख़बर सुनाई जायगी, तो इसकी क्या दशा होगी? अवश्य ही यह फिर पागल होजायगी। हे ईश्वर! तूने क्या मुझको यही सब देखनेके लिए जीवित रखा है? यह तो सब तूने किया, अब मेरी प्रतिज्ञा हो पूर्ण होजाय, तो भी मैं अपने जीवनको सफल समझूं... किन्तु आशा कहाँ है?" बुड्ढे ने उपर्युक्त शब्द एक प्रकारसे, अपने आपसे ही और अधूरेसे उच्चारण किये। क्योंकि उपर्युक्त वाक्योंमेंसे अधिकांश भाग उसने अपने होंठोंके अन्दर ही धीरेसे उच्चारण किया। युवकने उपर्युक्त कथनकी ओर पूरा पूरा ध्यान दिया हो, अथवा न दिया हो; किन्तु उस वृद्धका कथन समाप्त होनेके बाद ही वह कहता है, "दादा, इसकी आप बिलकुल चिन्ता न करें। उस दुष्टके रक्तसे मैं अपने हाथ रङ्गे बिना न रहूंगा जब ऐसा मैं करूं, तभी मराठेका सच्चा पुत्र कहलाऊं! यह मैंने प्रतिज्ञा की है; और इसको जबतक पूर्ण नहीं कर लूंगा, तबतक, चाहे मृत्यु भी मुझे क्यों न लेनेको आवे, मैं उससे भी भिड़ूंगा। अपनी प्रतिज्ञा पूर्ण होती हुई देखनेके लिए आप यदि जीवित रहे, तब तो ठीक ही है; परन्तु यदि ईश्वरने वैसा नहीं भी होने दिया, तो उस हरामख़ोरका बध करके, नहीं नहीं, तिल-तिलके समान उसके टुकड़े करके, उसके रक्तसे नहाया हुआ, मैं स्वर्गमें आऊंगा; और इसकी ख़बर आपको दूंगा।" इनमेंसे अन्तिम वाक्य जब उसके मुँहसे निकलने लगे, तब उसमें इतना जोश आगया कि,

उसे प्रत्यक्ष देखनेवाले श्यामाके अतिरिक्त और कोई उसकी कल्पना भी नहीं कर सकता। उसने अपने दाँतोंसे अपना नीचेका होंठ इतने ज़ोरसे दबाया कि, मानो अपने शत्रुका कलेजा ही उस समय उसके दांतों-तले पड़ गया हो! हमको इस समय करना क्या है, सो मानो उस समय वह बिलकुल ही भूल गया। इतनेमें उसके सन्तापका ज़ोर कुछ कम हुआ—सो उसको मानो और भी अधिक बढ़ानेहीके लिए, बुड्ढा, एक लम्बीसी सांस छोड़कर, कहता है, "ऐसा तुम कहते अवश्य हो; पर जब होजाय, तभी ठीक।"

उसके ये शब्द उस युवककी भड़कती हुई क्रोधाग्निपर घृताहुतिका काम कर गये, क्योंकि इन शब्दोंसे उस युवकका क्रोध इतना भड़का कि, वह सब कुछ भूलकर एक निराला ही प्राणी बन गया। यों तो उसकी आंखें पहले ही काफी विस्तीर्ण थीं; पर अब क्रोधके मारे ऐसी बढ़ गईं कि, मानो उनकी पुत-लियां आंखोंसे बाहर निकली पड़ती थीं! सुर्ख़ वे इतनी होगयी थीं कि, जैसे जलते हुए अङ्गारे। उसके बाल, जो स्वाभाविक ही कुछ रूखे थे, सिरपर बिलकुल सीधे खड़े होगये। वास्तवमें वह इतना क्रूर और क्रुद्ध दिखाई पड़ने लगा कि, ऐसा जान पड़ा कि, मानो इस क्रोधके आवेशमें वह न जाने क्या कर डालेगा! यही सब देखकर वह बुड्ढा कुछ चौकन्नासा हुआ; और फिर उसको शान्त करनेके लिए कुछ कहनेहीवाला था, कि, इतनेमें वह युवक, क्रोधके कारण कर्कश हो-

जानेवाली अपनी वाणीमें, कहता है, "दादा, यदि आप इतने निराश होचुके हैं; और अपने बच्चेकी बहादुरीके विषयमें यदि इतना संशय आपके मनमें उत्पन्न होचुका है, तो मैं कहता हूं—सुनिये—अच्छी तरह सुनिये—यदि आपके वीर्यसे मैं उत्पन्न हूं—असली मराठेके वीर्यका यदि मैं हूं—तो आजसे तीन महीनेके अन्दर ही···दादा, आजसे तीन—तीन ही महीनेके अन्दर, उस दुष्टके, तिल-तिलके समान, टुकड़े कर डालूंगा, उसके उस चांडाल-रक्तसे नहाऊंगा; और अपने हाथ लाल सुर्ख़ करके लातकी ठोकरसे ही उसका सिर उड़ाता हुआ आपके सामने लाऊंगा;और तब आपको प्रणाम करूंगा। यदि आजसे तीसरे महीनेके दिवसान्ततक मैं आपके पास न आऊं, तो समझ लीजिएगा कि, मैं मर गया; और प्रतिज्ञा-भङ्गके पातकसे न सिर्फ अपने ही मुखमें, किन्तु अपने बयासी पीढ़ियोंके, पुरखोंतकके मुखमें कालिख लगाई; और उस दशामें फिर आप समझ लीजिएगा कि, मैं कहीं जङ्गलमें पड़ा हुआ सड़ रहा हूं; और स्यार तथा गिद्ध मेरे शरीरके टुकड़े टुकड़े करके खारहे हैं—बस,इससे अधिक और मेरे जीवनका उस समय क्या होगा? हां, तीन महीनेतक आप इस बातका कुछ भी पता न लगाइयेगा कि, मैं कहांपर हूं; और क्या करता हूं। इन्हीं दोनोंकी सेवामें रहिये, आप ख़ुद यदि बीमार पड़ जावें, यदि मरनेपर भी आरहें, तो भी, शरपञ्जरमें पड़े हुए भीष्मकी भांति, तीसरे महीनेके अन्तिम दिनके सूर्यास्ततक मेरी प्रतीक्षा करें। अब मैं

इस बालकका शव जङ्गलमें लिये जाता हूं; और इसकी अन्त्य-क्रिया करता हूं .....हां, हां, इसको लेकर जहां मैं बाहर गया, फिर प्रतीज्ञा पूरी किये बिना आपको यह मुख नहीं दिखाऊंगा। नहीं, नहीं। कुछ मत बोलिये। जो प्रतिज्ञा मराठेके मुखसे निकल चुकी, अब त्रिकालमें भी उसमें अन्तर पड़ नहीं सकता।"

बस, इतना कहकर वह चुप होगया। फिर हर प्रकारसे उसने अपने क्रोधको सम्हाला; और नीचे झुककर उस बालक-के शवको उठा लिया। श्यामासे उसने अपने पीछे पीछे कुदाल और लालटेन लेकर आनेको कहा; और स्वयं दरवाजेके बाहर निकला।

अबतक जो कुछ हुआ, उसे देखकर वह वृद्ध पुरुष बिलकुल भौंचक्कासा रह गया; और स्तब्ध बैठा रहा। यह क्या हुआ? इसका परिणाम क्या होगा? यह हमारे सामनेसे प्रतिज्ञा करके जारहा है—अब यह क्या करेगा? और इन सब बातोंका अन्त क्या होगा? यह कुछ भी उसकी समझमें न आया। वह जैसा नीची गर्दन किये हुए पहले बैठा था, वैसा ही चुप बैठा रहा। उस दशामें वह कितनी देर, किस प्रकार, बैठा रहा, सो कुछ उसके ध्यानमें न आया। वह स्त्री, जो एक पलङ्गपर पड़ी हुई थी, फिर एक बार उठी; और शून्य तथा भयंकर दृष्टिसे इधर-उधर देखकर ज़ोरसे बोली, "क्यों? मेरे बच्चेकी गर्दनपर पैर रखकर दुष्टने उसे कुचल ही डाला?" यह कहकर वह फूट फूटकर रोने लगी; और फिर सन्तापवायुके झोंकेमें ही उठकर

वह पलङ्गके नीचे आई, तथा एकदम चीख़ मारती हुई पलँगपर और उसके नीचे टटोलनेसी लगी। वह बीच बीचमें रोती, चिल्लाती, अथवा चीख़ती। यह देखते ही बुड्ढा उठा; और उसको पकड़कर सम्हालने लगा; पर उसका यह कथन बराबर जारी रहा—"मेरा बच्चा कहां है? अरे कहां है मेरा लाल! दे दो मुझको। लेगया दुष्ट, जान पड़ता है! डाल दिया कहीं खन्दकमें? अरे दुष्ट, मर जा! आग नहीं लग गई तेरे हाथोंमें?......" ये; और इसी प्रकारके अन्य भी अनेक शब्द, बराबर उसके मुखसे निकल रहे थे। हाथ-पैर भी बराबर वह पटक रही थी; और उठकर कहीं भागना चाहती थी। लगभग पन्द्रह-बीस मिनट पहले वह इतनी विलक्षण अवस्थामें थी कि, उसके लिए यह कहनातक कठिन था कि, यह जिन्दा है, अथवा मुर्दा—सो अब उसके शरीरमें इस समय इतनी शक्ति न जाने कहांसे आगई! बुड्ढा उसको सम्हाल ही न सका। उधर एक ओर जो एक तीसरा मनुष्य बीमार पड़ा था, उसको इस सारे शोरगुलसे बड़ी तकलीफ होने लगी। इसलिए अब बुड्ढा बेचारा इस चिन्तामें पड़ा कि, ऐसी भयंकर दशामें वह अकेला क्या करे; और क्या न करे—उस समय उसके मनकी जो दशा हुई होगी, उसकी पाठक-गण स्वयं ही कल्पना करें। दो बीमार उस भयंकर दशामें पड़े हैं; और सम्हालनेवाला एक!

इस प्रकारकी दशा वहां बीत रही थी, इतनेमें श्यामा अकेला ही कुदाल इत्यादि लेकर वापस आया। उसे देखते ही

बुड्ढेने "तेरे साथ गया हुआ हमारा लड़का कहां है?" यह जतलानेवाली प्रश्नबोधक दृष्टिसे उसकी ओर देखा। श्यामा भी मानो उसका आशय समझ गया; और कुदाल इत्यादि नीचे रखते ही बोला, "वे चले गये। जैसा उन्होंने यहां कहा था, वैसा ही किया। शवको गाड़नेके लिए उन्होंने बड़ा गहरा गड्ढा खोदा, उसमें शवको पूर दिया; और फिर मुझसे लौट जानेको कहकर स्वयं वैसे अँधेरेमें ही जाने कहांके कहां ग़ायब होगये। मैंने बहुत पुकारा, पर कोई फल न हुआ!"

श्यामाके मुखसे ये शब्द सुनते ही पहले तो बुड्ढेने सोचा कि, हम भी उसके पीछे ही पीछे जाकर उसको पकड़ें; और आग्रह करके लौटा लावें; पर फिर उसने सोचा कि, अब उसका लौटना बिलकुल असम्भव है, इसलिए उसने उस विचारको छोड़ दिया। हां, श्यामाकी सहायतासे उसने फिर उस स्त्रीको बड़े कष्टसे सम्हालकर पलँगपर सुला दिया। इधर उसकी सनक भी अब कुछ कम होरही थी, अतएव उसने भी विशेष हाथ-पैर नहीं चलाये। हां, मुँहसे अवश्य कुछ, पहलेहीकी भांति, बड़बड़ा रही थी। कुछ देर बाद वह बड़-बड़ाना भी बन्द हुआ; और बिलकुल निश्चेष्ट होकर पड़ रही। इतनेमें उस दूसरे पलँगपर पड़े हुए मनुष्यने ऊपर मुँह उठाकर "पानी" का शब्द कहा। इसलिए उसकी ओर जाकर उस बुड्ढेने उसके मुँहमें चार चम्मच पतला साबूदाना डाल दिया। इसके बाद वह फिर उस स्त्रीके पास आकर बैठ गया। क्षण-

मात्र चुप बैठनेके बाद फिर एकदम वह श्यामासे कहता है, "बेटा, चलते समय उसने और भी कोई सन्देशा मुझे बतलानेके लिए कहा था ?" "कोई विशेष नहीं" कहकर श्यामाने उत्तर दिया कि, "हां, इतना अवश्य कहा था कि, 'दादासे कह देना कि, आजसे तीन महीनेके अन्तिम दिनतक हमारा रास्ता देखें। इस बीचमें यदि न आवें, तो समझ लें कि मर गया।' इसके बाद फिर उन्होंने मुझसे कहा कि, 'श्यामा, दादा अकेले हैं; और वे दोनों रोगशय्यापर पड़े हैं, इसलिए तू अब अपनी माको ज़रूर ले आना' सो आप क्या कहते हैं ? क्या मैं जाऊँ ? मैं दो दिनके अन्दर ही उसको लिये आता हूं। सब हाल बतलानेपर वह तुरन्त ही चली आवेगी···पर, हां, एक बात बतलाना तो मैं भूल ही गया। चलते चलते उन्होंने एक बार अपने ही आप यह भी कहा था कि, 'अब मैं बीजापुरको जाऊँगा; और उस दुष्ट चांडालका पता लगाऊँगा; और एक बार जहां उसका पता चल गया, फिर उसके पीछे ही पीछे छायाकी तरह घूमूंगा, तथा फिर कोई मौक़ा पाकर अपना काम पूरा करूंगा'।"

श्यामाके इस कथनकी ओर बुड्ढेका पूरा पूरा ध्यान था; और यह बात स्पष्ट दिखाई देरही थी, परन्तु साथ ही साथ यह भी जान पड़ता था कि, उसके मनमें और भी कोई न कोई विचार अवश्य ही आरहे हैं। क्योंकि श्यामाकी बात ख़तम होते ही वह उसपर कुछ भी नहीं बोला; और बिलकुल चुप बैठा

रहा। बेचारा श्यामा भी यह सोचता हुआ कि, अब क्या करें, वहांसे उठकर उस दूसरे मनुष्यकी चारपाईके पास जाबैठा। छोकरेका मन बहुत ही दुःखी होरहा था। उसकी अवस्था ही अभी क्या थी—फिर उसमें भी गत महीने-सवा महीनेके अन्दर उसकी परिस्थितिमें अनेक परिवर्तन हुए थे; परन्तु उस लड़केके चरित्रमें ही यह ख़ूबी थी कि, उन परिवर्तनोंसे उसका उत्साह और भी बढ़ रहा था। यह बुड्ढा कौन है? वह दूसरा युवक कौन है? धारगाँवके देशमुखसे इनका क्या सम्बन्ध है? सूर्याजीका सन्देशा हमने ज्यों ही इस बुड्ढेको आकर बतलाया; और उनकी दी हुई निशानी दिखलाई, त्यों ही अत्यन्त सहानुभूतिमें आकर इस बुड्ढेने उस युवकको क्यों बुलाया? इत्यादि प्रश्नोंका खुलासा श्यामाके मनमें होचुका था। इसके सिवाय, सूर्याजीकी पत्नीके विषयमें इतनी ख़बरदारी रखने; और जलती हुई आगमें पैठकर उसके प्राण बचाने, इत्यादिके विषयमें भी जो अनुमान उसने अपने मनमें बांधा था, उसके विषयमें भी अब उसे कोई सन्देह नहीं रह गया था। परन्तु अब बहुत देरसे वह इन बातोंके सोचनेमें लगा था कि, इस बुड्ढे और उस युवकमें जिस प्रतिज्ञाके विषयमें बातचीत हुई, वह प्रतिज्ञा किस बातकी? जिसके रक्तसे स्नान करनेका इन्होंने बीड़ा उठाया है, वह कौन है? इन बातोंके सोचने-विचारनेमें उसने बहुत कुछ कोशिश की, बहुत कुछ अपने मस्तिष्कको परिश्रम दिया; पर कोई लाभ न हुआ। हां, इतना उसको अवश्य विश्वास था कि, ये

मनुष्य जैसे दिखाई देते हैं, वैसे नहीं हैं। वास्तवमें ये कोई बड़े मनुष्य हैं; और किसी कारणवश ऐसी दशाको प्राप्त हुए हैं। सूर्याजी और उनकी पत्नीके विषयमें भी उन दोनोंमें परस्पर जो बातचीत हुई थी, उससे भी श्यामाने यही समझा था कि, ये दोनों कोई कुलीन और बड़े घरानेके मनुष्य हैं। परन्तु ये अज्ञातवासमें क्यों हैं? इनकी शत्रुता किससे है? इनकी यह प्रतिज्ञा क्यों है? ये थे कहां? इत्यादि बातोंके जाननेकी उसे इच्छा थी, सो वह जान नहीं सका, इसकारण उसका चित्त कुछ विचारपूर्ण होरहा था। इतनेमें उस बुड्ढेके मनमें न जाने क्या विचार आया; और वह एकदम उससे बोला, "श्यामा, तू किसका लड़का है? कहांसे भूलकर यहां आगया; और हमारे चक्करमें आफँसा! देख, तेरी मा क्या कहती होगी? उसकी क्या दशा हुई होगी? सुभानको तो वे दुष्ट पकड़ ही लेगये होंगे? सो वह तेरा कुछ हाल तेरी माको बतला ही न सका होगा? और यदि कुछ बतलाया भी होगा, तो क्या बतलाया होगा? उसे मालूम ही क्या है? ठीक ठीक वह क्या बतला सकेगा? तेरी माको मैं नहीं जानता, अथवा तेरी मा मुझको नहीं जानती, ऐसा नहीं—अरे बेटा—..."

इतना ही कहकर तुरन्त उसने अपनी जीभ दांतों-तले दबाई—जैसे कोई बात वह न बतलाना चाहता हो; परन्तु एकदम वह उसके मुँहसे निकल गई हो; और इसपर फिर उसको खेद हुआ हो! श्यामा बुड्ढेका उपर्युक्त कथन सुनकर और भी

अधिक गोलमालमें पड़ा। परन्तु इस आशासे कि, बुड्ढा आगे और कुछ बतलायेगा, वह चुप बैठा रहा। साथ ही साथ वह अपने मनमें यह भी सोचने लगा कि, "क्या मेरी माने इसके पहले मुझसे कभी किसी ऐसे बुड्ढे और युवक पुरुषका ज़िक्र किया था?" पर कोई परिणाम न निकला। ऐसी कोई बात उसे याद नहीं आई। हां, इतना उसे अवश्य स्मरण आया कि, उसकी मा अपने पुराने मालिकके विषयमें कभी कभी कुछ बात निकाला करती थी; और साथ ही बड़े दुःखके साथ रोया करती थी। परन्तु वे मालिक कौन हैं; और इस समय वे कहां हैं—इस सम्बन्धमें कोई चर्चा उसकी माने कभी उसके सामने नहीं की थी; और यदि की भी हो, तो उसे याद नहीं थी। अस्तु। बुड्ढा बहुत देरतक फिर उससे कुछ भी नहीं बोला। इतनेमें दोनों रोगियोंके दवा-पानीका समय आगया, बुड्ढेने तुरन्त उठकर दवा दी। कुछ समय बाद साबू-दानेके दो दो, चार चार चम्मच उसने दोनोंके मुंहमें डाले। परन्तु उन्होंने तो दवा और साबूदाना, दोनोंहीको थूक दिया। अस्तु। रात बड़ी मुशकिलसे बीती। बुड्ढेको तो बिलकुल ही नींद नहीं आई। परन्तु बेचारा श्यामा पहले बहुत देरतक तो बैठा रहा, फिर बड़ी गहरी नींद आनेके कारण उसी जगह लुढ़क गया; और सुबह बहुत देरके बाद उठा। फिर इधर-उधरके आवश्यक कार्य करनेके बाद बुड्ढेसे बोला, "दादासाहब, मैं अपनी माको लिये आता हूं। जहां मैंने इधरका सब वृत्तान्त बत-

लाया कि, वह तुरन्त ही चल देगी। उसके आजानेपर आपको बड़ी सहायता मिलेगी। मैं जबतक लौटकर न आजाऊँ, आप सटवाजीको अपनी सहायतामें लेलें। मैं अभी उसे बुलाये लाता हूं। जिसने इनको आगसे बचानेके लिए अपने प्राणोंको संकटमें डाला, वह आपकी सहायता अवश्य करेगा। सिर्फ दो दिनकी बात है। मैं परसोंके दिन अवश्य ही वापस आजाऊँगा। आप ही सोचिये—आप अकेले क्या क्या करेंगे? मेरी मा कुछ नहीं कहेगी—आप उसके आनेपर स्वयं देख लेंगे!"

इस प्रकार किसी प्रौढ़ मनुष्यकी भांति बुड्ढेको अपनी बात समझाकर श्यामा चुपकेसे उसके मुँहकी ओर देखने लगा। इतनेमें सटवाजी स्वयं ही आकर वहां उपस्थित होगया। फिर क्या कहना है? श्यामा अपने कार्यके लिए और भी अधिक उत्साहित दिखाई दिया। यही नहीं, बल्कि उसने सटवाजीसे कहा कि, "जबतक मैं वापस न आजाऊँ, तुम इनको सम्हालो।" और इतना कहनेके बाद वह उस बुड्ढे पुरुष तथा सटवाजीसे बिदा होकर चल दिया। उस छोटेसे बालकका वह प्रौढ़ व्यवहार देखकर उन दोनोंहीको, उस दुःखद अवस्थामें भी, थोड़ीसी हँसी आई। बुड्ढा तो बहुत देरतक उस छोकरेकी ओर, जो क्षण क्षणपर दूर जारहा था, बड़े कौतुकके साथ देखता रहा।

उसी रातको, जबकि बुड्ढा उस झोपड़ीसे अपनी पहली झोपड़ीकी ओर किसी कारणवश आरहा था, उस झोपड़ीमें

उसे किसी मनुष्यकीसी आहट मिली। उस आहटके पाते ही वह एकदम पीछे लौट पड़ा; और झोपड़ीकी पिछली ओरसे कान लगाकर सुनने लगा। इससे कुछ भय उत्पन्न करनेवाले शब्द उसके कानोंमें पड़े, अतएव वह तुरन्त ही अपनी दूसरी झोपड़ीकी ओर आया।

इधर श्यामा अपनी माताको लेकर तीसरे दिन वहां आती है, तो एक चिड़िया भी उन दोनों झोपड़ियोंमें नहीं मिली!

चौंतीसवां परिच्छेद।

कुछ अन्य लोग।

(२)

अब श्यामाको तो हम ऐसे ही गोलमालमें छोड़ दें; और अपने कथानकके कुछ अन्यान्य लोगोंके हालचालको भी देखें, तथा उसके बाद फिर एकदम बीजापुर पहुंचकर वहांकी घटनाओंकी ओर ध्यान दें।

पाठकोंको स्मरण होगा कि, सुलतानगढ़के क़िलेदारको जब रणदुल्लाखां क़ैद कर लेगया; और उसकी पुत्रवधू एक दिन पहले ही अपनी दासीसहित वहांसे कहीं चली गई, तब इसका सारा समाचार हमारी "बाग़ी-मंडली" को उसके गुप्तचरने जाकर दिया था। इसके सिवाय, पिछले एक परिच्छेदमें यह

भी बतलाया जाचुका है कि, उस समाचारको जब उन लोगोंने सुना, तब पहले कुछ हर्ष और फिर पीछे कुछ खेदके विचार उन लोगोंमें आये थे; विशेषकर जो नवीन सिपाही जवान उस मंडलीमें अभी हालहीमें आकर सम्मिलित हुआ था, उसकी कुछ विचित्रसी दशा होगई थी। वह सिपाही जवान कौन था, सो पाठकोंको अब विशेष स्पष्ट करके बतलानेकी आवश्यकता नहीं। वह सिपाही जवान और कोई नहीं—सुलतानगढ़के अप्पासाहबके पुत्र नानासाहब थे। सुलतानगढ़के क़िलेदारको क़ैद कर लेजानेका समाचार मालूम होनेके बाद उन लोगोंमें जो बातचीत हुई थी, उससे उस विषयका सारा वृत्तान्त पाठकोंको आप ही आप मालूम होगया होगा। अब उस विषयमें कुछ विशेष बतलानेकी आवश्यकता नहीं। स्वामीजीने नानासाहबसे कहा था कि, तीन दिनके अन्दर मैं तुम्हारी स्त्रीका पता लगा दूंगा। जिस समय अप्पासाहब पकड़े गये, वह क़िलेपर नहीं थी—एक दिन पहले ही, रातको, चली गई थी, वह चतुर है, जिस तरह बना होगा, अपने पिताके घर चली गई होगी, इत्यादि। इसके बाद फिर भी उन्होंने बार बार जब यह वचन दिया कि, मैं तीन दिनके अन्दर अवश्य ही उसका पता लगा दूंगा, तब नानासाहबको कुछ शान्ति मिली। परन्तु उनके मनकी पूरी पूरी अशान्ति फिर भी नहीं गई। स्वामीजीने अपने गुप्तचरसे, जो कुछ उनको कहना था, कहकर उसे रवाना कर दिया। इसके बाद वे फिर भीतर आगये; और अगले

विचारमें लगनेके लिए लोगोंसे कहा। लोग उस विषयके विचारमें कुछ कुछ तो लगे ही थे। राजा शिवबा तो बिलकुल ही एकाग्र होरहे थे। नानासाहबने सुलतानगढ़के हस्तगत करनेमें जिन सुविधाओंका ज़िक्र किया, वे सब उन्होंने अपने मनमें जमा लीं। उन्होंने बहुत दिन पहले ही सोचा था कि, यदि सुलतानगढ़ हमारे हाथमें आजायगा, तो बहुत ही अच्छा होगा। उक्त क़िला बहुत ही बिकट और हमारे लिए अत्यन्त सुविधाजनक है। इसके सिवाय हमारी वर्तमान स्थितिके लिए भी वह बहुत उपयोगी है। परन्तु मुख्य कठिनाई उन लोगोंको यही जान पड़ती थी कि, क़िलेके मुखिया रंगराव अप्पा एक कट्टर स्वामिभक्त आदमी हैं; और इसकारण उनको फोड़कर क़िला नहीं लिया जासकता। हां, श्रीधर स्वामीने अपने गुप्तचरोंसे जो समाचार प्राप्त किये थे, उनसे उनको बहुत दिन पहले ही यह बात मालूम हो चुकी थी कि, अप्पासाहबके लड़के नानासाहब अवश्य ही मुसलमानोंके कट्टर विरोधी हैं; और वे हमारी मंडलीमें मिल भी सकते हैं; परन्तु फिर भी यह कठिनाई उनके सामने उपस्थित ही थी कि, नानासाहबके आमिलनेपर भी, जबतक उनके पिता क़िलेदार बने रहेंगे, तबतक उस क़िलेपर चढ़ाई करके जाना; और फिर उस चढ़ाईमें उस वृद्धको क़ैद करना, इत्यादि अच्छा नहीं दिखाई देगा। परन्तु आज जो समाचार उन लोगोंको मिला, उससे उक्त सारी कठिनाइयां आप ही आप

दूर होगईं। इसलिए उन्होंने सोचा कि, रंगराव अप्पाके हाथसे सुलतानगढ़का क़िला छीनकर यदि उनको बादशाहने पकड़ मँगवाया है, तब तो फिर अब उस क़िलेके हस्तगत करनेमें कुछ बहुत कठिनाई नहीं रह गई। सुलतानगढ़का क़िला उनके लिए सर्वथा उपयुक्त था। शिवबाके अपने निजके इलाक़ेसे भी वह क़िला बहुत दूर नहीं था। बीजापुरसे बहुत पास भी नहीं था। इसके सिवाय क़िलेके आसपासका बहुतसा भाग शिवबाकी वर्तमान परिस्थितिके बहुत ही अनुकूल था। इन सब बातोंके ध्यानमें आते ही राजा शिवबाके मनमें उस क़िलेको प्राप्त करनेकी बड़ी इच्छा हुई। परन्तु उनका यह पक्का निश्चय था कि, कोई भी कार्य करना हो,भवानी माताके कृपाप्रसाद और उनकी अनुकूलताके बिना किया नहीं जासकता। साथ ही साथ उनका यह भी पक्का विश्वास था कि, महाराष्ट्रमें स्वराज्य-संस्थापना करने; और गौ-ब्राह्मणों तथा आर्यभूमिको यवनोंके कष्टसे मुक्त करनेका महान् कार्य जगदम्बा हमारे हाथसे अवश्य करावेंगी! इसके सिवाय उनका यह भी दृढ़ विश्वास था कि, भवानी माताके प्रसादसे ही हमको यह बात भी मालूम होजाया करेगी कि, कौनसा कार्य सिद्ध होनेयोग्य है; और कौनसा नहीं। अतएव, उपर्युक्त सब विचार जब उस क़िलेके सम्बन्धमें होचुका, तब उन्होंने बाबाजी तथा अन्य सब लोगोंसे चुप रहनेकी प्रार्थना की; और स्वयं जगदम्बिकाको साष्टांग नमस्कार करनेके बाद "जय जगदम्बा भवानी!" कहते हुए, आंखें

बन्द करके, चित्तको एकाग्र किया। उस समय उन सब लोगोंका भी मन इतना एकाग्र होगया कि, उनके निःश्वासोंके अतिरिक्त और कुछ भी उस समय वहां सुनाई नहीं देता था। शिवबाका मन तो यहांतक एकाग्र दिखाई दिया कि, उनको अपने आसपासका कुछ भी भान नहीं रहा। ऐसा जान पड़ा कि, उनका चित्त उनके शरीरसे बहुत दूर चला गया है। वह किसी अन्य लोकमें ही, किसी न किसी दूसरे प्राणीकी ओर देखने अथवा उससे बातचीत करनेमें लगा है। इतनेमें देहभान इतना नष्ट होगया कि, शरीर बिलकुल निश्चेष्टसा दिखाई दिया; और मस्तक माताकी मूर्तिके पदकमलोंपर जाभिड़ा! तथापि उन्हें उठानेको कोई आगे नहीं हुआ। उस दशामें लगभग चौथाई घड़ी हुई होगी कि, इतनेमें होंठ हिलने लगे; और ऐसा जान पड़ा कि, अब कुछ शब्द बाहर निकलेंगे। अतएव स्वामीजी अपने कानोंको बिलकुल पास लेगये, उस समय ये शब्द उनके कानोंमें पड़े—"सावधानीके साथ उपक्रम करनेसे सफलता अवश्य! मन्दिरका तोरण ही उठे।" बस, इतना ही सुनाई दिया। इसके सिवाय स्वामीजीको और कुछ भी सुनाई नहीं दिया। सुनाई क्या दे? शिवबाके मुँहसे और कोई शब्द निकले ही नहीं। उपर्युक्त शब्द निकलनेके बाद कुछ देरमें ऐसा मालूम हुआ कि, शिवबाका जो चित्त अभीतक भवानी माताके चरणोंमें बिलकुल लीन होरहा था, सो अब धीरे धीरे हृदयमें संचारित होने लगा। कुछ देरके बाद वे अपने भानपर आगये

और इधर-उधर गर्दन करके तथा दोनों हाथोंसे अपने कान पकड़-कर उन्होंने फिर भवानी माताको साष्टांग नमस्कार किया। इसके बाद चुपकेसे बैठकर धीरेसे उन्होंने अपनी आंखें खोलीं;और उन्हें माताके स्वरूपकी ओर लगाकर बादको फिर बड़ी आतुरताके साथ, स्वामीजीकी ओर देखा। स्वामीजीने उन शब्दोंका मनन करके उनका अर्थ पहले ही अपने मनमें समझ रखा था; और वह अर्थ चूंकि ऐसा ही था, जैसाकि उन्हें अभीष्ट था, इसलिए वे मन ही मन बड़े आनन्दितसे दिखाई दिये। शिवबाने ज्यों ही उनकी ओर देखा, वे बोल उठे, "शिवबा, बस फ़तह हुई। फ़तह हुई समझ! इसमें शंका अणुमात्र भी नहीं। इस बारके शब्द और उनका गुप्त अर्थ जब मैं बतलाऊंगा, तब तू आनन्द-से नाच उठेगा। समर्थ (श्रीरामदास स्वामी) की इच्छा तेरे ही हाथसे यह महान् कार्य करानेकी हुई, सो कुछ यों ही नहीं! बाबा, तेरा अधिकार ही ऐसा है!"

"आपकी और उस महात्माकी कृपा जो कुछ करे, सोई ठीक! पर शब्द क्या निकले, सो एक बार मालूम होजाँय तो—"

"अरे, शब्दोंका क्या पूछना है? बिलकुल वैसे ही, जैसे चाहिए—बल्कि बिलकुल अपनी कल्पनासे बाहर ही माताका प्रसाद मिला—ऐसा समझ! 'सावधानीके साथ उपक्रम करनेसे सफलता अवश्य। मन्दिरका तोरण ही उठे।' बस, यही शब्द हैं। और इससे अधिक क्या चाहिए? सो अब तोरण उठाकर

उपक्रमको प्रारम्भ करो । 'सावधानीके साथ' इन शब्दों-को बारीकीके साथ ध्यानमें लाना चाहिए । नहीं तो, 'सफलता अवश्य' बस, इन्हीं शब्दोंको ध्यानमें रखकर हम बहक जायँगे; और फिर जितनी सावधानीसे उपक्रम होना चाहिए, उतनी सावधानीसे नहीं होसकेगा; तथा औरका और ही होरहेगा, इसलिए अच्छी तरह विचार करना चाहिए। जिस प्रकार मुझे छुड़ानेके लिए युक्ति सोची थी, वैसी ही कोई युक्ति सोचनी चाहिए सही; परन्तु साथ ही साथ कुछ शूरता दिखानेका भी मौका निकालना चाहिए । नहीं तो, इतने दिनसे जो इतने लोग जमा किये जारहे हैं; और अनेक प्रकारके विचार तथा मनसूबे बाँधे जारहे हैं, उनका उपयोग क्या? चलो, आजसे दो-तीन महीनेकी मुद्दत लो; और तीन महीने जिस दिन ख़तम हों, उस दिनके सूर्यास्तके भीतर ही भीतर क़िलेके अन्दर हमारा प्रवेश होजाना चाहिए; और क़िलेके क़िलेदार—यदि कोई नवीन नियत किये गये हों तो—और शिलेदार (अश्वारोही सैनिक) तथा घुड़साल इत्यादि, सब कुछ हमारे हाथमें आजाना चाहिए; और क़िलेपर हमारा अमल जारी होजाना चाहिए। सच पूछो, तो तीन महीनेकी मुद्दत-की भी आवश्यकता नहीं। आजहीका मौक़ा बहुत अच्छा था; और आज क़िला हमारे हाथमें अवश्य आजाता; पर केवल क़िलेके ही हाथमें आजानेसे क्या काम चलेगा? आसपासका प्रदेश भी तो अनुकूल होना चाहिए, तभी उसकी स्थिरता है।

आज क़िला हमारे हाथमें आगया; और कल चला भी गया, तो इससे क्या लाभ?" शिवबाका पूरा पूरा ध्यान स्वामीजीकी बातोंकी ओर था। इसलिए अब वे बोले, "स्वामी महाराज, हम आपके उपदेशके बाहर बिलकुल नहीं हैं। आज वहां जाकर क्या होगा? और फिर, भवानी माताने जो यह कहा है कि, साव-धानीसे उपक्रम करो, सो इसका अर्थ क्या? आपने तीन महीने बतलाये, सो इतनी मुद्दत तो ज़रूर चाहिए। रंगराव-अप्पाकी जगहपर सैयदुल्लाखांके आदमीको क़िलेदार होने दीजिए। वह उस इलाक़ेके प्रत्येक गाँव, प्रत्येक बस्तीकी प्रजाको पीड़ित करेगा ही—सब प्रकारसे उनको कष्ट देगा। बस, इसीसे उन लोगोंके मन तैयार होजायँगे। उन लोगोंके मन जहां तैयार हुए कि, फिर बातकी बातमें फ़तह कर लेंगे। उसकी चिन्ता ही नहीं।" 'सावधानीके साथ उपक्रम करनेसे सफलता अवश्य। मन्दिरका तोरण ही उठे।' ये अन्तिम शब्द अन्य किसीको सम्बोधन करके न कहते हुए शिवबाने अपने ही आप तीन-चार बार उच्चारण किये। उस समय यह स्पष्ट ही दिखाई देरहा था कि, 'मन्दिरका तोरण ही उठे' इन्हीं शब्दोंका अर्थ निकालनेमें उनका सारा ध्यान लग रहा था। भवानी माता ऐसा उपदेश तो कभी कर ही नहीं सकतीं कि, तू हमारे मन्दिरका तोरण उठा दे। क्योंकि उनको यह भलीभांति मालूम है कि, मैं उनको कितनी भक्ति रखता हूं। ऐसी दशामें, अपने सम्बन्धमें वे कोई बात नहीं कहेंगी। यह

सब सोचकर उन्होंने फिर एक बार स्वामीजीकी ओर देखते हुए 'मन्दिरका तोरण ही उठे' इन शब्दोंका उच्चारण किया;और इस प्रकार उनका तात्पर्य जाननेकी जिज्ञासा प्रकट की। स्वामीजी तत्काल उनका आशय समझ गये; और बोले, "शिवबा, अरे तू इसमें इतने चक्करमें क्यों पड़ गया? तू जो कुछ कर रहा है, सो सब वही तो है। यवनोंने जिस मन्दिरका उच्छेद कर डाला है, उसकी पुनः संस्थापना तेरे हाथसे होनेवाली है। उसका तोरण यही है कि, जो तू यह क़िला पहले लेनेवाला है। चल, उठ, अब विचार करते रहनेका समय नहीं है। तूने ही तो अभी कहा कि, अब सावधान रहना चाहिए। बीजापुरमें अब दिन-पर दिन तेरी चर्चा बढ़ ही रही होगी। इसलिए अब चल, और कुछ सोचने-विचारनेका मौक़ा नहीं है। अब अगला उपक्रम किस प्रकार करना चाहिए, इसकी व्यूहरचना कर। यह सारी व्यूहरचना तेरे ही हाथसे होनी चाहिए। इन बाकी लोगोंको क्या? ये तो तेरी आज्ञाके अनुसार कार्य करेंगे।"

इतना कहकर स्वामीजीने अन्य लोगोंसे इशारा किया। इशारा पाते ही सब लोग वहांसे दूर चले गये। स्वामीजी और शिवबा कुछ देरतक एकान्तमें बैठे रहे। इसके बाद शिवबा वहांसे उठकर अपनी मण्डलीके साथ चले गये। बाबाजी जहांके तहां बैठे रहे। उन्होंने पहले ही समझ लिया था कि, अब ऊपर हनुमानजीके मन्दिरमें रहना हमारे लिए विशेष श्रेयस्कर और सुरक्षित नहीं है; और इधर नीचे भुँहारेका मन्दिर उनके लिए

मौजूद ही था। अस्तु। शिवबा और उनके साथियोंके चले जाने-पर बाबाजी मन ही मन बहुत देरतक विचार करते रहे। अबतक जितनी कुछ घटनाएं होचुकी थीं, उन्हींका मानों वे बार बार विचार कर रहे थे। इसके सिवाय वे इस बातके भी विचारमें थे कि, देखें, अब शिवबा सुलतानगढ़को हस्तगत करनेके लिए किन किन उपायों और युक्तियोंकी योजना करता है। इस प्रकार विचार करते करते उसी जगह उनको नींदसी आगई। लगभग आधीरातका समय था कि, एकाएक गहरी नींदसे वे जग पड़े; और "ऐसा साक्षात्कार क्यों ?" इतने शब्द उन्होंने ज़ोरसे उच्चारण किये। फिर इधर-उधर देखा और आप ही आप कहते हैं, "स्वामी (श्रीरामदास) के यहां कोई समाचार नहीं दिया, हमसे आलस हुआ, इसीसे तो यह साक्षात्कार नहीं हुआ ? किन्तु ऐसा होनेका भी कोई कारण नहीं। श्रीसमर्थ सर्वसाक्षी, प्रत्यक्ष हनुमानजीके अवतार हैं। श्रीचरणोंसे भी कोई समाचार बहुत दिनोंसे नहीं आया है। न जाने क्या इच्छा है !" इतना ही स्पष्ट कहा, फिर उन्होंने उच्च स्वरसे एक श्लोक पढ़ा; और "जयजय श्रीरघुवीर समर्थ !" कहकर ध्यानस्थ होगये। बहुत देरतक ध्यान करनेके बाद फिर उन्होंने श्रीसमर्थ (रामदास) के बनाये हुए कुछ मराठी श्लोक और कुछ अभंग आप ही आप पढ़े; और उषाकाल होनेतक समय व्यतीत किया। परन्तु स्वामीजीकी चित्तवृत्ति कुछ उदासीन ही बनी रही—कह नहीं सकते, किस कारणसे—चाहे निद्रामें जो

दृश्य उनको दिखाई पड़ा, उस कारणसे हो—अथवा अन्य किसी कारणसे। जो कुछ हो। उषाकालमें स्नान-संध्या इत्यादि नित्यकर्मोंसे निपटनेके लिए स्वामीजी अन्तमें उस गुप्त मंदिरसे बाहर निकले; और जङ्गलमें ही एक झरनेकी ओर चले गये। वहां स्नानादि सर्व विधियोंसे निपटकर फिर वापस आये। वापस आते ही क्या देखते हैं कि, एक दूसरे बाबाजी उनकी प्रतीक्षा कर रहे हैं। उनको देखते ही श्रीधर स्वामी उनके चरणों-पर गिर पड़े; और पहला प्रश्न यही किया कि, "कहिये, समर्थका क्या हालचाल है?"

दूसरे बाबाजीने स्वामीको उठाकर आलिंगन किया; और एक थैली, जिसमें भीतर कोई पत्र था, उनके हाथमें दे दी। स्वामीने उसे लेकर उसकी वन्दना की; और भीतरका पत्र निकालकर, उसकी भी वन्दना करके, उसको पढ़ा; और—"कल रातको मुझे साक्षात्कार हुआ ही था, अवश्य ही मेरी भूल हुई" कहकर उस थैली और पत्रकी फिरसे वन्दना की; और फिर उसे अपने जटाभारमें रख लिया। इसके बाद फिर वे थैली लाने-वाले बाबाजीको बड़े आदरके साथ भीतर लेगये; और उनका उत्तम रीतिसे सत्कार किया। फिर एक दूसरेने परस्पर एक दूसरेसे सब बातें पूछीं; और बतलाईं। इसके बाद जब अभ्यागत दूसरे बाबाजी विश्राम करने लगे, तब हमारे स्वामी महाराजने अत्यन्त सुवाच्य अक्षरोंसे एक पत्र लिखा, जिसमें अपने पकड़े जानेके दिनसे लेकर और आजतकका सारा वृत्तान्त निवेदन

किया था! उस वृत्तान्तको पढ़नेके लिए राजा शिवबा यदि उस समय वहां उपस्थित होते,तो अवश्य ही उसमें अपनी भारी प्रशंसा देखकर जहां उन्हें एक प्रकारसे आनन्द हुआ होता, वहां उस प्रशंसाके अतिरेकपर उन्हें कुछ संकोच भी हुआ होता। सम्पूर्ण वृत्तान्त लिख चुकनेके बाद स्वामीने उसमें यह भी लिख दिया था कि, समर्थके चरणोंके प्रत्यक्ष दर्शन यद्यपि अभी उसे (शिवबाको) नहीं हुए हैं, तथापि उसकी भक्ति अगाध है;और महाराजके चरणोंके दर्शन करनेको उसकी उत्कट अभिलाषा है। इसके सिवाय इस आशयका भी कुछ वृत्तान्त उस पत्रमें था, "समर्थ यदि अब शीघ्र ही उसे दर्शन देवें, तो उसे अत्यन्त आनन्द होगा। इसलिए पहला पराक्रम होनेके बाद अवश्य ही ऐसा होना चाहिए।" सम्पूर्ण पत्र लिख चुकनेपर स्वामीने फिर एक बार उसे पढ़ा। उसको पढ़ते समय स्वयं उन्हींके नेत्रोंमें आंसू भर आये; और अचानक उनके मुखसे ये उद्‌गार निकल पड़े :—"वाह शिवबा! तुझको धन्य है, जो तुझपर ऐसे महात्माका कृपाप्रसाद है! मैं तो केवल निमित्तमात्र हूं। परन्तु तू और वे —दोनों अवश्य ही अर्जुन और कृष्णके अवतार हैं, जोकि उच्छिन्न होनेवाले धर्मकी संस्थापनाके लिए इस आर्यभूमिमें अवतीर्ण हुए हैं! ऐसे महात्माओंकी कृपा होनेपर और तेरे समान सच्छिष्य होनेपर फिर संसारमें असम्भव क्या है?"

वह पत्र उसी दिन समर्थकी सेवामें चला गया।

———

पैंतीसवां परिच्छेद।

बादशाह।

(१)

इसमें सन्देह नहीं कि, मुहम्मदअली आदिलशाह बादशाहके ज़मानेमें बीजापुर उन्नतिके अति उच्च शिखरपर विराजमान होरहा था; परन्तु साथ ही साथ यह भी कहना पड़ेगा कि, इसी बादशाहके शासनकालसे बीजापुर-राज्यकी अवनति भी बहुत धीरे धीरे प्रारम्भ होचुकी थी। यह बादशाह स्वयं राजकाज बिलकुल नहीं देखता था। बल्कि इसके विरुद्ध, अपने अन्तःपुरमें, रातदिन विलासितामें निमग्न रहता था। अपनी बेगमों और एक रम्भावती नामक सुन्दरी, जो उसे सैयदुल्लाख़ांकी जघन्य कारस्तानियोंसे प्राप्त हुई थी, उसके सहवासमें वह नाना प्रकारके भोग-विलासोंमें लिप्त रहता था। बड़े बड़े इमामबाड़े और राजमहल बनवाने तथा नवीन नवीन बाज़ार बसानेका भी उसे बड़ा शौक था। इसलिए ऐसे कामोंमें भी वह अपना बचा-बचाया वक़्त तथा पैसा ख़र्च किया करता था। सोने-चांदीकी तो कोई क़ीमत ही न समझता था। ख़ूब दानपुण्य करता, फकीर-फुक़रोंको जमा करके उनको भोजन कराता; और उनका आदर-सत्कार करता। यह भी उसे एक व्यसन था। युद्धोंपर जाना, नवीन नवीन प्रान्तोंको जीतना अथवा अपनी शूरता और परा-

क्रमसे अपना वैभव बढ़ाना, इत्यादि बातें उसे मालूम ही नहीं थीं। उसके राज्यकी प्रारम्भिक अवस्थामें मुरार जगदेव और राजा शहाजी भोसलेने राज्यवृद्धिके लिए बहुत प्रयत्न किया, जिससे राज्यकी उन्नति भी बहुत कुछ हुई; परन्तु जब राज्यके स्वामीका मन ही राजकाजमें न लगा; और ऐसे मनुष्योंका प्रभाव राज्यके महत्वपूर्ण कार्यों में बढ़ने लगा कि, जिनकी क़ीमत ज़नानख़ानेके बाहर एक कौड़ीकी भी नहीं थी, तब अच्छे कार्योंमें विघ्न उपस्थित होने लगे। इसमें सन्देह नहीं कि, बादशाहके प्रारम्भिक शासनकालमें उपर्युक्त दोनों स्वामि-भक्त सरदारोंने राज्यकी वृद्धिके लिए जितने प्रयत्न किये, सबमें सफलता प्राप्त हुई; और एकके बाद एक, इस प्रकार अनेक, इलाक़े जीतकर उन्होंने बीजापुरके राज्यमें मिलाये; परन्तु इससे बीजापुरका राज्य दिल्लीके मुग़ल बादशाहकी आँखोंमें कांटेकी तरह चुभने लगा। फलतः उसकी ओरसे बीजापुरको पराजित करनेका प्रयत्न शुरू हुआ। अब उस समय बीजापुरके राज्यमें इतनी दृढ़ताकी आवश्यकता थी कि, वह मुग़लोंका मुक़ाबिला करता; और अपने राज्यको भी बढ़ाता जाता; पर दो कारण ऐसे उपस्थित होगये थे कि, जिनसे उस दृढ़ताकी बराबर कमी ही होरही थी। एक तो यह कि, सैयदुल्लाख़ांके समान क्षुद्र मनुष्यने मुरार जगदेवके समान सरदारसे प्रतिस्पर्द्धा शुरू की, जिससे फूट पैदा होगई। दूसरा यह कि, बादशाह स्वयं सच्ची परिस्थितिको समझनेमें मन

नहीं लगाता था ! और यदि कभी लगाता भी था, तो पहला प्रतिबिम्ब उसके मनपर सैयदुल्लाखांका पड़ता था ; मुरार साहब उसे दूर करनेके प्रयत्नमें ही लगे रहते थे—सो भी कभी उनको सफलता होती; और कभी न होती थी ! इस प्रकार राज्य-की अन्दरूनी हालत बड़ी ख़राब होरही थी; अतएव मुग़लोंकी अच्छी बन आई । बादशाह जिस समय गद्दीपर बैठा था, उसकी अवस्था पन्द्रह-सोलह वर्षकी थी । मुरार जगदेव राज्यके पुश्तैनी सरदार थे; पूर्ववादशाहका उनपर पूर्ण विश्वास था; और मुहम्मदशाहका मन भी स्वभावसे बहुत शुद्ध, सरल तथा प्रेम-पूर्ण था, अतएव पहलेपहल मुरार साहबने मुग़लोंका अच्छा मुक़ाबिला किया; और राज्यकी वृद्धि भी की । पर पीछेसे जब उपर्युक्त कारण पैदा होगये; और राज्यका ज़ोर कम होगया, तब मुग़लोंको अपना राज्य आगे बढ़ानेके लिए अच्छा मौक़ा मिल गया; और फिर बीजापुरके राज्यमें उन्होंने कैसा कैसा उपद्रव मचाया, सो इतिहास-प्रेमियोंको बतलानेकी आवश्य-कता नहीं है । इधर प्रजा भी अब अधिकाधिक असन्तुष्ट हो-रही थी । बादशाहके विषयमें लोगोंका प्रेम बहुत था; क्योंकि नौरोज़के त्योहार और अपने जन्मदिनके अवसरपर वह बड़े बड़े उत्सव किया करता था, जलूस निकालता था; और उस समय हज़ारों रुपये तथा सोने-चांदीके फूल बनवाकर प्रजामें लुटाता था । उसके पासतक यदि किसीकी फ़रियाद पहुँच जाती, तो न्याय भी ठीक ठीक करता था । पर सच तो यह था कि, उसके

पासतक फ़रियादका पहुँचना ही टेढ़ी खीर थी। परिणाम यह होता था कि,पाजी अधिकारियोंको मनमाना अत्याचार करनेका मौक़ा मिलता था; और इससे सर्व्वसाधारण प्रजामें असन्तोषकी आग भड़कती ही जाती थी। बादशाह कभी अपने नगरके बाहर भूल करके भी नहीं गया—जिससे उसका दानधर्म भी नगरके ही लोगोंको मालूम था, उसके गुणोंकी क़द्र भी उन्हीं लोगोंको थी। राज्यके इलाक़ोंकी ग़रीब प्रजाको उसके गुणोंकी गन्धतक भी न मिली थी; और न उसकी सज्जनताका ही उनको कुछ अनुभव था। उनको तो काम पड़ता था छोटे-बड़े अधिकारियोंसे; और अधिकारियोंमें प्रायः निन्नानबे फ़ी सदी लोग स्वार्थी और अत्याचारी ही थे। फिर प्रजा सन्तुष्ट रहे तो कैसे? कभी कभी तो ऐसे भी मौक़े आते थे कि,शहरके बीच, रास्तेमें, गोबध करके, आने-जानेवाले हिन्दुओंके—विशेषतः ब्राह्मणोंके—शरीरपर उस रक्तको छिड़क देते; और इससे यदि उनके शरीरके रोंगटे खड़े होजाते; और वे कुछ क्रोधप्रदर्शक बात कह देते,तो उनका और भी अधिक अपमान करते। ब्राह्मणोंको पकड़कर उनके मुँहपर रक्त पोत देते, अथवा ऐसा कोई कार्य करते कि, जिससे उनका चित्त दुःखित होकर उनका क्रोध और भी भड़कता—और इस प्रकार जब उनका क्रोध भड़कता, तब उनकी और भी टर्र उड़ाते! इन सब बातोंका परिणाम तत्काल कुछ नहीं होता था; और इसीकारण अधिकारीवर्गको राज्यकी

दृढ़ताके विषयमें कभी सन्देह भी नहीं हुआ। परन्तु उनको इस बातका ख़याल न हुआ कि, इन सब बातोंका सामूहिक रूपसे मिलकर क्या परिणाम होगा, अथवा भीतर ही भीतर होना शुरू भी होगया है। उपर्युक्त रीतिसे कष्ट पाकर हिन्दू लोग जब बादशाहके यहां फ़रियाद लेकर जाते, तब उसकी ओर कोई ध्यान नहीं दिया जाता था। फलतः असन्तोषमें धीरे धीरे वृद्धि ही होती रही। कभी कभी तो ऐसा भी होता कि, फ़रियाद सुनना तो दूर रहा—फ़रियाद करनेवालेका ही और भी अपमान किया जाता था। इन्हीं सब कारणोंसे स्वाभाविक ही उस समय प्रत्येकके मनमें यह इच्छा उत्पन्न होगई थी कि, स्वराज्य-संस्थापनाकी अब अत्यन्त आवश्यकता है; और कोई न कोई स्वराज्य-संस्थापक अब अवश्य उत्पन्न होना चाहिए। इच्छा उत्पन्न हुई हो, चाहे न हुई हो; कमसे कम उसके उत्पन्न करनेवाले कारण तो अवश्य ही उपस्थित होगये थे। अस्तु।

जैसाकि हमने ऊपर बतलाया, बादशाह जबकि इस प्रकार अपने ऐश-आराममें चूर होरहा था, एक दिन आगे लिखी हुई घटना उपस्थित हुई। यह दिन, पिछले दो परिच्छेदोंमें बतलाई हुई सारी घटनाओंके लगभग आठ दिनके बादका है। इस दिन बादशाहकी तबीयत कुछ ख़राब थी; और इसलिए किसीको मिलनेकी इज़ाज़त भी नहीं थी। हां, हुज़ूरके जो एक-दो मुख्य कारपर्दाज़ थे, उनको आने-जानेकी कोई मनाई न थी। अन्तःपुरकी स्त्रियोंमें भी रम्भावती और सुलताना बेग़मके

अतिरिक्त और कोई ऐसे समयमें बादशाहके सम्मुख नहीं जा-सकती थी। सुलताना बेग़मका भी प्रवेश इज़ाज़त लिये बिना नहीं होसकता था। हां, रम्भावती और सैयदुल्लाख़ां, इन दोके लिए पूरी पूरी स्वतंत्रता थी। सैयदुल्लाख़ां आज कई दिनसे इस प्रयत्नमें था कि, बादशाहसे किसी न किसी प्रकार एकान्तमें मिल सके। बादशाहकी तबीयत जब ठीक होती, तब मुरार जगदेव कमसे कम एक बार उससे मिलकर सब बात अवश्य बतला जाया करते थे। परन्तु जब उसकी तबीयत ठीक नहीं होती थी, तब वे भी नहीं आसकते थे। चाहे जितना आवश्यक कार्य होता, ऐसे समयमें हुज़ूरकी मुलाक़ात उनसे भी नहीं हो सकती थी। आजका दिन भी ऐसे ही दिनोंमेंसे एक दिन था। सैयदुल्लाख़ां आजका मौक़ा अच्छा देखकर बादशाहके सुनहरी पलँगके सिरहाने खड़ा था। बादशाहका वह दीवानख़ाना शोभाका मानो आगार था। द्रव्यके द्वारा जो कुछ सजावट होसकती थी, सभी उसमें मौजूद थी। आख्यो-पन्यासमें बग़दाद, बसरा इत्यादि नगरोंके भव्य भवनोंका वर्णन जिसने पढ़ा होगा; और बड़े बड़े बादशाहोंके दरबारहालोंका दृश्य जिसकी दृष्टिके सम्मुख उपस्थित हुआ होगा, वही हमारे बीजा-पुरके इस बादशाहके राजभवन और उस दीवानख़ानेकी कल्पना कर सकेगा कि, जिसमें बादशाह इस समय अपने सुनहरी पलङ्ग पर पड़ा हुआ था। दरबारहाल लगभग बीस-इक्कीस दरका था; और सम्पूर्ण दरबारहालमें एक अत्यन्त मुलायम मख़मली

गद्दा पड़ा हुआ था, जिसमें मुखोंतक पैर भीतर धँस जाते थे। प्रत्येक दरमें बढ़िया बढ़िया कामदार मख़मली पर्दे लगे हुए थे। जगह जगह उस गद्दे के ऊपर छोटी छोटी गदियां और मसनदें लगी हुई थीं। बादशाहका पलँग पूरे दीवानख़ानेके तृतीयांश भागमें था। पलंग अत्यन्त विस्तीर्ण था; और जगह जगह गदियों, तकियों इत्यादिसे सजा हुआ था। सैयदुल्लाख़ां इस समय जिस ओर खड़ा था, उस ओरकी—वह मोतियोंकी जालीदार झालर लगी हुई—मशहरी ज़रा ऊपरको उठी हुई थी। वहींपर सोनेका एक रत्नखचित पेंचवां रखा हुआ था। उसमें अभी हालहीमें एक हुजरेने अत्युत्तम गुड़ाकू लाकर भरा था; और ऊपरसे स्वच्छ अँगारे रख दिये थे। बादशाहने अलसाते अलसाते उस पेंचवेंकी निगालीकी ओर हाथ किया। यह देखते ही सैयदुल्लाख़ांने आगे बढ़कर वह निगाली पकड़ ली; और उसका मुँह बादशाहके मुखके पास ही कर दिया। बादशाहने अलसाते अलसाते एक-दो बार धूम्र निकाला; और फिर सैयदुल्लाख़ांकी ओर देखकर कहा:—

"कहो सैयद, आज यह क्या नवीन बला लाये? कुछे न कुछ लेआये हो ज़रूर!"

"हुज़ूर, आप बादशाहतकी गद्दीके मालिक हैं, ऐसी हालतमें सारी दुनियांकी बलाएं हुज़ूरहीके पास तो आयेंगी; और बेचारी जायेंगी कहां? इसके सिवाय,जब कोई ख़ास ख़ास मौके आपड़ते हैं, तब ईमानदार नौकर वक्त-बेवक्त भी नहीं देखते।

जो अर्ज़ करना होता है, अर्ज़ करते हैं; और हुज़ूरका हुक्म लेजाते हैं।”

“अच्छा, यह तो हुआ। मुबालग़ा मत करो, काम क्या है, सो कहो।”

“ग़रीबपरवर, आपको तक़लीफ़ होती हो, तो मैं कुछ कहना ही नहीं चाहता। हुज़ूर शान्तिके साथ सुनेंगे, तभी कुछ नतीजा निकलेगा। क्योंकि बात बड़ी ही नाज़ुक है। मैं जो अभीतक कहा करता था कि, एक बार प्रत्यक्ष प्रमाण देकर इस बातको दिखला दूंगा, सो आज उसका मौका आगया है। आप सच न मानें, तो मैं नामका सैयद नहीं।”

“हां, मैंने पहले ही समझ लिया था कि, तुम ऐसा ही कुछ न कुछ मामला ज़रूर ले आये होगे। लेकिन देखो सैयद, मैं तक़-लीफ़में हूं, और चुप पड़ा हूं, फिर भी तुम कुछ सोचते नहीं।”

“सरकार, यह बन्दा यदि समयपर ही आकर सब बातें नहीं बतलावेगा, तो अचानक जो तक़लीफ़ होगी, जो कष्ट होगा, वह इस तक़लीफ़से कहीं अधिक भयंकर होगा। बस, यही समझकर मैं इस समय हुज़ूरको यह छोटीसी तक़लीफ़ देने आया हूं। सरकारकी तबीयत यदि दुरुस्त न हो, तो बन्दा अभी, इन्हीं पैरों, वापस जाता है।”

यहांपर पाठकोंको यह बतलानेकी आवश्यकता नहीं प्रतीत होती कि, बादशाहका मन अपनी मुट्ठीमें करनेकी कला सैयदुल्लाख़ांको भली भांति अवगत थी। वह यह बात भी

अच्छी तरह जानता था कि, बादशाहकी तबीयत इस समय कैसी ख़राब है; और उसको कहांतक महत्व देना चाहिए। बस, जिस दिन मदिरा देवीका सेवन विशेष होजाता था, उसी दिन बादशाहकी तबीयत बिगड़ जाती थी; और फिर उसी दिन वह किसीसे मुलाक़ात नहीं करता था। पर सैयदुल्ला-ख़ांके समान व्यक्तिके लिए, वही दिन—बादशाहकी तबीयत बिगड़नेके दिन ही—विशेष अनुकूल होते थे। फिर क्या कहना है? जैसाकि हमने ऊपर बतलाया, पहले वह बादशाहकी जिज्ञासाको विशेष रूपसे जागृत करनेके लिए ऐसे ही कुछ दो-चार वाक्य कह देता; और फिर कहता कि, "अच्छा, मैं इन्हीं पैरों वापस जाता हूं।" बस, इसी नियमके अनुसार आज भी उसने कुछ निराशा, कुछ खेद; और कुछ लापरवाहीके साथ उक्त शब्द कहे। बादशाहका मन मदिरा देवीके कारण मृदु हो ही रहा था, अतएव उसके उक्त शब्द अपना काम कर गये; और तुरन्त ही बादशाहने अपना मस्तक कुछ ऊपर उठाया; और कहाः—"नहीं, नहीं, बिलकुल लौटनेहीपर नौबत क्यों आगई? कहो, कहो—कोई महत्वकी बात हो, तो बतलाओ; परन्तु..."

"नहीं, नहीं, सरकारको कष्ट होगा; और कष्ट देकर मैं ऐसी बात कहना भी नहीं चाहता। मैं जो कुछ कहूंगा, उससे कुछ न कुछ कष्ट होगा ही; और इसीलिए मैं लौटा जारहा था।"

बस, सैयदुल्लाख़ांका उद्देश्य पूरा होगया। बादशाहकी

जिज्ञासा हो वह बढ़ाना चाहता था, सो बढ़ गई; और वह बार बार कहने लगा कि, "बतलाओ, बतलाओ, क्या बात है ?" सैयदुल्लाखाँने ज्यों ही देखा कि, जिस अंशतक बादशाहकी जिज्ञासा बढ़ी हुई वह चाहता था, उस अंशतक बढ़ गई, त्यों ही धीरेसे उसने एक चौकी पलंगके पास खींच ली; और आसपासके हुजरों और लौंड़ियोंको दूर भगा दिया; और फिर अपना कथन प्रारम्भ किया:—

"हुज़ूर, जैसाकि मैंने अर्ज़ किया, बस वही समझिये। रंगराव अप्पाके विषयमें रणदुल्लाखां जो इतनी 'पक्षपातकी' बात करता है, उसका कोई न कोई कारण अवश्य है। मैंने पहले ही आपसे अर्ज़ किया था; और अब तो उसका कारण पूरा पूरा मालूम ही होगया। 'अप्पासाहबका इसमें कुछ भी दोष नहीं,' 'वे बहुत ही भलेमानस हैं' 'गद्दीके सच्चे हित-चिन्तक हैं', इत्यादि बातें जो कानोंमें पड़ती हैं, इनमें कुछ भेद अवश्य है। सरकार, रणदुल्ला उनके मोहजालमें पड़ गया है। और वह मुरारसाहबकी तो बिलकुल मुट्ठीहीमें है। रणदुल्लखां यों तो बहुत ही स्वामिभक्त पुरुष है; पर वह मराठोंके चक्करमें फँस गया है। हज़रत, आप मुरारसाहबके विषयमें कुछ भी समझा करें, पर मैं तो यही समझता हूं कि, वह गद्दीका..."

"बस, यही महत्वकी बात !" बादशाहने कुछ त्रस्त होकर कहा, "अरे यह तो तुम्हारी रोज़की ही बात हुई।"

"नहीं, नहीं, जो कुछ बतलाना है, सो तो अलग ही है। पर,

हुज़ूर, आप तक़लीफ़ न उठावें। यदि मालूम हो कि, मैं बिना कारण कष्ट देरहा हूं, तो इसका और कोई कारण नहीं, हुज़ूरपर मेरी भक्ति ही है।" बादशाह कुछ नहीं बोला। हां, सैयदुल्ला आगे क्या कहता है, उसे सुननेके लिए उसने कुछ अधीरतासी अवश्य प्रकट की। धूर्त सैयदुल्लाने भी यह ताड़ लिया; और फिर तुरन्त ही आगे बोला :—

"ग़रीबनिवाज़, मुरार साहबकी बात एक ओर—पर अन्य भी कुछ प्रलोभनोंमें रणदुल्ला फँस रहा है। रंगराव अप्पा साहबकी तरफ़दारी और……"

सैयदुल्लाख़ां इतना कहकर कुछ झिझकासा; और बादशाहकी ओर देखने लगा। बादशाहके चेहरेपर अधीरताकी बहुत अधिक छाया देखते ही उसको बहुत आनन्द हुआ; और उसने सोचा कि, इस छायाको और भी अधिक घनी होने दूं, जिससे हम इसके आश्रयका पूरा पूरा लाभ उठाकर मनःशान्ति प्राप्त कर सकें। अस्तु। बादशाहने ज्यों ही यह देखा कि, सैयदुल्लाख़ां अब जल्दी नहीं बोलता, त्यों ही वह फिर कुछ अधिक त्रस्तसा होकर कहता है, "अच्छा फिर ? आगे कहो ना ?"

"कहता हूं। कहनेके लिए तो आया ही हूं। सरकार, अब और अधिक साफ़ साफ़ क्या कहूं ? रंगराव अप्पाने उसे विचित्र ही प्रलोभन दिया है। धिक् ! धिक्! हिन्दू कहलानेवाले ये लोग बड़ी बड़ाई मारते हैं; और अपनेको बहुत

ही विशुद्ध बतलाते हैं; परन्तु ये ऐसे नीच कर्म करते हैं!" इतना कहकर सैयदुल्लाख़ां फिर खेद, क्रोध और आश्चर्य, इन तीनों विकारोंकी छायासे अपने चेहरेको विकृत करके बादशाहकी ओर देखने लगा।

"क्या कहते हो? क्या बात हुई? रणदुल्लाख़ांने ऐसा क्या किया?" बादशाहने, बहुत ही अधीरताके साथ, अपना आधा शरीर बिछौनेपरसे उठाकर, पूछा।

"रणदुल्लाख़ांने? रणदुल्लाख़ांने इस विषयमें ऐसी कोई बात नहीं की कि, जो उसके लिए अनुचित हो—हां, जो कुछ किया है, उसके कारण अपनी स्वामिभक्तिसे—जो नमक उसने खाया है, उससे—कुछ नीचे अवश्य गिर गया है। और तो कोई बात नहीं। सरकारसे उसने यह प्रार्थना की है कि, रंगराव अप्पाको फिर उसी क़िलेपर नियत कर दिया जाय; पर जान पड़ता है, सरकारने कभी इस बातका विचार नहीं किया कि, ऐसी प्रार्थना करनेका उसे साहस कैसे हुआ? उस बुड्ढेको क़ैद कर लानेका हुक्म हुआ; और यह इसीकारण कि, उसने नमकहरामी की। वास्तवमें उसे क़ैद कर लानेकी आवश्यकता क्या थी? उसको क़ैद करके किस प्रकार लाया गया? फिर उसकी इज़्ज़त-प्रतिष्ठा रखनेमें कितनी सावधानी की गई? अब उसको फिर वापस भेजने; और उसको फिरसे क़िला लौटा देनेका आग्रह किया जारहा है। जहांपनाह, इसका सारा भेद यदि आज मैं आपको बतलाऊं, तो आपके शरीरके रोंगटे

खड़े होजायँगे; और इच्छा होगी कि, रंगराव अप्पाको सूली ही देदी जाय। यह हिन्दू—हिन्दू काहेका ! काफ़िर है काफ़िर !

छत्तीसवां परिच्छेद ।

बादशाह ।

(२)

सैयदुल्लाख़ांकी इन अन्तिम बातोंसे तो बादशाहकी जिज्ञासा हद दरजेतक बढ़ गई। अब वह आधेसे भी अधिक बिछौनेपर उठकर सैयदुल्लाख़ांकी ओर त्रस्त नेत्रोंसे देखता हुआ कहता है, "कहो, कहो, जो कुछ कहना हो। उसके लिए इतनी रुकावटकी आवश्यकता क्या ?"

बादशाहकी वह वृत्ति, जोकि इतनी उच्छृंखल होरही थी, देखकर सैयदुल्लाख़ांको अत्यन्त आनन्द हुआ। वह जो कुछ चाहता था, जिस मनोवृत्तिमें बादशाहके आनेकी वह अबतक प्रतीक्षा कर रहा था, उस मनोवृत्तिमें बादशाह आगया। इस-लिए जो उद्देश्य उसे सिद्ध करना था, उसे सिद्ध करनेके लिए तुरन्त ही उसने अपना क़दम आगे बढ़ाया। वह बादशाहसे कहता है, "ग़रीबपरवर, वह बात ज़ोरसे बतलानेलायक नहीं। उसे मैं आपके कानमें धीरेसे ही बतलाता हूं। आप चुपकेसे सुन लें। अवश्य ही उसके लिए आप रणदुल्लाख़ांको दण्ड देनेकी इच्छा करेंगे; परन्तु इस समय ऐसा न करें। उसका पूरा पूरा

दाव-पेंच क्या है, सो देख लेने दीजिए। पकड़में आजाने दीजिए, जिससे छूट जाने अथवा कोई बहाना बतला देनेका मौक़ा ही न रहे; और तब उसे सहजमें ही दण्ड दे सकेंगे। वह आपकी प्रजा है, आपका नौकर है, आपका गुलाम है, हरामख़ोर यदि निकल गया, तो उसे दण्ड देना क्या कठिन है? अच्छा, तो मैं अब बतलाता हूं। पर उसे सुनकर यदि आपको क्रोध आवे—और क्रोध आवेगा ही, यह निश्चय है! क्योंकि आपके समान न्यायी और परम दयालु पुरुषको ऐसी बातें सहन कैसे होंगी?—पर उस क्रोधको भी कुछ दिनतक दबाये रखना पड़ेगा। इस बातका हुज़ूर यदि निश्चय कर लेवें, तो मैं अभी सब बतला दूं। किन्तु यदि आप क्रोधके वश होकर कुछ करने लगेंगे, तो उसे अपनी बात छिपानेका मौक़ा मिल जायगा; और फिर मैं जो कुछ कहता हूं, सो सच है—यह सिद्ध कर दिखानेमें मुझे भी कठिनता पड़ेगी—किंबहुना यह बिलकुल असम्भव हो-जायगा।"

बादशाहकी आतुरता पहले ही अतिरेकको पहुंच चुकी थी। और फिर उसमें भी यह नीच इतनी बावदूकी दिखलाने लगा—यह देखकर बादशाहको अत्यन्त क्रोध आया। यहांतक कि उसके मुहँसे शब्द ही न निकलने लगा। सैयदुल्ला यह ताड़ गया कि, उसने आवश्यकतासे अधिक वीणाका तार कस दिया। अतएव अब वह बहुत जल्द हाथ जोड़कर बादशाहके बिलकुल कानके पास ही अपना मुँह लेगया; और धीरेसे कोई बात

कही, जिसे सुनते ही बादशाह कहता है, "झूठ! झूठ! बिलकुल झूठ! रणदुल्लाख़ां अपने बापका सच्चा बेटा है। वह इतनी नीचता—और ऐसी छोटीसी बातके लिए—कभी कर नहीं सकता। तुम यों ही बात बनाकर मुझसे कह रहे हो। मैं अभी उसे बुलवाता हूं। तुम्हारे सामने ही बात छेड़ूंगा। तुम्हारी बात यदि सच निकलेगी, तो इसी समय मैं उसे जहन्नुमको पहुंचा दूंगा; और यदि झूठ निकलेगी, तुम यदि कोई बात बनाकर मेरे सामने लाये होगे, तो समझ लेना फिर!"

"बेशक! बेशक!" हताश हुईसी आवाज़से सैयदुल्लाख़ां एकदम कहता है, "लेकिन मैं अपने ही उपायोंसे उसकी सचाई-झुठाई सिद्ध कर दूंगा। आप यदि इस प्रकार उसे यहां बुलवायेंगे, तो कोई लाभ न होगा। हज़रत, मैं पहले ही जानता था कि, मेरी बात जब आप सुनेंगे, तब आपको ऐसा ही क्रोध आवेगा; और इसीलिए मैंने आपसे पहले ही प्रार्थना कर दी थी कि, "सरकार, शान्तिके साथ विचार करें।" मैं जो कुछ कह रहा हूं, उसे पूरे तौरपर सिद्ध कर दिखलानेके लिए मुझे कुछ अवधि चाहिए, वह मुझे आप दीजिए........"

सैयदुल्लाख़ां जिस समय यह कह रहा था, बादशाहका चित्त उस समय उसकी बातोंकी ओर नहीं दिखाई देता था। वह उस समय बिछौनेपर चुप पड़ा था; और सैयदुल्लाख़ांकी ओर केवल देखभर रहा था। इसके बाद बीचमें ही वह बोल उठा, "सैयद, सचमुच ही जो बात तुम बतला रहे हो, क्या वह

सच है?—सचमुच ही उसने ऐसी कोई बात की है, अथवा यों ही तुम बनाकर कुछ कह रहे हो?"

"नहीं, नहीं! झूठ कहकर मुझे उसमें क्या प्राप्त करना है?"

सैयदुल्लाख़ांकी यह बात सुनकर बादशाह कुछ हँसा; और कुछ तिरस्कारकी चेष्टासे उसकी ओर देखकर बोला, "तुम्हें प्राप्त क्या नहीं करना है? प्राप्त करनेहीके लिए तो यह सारा झगड़ा है......"

इस समय सैयदुल्लाख़ांने ऐसी कुछ विलक्षण दृष्टिसे बादशाहकी ओर देखा कि, केवल दृष्टिपातसे ही यदि मनुष्योंका मारा जाना सम्भव होता, तो इस समय बादशाहका कुशल नहीं था। और उस हालतमें, उसके उस भयंकर दृष्टिपातको भी कुछ न कुछ सफलता प्राप्त हुई होती। परन्तु अपने मनके उस विकारको उसने उस समय अपने उस दृष्टिक्षेपकी अपेक्षा अन्य किसी मार्गसे भी दिखलानेका प्रयत्न नहीं किया। किन्तु, इसके विरुद्ध, अपनी चेष्टापर कुछ हँसीसी लाकर उसने कहा, "अब जैसी सरकारकी मर्ज़ी हो! मेरा जो कुछ कर्तव्य था, सो मैंने किया।" इतना कहकर वह बिलकुल चुप होरहा। अवश्य ही अब वह बादशाहके बोलनेकी प्रतीक्षा कर रहा था, परन्तु बादशाह थोड़ी देरतक कुछ भी नहीं बोला। फिर अचानक कहने लगा, "सैयद, मैं तुमको पन्द्रह दिनकी मुद्दत देता हूं। इतनी मुद्दतमें यदि तुमने अपनी बातको प्रमाणित नहीं कर दिया,

तो फिर बस समझ रखो ! इस अवधिमें मैं रणदुल्लाख़ांसे कोई चर्चा इस विषयकी नहीं करूंगा। पर पन्द्रह दिनके बाद यदि तुम अपना कथन सत्य प्रमाणित न कर सके, तो......मैं अब अधिक न कहूंगा। इस समय मेरी तबीयत और भी अधिक ख़राब होरही है। अब तुम यहांसे जाओ।" इतना कहकर बादशाह फिर चुप होरहा; और फिर "ऐ मेरी जान रम्भा, शराब, शराब" करके चिल्लाने लगा। जिस समयका यह वृत्तान्त है, वह समय पाठकोंके ध्यानमें होगा ही। सैयदुल्लाख़ां अभी वहांसे टलना नहीं चाहता था। अभी वह बादशाहसे उसी विषयमें और भी कुछ कहना चाहता था; और ऐसा जान पड़ता था कि, इसी प्रकारकी बातोंसे वह बादशाहके मस्तकको और भी ख़ूब सन्तप्त कर देना चाहता था! पर इतनेमें बादशाहने रम्भावतीकी याद की और "शराब, शराब" की चिल्लाहट मचाई। इससे सैयदुल्लाख़ांको एक प्रकारका आनन्द ही हुआ। उसने सोचा कि, यहां आनेके पहले ही मैं रम्भावतीसे मिलूं; और इस समयकी सब बातें उसके कानमें डालकर उसीके द्वारा बादशाहका मन कलुषित कराता रहूं। बस, यह सोचकर वह एकदम खड़ा होगया; और बादशाहसे बोला, "जहांपनाह, आज इस बन्देपर सरकारकी मर्ज़ी कुछ नाख़ुशसी जान पड़ती है। बन्देसे क्या अपराध हुआ, जो इतनी नाराज़ी हुई, मेरी तो कुछ समझमें नहीं आया। सरकारने जो मुद्दत दी है, उस मुद्दतके अन्दर ही मैं अपनी बातपर सरकारका विश्वास करा

दूंगा। यदि मैं ऐसा न कर सका, तो फिर यह मुँह सरकारको न दिखाऊंगा। आप मुझपर इतना अविश्वास रखते हैं, ऐसा मुझे स्वप्नमें भी ख़याल न था।" इतना कहकर वह वहांसे चल ही दिया। बादशाह शराबके लिए अब बिलकुल बेहोश होरहा था! और कोई समय होता तो, उसने शायद सैयदुल्लाख़ांको उस हालतमें जाने न दिया होता। सैयदुल्लाख़ां वहांसे चलकर एकदम रम्भावतीके रङ्गमहलकी ओर गया, जोकि वहीं एक ओर था। वहां पहुँचकर उसने रम्भावतीको अपने आनेका समाचार देनेके लिए महलके बाहर बैठे हुए खोजेसे कहा। खोजेने भीतर जाकर रम्भावतीको सैयदुल्लाख़ांके आनेका समाचार दिया, जिसे सुनते ही पहले तो रम्भावतीकी चेष्टा तिरस्कारसे भरी हुई दिखाई दी। परन्तु फिर उस तिरस्कारको बहुत जल्द अन्दर ही अन्दर दबाकर कपटपूर्ण हास्यसे उसने अपने चेहरेको सजाया। रम्भावतीका पूरा पूरा इतिहास पाठकोंको आगे चलकर आप ही आप मालूम होजायगा। यहांपर सिर्फ इतना ही बतलाना है कि, रम्भावती एक अत्यन्त ही सुन्दरी रमणी थी; और बादशाहको इसके प्राप्त करानेमें सैयदुल्लाख़ांने भारी परिश्रम किया था। रम्भावतीको यद्यपि सुलतानाका पद प्रत्यक्ष रूपसे तो प्राप्त नहीं हुआ था, परन्तु फिर भी सैयदुल्लाख़ांका यह ख़याल था कि, इसको जितने कुछ अधिकार प्राप्त हुए हैं, उन सबको प्राप्त करा देनेका मैं ही एक कारण हूं। अतएव इसके द्वारा मेरी भी उन्नति ख़ूब होसकेगी। इधर रम्भावती

भीतरसे सैयदुल्लाख़ांसे अत्यन्त द्वेष रखती थी; परन्तु बाहरसे अवश्य ही मीठी मीठी बातें करके उससे अपनी कृतज्ञता प्रकट करती थी। उसका अन्दरूनी उद्देश्य क्या था—उसको कौनसा अपना उद्देश्य सिद्ध करना था, सो उसके सिवाय और कोई जान नहीं सकता था। अस्तु। यह समाचार पाते ही कि, सैयदुल्लाख़ां आया है, उसने उसको भीतर आने देनेका सन्देशा भेजा। सैयदुल्लाख़ां तुरन्त ही जापहुंचा। वह जो कुछ उससे कहना चाहता था, सब कहा। रम्भावतीने भी अत्यन्त माया दिखलाकर उसको सारी बातें सुन लीं। सैयदुल्लाख़ांने उससे जो जो कुछ करनेकी प्रार्थना की, सब उसने तुरन्त ही स्वीकार कर लिया। इतनेमें बिलकुल शामका वक्त होगया। रम्भावतीके पास बादशाहका सन्देशा आया कि, हुज़ूर याद कर रहे हैं। इससे उसने भी, इसी बहाने, सैयदुल्लाख़ांको शीघ्र बिदा किया।

आजके सारे दिनमें सैयदुल्लाख़ांका जो कार्य हुआ, उससे उसको कोई सन्तोष न हुआ। अतएव पिछली बातोंपर विचार करते हुए वह वहांसे चल दिया। अपने विचारमें वह उस समय बिलकुल ही तल्लीन होगया था। बाहर आते ही वह अपने मियानेमें प्रविष्ट हुआ; और जैसीकि उस समय चाल थी, भीतर पड़ी हुई गद्दीपर पैर फैलाकर, तकियेसे सिर टेककर, पड़ रहा। वह अपने विचारोंमें निमग्न था, सो ऊपर बतला ही चुके हैं।

उस समय, आजकलकी तरह मार्गपर जगह जगह लालटेनें इत्यादि लगाकर रातको रोशनी करनेकी प्रणाली बिलकुल नहीं थी। सब बड़े बड़े लोग उस समय, अपनी हैसियतके अनुसार दो-चार, दस-पन्द्रह मशालची अपने घरोंमें नौकर रखा करते थे। वे लोग रातको अपने मालिकके साथ मशालें जला जलाकर रोशनी करते हुए चलते थे। तदनुसार सैयदुल्लाख़ां भी जब उस दिन बादशाहके महलोंसे अपने मियानेपर बैठकर निकला, तब पीछे दो मशालें चल रही थीं। इतनेमें क्या चमत्कार हुआ, सो देखिये। मियानेके आगेका मशालची कुछ अन्तरपर था, पीछेका भी किसी न किसीतरह घिसलता आता था। ठीक मियानेके पास मशाल नहीं चाहिए, ऐसी सैयदुल्लाख़ांकी ताक़ीद थी। अस्तु। इस प्रकार, जबकि सवारी चली जारही थी, मार्गमें एक जगह ऐसा दिखाई दिया कि, बड़ा कोलाहल मच रहा है—लोग अपनी अपनी चिल्ला रहे हैं। आगे जानेके लिए मार्ग ही न था। इससे स्वाभाविक ही मशालची और सब नौकर-चाकर लोग ठहर गये। कहार भी वहीं ठहर गये। उस ठहरनेसे ख़ानके मियानेको, और साथ ही साथ उसके विचारोंको भी, स्वाभाविक ही धक्का लगा। इससे ख़ांसाहब-को गुस्सा आना भी बिलकुल स्वाभाविक था। फिर क्या पूछना है? उन कहारोंको मशालचियोंको और दुनियांके सभी लोगोंको गालियां सुनाते सुनाते ख़ांसाहबकी सवारी चड़फड़ाते हुए उठी; और दरवाजेसे बाहरकी ओर, क्या मामला है, सो

देखने लगी। देखते क्या हैं कि, दो मुसलमान एक गौको खींच रहे हैं। मुसल्मानोंके शरीरसे कुछ कुछ रक्त भी बह रहा है। पास ही एक काला-कलूटा आदमी, जो बहुत ही क्रुद्ध होरहा है, तलवार उठाये हुए उस गौको छुड़ाने और मुसल्मानोंको भगानेके लिए उपद्रव मचा रहा है। वह आदमी अपनी छोटी-सी तलवार उठाये हुए, गौको खींच लेजानेवाले मुसलमानोंकी ओर उसको दिखला रहा था। इतनेमें वहां और भी बहुतसे लोग जमा होगये। उनमें जो हिन्दू थे, वे तो गौको छुड़ाने और जो मुसलमान थे, वे गौकी गर्दन काटनेके लिए दंगा-फ़िसाद करने लगे। बस, उसी समय हमारे ख़ांसाहब वहांसे निकल पड़े। अब हिन्दूलोग एक प्रकारसे जीत चुके थे; और उस गौको छुड़ा लेजानेहीवाले थे। मुसलमान लोग हट चुके थे। यह हाल देखकर ख़ांसाहबको स्वाभाविक ही बहुत बुरा लगा। हिन्दुओंकी किसी प्रकारसे भी जीत होजाना उन्हें कभी अच्छा नहीं लगता था। इसलिए सैयदुल्लाख़ांने ज्यों ही यह सब हाल देखा, त्यों ही हिन्दुओंके भीतर पैठकर तथा अपनी धाक दिखलाकर मुसल्मानोंकी ही जीत करा देनेके लिए वह नीचे उतर पड़ा। और अब उस दंगेमें शामिल होकर वह कुछ न कुछ करनेहीवाला था कि, उस काले-कलूटे आदमीकी ओर उसका ध्यान गया; और दोनोंकी चार आंखें होते ही—उस काले मनुष्यकी आंखें सैयदुल्लाख़ांकी आंखोंसे मिलते ही—ऐसा जान पड़ा कि, सैयदुल्लाख़ांका अबतकका सारा जोश

काफ़ूर होगया, वह बिलकुल घबड़ासा गया; और मानो यह बात उसके मनमें आई कि, हमने अपने मियानेसे बाहर आकर अच्छा नहीं किया ! चाहे इसी कारणसे हो—और चाहे उसके मनमें यह बात आई हो कि, जिस आदमीको हम देख रहे हैं, वह अचानक कहांसे आगया—अथवा कोई भी कारण हो, वह कुछ घबड़ाकर, और कुछ आश्चर्य करके, वहांसे चल देनेका विचार अवश्य करने लगा—इसमें सन्देह नहीं। सैयदुल्लाख़ां ज्यों ज्यों इस प्रकारका डरपोंकपन दिखलाने लगा, त्यों त्यों उस काले-कलूटे आदमीकी आंखें और भी अधिकाधिक सुर्ख़ होती गईं; और अन्तमें वे इतनी विस्तृत होगईं कि, उस समय उसकी ओर यदि कोई अच्छी तरह नज़र भरकर देखता—और उस भीड़में यदि कोई देखता होता—तो उसे ऐसा ही जान पड़ता कि, मानो वह अब सैयदुल्लाख़ांको अपनी उन आंखोंके रास्ते निगल ही तो जायगा, अथवा वह अपने नेत्रोंके तेजसे मानो उसको भस्म ही तो कर डालेगा ! उस समय एक दूसरेको देखकर, सैयदुल्लाख़ां और उस व्यक्तिकी जो दशा हुई, सो वर्णन नहीं की जासकती। वह व्यक्ति अपने हाथकी तलवारको और भी मज़बूतीके साथ पकड़ने लगा और अन्तमें उसका वह हाथ ऊपर ही ऊपर उठता गया। और उस हाथके नीचे आनेकी दिशा सैयदुल्लाख़ांकी ओरको है—ऐसा सैयदुल्लाख़ांने समझा; और बस, उसके पैरोंकी दिशा मियानेकी ओरको हुई !

सैयदुल्लाख़ांके क़दम ज्यों ज्यों मियानेकी ओर पड़ने लगे,

त्यों त्यों उस काले-कलूटे आदमीकी आंखें और भी अधिक सुर्ख़ दिखाई देने लगीं। इसके सिवाय उसका हाथ भी मानो आगे बढ़ने लगा; और उसके क़दम भी। ऐसा जान पड़ा, मानो उस झुंडमें सैयदुल्लाख़ांके अतिरिक्त और कोई उसे दिखाई ही नहीं पड़ता था। जिस गौको छुड़ानेके लिए वह इतनी देरसे प्रयत्न कर रहा था, वह गौ भी मानो अब उसे दिखाई न पड़ने लगी। इसके सिवाय अब वह गौ बिलकुल हिन्दुओंके ही हाथमें आगई थी, अतएव अब उसके विषयमें कोई विशेष चिन्ता करनेकी आवश्यकता भी नहीं रही थी। वह गौ आज केवल उसीके प्रयत्न और परिश्रमसे छूटी थी। हमने ऊपर बतलाया ही है कि, सैयदुल्लाख़ांने ज्यों ही यह देखा कि, मुसल्मानोंके हाथसे निकलकर वह गौ हिन्दुओंके हाथमें चली गई, त्यों ही वह अपने मियानेसे नीचे उतर पड़ा। उस समय हिन्दुओंने समझा कि, अब यह दुष्ट अवश्य ही इस गौको हमारे हाथमें न रहने देगा। क्योंकि सैयदुल्लाख़ां अपने पराक्रम और शूरवीरताके कारण तो नहीं; किन्तु अपनी धाकके-कारण एक प्रकारसे उन लोगोंके लिए हौवासा ही बन रहा था; और रास्तेमें ही उसको देखकर लोग उसके आतंकमें आजाते थे। परन्तु उस समय जब उन लोगोंने देखा कि, एक ऐसे वीर पुरुषका उनको सहारा है कि, जो उनके उस हौवेको बिलकुल नहीं डर रहा है; और सैयदुल्लाख़ां अब कुछ भी दस्तं-दाज़ी न करते हुए स्वयं ही पीछे भग रहा है, तब हिन्दुओंको

भी एक प्रकारका जोश आगया। इधर मुसल्मान लोग पहले हो पीछे हटने लगे थे, पर सैयदुल्लाख़ांको आया हुआ देखकर वे फिर एकत्र होकर कुछ करनेवाले थे; इतनेमें उन्होंने यह भी देखा कि, अब सैयदुल्लाख़ां स्वयं ही मियानेकी ओर हट रहा है। इसकारण वे जहांके तहां ही रह गये। इतनेमें सैयदुल्लाख़ां तुरन्त जाकर अपने मियानेमें घुस गया; और पीछेकी ओर लेट रहा। यह देखते ही वह काला-कलूटा आदमी एकदम आगे बढ़ा; और मियानेके अन्दर अपना सिर डालकर—"याद रख! याद रख! तेरा दुश्मन अभी मरा नहीं; और दो महीनेके अन्दर ही वह तुझे जहन्नुमको पहुँचा देगा। देख, मेरी ओर देख ले।" ये शब्द उसने बिलकुल धीरेसे कहे; परन्तु वे मानो सैयदुल्लाख़ांके कानोंमें खौलते हुए तेलकी तरह ही प्रविष्ट हुए। वे शब्द उसने इस प्रकारसे कहे थे कि, सैयदुल्लाख़ांके अतिरिक्त और कोई उन्हें सुन नहीं सका। इतने शब्द कहनेके बाद उसने एक बार फिर अपने उन्हीं रक्तके सदृश लाल नेत्रोंको फाड़कर उसकी ओर देखा; और अपना सिर मियानेके बाहर निकाल लिया। इसके बाद फिर कहारोंकी ओर देखकर—"चलो,बढ़ाओ सालो, यहां क्यों खड़ा किया है?" कहा; और पीछेके कहारोंके कन्धोंपर एक एक चपत लगाई। कुछ देर बाद कहार भी मशालचीके पीछे पीछे चलते बने। और फिर वह काला-कलूटा आदमी जाने कहांका कहां वहीं अन्धकारमें ग़ायब होगया।

———

सैंतीसवां परिच्छेद ।
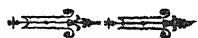
नाना साहब ।

इधर हमारी बाग़ी-मण्डलीने यह प्रतिज्ञा की ही थी कि, तीन महीनेके अन्दर सुलतानगढ़का क़िला हमारे हाथमें आ-जाना चाहिए। इसलिए अब वे उसके लिए सभी आवश्यक प्रयत्नोंका विचार करने लगे। हथियार-वथियार तो आज कितने ही दिनोंसे शिवाजी जमा कर रहे थे। पाठकोंको यह मालूम ही है कि, हनुमानजीके मन्दिरके नीचे तहख़ानेमें जो भवानी माताका मन्दिर था, उसमें शस्त्रास्त्रका संग्रह बहुत काफी था। सब प्रकारके हथियार वहां काफी तादाद्में मौजूद थे। हथियारोंकी तरह ख़ज़ानेकी भी कोई कमी न थी। शिवाजीके पूर्वगुरु दादोजी कोंडदेवने इस विषयमें उन्हें बहुत कुछ समझाया, पर उन्होंने इसकी भी परवाह न की; और अपने साथियोंसहित बीजापुर-राज्यके कुछ मुसल्मान जागीरदारों तथा उन मराठोंके गाँवोंपर, जो कि मुसल्मानोंके बिलकुल ग़ुलाम बन रहे थे, छापा मारकर बहुतसा लूटका माल भवानीके मन्दिरमें पिटारोंमें भर भरकर रख छोड़ा था। मतलब यह कि उस समय शिवाजीको अस्त्र-शस्त्र और द्रव्यकी बिलकुल कमी नहीं थी। इसके सिवाय उनके काममें शूरवीर पुरुषोंकी आवश्यकता थी, सो वे भी अबतक उनकी मण्डलीमें काफी

तादादमें शामिल होचुके थे। सब तैयारी पूरी पूरी होचुकी थी। सिर्फ मौक़ा आनेभरकी देर थी—और कुछ नहीं।

इसके सिवाय इस प्रकारके राजनैतिक उद्देश्योंके सिद्ध करनेमें जिस चातुर्यकी आवश्यकता होती है, सो उनमें ख़ुद ही मौजूद था। रह गया चारों ओरसे समाचार मंगानेका प्रबन्ध—सो भी उन्होंने बहुत अच्छा जमा लिया था। ख़बरें मंगानेमें श्रीधर स्वामी कितने चतुर थे, सो पाठकोंको मालूम ही है। वे मुख्य मुख्य जगहोंकी सब ख़बरें सदैव लिया करते थे। शिवाजी तथा उनके सभी साथियोंने यह पक्का निश्चय कर लिया था, कि शरीर रहे, चाहे जाय, हम धर्मस्थापना और गो-ब्राह्मणोंको यवनोंके कष्टसे छुड़ानेका कार्य करके ही रहेंगे। उनका यह निश्चय केवल छोटे छोटे छापे मारने अथवा बटमारोंकी तरह मुसल्मानोंको लूटनेहीभरके लिए न था; किन्तु मराठाराज्यकी—हिन्दूपदबादशाहीकी—स्थापना करनेके लिए ही उन्होंने यह निश्चय किया था। शिवाजीने लड़कपनसे ही महाभारतकी अनेक आख्यायिकाएं सुन रखी थीं; अतएव उनको यह विश्वास था कि, जिस प्रकार परमात्माने पांडवोंकी सहायता करके उनके द्वारा दुर्योधनादि अन्यायी तथा दुष्ट लोगोंसे इस पृथ्वीका उद्धार किया, उसी प्रकार ईश्वर इस समय हमारी भी सहायता करेगा; और यवनोंके द्वारा जो प्रजा पीड़ित होरही है, उसको मुक्त करेगा। इसके सिवाय उनको यह भी भरोसा था कि, श्रीधर स्वामीके द्वारा हमारे

ऊपर जिस एक महात्मा (श्रीरामदास स्वामी) का कृपाप्रसाद हुआ है, उससे भी हमको इस काममें पूरी पूरी सफलता मिलेगी। भवानी माताकी कृपापर तो उनका पूरा पूरा विश्वास था ही। चूंकि इस प्रकार उनके मनको कई भारी भारी विश्वास थे; और स्वयं अपने स्वभावसे भी वे अत्यन्त दृढ़प्रतिज्ञ एवं शूरवीर थे, अतएव सदैव उनको यही विश्वास रहता था कि, जो काम हम उठावेंगे, वह बातकी बातमें पूरा होना ही चाहिए। दक्षिणकी अपनी जागीरकी ओरसे जिस प्रकार वे सब तरहकी ख़बरें मँगानेमें दक्ष थे, उसी प्रकार स्वयं बीजापुरकी भी सब छोटी-बड़ी ख़बरें मँगानेका उन्होंने प्रबन्ध कर रखा था। बीजापुरमें तो सारी बात ही थी। क्योंकि पिता राजा शहाजी-भोसले बीजापुरके ही एक बड़े सरदार थे; और बादशाहका उनपर प्रेम भी बहुत था। बादशाहने राजा शहाजीसे कई बार कहा था कि, तुम शिवबाको दरबारमें लाकर हमारे सिपुर्द कर दो, हम उसको अपने यहां रखकर अच्छे अच्छे ओहदे देंगे। परन्तु जब राजा शहाजी अपने पुत्रसे बीजापुर चलने, अथवा बीजापुरमें रहते समय दरबारमें चलनेका ज़िक्र करते, तब वह बहुत ही असन्तोष प्रकट करता था। लड़कपनमें कई बार राजा शहाजी शिवबाको दरबारमें लेगये थे, पर उस समय भी वह बड़ी उद्दण्डताका बर्ताव करता रहा, बादशाहको सलाम ही न करता; और अपने पिताके पास आकर बैठ जाता! यह देखकर राजा शहाजीने भी फिर उससे वैसा आग्रह करना

छोड़ दिया; और उसको अपनी जागीरकी ओर भेज दिया, तथा स्वयं बादशाहकी आज्ञासे दक्षिणकी चढ़ाइयोंपर चले गये। ये सब बातें इतिहासप्रिय पाठकोंको मालूम ही हैं, अतएव यहां-पर फिरसे उनका विस्तार करनेकी आवश्यकता नहीं। मतलब यह कि, शिवबाके मनमें यवनद्वेष लड़कपनसे ही बढ़ रहा था; और इधर कुछ दिनोंसे स्वराज्य-स्थापनाकी भी उनमें प्रबल इच्छा उत्पन्न होचुकी थी। अब केवल उन बातोंको कार्यरूपमें परि-णत करनेकी आवश्यकता थी। इसके सिवाय पिछले परि-च्छेदोंमें जो वृत्तान्त बतलाया गया, उससे पाठकोंको यह भी मालूम होचुका है कि, अब इन लोगोंको किसी न किसी क़िलेके हस्तगत करनेकी अत्यन्त आवश्यकता थी, इसके बिना उनका अगला कार्यक्रम सुचारु रूपसे चल नहीं सकता था। जिस दिन श्रीधर स्वामीकी सम्मतिसे सुलतानगढ़के क़िलेको तीन महीनेके अन्दर जीतनेकी उन लोगोंने प्रतिज्ञा की, उस दिनसे लगभग आठ दिन बाद एक घटना हुई, जिसकाकि हम ज़िक्र करनेवाले हैं। शिवबा, नानासाहब, तानाजी, स्वामीजी इत्यादि, सभी लोग अपने सदैवके जङ्गलमें, उसी नियत स्थानपर, विचार कर रहे हैं। अभी एक घड़ी पहले ही बीजापुरसे एक जासूसने आकर यह ख़बर दी है कि, रणदुल्लाख़ांपर बादशाह आजकल बहुत ही नाराज़ है; और सुलतानगढ़के क़िलेदारको ख़ूब कष्ट देते हुए जेलमें डाल देनेका हुक्म होचुका है। रणदुल्लाख़ांपर बादशाहके नाराज़ होनेका कारण यह है कि, रंगराव अप्पाकी

उसने तरफ़दारी की; और सुलतानगढ़से आते समय एक अत्यन्त तरुण मराठे सरदारको पकड़ लाया; और बादशाहको इसकी ख़बर नहीं दी। बस, इसी कारण बादशाह उसपर बहुत ज़्यादा नाराज़ होगया है। यह सब समाचार सुनकर नाना-साहबको स्वाभाविक ही बहुत दुःख हुआ; और अन्य लोगोंको भी बहुत चिन्ता उत्पन्न हुई। उपर्युक्त समाचार जिस समय आया, उस समय लोग बड़ी चिन्तामें थे। नानासाहब तो शोकसे बिलकुल व्याकुल होरहे थे। फिर जब यह समाचार सुना, तब तो नानासाहबको एक प्रकारसे यही विश्वास होगया कि, अब हमारे पिताके कुशलपूर्वक छूटनेकी कोई आशा नहीं। और ऐसी दशामें यदि हमारी मंडली सुलतानगढ़पर धावा भी करेगी, तो कोई अच्छा परिणाम न होगा। इसलिए यह बात उनमेंसे प्रत्येक व्यक्तिके मनमें आरही थी कि, अब कोई न कोई अच्छी युक्ति सोचनी चाहिए; और इसलिए सभी अपने अपने मनमें यही सोच रहे थे कि, अब आगे क्या करना चाहिए। श्रीधर स्वामी तो अपने विचारोंमें इतने निमग्न दिखाई देरहे थे कि, अपने विचारोंके अतिरिक्त और कुछ उन्हें दिखाई ही नहीं देरहा था। किंबहुना यह भी कहा जासकता है कि, अन्य लोगोंकी अपेक्षा उन्हें और भी कोई ख़बर मालूम थी; जोकि उन्होंने दूसरे लोगोंको बतलाई ही नहीं थी। जो कुछ भी हो, इसमें कोई सन्देह नहीं कि, उस समय उपर्युक्त समा-चार पाकर सभीके चित्त बड़े चिन्तित होरहे थे। अबतक

किसीको कोई नवीन विचार नहीं सूझा था कि, इतनेमें नाना-साहब ज़ोरसे कहते हैं, "आप सबकी और स्वामी महाराजकी यदि अनुमति हो, तो मैं बीजापुरको जाऊं; और वहांका क्या हालचाल है,सो सब सच्चा सच्चा मालूम कर लाऊं। यदि मौक़ा मिल जायगा,तो चाहे जो करूंगा,पिताजीको छुड़ा भी लाऊंगा—हाय! हाय! इसी महीने-डेढ़ महीनेके अन्दर, देखिये तो, मेरे और सूर्याजीके कुटुम्बकी क्या दशा होगई! उनके सारे कुटुम्ब-का तो सत्यानाश ही होगया! सोई मेरे कुटुम्बकी भी दशा समझिये। मेरी दशा यहांपर यह होरही है! ख़ैर, मैं तो आप लोगोंकी सेवामें रहकर देशरक्षा और धर्मरक्षाका कुछ कार्य करूंगा ही; पर पिताजीकी क्या दशा होगी? और स्त्रीका तो फिर कुछ समाचार ही नहीं मिला। न जाने वह कहां गई! कैसे गई! किसके हाथमें पड़ गई! कोई समाचार ही नहीं! इसलिए राजासाहब, स्वामीमहाराज, आप अब मुझे जाने दीजिए। कमसे कम पिताजीको मैं छुड़ा लाऊं, अथवा यह शरीर ही उनके कार्यमें लगा आऊं। इन दुष्टोंने उनका इतना अपमान किया है कि, उनको यदि हम छुड़ा लावेंगे, तो वे अवश्य हमारे अनुकूल होजायँगे; और जहां वे एक बार हमारे अनुकूल होगये कि, फिर बातकी बातमें हम अपने कार्यको आगे बढ़ा सकेंगे। इसके अतिरिक्त—हां, यह बात सही है कि, यद्यपि मैं उस दरबारमें बहुत बार नहीं गया हूं; फिर भी यदि मैं वहां जाऊंगा, तो बहुतसी नवीन नवीन बातें मालूम होंगी,

और भी कई प्रकारसे अवश्य लाभ होगा। आपकी आज्ञाको हम टाल नहीं सकते; और न आपके बिना पूछे हम कोई बात ही कर सकते हैं; परन्तु मेरे मनमें यह निश्चय अवश्य होगया है कि, मैं एक बार बीजापुर होआऊं; और पिताजीको छुड़ा लाऊं, अथवा इस काममें अपने प्राण ही दे दूं......"

नानासाहब बोलते बोलते बड़े आवेशमें आगये थे। अपना सारा हृदय मानो उन्होंने अपने शब्दोंमें निकालकर रख दिया था। वे इतनी देर बोलते रहे; परन्तु ऐसा जान पड़ता था कि, उनका प्रत्येक शब्द अपने साथ उनके हृदयका एक एक टुकड़ा लेकर ही बाहर निकल रहा है। शिवबा और स्वामीजीने उनका सारा कथन बड़ी शान्तिके साथ सुना; और फिर बहुत देरतक वे मन ही मन कुछ विचार करते रहे। अन्तमें स्वामीजी शिवबाकी ओर देखकर कहते हैं, "इस समय हम लोगोंमेंसे यदि कोई बीजापुर जावे, तो कोई हानि तो नहीं है, बल्कि लाभ ही होगा। केवल अपने जासूसोंपर ही अवलम्बित रहना ठीक न होगा। किन्तु अकेले नानासाहबको ही जाने देना भी उचित नहीं है। इस समय तानाजी और येसाजी ही यमाजीके साथ भेष बदलकर जावें। रंगराव अप्पाको छुड़ानेका भी प्रयत्न करना चाहिए; परन्तु बड़ी सावधानीके साथ। रंगराव-अप्पाके समान अनुभवी सरदार यदि हम लोगोंके अनुकूल हो-जायगा, तो निस्सन्देह हम लोगोंको अपने कार्यमें बड़ी मदद मिलेगी।" स्वामी महाराजका यह कथन शिवबाने शान्तिके

साथ सुना; और फिर वे बहुत देरतक अपने मन ही मन विचार करते रहे। परन्तु अन्तमें जब स्वामीजीने कहा कि, शिवबा, यह समय बहुत देरतक सोचने-विचारनेका नहीं है। जो कुछ करना हो,शीघ्रतापूर्वक करना चाहिए।" तब शिवबाने एक विचारपूर्ण नज़रसे स्वामीकी ओर देखते हुए कहा, "स्वामी-महाराज, मैं आपके विचारके बाहर कदापि नहीं जासकता। नानासाहब जैसाकि कहते हैं, तदनुसार उनका बीजापुर जाना और अपने पिताजीको मुक्त करना अत्यन्त आवश्यक है। यह भी आपका कथन सत्य है कि, इस समय उनको अकेले जाने देना भी ठीक न होगा। हम लोगोंमेंसे किसी न किसीको उनके साथ अवश्य जाना चाहिए। इसके सिवाय, जिन लोगोंका अभी आपने नाम लिया, वही लोग उनके साथ जावें, तभी ठीक भी होगा। ये लोग यहांसे जावें; और कपट-भेषसे अज्ञात-वासमें रहें। परन्तु इनमें कोई न कोई ऐसा भी आदमी चाहिए जो कि, बीजापुरसे पूरी पूरी जानकारी रखता हो; और दरबार-की गुप्तसे गुप्त बातको भी जान सके। ये लोग पुरन्दरसे आपको उन चांडालोंके हाथसे छुड़ा लाये सही, पर यह इलाक़ा अपने हाथका था। इसलिए मामूली युक्तिसे ही बातकी बातमें काम निकल गया। और अब जो कार्य करना है, सो स्वयं उनकी राजधानीमें ही—उनकी आंखोंके सामने—करना है! और फिर उसमें भी हमारे तीन ही आदमी जाकर वह काम करेंगे। दंगे-धोपेसे यह काम नहीं निकल सकेगा—इसके लिए

तो उनकी आंखोंमें ही धूल झोंकनी पड़ेगी; और बड़ी चतुराईसे काम करना होगा। इसके सिवाय और कोई रास्ता ही नहीं। इसलिए पहले इस बातका कुछ विचार करना चाहिए कि, ये लोग जाकर वहां क्या क्या करेंगे; और किस किस प्रकारसे रहकर क्या क्या बर्ताव करेंगे ? फिर वहां जानेपर जैसा जैसा मौक़ा देखेंगे, वैसा वैसा तो इनको करना ही होगा, इसमें सन्देह नहीं। लेकिन पहले हम लोगोंको भी तो कोई न कोई मार्ग निश्चित कर लेना चाहिए; और तदनुसार सब बातें सोच-कर इनको वहां भेजना चाहिए। कार्य तो होगा ही; और हम उसे पूरा करेंगे; और जैसाकि हम चाहते हैं, उसी प्रकारकी सफलता भी प्राप्त होगी, इसमें अणुमात्र भी सन्देह नहीं। किन्तु माता जगदम्बाके आज्ञानुसार हमको सावधानी अवश्य रखनी चाहिए, ऐसा ही उपदेश आपका भी है।"

उपर्युक्त सारे कथनका प्रत्येक शब्द शिवबाके मुखसे इतनी शान्तिके साथ निकल रहा था, मानो प्रत्येक शब्दके बाहर निकलते समय बोलनेवालेका मन किसी न किसी अत्यन्त गूढ़ विचारमें निमग्न होरहा हो। ऐसा जान पड़ता था कि, जिस बातके विषयमें विचार करनेके लिए वे उस समय कह रहे थे, उसी बातका विचार वे स्वयं भी उस समय, उपर्युक्त भाषण करते करते ही, कर रहे थे—यही नहीं, बल्कि ऐसा भी जान पड़ता था कि, उनके मनमें इस बातके विषयमें करीब करीब कोई निश्चय भी होचुका होगा कि, इनको जाकर वहां क्या क्या

करना चाहिए; और कैसा मौक़ा आवे, तब इनको क्या करनेके लिए हम क्या क्या बतावें, इत्यादि। अस्तु। भाषण समाप्त होते होते ऐसा भी जान पड़ा कि, उनके मनमें, उक्त सम्बन्धमें कोई न कोई निश्चय पूरा पूरा होचुका।

परन्तु, उपर्युक्त भाषणके समाप्त होजानेके बाद भी वे बहुत देरतक बिलकुल चुप बैठे रहे। मानो, जो विचार उनके मनमें निश्चित हुआ था, उसको वे और भी पक्का कर रहे हों। इस बीचमें अन्य लोग बिलकुल स्तब्ध रूपसे और ऐसी दृष्टिसे कि, जिसमें पूज्यभाव पूर्ण रूपसे भरा हुआ है, उनकी ओर देख रहे थे। स्वामी महाराजके नेत्रोंमें भी एक प्रकारका पूज्य-भावयुक्त प्रेम चमक रहा था। अन्तमें स्वामीजीको एक ओर लेजाकर उन्होंने अपना वह सारा विचार बतलाया, जो अभी निश्चित किया था। दोनोंमें कुछ देरतक आपसमें कुछ चर्चा भी होती रही। इसके बाद फिर उन दोनोंने नानासाहब और तानाजीको एक ओर बुलाया; और उनके मनमें अपना वह विचार पूर्ण रूपसे बैठा दिया। तत्पश्चात् दूसरे ही दिन वे तीनों आदमी, जोकि निश्चित किये गये थे, बीजापुरको चल दिये।

अड़तीसवां परिच्छेद ।

साईंजी ।

एक दिन ठीक सन्ध्यासमय रम्भावती अपने महलकी खिड़-कीमें बिलकुल अकेली ही बैठी हुई थी। बादशाह शिकारके निमित्त, बीजापुरसे दस-पांच मीलपर, एक ख़ास जंगलमें गया था; और इसीसे इस समय रम्भावतीको भी थोड़ासा एकान्त मिल गया था। उसकी चेष्टा बिलकुल खिन्नसी दिखाई देरही थी। उसके आसपास और कोई भी न था। उसने जानबूझ-कर सबको वहांसे हटा दिया था। उस समय ऐसा जान पड़ता था कि, वह किसी न किसीकी प्रतीक्षामें है। क्योंकि खिड़कीसे वह बड़ी उत्सुकताके साथ देख रही थी। अब इतना उजेला भी नहीं रह गया था कि, दूरसे आनेवाला आदमी ठीक ठीक पहचाना जासके; क्योंकि क्षण क्षणपर अन्धकार अपना प्रभाव जमाता जारहा था। परन्तु फिर भी वह अपने सुन्दर और विशाल नेत्रोंको बार बार आकुंचित करके दूरतक नज़र डालती; और जब उसे उसकी अभीष्ट स्त्री आती हुई दिखाई न देती, तब बिलकुल निराशसी होकर एक ओर बैठ रहती। दस-पांच बार उसने ऐसा किया; परन्तु फिर वह बिलकुल निराशसी होगई; और "न जाने निगोड़ी कब आवेगी!" कह-कर वहीं एक ओर पड़ी हुई एक छोटीसी कोचपर जाबैठी।

उसने अपने बायें हाथकी हथेलीपर अपना कपोल रख लिया था; और दूसरे हाथसे, उस सुनहरी कोचपर रखे हुए एक तकियेकी कमख़ाबकी झालरसे खेल रही थी। दो-तीन बार वह वहांसे उठी; और खिड़कीमें जा जाकर उसने अपने नेत्रोंको पूर्णतया आकुंचित करके ध्यानपूर्वक दृष्टि डाली, पर फिर भी कोई आशा नहीं। इस प्रकार ज्यों ज्यों समय बीतता गया, त्यों त्यों उसकी चित्तवृत्ति अधिकाधिक आतुर होती गई। अन्तमें जब बाहर अन्धकारने अपना पूर्ण साम्राज्य कर लिया; और कुछ दिखाई ही न देने लगा, तब उसने खिड़कीमें खड़े होनेकी धुन भी छोड़ दी। और फिर वह अपनी उसी कोचपर आबैठी। इतनेमें चिराग़ लगानेके लिए दासियां आईं; परन्तु उसने उनको हुक्म देदिया कि, आज चिराग़ ही न लगाया जाय। दासियोंने समझा कि, शायद बादशाहके वियोगके कारण उसकी ऐसी दशा होरही होगी; और उनमेंसे जो एक कुछ ढीठ थी, उसने कह भी डाला, "अजी आते होंगे सरकार भी, इतनी उदासीनता क्यों ?" रम्भावतीको उसका यह कथन केवल विषकी ही भांति लगा, पर उसने यह बात प्रकट नहीं होने दी; और झूठा ही क्रोध दिखलाकर तथा उसमें कुछ मुस्कुराहटकी भी झलक लाकर केवल इतना ही कहा, "अरी, जा निगोड़ी, क्या बकती है ? मुरही कहीं की !" उसने उस दासीसे इतना कह दिया अवश्य; पर उसके दिलपर उस समय क्या बीती होगी, सो वही जाने ! अस्तु। जब यह सख़्त हुक्म हो-

गया कि, आज दीपक न लगाये जांय, तब दासियां भी वहांसे चली गईं। इसके बाद फिर रम्भावतीकी अशान्ति और भी अधिक बढ़ने लगी। वह बार बार उठती और बार बार खिड़की-तक जाती। बाग़के दीपक, जो उस समय मशालची लगा रहा था, अब दिखाई देने लगे थे। वह बार बार अपने उस भारी दीवानख़ानेमें इधरसे उधर चक्कर लगाती। फिर कोचपर बैठ जाती, लेट रहती; और फिर उठती। उसका मन जितना अस्वस्थ होरहा था, उतना ही उसका शरीर भी अस्वस्थ हो-रहा था। कुछ देर बाद वह आप ही आप कहती है, "इस निगोड़ीको भेजे पहर-डेढ़ पहर होगया, पर अभीतक नहीं आई; न जाने क्या हुआ? आजके समान फिर कभी मौक़ा नहीं मिलेगा। लेकिन, मैंने जो देखा, सो सच था, अथवा मुझे ऐसा भास ही हुआ? यह भास नहीं हुआ। सचमुच ही वही मूर्ति है! ऐ दुष्ट सैयदुल्ला, तूने मेरे जन्मका तो सत्यानाश कर ही दिया। और तेरे कलेजेको चूसनेके लिए कोई रहा नहीं, ऐसा समझकर मैं स्वयं ही कुछ न कुछ करनेवाली थी; पर नहीं, अब ऐसा करनेकी कोई ज़रूरत नहीं—जिनके हाथसे ऐसा होना चाहिए, उन्हींके हाथसे अब यह काम होगा; और जब मैं उसको सुनूंगी, तब मुझे बड़ा ही सन्तोष होगा। यह राई अभीतक न जाने क्या कर रही है, आई क्यों नहीं? इसीका मुझे बड़ा अचम्भा है......"

इस प्रकार रम्भावती अपने ही आप कहती हुई; और लम्बी

लम्बी सांसें छोड़ती हुई बैठी थी कि, इतनेमें उसके दीवान-खानेका दरवाजा किसीने भेड़ा। इसपर तुरन्त ही वह कहती है, "कौन है? राई? आगई? क्या ख़बर लाई? वही मूर्ति तो है? बतला, बतला?" परन्तु राईकी ओरसे कोई उत्तर तो मिला नहीं—हां, ऐसा मालूम हुआ कि, कोई दरवाजा भेड़कर और सांकल लगाकर भीतर आया; और आगे बढ़ा। दीवानख़ानेमें दीपक तो था ही नहीं; अतएव रम्भावती पहचान नहीं सकी कि, यह कौन व्यक्ति है। हां, इतना अवश्य उसे मालूम हुआ कि, यह कोई पुरुष है, जो मेरी ओर आरहा है। क्योंकि जो स्त्री उसकी ओर आरही थी, वह बिलकुल सफेद वस्त्र पहने थी; और डीलडौलमें ऊंची थी। इसके सिवाय जब वह बिलकुल उसके सामने ही आगई, तब खिड़कीके मार्गसे बाग़के एक दीपकका थोड़ासा उजेला भी, उसके चेहरेपर तो नहीं, किन्तु उसके शरीरपर पड़ा। उसे देखते ही रम्भावती घबड़ाई; और एकदम "चिराग़! चिराग़! चिराग़ तो लाओ! अरे यह कौन..." कहकर चिल्लाई; पर आगन्तुकने बीचहीमें "चुप, चुप" कहकर उसके कोमल मुखपर हाथ मारकर मुँह दाबा; और फिर ज़ोरसे कहा, "चुप, चुप। बोलना नहीं। चिल्लाने-चिल्लानेसे कोई लाभ न होगा।" रम्भावती उस समय इतनी घबड़ा गई कि, उसका सारा शरीर थर थर काँपने लगा। उसके मुँहसे एक शब्द भी न निकलने लगा—हां, उसकी आंखें, अवश्य ही, उसके मनमें न होते हुए भी, उस आगन्तुककी ओर देखने लगीं। उसने

धीरेसे उसके मुखपरसे हाथ उठाया; और कुछ देरतक चुप खड़ा रहा। फिर उससे कहता है, "बोल, मैं कौन हूं? तूने मुझे पहचाना?"

रम्भावती थर थर काँपती हुई बड़े कष्टसे उत्तर देती है, "हां!"

"मैं तुझे मार डालनेके लिए आया हूं। आज अभी, इसी जगह, तेरा सिर काट डालूंगा; और तब यहांसे टलूंगा। मुझे यहां आनेमें क्या क्या कष्ट भोगने पड़े; और यहां आनेपर तुझको इस भोगविलासमें देखकर मेरे मनको जो यातनाएं हो-रही हैं, उनकी यदि तुझे कुछ भी कल्पना होती, तो तूने आज मेरे देखते ही देखते प्राण देदिये होते—नहीं, तू कभी ज़िन्दा रह ही नहीं सकती थी। अरी दुष्टे, चांडालिन!......"

आगे उसके मुँहसे एक अक्षर भी नहीं निकल सका। वह कुछ देर चुप खड़ा रहा। इसके बाद फिर कहता है, "क्यों? अब बोलती क्यों नहीं? बोल। अन्तमें जो कुछ कहना हो, कह ले। मैं आज तेरे प्राण लिये बिना यहांसे जाऊंगा नहीं। ऐसे ऐश-आराममें तुझे देख रहा हूं—इससे अधिक और कौन पाप होसकता है?"

रम्भावती ये सब बातें सुन रही थी; और उनमेंसे प्रत्येक शब्दके साथ, मानो उसे थोड़ा थोड़ासा धैर्य भी होरहा था। होते होते अन्तमें यहांतक नौबत आई कि, वह अपने मनकी बात कहनेको तैयार हुई। और कुछ देर, मानो सोचकर वह

इस प्रकार कहती है, "आपके हाथसे मैं मरू ं—इससे अधिक और मुझे क्या चाहिए ? उन दुष्टोंने मुझसे यही आकर कहा कि, उन्होंने आपको इस संसारमें नहीं रखा। इस प्रकार जब मैंने समझा कि, मेरा भाग्य अब बिलकुल फूट गया, तब मैंने प्रतिज्ञा की कि,कभी न कभी उस दुष्टके कलेजेका ख़ून मैं अवश्य निकालूंगी—पूरा पूरा बदला लूंगी। अपने पासका चित्र मैं उसके रक्तसे सानूंगी; और उसी दिन बस, अपना भी अन्त कर लूंगी। उस प्रतिज्ञाको सत्य करनेका अब कोई काम ही नहीं। निकालिये, निकालिये वह अपनी तलवार—और लीजिए, मेरी गर्दनके दो टुकड़े कर दीजिए। इस पापिनको स्वप्नमें भी यह न मालूम था कि, इन हाथोंसे इसके टुकड़े टुकड़े होनेका पुण्य इसको बदा है......" इतना कहते कहते उसका कण्ठ एकदम भर आया; और जैसे वायुके झोंकेसे कोई रम्भाका स्तम्भ एकदम भहरा गिरे, उसी प्रकार "करो, सचमुच ही अब मेरे दो टुकड़े करो" कहते हुए धड़ामसे वह उस व्यक्तिके चरणोंपर गिर पड़ी !

यह देखते ही वह व्यक्ति—वह पुरुष—मानो अत्यन्त चकित-सा हुआ। वह जिस ख़यालसे, और जिस उद्देश्यसे यहां आया था, वह ख़याल मानो बिलकुल भ्रमपूर्ण निकला; और वह उद्देश्य अब वह पूरा करे अथवा नहीं, इस विषयमें भी अब उसका मन द्विधामें पड़ गया। उस समय वह ख़ुद ही यह नहीं सोच सका कि, यह जो मेरे चरणोंपर पड़ी हुई है, इसको उठावें, अथवा

इसी जगह, जहां पड़ी हुई है, इसके शरीरके दो टुकड़े कर दें।
कई बार उसका हाथ तलवारकी ओर गया। कई बार वह
पीछे हटा; और इस विचारसे कि, उस सुन्दरीको उठाकर होशमें
लावे, आगे बढ़ा। इस प्रकार जबकि उसके मनकी द्विधा-
स्थिति होरही थी, उसे ऐसा भास हुआ कि, जैसे कोई दरवाजे-
पर थाप मारता हो। अब वह दरवाजा खोले या क्या करे,
सो कुछ उसकी समझमें न आया। दरवाजा यदि नहीं खोलता,
तो एकदम गड़बड़ मचेगा; और यदि खोलता है, तो न जाने
कौन आजाय; और वह जब यह सब हाल देखेगा, तो न जाने
क्या करेगा; और क्या नहीं। अब इसकी गर्दन काटकर यहांसे
निकल जाना भी सम्भव नहीं। इसके सिवाय, अन्तमें इसने
जो कुछ कहा, उसके कारण अब इसकी गर्दन काटनेमें भी
हमारा हाथ उठेगा, अथवा नहीं, इसमें भी शंका है! इस प्रकार
परस्पर-विरुद्ध अनेक विचार उसके मनमें आने लगे; और उसकी
एक बड़ी विचित्र दशा होगई। उधर बाहरसे दरवाजा खट-
खटानेका सिलसिला जारी ही था। अन्तमें उस सुन्दर स्त्रीके
प्राण लेनेमें उसका हाथ नहीं उठा; और उसने सोचा कि, अब
इसको तो ऐसा ही छोड़कर हमें दरवाजा खोलना चाहिए; और
बाहरका आदमी जब भीतर आने लगे, तब पहले चुपकेसे किवा-
ड़की ओटमें खड़े होकर, बादको फिर एकदम निकल जाना
चाहिए। यह सोचकर वह दरवाजेके पास गया; और दरवाजेको
खोलकर धीरेसे वह एक किवाड़की ओटमें खड़ा होगया।

इधर दरवाजा खुलते ही एक स्त्री यह कहती हुई, "बाई-साहबा, चिराग़, वगैरह बिलकुल नहीं,यह क्या बात है? मैं पता लगा आई" भीतर आई। वह अभी भीतर आई ही थी कि, इतनेमें किवाड़की ओटमें छिपा हुआ मनुष्य एकदम झपटकर बाहर निकल गया; और मोड़परसे घूमता हुआ ज़ीनेसे नीचे उतरने लगा। उस समय वह बहुत ही धीरे धीरे उतर रहा था। उसका सारा शरीर अब पूरा पूरा उजेलेमें था। उसके सारे कपड़े बिलकुल सफ़ेद थे; और उसकी दाढ़ी भी छातीतक लटकती हुई बिलकुल उसके कपड़ोंकी ही तरह सफ़ेद थी। बीच बीचमें वह ठिठककर खड़ा भी होजाता था, कभी खांसता भी था—जैसे बुढ़ापेके मारे बिलकुल जर्जर होगया हो! जगह जगह खड़े हुए नौकर-चाकर उसको झुक झुककर सलाम करते जाते थे। उनको वह अपना हाथ—जिस हाथमें कि, वह स्फटिक मणियोंकी जपमाला लिये हुए था—उठा उठाकर असली अरबी भाषामें कुछ आशीर्वाद भी देता जाता था। इस प्रकार धीरे धीरे वह बाग़के अगले दरवाजेके पास पहुंचा। वहांपर पहरेदारोंने पूछा, "साईंजी, आप बहुत जल्दी लौट पड़े!" इसपर उसने असली उर्दू भाषामें केवल इतना ही कहा, "बेग़म-साहबाको कुरानका कुछ हिस्सा सुनानेको था, सो क़ाज़ी-साहबकी आज्ञासे सुना आया, अब वापस जाता हूं!" इस प्रकार कहकर खांसते हुए, उनके सलाम करनेपर, आशीर्वाद दिया; और वहीं जो उसका मियाना लगा हुआ था, उसपर

बैठकर वह वहांसे चलता बना। मियानेको एक मसजिदके पास छोड़कर मियानेवाले कहारोंके कानमें कुछ कहा; तथा मसजिदके एक द्वारसे भीतर जाकर दूसरे द्वारसे सवारी निकल गई; और फिर बस्तीके बाहर एक पुराने मकानमें चली गई।

इधर रम्भावती अपने महलमें जबकि बेहोश पड़ी हुई थी, एक दासी—जैसाकि हमने ऊपर बतलाया—उसे पुकारती हुई भीतर आई; और जब उसकी ओरसे कोई उत्तर न मिला, तब बड़ी अचम्भित हुई। अन्य दासियोंने उसे बाहर ही बतलाया कि, "बाई साहबाने आज चिराग़तक नहीं जलाने दिये, उनकी दशा आज बड़ी विचित्र होरही है, किसीको पास ही नहीं बैठने देतीं।" यह दासी जो अभी भीतर आई थी, रम्भावतीकी अत्यन्त प्रिय दासी थी; और सदैव उसके पास रहती थी। इस-पर रम्भावतीका विश्वास भी बहुत था। इसलिए अन्य दासियोंने समझा कि, शायद इसे बाई साहबाका सारा हाल मालूम होगा, अतएव उन्होंने उससे अनेक प्रकारके प्रश्न भी किये। साथ ही यह भी पूछा कि, आज सारा दिन तू गई कहां थी? पर उसने कोई विशेष बात नहीं बताई; और न कोई अपना अभिप्राय ही प्रकट होने दिया। अन्य दासियां भी बाहरहीसे उसके साथ लग गयीं; पर उसने बड़े चातुर्यसे उनको पीछे ही टाल दिया; और अकेली ही इस समय वह भीतर आई। यह वही दासी थी, जिसका कि, कुछ देर पहले, रम्भावती खिड़कीमें खड़ी हुई रास्ता देख रही थी। पाठकोंको यह भी मालूम होगया होगा

कि, रम्भावतीने आज इसे बहुत देरसे किसी बातका पता लगानेके लिए भेजा था; और बड़ी उत्सुकताके साथ उसकी प्रतीक्षा कर रही थी कि, देखें अब पता लगाकर वह कब आती है। इस दासीका नाम था राई; और यह रम्भावतीकी अत्यन्त प्रिय और विश्वासपात्र दासी थी। रम्भावतीके मनमें ऐसी कोई भी बात नहीं थी कि, जो उसे मालूम न हो। और रम्भावती कोई भी काम करनेके लिए राईको आज्ञा देती, वह काम यदि मनुष्यके प्रयत्नोंसे बाहरका न होता, तो राई उसे अवश्य ही पूरा कर आती थी। आज राईको जिस कार्यके लिए रम्भावतीने भेजा था, उस कार्यमें उसे बहुत ही परिश्रम करना पड़ा; पर उसे प्रायः वह पूरा करके ही आई थी। जिस व्यक्तिका पता लगानेके लिए उसने उसे भेजा था, उसका उसने पूरा पता, प्रत्येक प्रकारके प्रयत्नसे, लगा ही लिया था; और यह सोचती हुई कि, मैंने उसका पूरा पता लगा लिया; और यह बात जब मैं अपनी मालकिनको जाकर बतलाऊंगी, तब उसे बहुत आनन्द होगा। वह इस समय उसके अन्तःपुरमें आई थी। उसने सोचा था कि, मेरी मालकिन अब बहुत ही उत्सुक होरही होगी; और जब उसको जाकर यह सब हाल मैं बतलाऊंगी, तब उसे कुछ धीरज होगा। बस, इसी प्रकारके विचारोंमें वह उस समय निमग्न थी। इतनेमें उसने आकर दरवाजा खुलवाया; और इसीकारण उसे इस बातकी शंका भी न हुई कि, यह दरवाजा वास्तवमें मेरी माल-

किनने ही खोला, अथवा और किसी व्यक्तिने। मालकिनके उदास होने और अपने रंगमहलमें दीपक भी न लगाने देनेका कारण उसे मालूम था; अतएव इस बातका उसे कोई आश्चर्य भी नहीं हुआ। क्योंकि वह जानती ही थी कि, आज वह हमारा रास्ता देखती हुई अकेली बैठी रहेगी। इसलिए भीतर आकर पहले उसने अपनी मालकिनको तीन-चार बार पुकारा; पर उसकी ओरसे जब कोई उत्तर नहीं मिला, तब वह कुछ शङ्कित होकर वैसी ही आगे बढ़ी। इतनेमें उसके पैरमें कुछ लगा। झुककर उसने देखा, तो रम्भावती बेहोश पड़ी है। उसे ऐसी हालतमें देखकर वह भौंचक्कीसी रह गई; और एक-दम "चिराग़ लाओ, चिराग़ लाओ" कहकर चिल्लायी। दरवाजा आधासा खुला था ही। चारों ओर शोर मच गया; और दस-पांच दासियां तुरन्त ही हाथोंमें दीपक लिये हुए आपहुंचीं। देखती हैं, तो रम्भावती बाई बिलकुल बेहोश अस्तव्यस्त पड़ी हुई है।

"आज बादशाहकी सवारी जबसे गई, तभीसे इनकी यह दशा होरही है।" "सन्ध्यासे ही न जाने इनकी क्या हालत हो-रही है।" "इनकी तबीयत शामसे ही मैं ऐसी देख रही हूं।" इत्यादि इत्यादि बातें कहकर सब दासियां आपसमें बड़बड़ाने लगीं। सभी अपनी अपनी बुद्धिके अनुसार बाई साहबाको होशमें लानेका उपाय सुझाने लगीं। पर प्रत्यक्ष कोई भी कुछ न करती थी। कई दासियां तो इसी चिन्तामें थीं कि,

अब बादशाहकी सवारी लौटकर आती ही होगी, अब हमारी सबकी फ़जीहत होगी। हां, उनमें एक राई ही ऐसी थी कि, जो अपनी मालकिनको होशमें लानेके लिए सब प्रकारका प्रयत्न कर रही थी। और कुछ ही देर बाद उसका वह प्रयत्न सफल भी हुआ। रम्भावती होशमें आई; और—"क्यों, मेरे प्राण क्यों नहीं लेते ? आपके हाथसे यदि मैं मरूंगी, तो अवश्य ही इस पापसे मेरा छुटकारा होजायगा"— इस प्रकारके शब्द, जो वहां एकत्रित उन सब दासियोंके लिए, केवल अर्थशून्य ही थे, उसके मुखसे निकले। शायद उसने समझा कि, जिस समय वह बेहोश हुई थी, उस समय जो कुछ होरहा था; और जो स्त्री उस समय उसके सामने खड़ी थी—वही अब भी हो रहा है; और वही स्त्री अब भी उसके सामने खड़ी है तथा उसीसे वह बात-चीत कर रही है! परन्तु जब उसने देखा कि, दासियोंका एक बड़ा झुण्ड उसके आसपास खड़ा है; और उनमेंसे कई एक दीपक भी लिये हैं, तब वह बहुत घबड़ासी गई; और चारों ओर देखकर कहती है, "क्या मुझे विना मारे ही चले गये ? अथवा उन्हें कोई पकड़ लेगया ?" इतना कहकर वह फिर आसपास पागलकी भांति देखने लगी। राईने सोचा कि, इनको इस प्रकार बड़बड़ाने देना ठीक नहीं है, शायद और कोई बातें बाहर निकल पड़ें; और उस हालतमें बड़ा अनर्थ भी हो-सकता है। बस, यही सब सोचकर वह अपनी मालकिनसे तुरन्त ही बोली, "बाई साहबा, बाई साहबा ! तुमको क्या होगया

है ? क्या कोई स्वप्न हो पड़ा ? इस प्रकार बड़बड़ाओ मत । ये देखो, सब दासियां घबड़ाई हुई खड़ी हैं। चलो, अपने पलँगपर चलकर पड़ो !" यह कहकर राईने उसे ज़बरदस्ती उठाया; और उठाते उठाते उसके कानमें धीरेसे उसने कुछ कहा भी। इससे रम्भावती बिलकुल सचेत होकर उठ पड़ी; और ख़ुद ही अपने पलँगकी ओर चल दी। फिर उसने सिर्फ़ एक दीपक रखवाकर सबको चले जानेकी आज्ञा दी। आज्ञा पाते ही सब दासियां वहांसे चली गईं। सिर्फ राईभर उसकी ख़िदमतमें रह गई।

इस प्रकार जब चारों ओर बिलकुल सन्नाटा होगया, तब रम्भावती, जोकि राईके आनेके लिए अत्यन्त आतुर होरही थी, उठकर पलँगपर बैठी; और राईसे बोली, "बतला, तू क्या पता लगा लाई ? परन्तु अब तो पता लगानेकी आवश्यकता ही नहीं रही। अभी वे स्वयं यहां आये थे; और मेरे सब पापोंका अनायास ही प्रायश्चित्त होनेवाला था, पर क्या कहूं, हतभागिन मैं ! मेरा भाग्य ही उतना अच्छा नहीं। मैंने अपनी गर्दन उनके चरणोंपर रख दी; पर फिर भी मेरे प्राण न लेते हुए वे यहांसे चले गये। कहां रहते हैं, क्या करते हैं, क्या कुछ पता लगा तुझको ? लगा हो, तो बतला।"

"वे यहां आये थे" ये शब्द सुनते ही राईके आश्चर्यका ठिकाना न रहा। इन शब्दोंका अर्थ ही उसकी समझमें न आया। वह तुरन्त ही बोली, "क्या वे यहां आये थे ? बाई-साहबा, तुम स्वप्नमें तो नहीं हो ? अनेकों पहरोंसे, सैकड़ों जमा-

दारोंके बीचसे, गुज़रते हुए क्या कोई भी पुरुष कभी भी इस अन्तःपुरमें आसकता है? बाहरके दरवाजेका पहरेदार भी यदि भीतर आना चाहे, तो उसका भी तो साहस नहीं होसकता— फिर बिलकुल अपरिचित व्यक्तिका यहां गुज़ारा कहां? तुम सचमुच ही किसी भ्रांतिमें हो!"

राईका यह कथन सुनकर, उस चेहरेपर, जोकि पहलेहीसे खिन्न होरहा था, कुछ मुस्कुराहटकी झलक दिखाई दी; और वह एकदम बोली, "राई, तेरी ही तरह मैं भी अचम्भेमें हूं कि, यहांतक उनका आना हुआ तो कैसे? पर यहां वे आये अवश्य। मुझसे बातचीत भी हुई। मेरी गर्दन उड़ा देनेकी बात निकाली। मैंने कहा, ज़रूर उड़ा दीजिये, आप जीवित हैं, तो मुझे अपनी प्रतिज्ञाको पूर्ण करनेकी कोई आवश्यकता ही नहीं रही। इसके सिवाय, अपनी प्रतिज्ञा भी मैंने उनको बतला दी। अपनी गर्दन भी मैंने उनके चरणोंपर रखदी। ये सब बातें हुईं इसमें कुछ भी शंका नहीं। तूने क्या किया, सो तो बतला।"

"किन्तु बाई साहबा, तुम कहती हो कि, वे यहां आये थे, यह कैसे हुआ?"

"चाहे जैसे हुआ हो! जो कुछ हुआ, सो तो मैंने तुझे बतलाया। तूने क्या पता लगाया, सो बतला।"

उन्तालीसवां परिच्छेद।

भूतोंकी हवेलीमें।

अब रम्भावती और उसकी दासीको हम स्वच्छन्द होकर अपनी बातें करने दें, अथवा उसकी दासी जो कुछ पता लगा लाई हो, सो उसको बतलाने दें; और अपने पाठकोंके साथ चलकर अब उन साईंजीका हालचाल देखें।

पिछले परिच्छेदमें हमने बतलाया था कि, साईंजी एक मसजिद्के सामने अपना मियाना छोड़कर एक दरवाजेसे भीतर घुसे; और दूसरे दरवाजेसे एक ओर निकल गये। इसके बाद फिर वे बस्तीके बाहर जाकर एक पुरानी, गिरी हुई, हवेलीमें गये। इधर मियानेवाले कहार भी न जाने कहांके कहां चले गये? साईंजीने उस हवेलीके अन्दर क़दम रखते ही, उसका दरवाजा ख़ूब मज़बूतीके साथ लगा लिया; और अपनी दाढ़ी एवं मूंछें तथा सारी पोशाक निकालकर उन्होंने एक ओर रख दी; और वहीं एक दालानमें इधरसे उधर घूमने लगे। साईंजीका साईंपन अब न जाने कहां चला गया? उनकी चेष्टा अब बिलकुल बदल गई। वह अत्यन्त खिन्नसी दिखाई दी—ऐसा जान पड़ता था कि, इस समय उनके मनमें कोई विलक्षण ही विचार आरहे हैं। कई बार इधरसे उधर जब वे अनेक चक्कर लगा चुके, तब अचानक एक बार वे ठहरसे गये; और

आप ही आप गुनगुनाकर इस प्रकार कहने लगे, "देखो तो, हाथ ही न चला; और उसने जो उद्गार अपने मुखसे निकाले, उनके कारण तो मेरा हाथ बिलकुल बेकारसा ही होगया। क्या कहा जाय! इन उद्गारोंका अर्थ क्या है? क्या वह उसका बदला लेना चाहती है? क्या सचमुच ही, जैसाकि वह कहती थी, उसने बदला लेनेकी प्रतिज्ञा की होगी? शायद अवश्य की होगी। क्योंकि इसके बिना—और जबकि अचानक मैं उसके आगे पहुँचा—कदापि उसके मुँहसे ऐसे उद्गार निकल नहीं सकते थे। इसके सिवाय यह भी जान पड़ता है कि, उसे यह कल्पना भी नहीं थी कि, मैं जीवित हूं। मुझको एकाएक देखते ही, वह उस खेदमें, आश्चर्यचकित भी अवश्य हुई! और फिर जब उसके मनमें यह बात आई कि, अब उसके ही द्वारा प्रतिज्ञा पूर्ण होनेकी कोई आवश्यकता नहीं; किन्तु उस प्रतिज्ञाको पूर्ण करनेके लिए उससे भी अधिक सुयोग्य व्यक्ति मौजूद है, तब उसके मनमें कुछ सन्तोषकेसे भाव भी दिखाई दिये। इधर मेरा मन भी अब मुझसे यही कह रहा है कि, जो कुछ बात हुई, वह उसकी लाचारीमें ही हुई है। उससे निकल जाना उसके लिए बिलकुल असम्भव था; परन्तु फिर भी यह उसने अवश्य ही सोच लिया कि, जिस व्यक्तिके कारण उसके ऊपर ऐसा मौक़ा आया, उस व्यक्तिके कलेजेका ख़ून चूसना उसके लिए आवश्यक है। अपनी गर्दन उड़ानेके लिये भी उसने मुझसे कहा; और यह बात बिलकुल उसने अपने हृदयसे ही कही, इसमें मुझे

अणुमात्र भी शङ्का नहीं। उसने यह भी कहा कि, हमारी गर्दन उड़ा दो, तो मैं सब पापोंसे मुक्त होजाऊंगी। उसका यह कथन भी कुछ झूठ नहीं था। मैं समझता हूं कि………"

इस प्रकार उस व्यक्तिके मनमें नाना प्रकारके विचार आरहे थे। इसके सिवाय, ऊपर जो विचार बतलाये गये, उनमेंसे अन्तिम विचार जब उसके मनमें आने लगे, तब ऐसा जान पड़ा कि, जैसे उसका मन और भी अधिकाधिक क्षुब्ध होरहा हो। उस हवेलीमें वह बिलकुल अकेला था; और जिस समयका वर्णन हम लिख रहे हैं, उस समय तो उस दालानमें एक टिमटिमाते हुए छोटेसे दीपकके अतिरिक्त और कुछ भी नहीं था, अतएव वह स्थान बहुत ही भयानकसा दिखाई दे-रहा था। इसके अतिरिक्त उस हवेलीके आसपास मनुष्यबस्ती-का कहीं नाम-निशान भी नहीं था, अतएव उसकी भयानकता उस समय और भी अधिक बढ़ रही थी। उस भयानक मका-नमें यदि उस समय किसीने इस अकेले पुरुषको घूमता हुआ देखा होता, उसे ऐसा ही भास होता कि, जैसे कोई ब्रह्मराक्षस घूम रहा हो, अथवा कोई भूत इधरसे उधर चक्कर काट रहा हो। इसके सिवाय उस मकानके विषयमें यदि उसको पहलेकी भी कुछ जानकारी होती, तो निस्सन्देह उसे यही मालूम होता कि, सचमुच ही, भूतोंकी हवेली, इसका नाम बिलकुल सार्थक है। रातके समय तो कोई कभी भी उसके आसपास आनेका साहस नहीं करता था। इसकारण उसके विषयमें कभी कोई

यह जांच भी नहीं करता था कि, इस मकानमें कोई रहता भी है, अथवा नहीं। हमारे उस, साईंका भेष धारण करनेवाले व्यक्तिको अपना कोई गुप्त उद्देश्य सिद्ध करना था; और उसको सिद्ध करनेके लिए साधारणतया उसने देखा कि, यह मकान उसके लिए बहुत सुविधाजनक होगा; और इसीकारण वह इस मकानमें आकर रहा था। उसको जो कुछ उद्देश्य सिद्ध करना था, उसकी तैयारीमें दिनभर वह चाहे जहां घूमता; पर रातको फिर उसी शान्त स्थानमें आकर दिनभरकी बातों पर विचार किया करता। बस, यही उसका सिलसिला जारी था। उसके इस क्रममें कभी व्यत्यय नहीं हुआ। अस्तु।

जैसाकि हमने ऊपर बतलाया, वह मनुष्य अपने ही आप विचार करता हुआ, इस प्रकार चक्कर काट रहा था कि, इतनेमें एकाएक उसे ऐसा भास हुआ कि, किसीने उस मकानके दरवाजेपर थाप मारी। इतनी रातमें आजतक तो कोई कभी नहीं आया; और आज ही आकर यह किसने दरवाजा खटखटाया? आज हमने जो स्वांग रचा था; और बहुत दिनका अपना उद्देश्य सिद्ध करनेके लिए बड़ी ख़ूबीके साथ जो प्रयत्न हमने किया; तथा अपने उद्देश्यको कुछ कुछ सिद्ध भी किया; कमसे कम एक विचित्र साहसका काम करके ऐसे विचित्र स्थानमें प्रवेश भी किया—अब यह सारा भंडा फूटनेकी नौबत तो नहीं आयेगी? यह सोचकर स्वाभाविक ही उसका हाथ अपने हथियारकी ओर मुड़ा। इसके बाद वह फिर आहट लेने

लगा, तो उसे पहलेसे भी अधिक दरवाजा खटखटानेका शब्द सुनाई दिया। इसलिए अब वह मन ही मन यह सोचने लगा कि, दरवाज़ा खोलूं अथवा न खोलूं। उधर दरवाजा खटखटानेका सिलसिला जारी ही था। बहुत देरतक इसने उस ओर ध्यान नहीं दिया। परन्तु बाहर जो लोग थे, वे भी काफी हठी दिखाई दिये; क्योंकि उन्होंने इतने ज़ोर ज़ोरसे दरवाजेको ठेलना शुरू किया कि, भीतरके मनुष्यने समझा कि, जैसे वे दरवाजा तोड़कर भीतर घुस ही आवेंगे। इसलिए अन्तमें उस मनुष्यने सोचा कि, अब दरवाजा खोले बिना काम नहीं चलेगा; और यह सोचकर वह दरवाजा खोलनेके लिए गया। अपनी तलवारको उसने सम्हालकर पकड़ ही लिया था। दरवाजेके पास पहुंचकर एक बार फिर भी उसके मनमें यही विचार आया कि, दरवाजा खोलें या नहीं। इसके बाद फिर इस आशयके कुछ शब्द गुनगुनाता हुआ वह दरवाजेके पास गया कि, देखो, हम ऐसे घरमें आकर रहे कि, जहां भूलकर भी किसीके आनेकी सम्भावना नहीं; फिर भी लोग मेरे मनको अशान्त करनेके लिए आ ही जाते हैं। इतना गुनगुनाकर, फिर मानो लाचारसा होकर उसने दरवाजेका बेंड़ा एक ओरको हटाया। अब वह मन ही मन इस बातपर बहुत डरा कि, देखें, अब हमारे ऊपर क्या विघ्न आते हैं; और क्या नहीं। परन्तु ज्यों ही उसने दरवाजेका बेंड़ा हटाया, त्यों ही बाहरके लोगोंने और भी ज़ोर ज़ोरसे दरवाजेमें धक्का लगाना शुरू किया। इसकारण उसने बहुत जल्द

दरवाजा खोल दिया; और एकदम उन लोगोंकी ओर जाकर डांटके साथ पूछा, "कौन है ? क्या है ? क्यों आये हो ?" उत्तर मिला—"कोई नहीं, हम चार आदमी, ग़रीब मुसाफ़िर हैं, अभी बाहरसे आरहे हैं। कहीं उतरनेको जगह नहीं मिली। और यह भी शंका है कि, कोई जगह देगा अथवा नहीं; क्योंकि किसीसे पहचान नहीं। इसके सिवाय, यह मौक़ा भी दूसरा है। इसी-लिए आपको कष्ट दिया। रास्तेमें एक गाँवमें हमको लोगोंने बतलाया कि, बस्तीकी दक्षिण ओर एक पुरानीसी हवेली है। वहां चले जाओगे, तो रातभर गुज़ारा होजायगा। उन्होंने बतलाया कि, जिनके घर-द्वार नहीं होता, ऐसे साधू-वैरागी इसी हवेलीमें आकर उतर पड़ते हैं। सो हम भी चले आये। आप रहते ही हैं, हमको भी ठहर जाने देंगे, तो बड़ी कृपा होगी।" यह सुनते ही, ऐसा जान पड़ा कि, उस भीतरवाले मनुष्यके मनपर कोई न कोई विलक्षण प्रभाव पड़ा। ऐसा प्रभाव उसके मनपर क्यों पड़ा, सो कुछ कहा नहीं जासकता। जो मेहमान उसके सामने इस समय उपस्थित थे, उनके बोलने-चालनेमें अथवा और किसी बातमें, उसने ऐसा ही कुछ देखा कि, जिससे शायद उसके मनमें कुछ भ्रमसा उत्पन्न होगया। कह नहीं सकते, क्या बात थी ? उस समय चारों ओर अंधकार ही अंध-कार छाया हुआ था। अतएव आस-पास घनी झाड़ीके अति-रिक्त और कुछ भी दृष्टिगोचर नहीं होरहा था। और यह एक प्रकारसे अच्छा ही था; क्योंकि उस हवेलीमें अबतक जो व्यक्ति

रहता था, उसकी यह अणुमात्र भी इच्छा न थी कि, उसको कोई जाने, अथवा उसके हृदयकी बात ज़रा भी किसीपर प्रकट हो। और विशेषतः इस समय, उसके हृदयके विचारोंके कारण, उसके चेहरेपर जो भाव-परिवर्तन होरहे थे, वे उन लोगोंकी दृष्टिमें न पड़ने पावें, यह उसकी उत्कट इच्छा थी। अस्तु। अब क्षणभरके लिए उसके मनमें यह विचार आया कि, इन लोगोंको भीतर आने दूं अथवा नहीं, फिर शायद उसने यह समझा कि, रातका समय है; और ऐसे मौक़ेपर यदि हम इनकार करेंगे, तो उचित न होगा—अथवा शायद उसने यह भी ख़याल किया हो कि, यदि हम इनकार भी करेंगे, तो भी कोई लाभ न होगा; क्योंकि बाहर जो लोग खड़े थे, उनके हाथमें—उस अंधेरी रातमें भी—उनके अस्त्र-शस्त्र कुछ न कुछ चमक रहे थे। जो कुछ भी हो, उस मनुष्यको उन मुसाफिरोंके रोकनेका साहस नहीं हुआ; और उसने उनको भीतर आनेके लिए कहा। उसके कहते ही वे लोग इस धड़ल्लेके साथ भीतर घुसे कि, जैसे उनको किसीकी परवाह ही न हो। चारों आदमी जब भीतर आगये, तब उस पहले व्यक्तिने फिर भीतरसे दर-वाजा बन्द कर लिया। इसके बाद फिर वह यह विचार करता हुआ उनके पीछे पीछे भीतर आया कि, अब जिस तरहसे हो, इनको सुबह तो यहांसे भगाना होगा। इधर ये लोग भीतर आकर उस टिमटिमाते हुए दीपककी ही ओर गये। उनका उधर जाना था कि, उनमेंसे जो मनुष्य सबसे आगे था, उसने

चेहरेपर उस टिमटिमाते हुए दीपककी एक किरण पड़ी। संयोगवश हमारे पहले महाशयकी दृष्टि भी उसी समय उसके चेहरेपर पड़ी; और कह नहीं सकते, क्या कारण हुआ, ऐसा जान पड़ा कि, वह पुरुष उसके चेहरेको देखते ही कुछ चकितसा हुआ। "यह क्या बात है?" इतना ही उद्गार उसकी जिह्वापर आकर बिलकुल बाहर निकलनेहीवाला था कि, उसने उसे बड़ी ख़ूबीके साथ जहांका तहां रोक लिया। और अपनेको जहांतक होसका, अंधेरेहीमें रखकर उसने उन लोगोंसे बोलनेका मौक़ा बिलकुल टालनेकी कोशिश की। वे लोग भी उससे बोलनेको बहुत आतुर नहीं दिखाई दिये। उन्होंने अपनी अपनी कमलियां नीचे बिछा दीं; और एकने जब पानीके लिए पूछा, तब उसे कुआं बतला दिया गया, जिससे वह पानी भर लाया; और फिर जो कुछ थोड़ा-बहुत उनके पास था, सबने मिलकर खाया-पिया। इसके बाद एक आदमी पहरा देनेके लिए जगता रहा; और बाक़ी तीनोंने तुरन्त ही निद्रादेवीका आश्रय लिया। हमारा पहला महाशय इतनी देर बिलकुल स्तब्ध था। वह सिर्फ़ उनका सब चमत्कार देखभर रहा था। वह मुँहसे एक अक्षर भी नहीं बोला; और न अपना चेहरा उजेलेकी ओर लेगया। हां, उसके मनमें जो विचार आरहे थे, वे उसने जैसेके तैसे जारी रखे। इस प्रकार होते होते आधी रात बीत गई; उसे क्षणभरको भी निद्रा नहीं आई। यही नहीं, बल्कि निद्राकी कोई सम्भावना भी दिखाई नहीं दी। उन आगत

चार आदमियोंमेंसे, ऐसा जान पड़ता था, 'कि तीन आदमी निद्रामें बिलकुल ही निमग्न हैं। हां, चौथा आदमी, जोकि पहरा देनेके लिए रह गया था, अब इस बातके लिए कुछ आकुलसा दिखाई दिया कि, इन तीनोंमेंसे कोई शीघ्र ही उठे, तो अच्छा हो, जिससे मेरा छुटकारा हो; और मैं भी थोड़ीसी नींद लेऊं; परन्तु, इतना होनेपर भी, वह अपने पहरेमें ज़रा भी गफ़लत नहीं होने देरहा था। यह स्पष्ट था। वह बराबर अपने अस्त्र-शस्त्र लिए हुए बिलकुल तैनात था। ज़रा कहीं हमारे उस पहले महाशयने कुछ खटपट की, अथवा कहीं कुछ थोड़ीसी भी हल-चल दिखलाई कि, वह तुरन्त ही बिलकुल चौकन्ना होजाता; और उस महाशयकी ओर देखने लगता। इसी प्रकार कुछ समय व्यतीत हुआ, तब मानो उसपर दया करके ही दूसरा एक आदमी जाग पड़ा; और उठकर बैठ गया। फिर पहरा देनेवाले पुरुषसे कहता है, "तान्..." परन्तु यह शब्द उसने पूरा पूरा उच्चारण नहीं किया; और तुरन्त ही अपनी जीभ दांतोंतले दबाई; और फिर "तुम अब सोओ। मैं जबतक और कोई न उठेगा, पहरा दूंगा," कहकर उससे सोनेके लिए आग्रह करने लगा। वह आदमी सोनेके लिए आतुर हो ही रहा था, सो पाठकोंको मालूम है। इसलिए उसने अपने साथीका आग्रह तुरन्त ही स्वीकार कर लिया, इसमें कोई आश्चर्य नहीं। उसका साथी जगने लगा; और वह सोगया। इतनेमें क़रीब क़रीब दो बजनेका वक्त हुआ। अब हमारा

पहलेका, उस हवेलीका असली महाशय, कुछ अधिक आतुर होता हुआसा दिखाई दिया। क्योंकि उसने आवाज़से तुरन्त ही जान लिया कि, हवेलीमें आते समय पहलेपहल जिस व्यक्तिके चेहरेपर उस क्षीणप्रकाशक दीपककी झलक पड़ी थी, वही व्यक्ति अब जाग रहा है। इसके सिवाय, अब यह भी जान पड़ने लगा कि, उससे कुछ न कुछ बातचीत करनेके लिए उसकी बड़ी उत्कट इच्छा होरही है। परन्तु उसका दूसरा साथी जबतक प्रगाढ़ निद्रामें निमग्न न होजाय, तबतकके लिए उसने अपनी उक्त इच्छाको बिलकुल दबा रखा। थोड़ी ही देरमें, जब उसने देखा कि, अब उसका साथी ख़ूब गहरी नींदमें सोगया, तब वह अपनी जगहपरसे उठा; और बहुत धीरे धीरे क़दम रखता हुआ उस जगते हुए पुरुषके बिलकुल पास पहुँच गया। उसके आनेकी आहट पाते ही "कौन है?" कहकर वह पुरुष चिल्लाया। परन्तु उस महाशयने तुरन्त ही उसके कंधेपर हाथ रखकर कहा, "दोस्त, दोस्त,—दुश्मन नहीं।" फिर इसके बाद बिलकुल धीरेसे उसके कानमें कहा, "देखो, तुम मुझे नहीं पहचानोगे, लेकिन मैं तुमको अच्छी तरह पहचानता हूं; और तुम जिस कामके लिए यहां आये हो, सो भी मैं कुछ कुछ जानता हूं। तुम्हारी तरह मैं भी किसी कामहीके लिए आया हूं। और लोगोंको अभी उठाओ नहीं। तुम ज़रा बाहर चलो। मैं तुमको कुछ बतला ऊँगा।"

जिस समय वह यह सब कह रहा था, हमारे पहरा देने-

वाले व्यक्तिकी कुछ विचित्रसी दशा होरही थी। वह सोच रहा था कि, यह आदमी, जो हमसे बात करता है, है कौन? यह हमको पहचानता कहांसे है? बिलकुल परिचित व्यक्तिकी तरह बात करना चाहता है—यह मामला क्या है? इस प्रकार एकके बाद एक अनेक प्रश्न उसके मनमें उठने लगे। यह जैसाकि कहता है, तदनुसार सचमुच ही हमारा दोस्त है या दुश्मन है? हमसे कहता है कि, बाहर चलो, सो अब बाहर जाकर इसकी बात सुनें या नहीं? अथवा बाहर लेजाकर हमको दग़ा तो न देगा? यह मकान किसका है? हम कहां आगये? यह कौन है? इत्यादि अनेक प्रश्न, क्रमशः, उसके मनमें उपस्थित होने लगे, जिनके कारण उसका मन बिलकुल ही घबड़ा गया। यह देखकर उस हवेलीका वह पहला महाशय कहता है, "मेरे विषयमें आप कोई शंका न करें। मैं सचमुच ही आपका दोस्त हूं। इससे अधिक और इस समय मैं कुछ नहीं बतला सकता। आप इतना तो अवश्य ध्यानमें रखें कि, आप मुझे चाहे अपना दोस्त समझें अथवा न समझें; आप मुझपर विश्वास करें, चाहे न करें; मैं आपके काममें जो कुछ सहायता कर सकूंगा, उसके करनेमें कोई त्रुटि न करूंगा। फिर जैसी आपकी मर्ज़ी।" ये शब्द उसने अत्यन्त दृढ़ निश्चयके साथ उच्चारण किये; और उस दूसरे व्यक्तिके मनपर उनका प्रभाव भी तुरन्त ही पड़ा। उसपर उसका विश्वास हुआ; और वह तुरन्त ही अपनी जगहसे उठकर उसकी ओर देखते

हुए कहता है, "जो कुछ बतलाना हो, यहीं बतलाइये न! बाहर जानेकी क्या आवश्यकता है?"

"बाहर जानेकी कोई बहुत आवश्यकता तो नहीं है। परन्तु यहां यदि बातचीत करेंगे, तो आपके साथी शायद जाग पड़ेंगे; और फिर जिन बातोंके आज ही उनको मालूम होनेकी कोई आवश्यकता नहीं, वे उन्हें मालूम होजायँगी।"

इतनी बातचीत होनेके बाद वह पुरुष उठा; और फिर दोनों बाहर चले गये। अभी उस नवागत व्यक्तिका मन आशंकासे खाली नहीं था; और यह बात उस दूसरे महाशयने जान भी ली थी; पर उसने कुछ प्रकट नहीं होने दिया। हां, बाहर जाते ही वह उससे कहता है, "आपका नाम—नानासाहब ही तो है?"

इस प्रकार जब उस व्यक्तिका नाम ही उसने बतला दिया, तब उसे इस बातकी कोई शंका रह ही नहीं गई कि, वह उसे नहीं पहचानता है। इसलिए अब, "यह कौन है! यहां कैसे आया?" ये प्रश्न पहलेसे भी अधिक उसके मनको सताने लगे। यहांतक कि, तुरन्त ही उसने उससे कहा, "आप कौन हैं, सो बतलाते क्यों नहीं?" परन्तु उस विचित्र पुरुषने उसके प्रश्नका तो कोई उत्तर दिया नहीं; और कहता क्या है—"आप इस जगह, अप्पासाहबपर जो संकट आया है, उससे उन्हें छुड़ानेके लिए प्रयत्न करनेको आये हैं। और—और······" फिर आगे उसने एक अक्षर भी नहीं कहा। सिर्फ इतना पूछाभर कि, "कहिये, जो

मैं कहता हूं, सो बिलकुल सच है या नहीं ? आप इसी कामके लिए तो आये हैं ?" नानासाहब यह सब सुनकर, बिलकुल स्तब्धरूपसे, अपने दोनों हाथ अपने वक्षस्थलपर स्वस्तिकाकार किये हुए खड़े थे। यह क्या गोलमाल है, सो कुछ उनकी समझमें नहीं आरहा था। हमको आये पूरा एक पहर भी नहीं हुआ; और आये भी ऐसे कि, बिलकुल भिन्न भेषमें; और बस्तीके बाहर ही बाहर इस गिरे-पड़े हुए मकानमें आये। इतनेपर भी इस घरके आदमीने हमें पूरे तौरपर पहचान लिया। यही नहीं, बलिक हम क्यों आये, किस उद्देश्यसे आये,इत्यादि सब बातें भी इसे मालूम होगई हैं! यह बात क्या है ? हमारे पीछे कोई बादशाही जासूस तो नहीं लगा हुआ है ? अथवा यह भी बेचारा हमारी ही तरह बादशाही अत्याचारसे पीड़ित कोई व्यक्ति है, जो अपना कोई कार्य सिद्ध करनेको यहां आया है ? उनसे रहा न गया; और वे उसकी ओर देखकर कहते हैं, "आप मुझे पहचान तो गये, पर आप यदि सचमुच ही हमारे दोस्त हैं—और आप वैसा अपनेको कहते हैं—तो आप फिर अपना नाम क्यों नहीं बतलाते ?"

वह महाशय यह प्रश्न सुनकर एक लम्बीसी सांस छोड़कर कहता है, "मुझे अपना नाम इसी समय बतलानेकी कोई आवश्यकता नहीं है। किन्तु, नानासाहब, इससे आप कोई बुरा न मानें। मेरा नाम, आज नहीं तो कल, आपको अवश्य ही मालूम हुए बिना न रहेगा। तबतक आप यह बात किसीपर-

अपने साथियोंपर भी—प्रगट न होने दें कि, आपका और मेरा इस प्रकार वार्तालाप हुआ है। मैं आपको पहले अपनी पहचान देनेहीवाला नहीं था; पर फिर सोचा कि, आप भी किसी कामके लिए आये हैं; और मैं भी ऐसे ही किसी कामके लिए आया हूं। सो मौक़ा है, वक्त, है, मुझको आपकी और आपको मेरी मददकी आवश्यकता ज़रूर पड़ेगी। इसके सिवाय कल किसी और जगह शायद मेरी और आपकी भेंट होजाय—और ऐसी भेंट होजाना कोई असम्भव भी नहीं—तो मैं आपको और आप मुझे देखकर चकरावें नहीं। बस, इसी उद्देश्यसे मैंने आपको यह सब बतला दिया है। अब आप भीतर जाइये। जब-तक मैं इस बीजापुरमें जीवित हूं, आप इतना भी भय न रखिये कि, आपका कोई बाल भी बांका कर सकेगा। परन्तु हां, साव-धान रहिये; और आगे अब कहीं यदि आप मुझे मिल जावें, तो पहचान न दें। आप अपना बर्ताव ऐसा ही रखें कि, जैसे हमारी और आपकी कभी भेंट ही न हुई हो। हां, यदि किसी समय मुझे आपकी और आपको मेरी आवश्यकता पड़े, तो इसी जगह हम दोनों मिलते रहेंगे। आप अब यहीं रहें; और मैं जाता हूं। यहांके सब लोगोंका ऐसा ख़याल है कि, यह मकान भूतोंका अड्डा है; और इसीकारण, यहां चाहे जो कोई बना रहे, उसको तंग करनेके लिए कोई आता नहीं है। आप वैरागीके भेषमें आनन्दपूर्वक यहां रहें, आपको कोई तंग नहीं करेगा। और मैं रातको प्रति दिन इसी समयके लगभग

आता रहूंगा। मेरे योग्य यदि कोई सेवा हो, तो निस्संकोच आप मुझे बतलाते रहें। आप अपना पहरा इसी समयपर रखें। यदि मुझे कोई आवश्यकता होगी; और मैं ऐसा समझूंगा कि, उसके पूर्ण करनेमें आपकी सहायताकी मुझे कोई आवश्यकता है, तो मैं आपसे अवश्य कहूंगा; और आप भी मेरी मदद करेंगे, इसकी मुझे शंका ही नहीं। अन्तमें मैं आपसे इतना ही कहूंगा कि, जो आपका शत्रु है, वही मेरा भी है। संयोगवश यदि वह मेरे हाथमें न पड़कर आपके हाथमें पड़ जावे, तो आप उसे दण्ड न दें। मेरे लिए वह काम आप रख छोड़ें। उसको आप चाहे खुशीसे वैसा ही छोड़ दें। मैं उसे देख लूंगा। उसको जो दण्ड मिले, मेरे ही हाथसे मिलना चाहिए। आप अपने साथियोंको भी यह जतला रखें कि, चाहे जो बात होजाय, वे उस दुष्टको अपने हाथोंसे दण्ड न दें—उसको मैं ही अपने हाथोंसे यमराजके घर पहुंचाऊंगा; और उसके रक्तसे स्नान करूंगा—ऐसी घनघोर प्रतिज्ञा मैंने कर ली है.......”

चालीसवां परिच्छेद।

खिड़कीवाला नवयुवक !

नानासाहब उस विचित्र पुरुषका उक्त विचित्र भाषण सुनकर बिलकुल ही चकितसे होगये थे। जिस समय कि, वह उक्त भाषण कर रहा था, उसकी चेष्टा इत्यादि देखनेको उन्हें नहीं मिली थी; सो यदि मिल जाती, तो उनके आश्चर्यका ठिकाना ही न रहता। केवल शब्दोंमात्रसे उसका हृदय जितना कुछ दूसरेकी समझमें आसकता था, उतना नानासाहबकी समझमें भी अच्छी तरह आगया था, इसमें कुछ भी शंका नहीं। और उसकी वे सब बातें चूंकि नानासाहबके हृदयमें बिलकुल गड़ गई थीं, इसलिए अब उनके मनमें यही जाननेकी उत्कंठा होरही थी कि यह मनुष्य कौन है; और इसको हमारी इतनी जानकारी क्योंकर हुई ? जैसाकि हमने ऊपर बतलाया, अपनी प्रतिज्ञाके विषयमें बतलाते बतलाते वह एकदम ठहर गया; और उसके इस ठहर जानेमें ही उसकी सारी अगली बातोंका मानो भेद भरा हुआ था। इसके बाद दोनों कुछ देरतक एक दूसरेकी ओर बिलकुल स्तब्ध रूपसे खड़े हुए देखते रहे। "देखते रहे" इन शब्दोंका वास्तवमें यहां कोई विशेष अर्थ ही नहीं है; क्योंकि इतना प्रकाश ही वहां नहीं था कि, जो वे दोनों एक दूसरेके चेहरेको देख सकते। हां, अंधेरेमें एक दूसरेकी आंखें

अवश्य चमकती हुई दिखाई देती थीं। अस्तु। इस प्रकार कुछ समय व्यतीत होनेके बाद वह गूढ़ पुरुष नाना साहबसे कहता है, "अब मैं बहुत जल्द आपसे बिदा होता हूं: परन्तु जो बातें मैंने अभी आपको बतलाईं, उनको भूल मत जाना, मैं इस समय आपके साथियोंके सामने जाना नहीं चाहता: और न मेरा उनका कोई घनिष्ट परिचय ही है। मैं उनके सामने जाऊं भी, तो कोई हानि नहीं; किन्तु मैंने एक प्रकारसे अभी यही निश्चय कर लिया है कि, मैं जिस अवस्थामें हूं, उस अवस्थामें उनके सामने जाकर उनकी जिज्ञासाको व्यर्थके लिए जागृत न करना चाहिये। अब मुझे ख़ास बात आपको फिर यही बतलानी है कि, वह शत्रु यदि आपमेंसे किसीके पंजेमें आजावे, तो आप लोग उसे अपने हाथोंसे दण्ड न दें। उसने मुझे जितना तबाह किया है, उतना और किसीको भी न किया होगा, उसने मेरे चित्तको जितना दुखाया है,उतना और किसीके चित्तको कभी न दुखाया होगा। परन्तु जान पड़ता है, यह बात वह बिलकुल ही भूल गया है कि, एक बार सर्पको दुखानेसे सर्प भी जितना वैर अपने मनमें नहीं रखेगा, उतना वैर अपने मनमें रखकर उतने ही ज़ोरसे मैं उसको दंश करूंगा!"

बस, इतना ही कहकर वह महाशय वहांसे चल दिया। नानासाहबको सिर ऊपर उठाकर देखनेका भी अवसर नहीं मिला—बाहरके द्वारसे जब वह मनुष्य निकल गया; और उसने दरवाजे बन्द किये, तब कहीं नानासाहबके ध्यानमें यह बात

आई कि, वह विचित्र आदमी हमारे सामनेसे ग़ायब होगया। इसके बाद फिर उनके मनमें नाना प्रकारके प्रश्न उपस्थित होने लगे। "यह व्यक्ति कौन है? जातका मराठा तो अवश्य है! लेकिन यह ऐसा क्यों कहता है कि, जो मेरा दुश्मन है, वही आपका भी दुश्मन है। मेरे दुश्मनका हाल इसे क्या मालूम? मैं अमुक व्यक्ति हूं; और अमुक कामके लिए आया हूं—इतनी बारीक ख़बर इसको कैसे लग गई? और जब इसको यह ख़बर लग गई है, तब शहरमें वह और किसीको भी नहीं लग गई होगी, सो कैसे कहा जासकता है? यह मनुष्य हमको धोखा तो न देगा? इसने हमको पहचान तो लिया ही है; और यह भी कह गया है कि, "यहीं रहो, कहीं जाओ नहीं," सो यह मुझे मीठी मीठी बातें करके जालमें तो नहीं फँसाना चाहता?"

यह अन्तिम शङ्का ज्यों ही नानासाहबके मनमें आई, त्यों ही क्षणभरके लिए उनकी कुछ विचित्रसी दशा होगई। परन्तु फिर, वह विचित्र पुरुष जो कुछ कह गया था; और जिस रीतिसे कह गया था, सो सब उनके मनमें ज्यों ही आया, त्यों ही उनकी वह शङ्का फिरसे दूर होगई। वह मनुष्य जो कुछ कह गया है, बहुत ही विश्वासपूर्वक कह गया है, ऐसे आदमीसे धोखा कभी नहीं होसकता। इस प्रकार ज्यों ज्यों नाना-साहब उसके विषयमें विचार करने लगे, त्यों त्यों उनको अपनी उक्त शङ्काकी निरर्थकता और भी स्पष्ट रूपसे भासने लगी।

परन्तु फिर भी उनके मनका खेद दूर नहीं हुआ; और अपने मनकी खिन्न दशामें ही वे भीतर वापस आये। उनका एक दूसरा स्नेही अभी हालहीमें जगा था; और अपने बिछौनेपर बैठा हुआ था। उसने जब नानासाहबको बाहरसे आता हुआ देखा, तब उसे कुछ अचम्भा अवश्य हुआ; पर वह अभी कुछ पूछने नहीं पाया था कि, नानासाहबने स्वयं ही, "यों ही बाहर गया था," इत्यादि कहकर उसका समाधान कर दिया; और फिर वे अपनी जगहपर जाकर लेट रहे। परन्तु उनके मनमें बराबर वही वही विचार आरहे थे, निद्रा उन्हें किसी प्रकार भी नहीं आरही थी। इसके सिवाय निद्राका समय भी अब निकल गया था। बिलकुल तड़का होरहा था। नानासाहबने उसी आकुल अवस्थामें सूर्योदयतकका समय बिताया; और सुबह होते ही अपने अन्य मित्रोंके साथ वे भी बिछौनेपरसे उठे। परन्तु उस रातको जो बातचीत हुई थी; और वह बातचीत चूंकि अभीतक नानासाहबने अपने अन्य किसी स्नेहीको बतलाई भी नहीं थी, अतएव उनके मनकी दशा बहुत ही विचित्र होरही थी। अच्छा, उजेला होगया, सब लोग उठे; और उठकर देखते हैं, तो घरका मालिक, जिसने रातको उन्हें घरमें जगह दी थी, कहीं भी दिखाई न दिया। इसलिए स्वाभाविक ही प्रत्येकके मनमें बड़ी शङ्का आई कि, वह हम लोगोंको पहचानकर कहीं धोखेमें डालनेको तो नहीं चला गया? परन्तु फिर सोचा कि, यह भय हमारा बिलकुल व्यर्थ है। हम

ऐसे भेषमें इतने बन्दोबस्तके साथ आये हैं, ऐसी दशामें इतनी जल्दी पहचानकर धोखेमें डालना बिलकुल असम्भव है। यह सोचकर धोखेका विचार तो सबने एक ओर हटा दिया; और अब प्रत्येकके मनमें यही एक विचार चक्कर मारने लगा कि, "अब बीजापुर तो हम लोग आगये, अब आगे कैसा क्या किया जाय?" परन्तु फिर नानासाहबके मनमें यह बात आई कि, पिछली रातका सब हाल और किसीको तो नहीं, पर कमसे कम तानाजीको तो अवश्य ही बतला देना चाहिए; क्योंकि यदि न बतलावेंगे, तो न जाने पीछे कैसा मौक़ा आजाय; और फिर उस समय बड़ी दिक़्क़त पेश आवेगी। यह सब सोचकर उन्होंने तानाजीको उस रातका सारा वृत्तान्त बतलाया, जिसे सुनकर तानाजीको भी बड़ा अचम्भा हुआ। पिछली रातमें नानासाहबको उस गूढ़ पुरुषके सम्भाषणसे जितना आश्चर्य हुआ था, उतना ही आश्चर्य तानाजीको भी, वह सब वृत्तान्त सुनकर हुआ। दोनोंने एकत्र विचार करके उस विषयमें परस्पर बहुत कुछ चर्चा की; परन्तु ठीक तौरसे कुछ निश्चित न कर सके कि, वह व्यक्ति कौन है। अस्तु। इसके बाद उन्होंने अपने साथके अन्य दोनों पुरुषोंको भी वह सब वृत्तान्त बतला दिया। क्योंकि जिस कामके लिए वे आये थे, उस कामके लिए चारोंकी एकचित्तता होनी अत्यन्त आवश्यक थी; और इसके बिना उस कार्यमें सफलताका प्राप्त होना बहुत ही दुर्घट था। नानासाहबने चूंकि उमाजी हुलिया बिल-

कुल देखी ही नहीं थी, अतएव वे अपने साथियोंको भी इस विषयमें कोई जानकारी नहीं देसके; परन्तु फिर भी प्रत्येकके मनमें उस व्यक्तिकी कोई न कोई प्रतिमा आकर अवश्य खड़ी हुई। लगभग एक पहर दिन चढ़नेतक तो यही सब होता रहा। इसके बाद फिर उन चारोंमेंसे दो आदमी, तानाजी और नानासाहब, अपने अपने भेष यथाविधि बदलकर "अलख, अलख" पुकारते हुए बाहर निकले। पहलेपहल उन्होंने यही विचार किया कि, हम लोग जिस कामके लिए आये हैं, उस सम्बन्धकी जितनी भी जानकारी प्राप्त होसके, उतनी प्राप्त करना चाहिए। यह जानकारी तीन प्रकार की थी। अव्वल तो दरबार-की हालत क्या है? दूसरे अप्पासाहब किस दशामें हैं? और तीसरे हमको अपना अभीष्ट कार्य सिद्ध करनेके लिए किस किसकी अनुकूलता चाहिए; और किस किसकी मिल सकती है? इन सब बातोंको पूर्ण करनेके लिए पहला मार्ग यही था कि, ऐसे कोई लोग शहरमें हैं अथवा नहीं कि, जो हमारे अनुकूल होसकेंगे—यदि हैं, तो उनका पता लगाना चाहिए; और जब पता मिल जाय, तब फिर इस बातका विचार किया जाय कि, गुप्त रूपसे उनसे भेंट कैसे की जाय। अस्तु। इस समय जो वे बाहर निकले थे, सो सिर्फ इसी उद्देश्यसे कि, जिस जिस जगह जो जो लोग रहते हैं; और जिनका कि, नानासाहबको पूरा पूरा पता है, उनकी तरफ एक बार चक्कर लगाकर सब जानकारी प्राप्त की जाय। अस्तु। वे दोनों

"अलख अलख" 'करते हुए, लोगोंकी दृष्टिमें स्वच्छन्द रूपसे इधर-उधर घूमने लगे;और बीच बीचमें जिस घरके सामने उनकी इच्छा होती, उसीके सामने खड़े होकर "माई भिक्षा दे" की पुकार लगा देते; और उनमेंसे यदि किसी घरसे भिक्षा मिल जाती, तो उसे अपनी झोलीमें डाल लेते।

बस, इसी प्रकार वे दोनों लगभग दो घंटेतक घूमते रहे। इसके बाद फिर नानासाहबने अपने अड्डेपर लौट चलनेकी बात निकाली; और इसलिए फिर दोनों ही वहांसे लौट पड़े। लौटते समय नानासाहबकी दृष्टि अचानक एक ऊंचे से महलके बिलकुल ऊपरी खंडपर गई; और वहां खिड़कीमें खड़े हुए एक व्यक्तिकी ओर वे ध्यान लगाकर देखने लगे। इस प्रकार जब उस व्यक्तिपर उनकी नज़र लग गई, तब किसी प्रकार भी आगे चलनेकी उनकी इच्छा ही न हुई—यहांतक कि, उस व्यक्तिकी ओरसे नज़र हटाना भी उनके लिए बिलकुल असम्भव हो-गया। नानासाहबकी यह स्थिति देखकर उनके दूसरे साथीने भी ऊपरकी ओर देखा। तब उसे मालूम हुआ कि, एक बिलकुल नवयुवक, सुन्दर युवा पुरुष, खिड़कीमें खड़ा है; और हम दोनों-हीकी ओर बराबर एकटक देख रहा है, तथा नानासाहब भी उस पुरुषकी ओर उतनी ही आतुरतापूर्वक देख रहे हैं। वह युवा पुरुष सचमुच ही इतना ख़ूबसूरत था कि,किसी भी मनुष्य-की यदि एक बार उसकी ओर नज़र चली जाती, तो वह हटाये नहीं हट सकती थी,—ऐसी इच्छा होती थी कि, इसकी ओर

देखते ही रहे। "यह पुरुष कौन है? शायद किसी सरदारका लड़का हो"—दोनोंने सोचा। इसके सिवाय नानासाहबके मनमें चाहे और कोई विचार भी आये हों, कह नहीं सकते; क्योंकि उनका देखना अब कुछ अनावश्यक सा प्रतीत होने लगा था। अतएव उनके साथीने दस बारह बार उनसे चलनेका इशारा किया, पर नाना साहबका क़दम किसी प्रकार भी आगे नहीं बढ़ा। बाबाजी इतनी आतुरतासे क्या देख रहे हैं, यह समझकर रास्तेसे जाने—आनेवाले लोग भी वहां खड़े होकर नीचे ऊपर दृष्टि डालने लगे। परन्तु इतनेमें वह खिड़कीमें खड़ा हुआ युवा पुरुष वहांसे बिलकुल ग़ायब ही होगया।

अब नवयुवक वहां नहीं था; परन्तु नानासाहबकी दृष्टि अब भी उसी खिड़कीकी ओर लगी थी। खिड़कीमें खड़ा होनेवाला युवा पुरुष दर्शनीय था सही; परन्तु उसके लिए इतनी देरतक एक ही जगह खड़ा रहना और अपने आसपास लोगोंका समूह जमा होजाने तककी नौबत आने देना उनके लिए एक प्रकारसे अच्छा नहीं था; और यही सोचकर नानासाहबके साथीने उनसे एक बार फिर इशारा किया; और विशुद्ध उर्दू भाषामें बाबाजीसे वहां चलनेकी प्रर्थना की। बाबाजीके रूपमें उन नानासाहबने जब यह अच्छी तरह समझ लिया कि, अब यहांसे चले बिना काम नहीं चलेगा, तब अन्तमें बेचारे [illegible] लम्बीसी सांस छोड़कर वे वहांसे चल दिये। परन्त [illegible] उनकी जो वृत्ति बिलकुल उल्लसित दिखा[illegible]

नहीं रही। "क्या यह तुम्हारा कोई स्नेही है? तुम्हारी वृत्ति अचानक ऐसी क्यों होगई? तुम्हारा और उस छतपर खड़े हुए व्यक्तिका सम्बन्ध क्या है?" इत्यादि अनेक प्रश्न नानासाहब-के साथीने उनसे किये; और यहांतक कि, प्रश्न करते करते उसने उनको बहुत तंग भी किया; परन्तु नानासाहबकी चित्तवृत्ति ठिकाने नहीं आई। उन्होंने उसके एक प्रश्नका भी उत्तर नहीं दिया। एक दो बार कुछ उत्तर मिला भी, तो सिर्फ दीर्घ निःश्वासोंके रूपमें! इससे नानासाहबका वह साथी और भी चक्करमें पड़ा। ख़ैर। कुछ देरके बाद वे दोनों अपनी उस हवेलीके पास आये। और भीतर जाकर उन्होंने बाहरका दरवाज़ा मजबूतीके साथ लगा लिया। वहां शेष दो साथियोंने रसोई तैयार कर रखी थी। अतएव बाहरसे आये हुए ये दोनों महाशय हाथ पैर धोकर भोजनके लिए बैठ गये। परन्तु नानासाहबका चित्त भोजनकी ओर बिलकुल नहीं था। यह बात उनके अन्य साथियोंको भी मालूम होगई। उन्होंने उनसे "ऐसा क्यों?" कहकर कई प्रकारके प्रश्न इत्यादि किये। पर कोई साफ़ साफ़ उत्तर न मिला, अथवा यों कहिये कि साफ़ साफ़ उत्तर मिलने-का वह मौक़ा ही नहीं था। जो भी कुछ हो; परन्तु फिर उन्हें विशेष किसीने तंग नहीं किया। भोजनके बाद सब लोग शान्ति-पूर्वक पड़े रहे। नानासाहब भी बाहरसे शान्त ही मालूम होते

का[illegible]न्तु उनके हृदयमें शान्तिका नामनिशान भी नहीं था। नहीं हट सके[illegible] स्पष्ट दिखाई देरही थी। शामका वक्त